Volume II, Issue VIII
Oct. to Dec. 2014

Reg. No. MPHIN/28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 0.547

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Variable pattern of AChE Enzyme Kinetics due to heavy metal toxicity on Brain, Liver and Kidney of Heteropneustes fossilis (Dr. Seema Dixit) 12

06. A preliminary study of the Biodiversity of Zooplanktons in fresh water of Ken River, Panna (M.P.) (Sunita Shakle, Amrita Khatri) 15

07. Android Operating System and Its Security Features: An Overview (Dr. Sanjay Chaudhary, Ramesh Chandra Bodat) 17

08. Open Source versus Closed Source Software (Dr. Sanjay Chaudhary, Rajnish Kumawat) 20

09. क्षय रोग – एक अध्ययन एवं राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रम (प्रो. मनीषा सिसोदिया, प्रो. रीता गणावा) 23

10. सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी की भूमिका (डॉ. बिन्दु गांधी) 25

11. अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ते आतंकवाद के कदमों की समीक्षा (डॉ. विजय कुमार राजौरिया) 27

(Home Science / गृह विज्ञान)

12. Nutritional Status of Primary School Children (Shahraj Parveen, Dr. Meenakshi Mathur) 29

13. महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता(स्त्री शिक्षा के विशेष संदर्भ में) (डॉ. गीताली सेनगुप्ता) 32

14. समाज में बढ़ रहे बाल / किशोर अपराध को रोकने में परिवार की भूमिका (डॉ. कलिका डोलस) 34

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

15. The Evaluation Of MGNREGA In Rajgarh District (Alka Gupta) 36

16. Some Reflection of Women Entrepreneurship in Tribal Area of Western Madhya Pradesh [A Case Study of Tribal District Alirajpur-Jhabua of Western MP] (Dr. Rajendra Singh Waghela) 39

17. Comparative study of Job satisfaction of the employees of Private & Public Sector Banks (Subhash Purohit, Dr. C.V. Singh) 43

18. Business Ethics And Corporate Social Responsibility In Global Scenario (Monika Jain) 47

19. Tourism Innovations : A Challenge To Basic Assumptions (Dr. Renu Jatana,Surbhi Dharmawat) 49

20. मध्यप्रदेश में मत्स्य पालन में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग की सहभागिता – एक अध्ययन(डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा) 52

21. भारत में बजाज एलियांज जनरल इंश्योरेंस कम्पनी लि. की कार्यप्रणाली का अध्ययन (डॉ. आर.बी. गुप्ता, जया कैथवास) 54
22. गरीबी निवारण एवं भारत का विकास (डॉ. अभय मुंगी) 56
23. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण 58
(2007 से 2013 के विशेष संदर्भ में) (डॉ. सी.एस.पाण्डे, डॉ. पुनीत कुमार मालवी)
24. मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास – एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन (डॉ. सुनील शर्मा) 61
25. आयकर सृजता है काला धन (डॉ. आरती मिश्रा) 63
26. जी–20 और भारत – विशेष संदर्भ 2014 (डॉ. गणेश प्रसाद दावरे) 65
27. कृषि आय और आयकर (डॉ. अभय मुंगी) 67
28. रूपये के अवमूल्यन का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव व समाधन (डॉ. प्रवीण शर्मा) 69
29. पर्यावरण संरक्षण के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सार्थक है (डॉ. अभय मुंगी) 71

(Economics / अर्थशास्त्र)

30. Brick Kiln Migrant Labourers In Informal Sector : Socio-Economic Issues(Dr. Avinash Shendre)... 73
31. Non - Possession and Development : Linkage (Dr. Shiv Prakash Panwar) 77
32. Consumer Protection And Welfare (Dr. Rashmi Gupta) 80
33. The Status of Consumer Protection Act and Rural Consumers of Mandsaur District 82
(Dr. Shiv Prakash Panwar, Prof. Gyanchand Khimesara)
34. आजीविका परियोजना का ग्रामीण विकास पर प्रभाव (ग्राम में दल्यापानी के विशेष सन्दर्भ में) (हीरालाल खर्ते) 84
35. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण (2007 से 2013 के विशेष संदर्भ मे) 87
(डॉ. सी.एस. पान्डे, डॉ. पुनीत कुमार मालवी)
36. ग्राम स्वराज बनाम रामराज्य (म.प्र. के परिप्रेक्ष्य में) (डॉ. प्रमोद भारती) 90
37. ग्रामीण आर्थिक जीवन और पंचायती राज (डॉ. विमला जैन) 93

(Sociology / समाजशास्त्र)

38. ग्रामीण विकासीय कार्य में स्थानीय नेतृत्व की भूमिका का अध्ययन (म.प्र. के बालाघाट जिले के विशेष संदर्भ में) 94
(डॉ. आरती व्यास, कल्पना चौरे)
39. भारतीय समाज में प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं की सकारात्मक एवं नकारात्मक छवि (डॉ. विमला गोयल) 97
40. भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ में वृहद् एवं लघु परम्पराऐं (डॉ. मनीष कुमार कलवार) 100
41. सामाजिक न्याय, न्यायपालिका एवं मानव अधिकार (डॉ. सपना चक्रवर्ती) 102
42. भारतीय सामाजिक परिदृश्य एवं स्वामी विवेकानन्द (डॉ. सुधा लाहोटी) 104
43. भारतीय समाज पर पश्चिम के प्रभाव का अध्ययन (निरन्तरता और परिवर्तन के विशेष संदर्भ में) (सादिक मोहम्मद खान) 106
44. गल – पर्व : भील – संस्कृति का पुरातन पर्व (प्रो.मीना मावी, प्रो. बंशीलाल डावर) 108

(Geography / भूगोल)

45. मन्दसौर जिले के कृषि भूमि उपयोग एवं फसल प्रतिरूप में अभिनव परिवर्तन (2000–01 से 2010–11) 110
(डॉ. बी.एल. पाटीदार, डॉ. आर. के. श्रीवास्तव)

46. 21 वीं सदी की सबसे बड़ी चुनौती–जल प्रबंधन एवं प्रदूषण निवारण (डॉ. रवीन्द्र कुमार सोहोनी, प्रो. शांतिलाल ईरवार) 114
47. जनजाति उपयोजना में ग्रामीण विकास एवं गरीबी निवारण एक भौगोलिक विश्लेषण (अम्बालाल कटारा, प्रो. एल.सी. खत्री) .. 117
48. उच्च शिक्षा में परिवर्तन की प्रासंगिकता मध्यप्रदेश के संदर्भ में विश्लेषण (डॉ. अख्तर बानो) 120

(History / इतिहास)

49. Historical Significance of English in Modern India (Dr. Hemlata Acharya) 122
50. वर्तमान समय में नीति ग्रंथ की उपयोगिता (डॉ. मंगला ठाकुर) 123
51. पं. रमाबाई सरस्वती : महाराष्ट्र महिला सुधार आंदोलन में भूमिका(डॉ. राजेश सकवार) 125
52. सन् 1857 का विद्रोह और बैजाबाई सिंधिया (डॉ. प्रमिला शेरे) 127
53. सामाजिक सुधारों में अग्रणी महाराजा यशवंतराव होल्कर द्वितीय(डॉ. शिवा खण्डेलवाल) 129
54. प्राचीन भारत के प्रमुख शिक्षा केन्द्र(तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला)(प्रो. शोभना व्यास) 131
55. मुगल मेवाड़ संघर्ष और राजपूत कूटनीति (डॉ. प्रेरणा ठाकुर) 133
56. वास्तु परम्परा एवं मंदिर (डॉ. कैलाश राय) 135

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

57. हिन्दी साहित्य के आलोक "चन्द्रगुप्त" ऐतिहासिक उपन्यास जैन सम्राट चन्द्रगुप्त के विशेष संदर्भ में (डॉ. गणेश लाल जैन) 137
58. वासदत्ता : सामाजिक एवं सांस्कृतिक सरोकार (डॉ. इला द्विवेदी) 140
59. उत्तर मध्य काल (रीतिकाल) के प्रमुख जैन प्रबन्धक काव्य(एक संक्षिप्त अध्ययन) (डॉ. लता जैन) 143
60. महादेवी : पुनरीक्षण के आलोक में (डॉ. कला जोशी) 146
61. इतिहास और उपन्यास का अंतः संबंध (डॉ. प्रमोद उपाध्याय) 148
62. विद्यानिवास मिश्र के ललित निबन्धों में सांस्कृतिक चिंतन (डॉ. इला द्विवेदी) 150
63. मोहन राकेश के नाटक आषाढ़ का एक दिन में नारी पात्रोंका विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. सुनिता यादव) 152
64. वर्तमान परिवेश में हिन्दी भाषा की अस्मिता – महत्व एवं मूल्यांकन (डॉ. जयश्री भटनागर) 154
65. निराला की प्रासंगिकता – एक अनुशीलन (डॉ. रशीदा खान) 156
66. स्त्री –विमर्श (डॉ. शबनम खान) 158
67. ज़मीन का कवि : नागार्जुन (वैद्यनाथ मिश्र) (डॉ. पारसमणि गुप्ता) 160
68. बाल साहित्य : संभावनाऐं और भविष्य (डॉ. शबनम खान) 162
69. बाल साहित्य : कल आज और कल (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 164
70. आधुनिक नाटकों में सामाजिक चेतना (मूल्यांकन परक विश्लेषण) (डॉ. आशा अग्रवाल) 166
71. झाबुआई लोक संस्कृति का यथार्थ (डॉ. मनीषा सिंह मरकाम) 169
72. पत्रकारिता और प्रिंट मीडिया (डॉ. बिन्दू परस्ते) 171
73. साकेत में नायकत्व – एक विमर्श (डॉ. अंजली सिंह) 173

74. साहित्य में नारी की स्थिति युगीन आदर्श और जीवन मूल्य (डॉ. सुदामा प्रसाद धूमकेती) 175

75. कबीर और जायसी के रहस्यवाद का तुलनात्मक विवेचन (डॉ. सरोज यादव) 177

76. राष्ट्रभाषा हिन्दी चुनौतियां और सरोकार (डॉ. अमित शुक्ल) 179

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

77. The Theme of Ambition in Paulo Coelho's Select Novels (Dr. Roshan Benjamin Khan) 181

78. Nuances of Translation and its Relation with Multiculturalism: An Inquiry (Dr. S. S.Thakur) 184

79. The Concept Of Time And Space In The Novels Of Amitav Ghosh 187
(Dr. Rajendra Kumar Bhevandia)

80. Impact Of Communication Revolution On Teenagers And Moral Degeneration 190
(Dr. Manjari Agnihotri)

81. Disputes Among Elders And Effects On Children: Select Plays Of Mahesh Dattani 192
(Niranjan Gangwal)

82. Worldly Problems & Spiritual Solutions In T.S. Eliot's Poetry (Dr. J.K. Sagore) 194

83. Realization and Motifs in the Novels of Coelho (Dr. Renu Sinha) 196

84. Baumgartner's Bombay by Anita Desai : Making waves from the Physical to the Mind 198
(Dr. Jyoti Taneja)

85. Bhabani Bhattacharya's novel Shadow from Ladakh (A vision of social regeneration) 200
(Dr. Pankaja Acharya)

(Education / शिक्षा)

86. The Impact Of Collaborative Learning On Metacognition (Prof. Poonia Anu, Mathur Rini) 202

87. A Comparative Study Of Environmental Awareness Ability Of Pre-Service Teachers Of 205
Faridabad District (Mugdha Anand)

88. सहयोगात्मक अधिगम तथा विज्ञान में संज्ञानात्मक उपलब्धि(प्रो. अनुपूनिया, आरती कुमावत) 208

89. सेवारत माता एवं गैर-सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन (दीपक पंचोली) 211

90. उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की अध्ययन आदतों का अध्ययन (रतना कुमारी) 213

91. माध्यमिक स्तर के राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा खद के छात्राओं में आत्मक्षमता का पूर्व-पश्च परीक्षण में अन्तर 215
(डॉ. अनुपूनिया, शंकरलाल मीणा)

92. डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति 217
का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. भगवती लाल व्यास, संदीप सिंह चौहान)

93. प्राथमिक शिक्षा पर संविदा शिक्षक भर्ती का प्रभाव (डॉ. आरती व्यास, गब्बू डावर, धर्मेन्द्र पाटनी) 220

(Law/ विधि)

94. भारतीय विधिक प्रणाली में न्याय प्राप्ति की दिशा में होने वाले नूतन प्रयास (डॉ. गुलाब सिंह मेवाड़ा) 222

(Psychology / मनोविज्ञान)

95. A Comparative Study Of Personality And Stress Between Male And Female In Different Employment (Sunita Dhenwal, Preeti Mathur) 224

(Others / अन्य)

96. The Importance of Program Preparation and Content Development in Radio (Sana Jafri, Prof. Shambhu Nath Singh) 226
97. Latest Trends in Private Radio Channels in India (Sana Jafri, Prof. Shambhu Nath Singh) 228
98. Ragging In Colleges (Dr. Alka Singhal) 230
99. राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण – आवश्यकता, समस्याएँ एवं सुझाव (डॉ. सुनीता बाथरे) 232
100. पर्यावरण प्रबंधन (डॉ. सारिका मिश्रा) 235
101. भारतीय समाज और महिलाए (शिखा त्रिपाठी) 237
102. स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में बैंको की भूमिका (नीतिन बिल्लौर) 239

(Naveen Shodh Sansar / नवीन शोध संसार)

103. शोध पत्र तैयार की विधि / Method of Preparing of Research Paper 242
104. Membership Cum Author's Bio-Data Form 243

****

म. प्र. उच्च शिक्षा में नवाचार – "अपना पैसा अपना विकास"

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एवं सामाजिक परिवर्तन प्रबंध कार्यशाला – राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय छिन्दवाड़ा (म.प्र.) दिनांक 05.12.2014 – 11.12.2014
कार्यशाला के समन्वयक – डॉ. दिनेश कुमार चौधरी एवं सह समन्वयक – श्री अजय सिंह ठाकुर, डॉ. अर्चना गौर, कार्यशाला संरक्षक एवं प्राचार्य – डॉ. कामना वर्मा

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टा महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. नटवर लाल गुप्ता ..... प्राचार्य, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

नवीन शोध संसार के बढ़ते कदम

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम–विशेषांक का विमोचन करते हुए
माननीय श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्य मंत्री) म.प्र. शासन, माननीय श्री ओमप्रकाश सकलेचा (विधायक) जावद, (म.प्र.) आशीष शर्मा (सम्पादक) नवीन शोध संसार, नीमच (म.प्र.)

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. रामचन्द्र चौहान ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Variable pattern of AChE Enzyme Kinetics due to heavy metal toxicity on Brain, Liver and Kidney of Heteropneustes fossilis

Dr. Seema Dixit *

Abstract - In the present investigation sublethal concentrations of lead nitrate as 105 mg/lt and 350 mg/lt were taken as safe concentration. AChE enzyme inhibition was observed in all the categories, showing non competitive nature with reference to heavy metal toxicity, percentage inhibition (Km) was more in kidney followed by Liver and Brain.
Key words - Heteropneustes fossilis, Lead Nitrate, AChE Noncompetitive Inhibition.

Introduction - The continuous discharge of elements in the biosphere due to industrial activities with high concentration of heavy metals, automobile fuels, sewage and domestic wastes is posing a serious threat to the mother earth, microbial fauna, flora and other higher organism of the food chain. Among the aquatic fauna, fishes are used as bioindicators assessing the level and intensity of pollution discharged in aquatic bodies due to domestic, industrial mining and agricultural activities. Conservation and proper utilization of water bodies is a pre requisite and is essential to fulfill the need of mankind and society.

Industrial waste from the factories like Textiles, Distilleries, Petrochemicals, Oil refineries and fertilizers release mainly harmful chemicals like cyanides, heavy metals (As, Cr, Cd, Pb, Cu, Hg), amino phenols, pesticides, malathion, acids and alkalies into the water bodies **(Krishna Murthy and Vishwanathan 1991)**. These heavy metals and chemicals causes abnormal metabolic changes, behavioural stress bioaccumulation, immunosuppression, carcinogenicity and many other toxicological manifestation among fishes. In addition to these variations in pH, dissolved oxygen, temperature, turbidity and trophic state of water also causes stress, mortality and morbidity of fishes. **(Krishna Gopal 1993)**.

Amongst heavy metal category, lead is one of oldest metal known to man since medieval times. It is non essential element, which is continuously being released into the natural media due to increased anthropogenic activities and industrial exploitation. **(Chandravathy and Reddy 1996)**. Lead and Cadmium are relatively accessible ubiquitous trace elements which produce cumulative toxic effect to the biotic component of different trophic strata. **(Dulka and Risby 1976, Jhingran 1985, Cappon 1987)**. The harmful effects due to lead nitrate toxicity include haemotological, biochemical and physiological alterations in several aquatic species.

Enzymes are biological catalyst derived from living system and can be used a biomarkers to check the level of toxicity. Enzymes have the power to degrade pollutants by combining with them and precipitating them in to insoluble complexes. In the last decade, enzymology itself has appeared as an important diagnostic tool for assessing the toxicity level and setting up of safeguard limits for controlling pollution.

The compound acetylcholine is a neurotransmitter released from pre-ganglionic nervous of Parasympathetic division of autonomic nervous system. It is unanimously accepted that hydrolysis of acetylcholine to choline and acetic acid is catalyzed by enzyme acetylcholinesterase in animal system. It is predominant in blood serum and other tissues innervated by colinergic nerve fibres like brain, liver, skin muscles, kidney gills etc. This enzyme prevents accumulation of excessive acetylcholine at cholinergic synapse and at neuromuscular junction **(Konar 1070)**.

The present research project seeks a great degree of significance in setting up of safeguard limits for protecting biological diversity, and natural water bodies from human exploitation and environmental pollution.

Material and Methods - Heteropneustes fossilis healthy, normal and of standard size (8-12 cms.) were procurred from Motia Talab and were kept in glass aquaria containing dechlorinated tap water. They were acclimitized to laboratory conditions for two weeks. They were fed daily with dried shrimp powder until two days prior to acute exposure of test toxicants Lc 50 value of Lead-nitrate was determined by U.S. Std. graphical interpolation method (1976) and was estimated to be 525 mg/lt for lead nitrate. Two sublethal concentration of Lc 50 (i.e. safe doses) 1/5th and 2/3rd were taken i.e. 105 mg/lt and 350 mg/lt for lead nitrate. Each groups of 10 fishes were exposed to two sublethal concentrations for 96 hrs. and control was kept and maintained parallel. At the end of experiment the control and experimental fishes were dissected and the organs, brain, liver and kidney were removed. Tissue homogenate of 5% was prepared in ice cold 0.25 M sucrose solution at 12,000 rpm. AChE activity was measured spectrophotometrically at 540nm by Hestrin and Metcalf (1951) using ACHI as substrate. Protein estimation was done according to Lowry etal. (1951) using Bovine serum albumin as standard. The AchE activity Km, Vmax, percentage of inhibition and nature of inhibition at different concentration of toxicants were investigated by line Weaver Burk plot.

* **Zoology, Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. Autonomous College, Bhopal (M.P.) INDIA**

Result and Discussion - AChE modulates the amount of neutotransmitter substance acetylcholine (ACh) at neuron junctions. Toxicants like heavy metals are well known inhibitors of acetylcholinesterase. Such as inhibition has been discussed as due to linkage of these toxicants with the active group of AChE which resulted in the elevation of ACh in fishes. These toxicants act as AChE inhibitors by binding with the active sites of AChE through the electrophilic phosphate atom to form an enzyme inhibitor complex reducing the hydrolytic activity of the AChE enzyme there by disturbing the conduction of nerve impulse in synaptic regions and neuromuscular junctions.

The present study on the Brain of H. fossilis shows K_m value of control as $0.83x10^{-3}$ M which increased to $1.11x10^{-3}$ M with 105 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ and reached a maximum at $1.25x10^{-3}$ M with 350 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$. The V_{max} of control brain was 2.22 A/mg protein/30 min. which increased to 3.33 A/mg protein/30 min. in 105 mg/lt. $Pb(NO_3)_2$ and finally to 4.0 A/mg protein/30 min with 350 mg/lt. $Pb(NO_3)_2$. The increasing trend of K_m and V_{max} in acute exposure exhibited the non competitive inhibitory nature of AChE. The slope obtained from control (uninhibited enzyme) and for two different dose concentration of lead nitrate intercepted at different ordinates showing the non competitive nature of inhibition.

Ref. to Table No. 01 and Fig. No. 01.

In liver of H. fossilis the inhibitory effect of lead nitrate on enzyme kinetics of AChE was studied. In control K_m was $0.45x10^{-3}$ M with 105 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ it increased to $1.25x10^{-3}$ M and with 350 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ it finally reached to $1.42x10^{-3}$ M. The V_{max} also showed a similar trend. It was observed as 2.5 A/mg protein/30 min. in control which increased to 3.33 A/mg protein/30 min. in 105 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ and further increased to 4.0 A/mg protein/30 min.

Ref. to Table No. 02 and Fig. No. 02.

In Kidney of H. fossilis the control exhibited K_m as $1.25x10^{-3}$ M which raised to $1.66x10^{-3}$ M in 105 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ and finally reached to $2.00x10^{-3}$ M with in 350 mg/lt. of $Pb)NO_3)_2$. The V_{max} showed a different trend. It was 3.33 A/mg protein/30 min. in control Kidney which decreased initially to 2.5 A/mg protein/30 min. in 105 mg/lt. of $Pb(NO_3)_2$ and finally increased to 5.0 A/mg protein/30 min. in 350 mg/lt. of $Pb)NO_3)_2$ dose concentration.

Ref. to Table No. 03 and Fig No. -3.,

The present study on the vital organs (Brain, Liver, Kidney) of H. fossilis with lead nitrate shows a continuous increase in the values of K_m and V_{max} signifying increase of toxicity level of inhibition of AChE enzyme in the tissues there by causing depletion in the hydrolytic power of AChE and elevation of substrate molecules (ACh) in the medium. The slopes obtained from control and treated dose concentration intersected at different ordinates of Michael's menten constant indicating non competitive nature of inhibition and lead nitrate to be a non competitive inhibitor with respect to enzyme kinetics of AChE in H. fossilis.

This is well supported by the findings of **Carter etal. (1971), Coppage etal. (1974), Rao etal. (1984), Bashamohidden and Sailbala (1989), Hande and Pradhan (1990), Balasubramanian and Ramaswami (1991), Devaraj etal. (1992), Thangavel and Ramaswamy (1992), Tembhre and Kumar (1994), Farhina etal. (2005), Rita etal. (2006)** who have also reported similar trends of non competitive nature of inhibition in different fish species with different group of toxicants.

In the heavy metal category, among all the tissues, the slope obtained from control (uninhibited) and treated (inhibited) enzyme intersected at different ordinates of Michael's menten constant indicating non competitive nature of inhibition and lead nitrate to bea non competitive inhibitor with respect to the enzyme kinetics of AChE of H. fossilis. The continuous increase in the values of K_m and V_{max} signifies increase of toxicity level of inhibition of AChE level and continuous elevation of substrate ACh molecules in the medium, there by resulting in erratic neurotoxicological behaviour and body movements.

With reference to heavy metal toxicity percentage inhibition (K_m) was maximum kidney followed by Liver and Brain (V_m value Kidney > Liver > Brain). The V_{max} value was maximum in kidney followed by Brain and Liver (V_{max} value – Kidney > Brain and Liver). Among three tissues Liver proved to the most sensitive showing highest degree of deterioration followed by Brain and Kidney.

References :-

1. Balasubramanian, S. and M. Ramaswami (1991). Jour. Ecobiol., 3(2) : 117-132.
2. Bashamohideen, M.D. and Ramanna Devis, S. (1989). Behavioral changes on symptoms of poisoning in Indian major carp (Labeo rohita subjected to Phosphamidon exposure). Proc. 61th Indian Sci. Long. Abst. 1.
3. Bhattacharya S.K., Parikh A.K. and Das P.K. (1996). Effects of Catecholamines on the melanophores of frog Rana tigrina, Ind., J. Exptt. Biol. 14 : 486 – 488.
4. Bowen H.J.M. (1996). The biochemistry of the trace elements In : Nuclear activation technique in life sciences Int. Atomic Energy Agency Vienna 393 – 405.
5. Cappon C.J. (1987). Cadmium and Lead in lake Ontario Salmonid : Bull. Environ. Contam. Toxicol. 38 : 695 – 699.
6. Carter (1971). In vie studies of brain acetylcholinesterase inhibition by organophosphae and Carbamate insecticides in fish Ph.D., dissertation Louisiana State University, Baton Rough, Louisiana.
7. Chandravathy, V. Mary and Reddy S.L.N. (1996). Lead nitrate exposure change in Carbohydrates Metabolism of fresh water fish J. Environ. Biol. 17(1), 75-79.
8. Christensen, G.M., D. Olson and B. Reidel (1982). Chemical effects on the activity of eight enzymes. A Review and a discussion relevant to environmental monotoring Environ. Res. 29 : 247.
9. Coppage, D.L., Mathew's, E., Cook, G.H. and Knight, J. (1974). Biochem. and Physiol., 5:536-542.
10. Das, S.K. and Chand, B.K. (2003). J. Eco. Env. Cons. J., 1 : 89-92.
11. Devaraj, P.S.; Durairaj and V.R. Selvarajan (1992). J. Ecotoxicol. Environ. Monit., 2(2) : 99-103.
12. Dulka, J.J. and Risby, T.H. (1976). Ultratrace metal in some environmental and biological system. Anal. chem. 48 : 640-653.

13. Farhina, Pasha and Romsha Singh (2005). Asian Jour. Exp. Sci., 19(2) : 119-126.
14. Hande, R.A. and Pradhan, P.V. (1990). Proc. Ind. Acad. Sci. (Anim. Sci.), 99(1) : 53-56.
15. Jhingran, V.G. (1985). Fisheries and water pollution in Varshney, C.K. (Ed.) Water Pollution and Management, New Delhi (India) Wiley Eastern 166 – 186.
16. Konar S.K. (1979). Pesticides and aquatic ecosystem, Indian Jour. Fish, 22 : 80 – 85.
17. Krishna Murthy, C.R. and Vishwanathan (1991), Toxic Metals in the Indian Environment. Tata Mc Graw Hill Pub. Co. Ltd., New Delhi.
18. Kumar, S. (1996). Acetylcholinesterase Kinetics in the diagnosis of myocardiae Infection, Exptt. Biol. Abstracts, 1-38, 05.
19. Kumaraguru, A.K. (1995). Ecol. Environ. Cons., 1(1-5) : 143-150.
20. Lowry, O.H.; N.J. Rosenbrough, A.L. Farr and R.J. Randall (1951). Jour. Biol. Chem., 193 : 265-275.
21. Maheshwari Devi, K.; Gopal, V. and Rathna Gopal (1991). J. Ecotoxical Environ. Monit., 1(913) : 25-27.
22. Metcalf, R.L. (1951). In method in Biochemical Analysis – D- Glicked, Interscience Publishers, Inc. Newyork.
23. Pathak and Mudgal, L.K. (2005). Ind. Env. Cons. J., 6(1) : 51-45.
24. Rao, I.M., Manjula, R. and Patnaik, Sree (1997). Indian J. Fish, 44(4) : 405-408.
25. Tembhre, M. and Kumar, S. (1995). Indian J. Spect., 6(2) : 39-42.Thangavel, P. and M. Ramaswamy (1992). Ind. J. Exp. Physiol., 12(11) : 824-827

Observation

Table-1 : Acute Effect Of Different Concentrations Of Lead Nitrate On Kinetic Parameters Of Km & Vmax OF AChE Of Brain Of H-fossilis (Substrate used was ACHI)

S.No.	Lead Nitrate Concentration In mg./lt.for 96 Hrs.	Kinetic Parameters	
		Km x 10-3M	Vmax (Absorbance) /mg.protein /30 min
1	Control	0.83	2.22
2	105	1.11	3.33
3	350	1.25	4

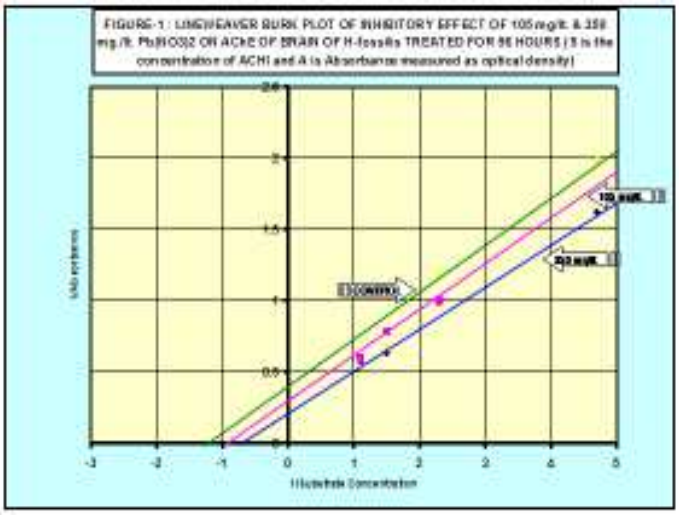

Table-2 : Acute Effect Of Different Concentrations Of Lead Nitrate On Kinetic Parameters Of Km & Vmax Of AChE Of Liver Of H-fossilis (Substrate used was ACHI)

S.No.	Lead Nitrate Concentration In mg./lt.for 96 Hrs.	Kinetic Parameters	
		Km x 10-3M	Vmax (Absorbance) /mg.protein /30 min
1	Control	0.45	2.5
2	105	1.25	3.33
3	350	1.42	4

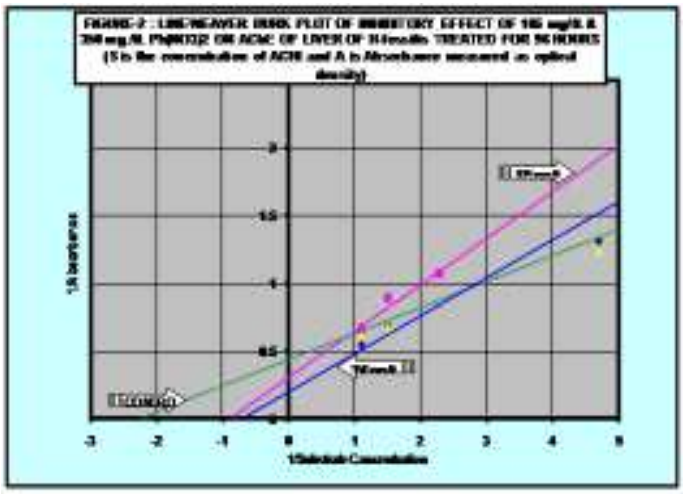

Table-3 : Acute Effect Of Different Concentrations Of Lead Nitrate On Kinetic Parameters Of Km & Vmax Of AChE Of Kidney Of H-fossilis (Substrate used was ACHI)

S.No.	Lead Nitrate Concentration In mg./lt.for 96 Hrs.	Kinetic Parameters	
		Km x 10-3M	Vmax (Absorbance) /mg.protein /30 min
1	Control	1.25	3.33
2	105	1.66	2.5
3	350	2	5

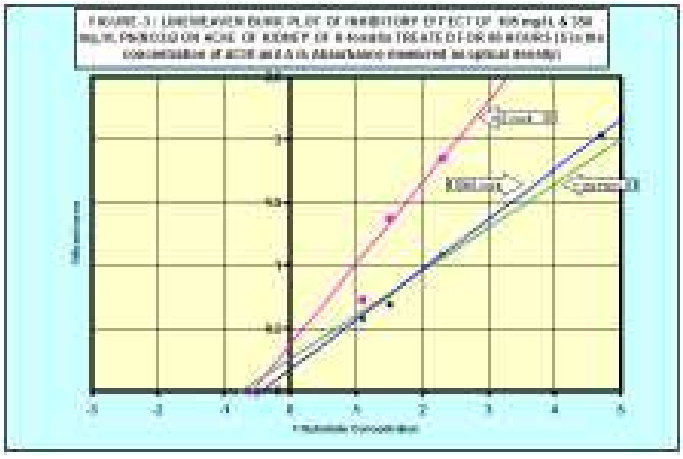

****

A preliminary study of the Biodiversity of Zooplanktons in fresh water of Ken River, Panna (M.P.)

Sunita Shakle * Amrita Khatri * *

Abstract - The present work aims to study the zooplankton seasonal fluctuations and biodiversity. Zooplanktons are heterotrophic planktons as they attain energy from other organisms. Being in the center of aquatic food webs ,they are important food for fish and invertebrate predators and graze heavily on algae, bacteria, protozoa, and other invertebrates.They are influenced strongly by both bottom-up and top-down processes . They have often been used as models for ecological paradigms. For their movement, they depend on the consideration of physical conditions of the water body and environment e.g. temperature, depth, water current, wind, light, air etc. Zooplankton community diversity of Ken River, Panna was analyzed .These freshwater zooplanktons in Ken River are found to be dominated by four major groups i.e. Rotifers, Copepods, Cladocerans, and Protozoans.

Keywords - zooplankton, water body, biodiversity.

Introduction - A significant role is played by zooplanktons in river ecosystem and food chain. Zooplankton is one of the main figures in the contribution of limnological ecological paradigms. In contrast to algae and phytoplankton, zooplanktons are microscopic animals that do not produce their own food. They are responsible for eating millions of little algae that may or else grow to an unmanageable state. Zooplanktons are also a valuable food sources for herbivorous fish and other organisms. Zooplankton being in the center of aquatic food webs and influenced strongly by both bottom-up and top-down processes .The presence or absence of healthy zooplankton populations can help in determining some commercial fisheries success in fresh water of Ken river.

Variations were found in zooplanktons due to ample number of environmental factors including water, temperature, light, pH, oxygen, salinity, toxic contaminants, food availability and predation by fish and invertebrates. Zooplanktons support the economically important fish product. It is generally desirable to have as much information on these variables as possible. Study on zooplankton population have been done by many workers(Santhanam and Perumal,2003; Wanganeo et.al ,2006; Kiran et.al,2007; Ahmad,et.al.,2012, Jayabhaye,2010; Ahmad,et.al.,2012; Jose and Sanalkuma,2012 ;Chouhan,&Kanhere 2013,; Dutta and Patra ,2013; Sharma et.al.2013 Agrawal et.al,2014),

Zooplanktons serve as good indicator of changes in water quality, because it is strongly affected by the environmental conditions and it is quickly responded to changes in environmental quality (Gannon and Stemberger, 1978).

Few Rotifers are also known to live in association with other aquatic organisms such as Daphnia (Sharma, 1978)

Study Area - Panna is a district of the Sagar Division, contained by the Madhya Pradesh state in central India Panna district is well-known for its diamond mines situated in a belt of about 80 km across the Panna town The Raneh Falls on the Ken river and Ken Ghariyal Sanctuary are places for tourist attraction. The Ken River flows through the district Panna. It strolls for about 55 Km..

In Central India, the **Ken River** is a tributary of the Yamuna, It is one of the chief rivers of the Bundelkhand area, and run through two states, Madhya Pradesh and Uttar Pradesh. It originates near village Ahirgawan on the north-west slopes of Kaimur Range in Jabalpur district. It merges in Yamuna at Chilla village, near Fatehpur in Uttar Pradesh at 25°462 N 80°312 E after travelling a distance of 427 km,

Material And Methods - This study is based on primary data which have been generated using sampling technique. Samples for all 12 months from March to February 2007-2008 and were preserved in 5% formalin. The identification of zooplankton species has been done using text and monograph standard by Edmondson and Battis base. The books also helped in studies of zooplanktons (Edmondson, 1959, Adoni, 1985,,Battis, 1992)),

Observation And Result - A total of 46 zooplankton species were identified. Out of these 11 species of Protozoa,16 species of Rotifera, 5 species of Copepoda and 14 species of Cladocera were noted during the study period.. Among all the zooplankton group, Rotifera recorded dominance. Jayabhaye (2010) noted 25 species of zooplanktons in river Kayadhu In Hingoli district ,Maharastra.

The detail of different zooplankton species noted is given in following lists:

* Zoology, B.L.P. Govt. P.G. College, Mhow (M.P.) INDIA
** Zoology, M.J.B. Govt. P.G. Girls College, Indore (M.P) INDIA

PROTOZOA

1	Arcella vulgaris
2	Difflugia corona
3	Thecomoeba sps.
4	Dinamoeba sps.
5	Vorticella nebulifera
6	V. convallaria
7	V. companula
8	V. patellina
9	Euglena viridis
10	E. gracilis
11	Paramaecium caudatum

ROTIFERA

1	Anuraeopsis fissa
2	Asplanchna brightwelli
3	Brachionus angularis
4	B. caudutus
5	B. havanaesis
6	Chromogater ovalis
7	Epiphanes clavluala
8	Keratella cochlearis
9	K. tropica
10	Monostyla bulla
11	Notholca acuminate
12	Platyias quadricornis
13	Polyartha vulgaris
14	Scaridium longicaudum
15	Synchaseta pectinata
16	Trichocerca similis

COPEPODA

1	Cyclop sps.
2	Micro Cyclop sps
3	Meso Cyclop sps
4	Macro Cyclop Sps
5	Eucyclop sps

CLACLOCERA

1	Daphnia pulex
2	D .corinata
3	D. lumholtizi
4	Ceriodaphnia Sps
5	Simocephalus sps
6	Monia sps
7	Macrothrix rosea
8	Macro Thrix sps
9	Diaphanosoma sps
10	D.brachyurum
11	Leydigia sps
12	Alona sps
13	Alonella sps
14	Scapholeberis sps

Conclusion - Zooplankton plays a significant role in food chain and food web of any type of ecosystem. It is chief connecting link between producers and secondary consumers. Availability of littoral and benthic zooplanktons is a prerequisite for the continued existence of young of cultivated major carps like Rohu, Catla , Mrigal, Tilapia, Notopterus and Wallago attu etc.. Availability of littoral and benthic zooplanktons is a prerequisite. The presence of zooplanktons is thus crucial to achieve high fish production during fish cultivation in fresh water of Ken River.

Referances :-

1. Adoni A.D. (1985), Workbook of limnology. Partibha publishers, Sagar, M. P., India
2. Agrawal R.K, Thiske Sanjay and Mondal Sunil (2014) Diversity and Seasonal fluctuation of Zooplankton n fresh water reservoir Mongra Bairaj Rajnandgaon district, CG, India Research journal of Animal Veterinary and Fishery Sciences Vol. 2(8), 1-4
3. Ahmad, U., Parveen, S., Mola, H.R., Kabir, H.A., Ganai, A.H. (2012) Zooplankton population in relation to physicochemical parameters of Lal Diggi pond in Aligarh, India.Journal.Environ.Biol.33: 1015-1019.
4. Battis S.K.(1992), Fresh water zooplankton of India, Oxford and IBH Publishing Co. New Delhi, 233
5. Chouhan P. and Kanhere R.R.(2013) Diversity of Zooplankton in Barwani tank of West Nimar, M.P., India Res. Journal. Animal, Veterinary and Fishery Sci.1(3)7-13
6. Dutta T K and. Patra Bidhan C. (2013) Biodiversity and seasonal abundance of Zooplankton and its relation to physico chemical parameters of Jamunabundh, Bishnupur, India International Journal of Scientific and Research Publications, 3 (8)
7. Edmondson W.T. (1959), Fresh water Biology, 2nd ed. Jhon Wiley and Sens. New York. New York, 1248
8. Gannon, J.E., and Stemberger, R.S, (1978) Zooplankton especially Crustaceans and
9. Rotifers as indicators of water quality. Trans. Am. Micros. Soc, [97 16-35].
10. Jayabhaye U.M (.2010) Studies on Zooplankton diversity in River Kayadhu near Hingoli city, Hingoli district, Shodh, Samiksha aur Mulyankan (International Research Journal II, (1)1-12
11. Jose Reeja and Sanalkuma M.G.(2012) Seasonal Variations in the Zooplankton Diversity of River Achencovi International Journal of Scientific and Research Publications 2(1), 1-3
12. Kiran, B.R., Puttaiah, E.T., and Kamath, D. (2007). Diversity and seasonal fluctuation of Zooplankton in fish pond of Bhadra fish farm, Karnataka. Zoos Print Journal. 22 : 2935-2936
13. Santhanam, P. and Perumal, P,(2003) Diversity of Zooplankton in Parangipettai coastal waters,Southeast coast of India. Journal. Mar .Biol Assoc. India, 45 ,144-151
14. Sharma,B.K. (1979) On some epizoic Rotifers from West Bengal. Bulletin of Zoological Survey of India 2: 109–110
15. Sharma S.Solanki C.M.Sharma D. and Pir Z(2013). Distribution and diversity of Zooplankton in (M.P.), India International Journal of Advanced Research.1 (1)16-21..
16. Wanganeo A. and Wanganeo R., anganeo A. and Wanganeo R. (2006) , Variation in zooplankton population in two morphologically dissimilar rural lake in Kashmir Himalaya, Nat . Acard. Sci., 76(3), 222-239

Android Operating System and Its Security Features: An Overview

Dr. Sanjay Chaudhary * **Ramesh Chandra Bodat** * *

Abstract - Android has the biggest market share among all Smartphone operating system. Security is one of the main concerns for Smartphone users today. As the power and features of Smartphone's increase, so has their vulnerability for attacks by viruses etc. Perhaps android is more secured operating system than any other Smartphone operating system today. Android has very few restrictions for developer, increases the security risk for end users. In this paper we have reviewed android security model, application level security and security issues in the Android based Smartphone.

Introduction - An Android is an open source operating system, key mobile applications having API libraries for executing android applications. Android smart phones offers advanced computing ability and connectivity as compares to other mobile phones operating systems. Android is operating system which designed hardware so that communication between hardware and software with user interface can easily be done. Google has released tool i.e. Google apps that implement under some security policies. There are so many facilities like password protection also implement in android smart phones. Android is Linux based operating system. The architecture of android operating system is designed in such manner so that communication at application level and end user will be quite easy. Android applications are written in Java, a programming language. But Android has its own virtual machine i.e. DVM (Dalvik Virtual Machine), which is used for executing the android applications. Designing of android application is easy as compared to other applications of iphones.

Android operating system is also used for business purposes. At business level, risk will be high while transferring data from one end to another end. As Android provides remote access to official sensitive data, which can lead to data hack if smart phones are hacked into. For this security purpose, Google has designed their operating system to execute applications in specialized sandboxes, which minimize the capability of malware attacks to the applications in smart phones.

Security Issues faced by Android - Android is not secure as it appear, even when such robust security measures. There are several security problems faced by the android, some of them are mentioned below.

i. Android has no security scan over the apps being uploaded on its market.
ii. There are some apps which can exploit the services of another app without permission request.
iii. Android's permission security model provides power to user to make a decision whether an app should be trusted or not. This human power introduces a lot of risk in Android system.
iv. The Open Source is available to legitimate developers as well as hackers too. Thus the Android framework cannot be trusted when it comes to develop critical systems.
v. The Android operating system developers clearly state that they are not responsible for the security of external storage.
vi. Any app on the android platform will access device data just like the GSM and SIM marketer Ids while not the permission of the user. Android platform provides all security features, but there will always be a risk if the user will install suspicious apps or allow permission to an app without paying attention.

Android Architecture - The Open Handset Alliance released the Google Android SDK on November 12, 2007[1]. The conception of the Android platform is attracting more and more programmers in mobile computing fields. Android is a package of software for mobile devices, including an operating system, middleware and core applications. The Android SDK provides powerful tools and APIs necessary to develop applications on the Android platform using the Java programming language. Android platform is of open system architecture, with versatile development and debugging environment, but also supports a variety of scalable user experience, which has optimized graphics systems, rich media support and a very powerful browser. It enables reuse and replacement of components and an efficient database support and support various wireless communication means. It uses a Dalvik virtual machine heavily optimized for mobile devices [2].

Android also supports GPS, VideoCamera, compass, and 3d-accelerometer and provides rich APIs for map and location functions. Users can flexibly access, control and process the free Google map and implement location based mobile service in his mobile systems at low cost. Android platform will not only promote the technology (including the

* **Associate Professor (Computer Science & I.T.) S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

platform itself) of innovation, but also help to reduce development costs, and enable developers to form their mobile systems with unique characteristics. The Android architecture and its main components are shown in Fig.1 as follows [3&4].

Figure 1. Android architecture.

Linux Kernel - Linux Kernel is at the bottom layer of the software stack. Whole Android Operating System is built on this layer with some changes made by the Google[5]. Like main Operating System it provides the following functionalities: Process management, Memory Management, device management (ex. camera, keypad, display etc). Android operating system interacts with the hardware of the device with this layer[6]. This layer also contains many important hardware device drivers. Linux kernel is also responsible for managing virtual memory, networking, drivers, and power management[7].

Native Libraries Layer - On the top of the Linux Kernel layer is Android's native libraries. This layer enables the device to handle different types of data. Data is specific to hardware. All these libraries are written in c or c++ language. These libraries are called through java interface. Some important native libraries are:

Surface Manager: it is used to manage display of device. Surface Manager used for composing windows on the screen.

SQLite: SQLite is the database used in android for data storage. It is relational database and available to all applications.

WebKit: It is the browser engine used to display HTML content.

Media framework: Media framework provides playbacks and recording of various audio, video and picture formats.(for example MP3, AAC, AMR, JPG, MPEG4, H.264, and PNG).

Free Type: Bitmap and Font Rendering

OpenGL | ES: Used to render 2D or 3D graphics content to the screen

libc: It contains System related C libraries[8].

Android Runtime - Android Runtime consists of Dalvik Virtual machine and Core Java libraries. It is located on the same level as the library layer[9]. Dalvik Virtual Machine is a type of Java Virtual Machine used for running applications on Android device. The Dalvik VM enables every Android application to run in its own process, with its own instance of the Dalvik virtual machine. The Dalvik VM allows multiple instance of Virtual machine to be created simultaneously providing security, isolation, memory management and threading support[10]. Unlike Java VM which is process-based, Dalvik Virtual Machine is register-base. Dalvik Virtual Machine run .dex files which are created from .class file by dx tool. dx tool is included in Android SDK. DVM is optimized for low processing power and low memory environments. DVM is developed by Dan Bornstein from Google[11].

Application Framework - The Application Framework layer provides many higher-level services or major APIs to applications in the form of Java classes. Application developers are allowed to make use of these services in their applications[12]. These are the blocks with which developer's applications directly interact. Important blocks of Application framework are: Activity Manager: It manages the life cycle of applications. Content Providers: It is used to manage the data sharing between applications, manages how to access data from other applications. Telephony Manager: it manages all voice call related functionalities. Location Manager: It is used for Location management, using GPS or cell tower. Resource Manager: Manage the various types of resources used in Application[13].

Application Layer - The Applications Layer is the top layer in the Android architecture. Some applications come pre-installed with every device, such as: SMS client app, Dialer, Web browser and Contact manager. A developer can write his own application and can replace it with the existing application[14].

Different Security Features Of Android OS - Android Operating system should ensure the security of users, user's data, applications, the device, and the network. To achieve the security of these components Android provides these key security features[15]:

1) Security at the Operating System level through the Linux kernel.
2) Application sandbox for all applications
3) Secure inter-process communication.
4) Application signing.
5) Application-defined and user-granted permissions.

Linux Kernel - Android operating system is based on Linux kernel. Due to its open source nature it is researched, attacked and fixed by many research developers. So Linux has become stable and secure kernel. Linux kernel provides Android with several key security features including:

a) A user-based permissions model - In the Linux file system each file and directories has three user based

permissions. owner, group, other users. owner - The Owner permissions apply only the owner of the file or directory. group - The group permissions apply only to the group that has been assigned to the file or directory. other users - The other Users permissions apply to all other users on the system. Each file or directory has three basic permission types: read - The read permission means user's ability to read the contents of the file. write - write permissions mean's user's ability to write or edit a file or directory. execute - The execute permission means user's ability to execute a file or view the contents of a directory[16]. This permission model ensures that proper security is maintained while accessing android files.

b) Process isolation - The Android operating system assigns a unique user ID (UID) to each Android application and runs it as a separate process.

c) Extensible mechanism for secure IPC.

d) The ability to remove unnecessary and insecure parts of the kernel[17].

The Application Sandbox - A sandbox is a security mechanism for separating running programs and limiting the resources of the device to application. It is often used to execute untested code or programs from un-trusted users and un-trusted websites. By using sandboxing technique limited access to device's resources is given. Therefore security of the system is increased. Sandboxing technology is frequently used to test unverified programs which may contain a virus or other malware code, without allowing the software or code to harm the host device. With the help of sandbox un-trusted program access only those resource of the device for which permission is granted. Permission is denied if it tries to access other resources of the device[18].

Secure inter-process communication - Some of the applications still use traditional Linux techniques such as network sockets, file system and shared files for inter-process communication. But android operating system also provides new mechanism for IPC such as Binder, Services, Intents and Content Providers. All these mechanism allows developers to verify the identity of application and also used to set the security policies[19].

Application signing - In order to install and run applications on Android OS they must be digitally signed. This feature also used to establishing trust relationship between applications. If an application is no signed properly then it cannot be installed on the emulator also. Some standard tools such as Keytool and Jarsigner are used to generate keys and sign application .apk files[20].

Application-defined and user-granted permissions - Permissions are an Android security mechanism to allow or restrict application access. By default, Android applications have no permissions granted, making them safe by not allowing them to gain access to protected APIs[21]. Some of the protected APIs include: Camera functions, Location data (GPS), Bluetooth functions, Telephony functions, SMS/MMS functions and Network or data connections. These resources are accessed only through the operating system[22].

Conclusion - From above discussion it is clear that Android Operating System follows a variety of security mechanism. When a developer install an application a new user profile with that application is created. Each application run with its own instance of Dalvik VM. So applications cannot access each other's data. If applications want to access shared data or resources then they require permissions. All Android applications are signed so users know that the application is authentic. The signing mechanism allows developer to control which applications can grant access to other application on the system.

References :-

1. Open Hanset Alliance,http://www.openhandsetalliance.com/.
2. Android - An Open Handset Alliance Project, http://code.google.com-/intl/zh-CN/android/.
3. J.F. DiMarzio, Android A Programmer's Guide, Chicago: McGraw-Hill, Jul. 2008.
4. Android Developers, http://www.androidin.com/.
5. http://www.tkhts.com/android/android-archit ecture.jsp
6. http://www.tutorialspoint.com/android android _ architecture.htm
7. http://www.compiletimeerror.com/2012/12/blog-post.html#.UuYiIGC6bIU
8. http://www.tkhts.com/android/android-archit ecture.jsp
9. Ibid
10. http://www.android-appmarket.com/ android - architecture.html
11. http://ptcoresec.eu/2013/05/02/part-1-getting -to-know-android/
12. http://www.tutorialspoint.com/android/android_ architecture.htm
13. http://www.tkhts.com/android/android-archit ecture.jsp
14. Ibid
15. http://source.android.com/devices/tech/security/
16. http://www.linux.com/learn/tutorials/309527-understanding-linux-file-permissions
17. http://source.android.com/devices/tech/security/
18. http://en.wikipedia.org/wiki/Sandbox_ (computer_ security)
19. http://developer.android.com/training/articles/security-tips.html
20. http://developer.android.com/tools/publishing/app-signing.html
21. http://www.ibm.com/developerworks/library/x-androidsecurity/
22. http://source.android.com/devices/tech/security/

****

Open Source versus Closed Source Software

Dr. Sanjay Chaudhary * Rajnish Kumawat **

Abstract - Once new software is unleashed into the current market, those who decide to use or develop the new software are often faced with the challenges of updating, protecting, maintaining, and overall improving the product. Because of the differences in structure between open and closed source software, the way in which it is supported and maintained varies as well. In this paper, open versus closed source software are discussed. In light of the fact the definition, pros and cons of open and closed source software are discussed.

Introduction - Today, there is still nothing like a level playing field for open source and closed source software. Even so, regulators need to think about how they will recognize it, and then maintain a delicate balance afterward.

Closed source software (i.e. Microsoft Windows and Office) is developed by a single person or company. Only the final product that is run on your computer is made available, while the all important source code or recipe for making the software is kept a secret. This software is normally copyright or patented and is legally protected as intellectual property. The owner of the software distributes the software directly or via vendors to you the end user. You cannot legally give it away, copy it or modify it in any way unless you have a special license or permission to do so.

Open source software is software whose source code is available for modification or enhancement by anyone."Source code" is the part of software that most computer users don't ever see; it's the code computer programmers can manipulate to change how a piece of software—a "program" or "application"—works. Programmers who have access to a computer program's source code can improve that program by adding features to it or fixing parts that don't always work correctly.

Open-source software (**OSS**) is computer software with its source code made available and licensed with a license in which the copyright holder provides the rights to study, change and distribute the software to anyone and for any purpose. Open-source software is very often developed in a public, collaborative manner. Open-source software is the most prominent example of open-source development and often compared to (technically defined) user-generated content or (legally defined) open-content movements.

Software experts and researchers on open source software have identified several advantages and disadvantages. The main advantage for business is that open source is a good way for business to achieve greater penetration of the market. Companies that offer open source software are able to establish an industry standard and, thus, gain competitive advantage. It has also helped build developer loyalty as developers feel empowered and have a sense of ownership of the end product. Moreover, lower costs of marketing and logistical services are needed for OSS. OSS also helps companies keep abreast of technology developments. It is a good tool to promote a company's image, including its commercial products.The OSS development approach has helped produce reliable, high quality software quickly and inexpensively. Moreover, free software can be developed in accord with purely technical requirements. It does not require thinking about commercial pressure that often degrades the quality of the software. Commercial pressures make traditional software developers pay more attention to customers' requirements than to security requirements, since such features are somewhat invisible to the customer.

It is sometimes said that the open source development process may not be well defined and the stages in the development process, such as system testing and documentation may be ignored. However this is only true for small (mostly single programmer) projects. Larger, successful projects do define and enforce at least some rules as they need them to make the teamwork possible. In the most complex projects these rules may be as strict as reviewing even minor change by two independent developers.

Software experts and researchers who are not convinced by open source's ability to produce quality systems identify the unclear process, the late defect discovery and the lack of any empirical evidence as the most important problems (collected data concerning productivity and quality). It is also difficult to design a commercially sound business model around the open source paradigm. Consequently, only technical requirements may be satisfied and not the ones of the market. In terms of security, open source may allow hackers to know about the weaknesses or loopholes of the software more easily than closed-source software. It depends on control mechanisms in order to create effective performance of autonomous agents who participate in virtual organizations.

Pros of open source - There are a number of advantages to using open source technology including;

* **Associate Professor (Computer Science & I.T.) S.S. College of Engineering, Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

- Price – open source technology is nearly always free to use therefore can help reduce the budget needed
- Customizable – open source enables developers to modify the source code and adapt the end product. However, this sometimes means you have to submit your new work back to the community.
- More independence - Open source users have more independence from software companies. Therefore, if the company goes bankrupt the source code is still available. Also companies cannot force unwanted upgrades on users.
- Community Support - there are a wide range of open source forums where users can ask others for help.

All of these can be very attractive advantages when people are looking to develop online resources.

Cons of open source - However there are a number of disadvantages to using open source technology;

- Purpose – everyone has different needs to fulfill when developing an online resource. However, open source software is created to meet generic needs and the software only allows modification to what is already there. Therefore a resource based on using open source technology may not be as effective as creating a resource from scratch, which would allow all of your specific needs to be met.
- User Interface – many open source projects do not focus on user experience, which is now becoming increasingly more important to the end user.
- Bugs do not get fixed – developers enjoy working on exciting aspects of open source projects, therefore there can be different bugs within some software which are not resolved.
- Lack of official support – open source technology can come with a lack of documentation and it is not always possible to purchase support. Therefore, along with the underlying bugs this can lead to a bad experience for everyone involved.

Closed source / proprietary software - Proprietary software or **closed source software** is computer software licensed under exclusive legal right of the copyright holder with the intent that the licensee is given the right to use the software only under certain conditions, and restricted from other uses, such as modification, sharing, studying, redistribution, or reverse engineering. Usually the source code of proprietary software is not made available. Proprietary software vendors usually regard source code as a trade secret. Proprietary software vendors can prohibit users from sharing the software with others. Another unique license is required for another party to use the software.

In the case of proprietary software with source code available, the vendor may also prohibit customers from distributing their modifications to the source code.

Closed source software pros

- When purchasing closed source software, you get more than a disc.
- You'll get a document stating you've purchased something, and with it an expectation that it'll work in the way promised. If it doesn't work in that way, you can take legal action against the provider.
- Any software provider worth their salt will also provide at least some degree of service/support for the purchased application.

Closed source software cons -

- Software providers carry the never-ending burden of upgrading their products. This means they need to invest heavily in keeping up with, or ahead of, the industry. Naturally, these costs are passed onto the user.
- The majority of closed source software is pushed into the market long before it's ready. Many software companies view this practice (although they'll be unlikely to admit it) as crucial to the development/testing of the product.
- While premature software distribution can mean speedy testing, and therefore fast bug-fixing, it also means that early users can end up paying a harsh price for product development by way of serious compromises to the integrity of their IT.
- The most common method of fixing bugs is for the software producer to supply a patch. However, users are often pretty bad at installing patches – this means that they, and their company's systems, remain vulnerable even after a bug is found.
- Since closed source companies are the only organizations with the rights to build and develop their products, there are a small number of versions of commonly used software, especially in light of the number of computers in use today. This means that the warped writers of viruses can exploit computers by the thousands, damaging entire networks, and sometimes bringing businesses to a standstill.

Related Literature - The literature on open source focuses mainly on the individual incentives to participate in open source projects, the incentives of firms to adopt open source initiatives, the business models of firms operating within the open source landscape and the competitive implications of open source software (Lerner and Tirole 2004, Chapter 2 of this book). Johnson (2002) models the contribution to an open source project as a problem of private provision of a public good and analyzes the effect of increasing the number of developers. Lerner and Tirole (2001, 2002) discuss the incentives of individual programmers and software firms to participate in open source projects. They argue that programmers are motivated by "peer recognition" and delayed career benefits such as being hired by a software firm, or getting access to funding for future software ventures. Mustonen (2003) proposes a model in which the participation of programmers in open source projects is endogenous and shows that a low implementation cost of an open source application is crucial for its survival when it competes with a proprietary application. Casadesus-Masanell and Ghemawat (2003) study a dynamic setting of competition between Windows and Linux. Bitzer (2004) analyzes why some

software firms support Linux depending on the heterogeneity between Linux and the firms' commercial products. Economides and Katsamakas (2005) analyze the strategic differences between a proprietary and an open source technology platform and their competition. Mustonen (2005) analyzes when a proprietary software firm may support the development of substitute open source software. Comino and Manenti (2005) assume informed and uninformed users about the existence of open source applications, and study the welfare implications of public policies supporting open source software.

Perhaps the closest paper to this one is that of Bitzer and Schroder (2003), which also analyzes the innovation performance of open source and proprietary software development. It shows that competition between open source and proprietary products leads to an increase in the level of technology of both products, as a result of increased investment. The focus of Bitzer and Schroder (2003) is on the effect of competition on innovation, while the focus of our chapter is on a direct comparison of the innovation in the two alternative software ecosystems, which consist of application and operating system developers.

Conclusion - Both open source and closed source software are far from perfect. If you are new to computers then closed source software is probably for you, as the cost of training and getting yourself competent will exceed getting the cost of buying easier to use software. The support offered by closed source companies in Africa tends to be better than its open source competitors. There are companies that offer paid support for open source software, but again this is still relatively small in Africa.

On the other hand, open source software is catching up quickly with its closed source counterparts. Some versions or distributions of Linux can be installed completely without having to touch a keyboard and projects are currently running to improve the documentation available for open source software. Also as overall computer literacy improves as computers become more pervasive, open source software will become more appealing.

In the author's opinion, the abilities and friendliness of open and closed source software are merging, and the real showdown will happen in five to ten years when the only real difference between the two classes will be the cost. This can already be seen by hints of the South African and Nigerian governments considering open source products.

References:-

1. Bitzer, J. and P. J. H. Schroder, 2003. Competition and Innovation in a Technology Setting Software Duopoly. DIW Discussion Paper No. 363.
2. Bitzer, J., 2004. Commercial vs. open source software: The role of product heterogeneity in competition. Economic Systems, 28(4), 369-381.
3. Casadesus-Masanell, R. and P. Ghemawat, 2003. Dynamic Mixed Duopoly: A Model Motivated by Linux vs. Windows. Harvard Business School Working Paper 04-012.
4. Comino S. and F. Manenti, 2005. Government policies supporting open source software for the mass market. Review of Industrial Organizaiion, 26(2), 217-240.
5. Economides, N. and E. Katsamakas, 2006. Two-sided competition of proprietary vs. open-source technology platforms. Management Science, forthcoming.
6. http://opensource.com
7. http://www.scienceinafrica.com
8. https://joinup.ec.europa.eu/elibrary/case/open-versus-closed-source-delicate-balance
9. Johnson, J. P., 2002. Open source software: Private provision of a public good. Journal of Economics & Management Strategy, 1 l(4). 637-662.
10. Lemer, J. and J. Tirole, 2001. The open source movement: Key research questions. European Economic Review, 45(4-6), 819-826.
11. Lemer, J. and J. Tirole, 2002. Some simple economics of open source. Journal of Industrial Economics, 50(2), 197-234.
12. Lerner, J. and J. Tirole, 2004. The Economics of Technology Sharing: Open Source and Beyond. NBER Working Paper No. 10956.
13. Mustonen, M., 2003. Copyleft - the economics of Linux and other open source software. Informulion Economics and Policy, 15(1), 99-121.
14. Mustonen, M., 2005. When does a firm support substitute open source programming. Journal qf Econontics and Munugm~ent Strategy, 14(1), 121-139.
15. OGC (Office of Government Commerce). 2004a. Open Source Software Trials in Government Final Report. Available online at:http://www.ogc.gov.uk
16. Open Source, Open Standards and Re-Use: Government Action Plan (pdf) [http://www.cabinetoffice.gov.uk/sites/default/files/resources/open_source.pdf]
17. Woods, D. and Guliani, G. 2005. Open Source for the Enterprise: Managing Risks, Reaping Rewards. Sebastopol, CA, USA: O'Reilly.

****

क्षय रोग – एक अध्ययन एवं राष्ट्रीय नियंत्रण कार्यक्रम

प्रो. मनीषा सिसोदिया * प्रो. रीता गणावा * *

शोध सारांश – प्रदेश के लोकप्रिय एवं यशस्वी मुख्यमंत्री माननीय श्री शिवराजसिंह जी चौहान द्वारा लोक सेवाओं के गारंटी अधिनियम 2010 पारित कर नागरिकों के अधिकारों को सशक्त बनाकर अभिनव कार्य किया हैं। आमजन को याचनाभाव से मुक्त कर सशक्त बना दिया हैं एवं लोक सेवा में कोताही

शब्द कुंजी – लोक सेवा, अधिसूचित, हितग्राहियों, पदाभिहित, शास्ति ।

प्रस्तावना – टी. बी. एक घातक संक्रामक बीमारी है जो कि क्षय रोगाणु (माइक्रोबेक्टीरियम ट्युबरकुलोसिस) से फैलता है और यह बिना ईलाज जीवाणुयुक्त रोगी से किसी अन्य स्वस्थ्य व्यक्ति को लग सकती है। टी. बी. रोगी के खाँसने या छींकने से टी. बी. के जीवाणु हवा द्वारा फैलते हैं। टी. बी. विषेष रूप से फेफड़ों पर असर करती है, लेकिन इसका असर शरीर के अन्य भागों, जैसे मस्तिष्क, हड्डियों, ग्रंथियों आदि पर भी हो सकता है।

टी. बी. के रोगाणु वायु द्वारा फैलते हैं। जब फेफड़े की क्षय का रोगी खांसता या छींकता है वह लाखों–करोड़ों की संख्या में टी. बी. के रोगाणु थूक के छोटे कणों के रूप में वातावरण में फेंकता है। बलगम के छोटे–छोटे कण जब सांस के साथ स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करते हैं तब स्वस्थ व्यक्ति क्षय रोग से ग्रसित हो सकता है। यदि किसी व्यक्ति को दो सप्ताह या उससे अधिक समय तक खाँसी रहे, तो टी. बी. की शंका हो सकती है। ऐसे व्यक्तियों को नजदीकी सरकारी प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में बलगम जाँच हेतु ले जायें।

भारत में टी. बी. का विस्तार –

- हर वर्ष 18 लाख टी. बी0 के नये रोगी जुड़ जाते हैं। जिसमें 8 लाख बलगम धनात्मक हैं, जो कि रोग को फैलाने वाले हैं।
- एक धनात्मक बलगम वाले रोगी प्रतिवर्ष 10 से 15 स्वस्थ्य व्यक्तियों को इस रोग से संक्रमित करता है।
- अभी भी प्रतिवर्ष 370,000 रोगी टी. बी. से मरते हैं। यानि कि 1000 व्यक्ति प्रतिदिन।
- भारत में आज हर तीन मिनट पर दो व्यक्ति टी. बी. से मरते है।

टी. बी. का वर्गीकरण –

फेफड़े की टी.बी.

धनात्मक बलगम के रोगी। (जिनके बलगम में रोगाणु आते हैं।)

ऋणात्मक बलगम वाले रोगी (जिनके बलगम में रोगाणु नहीं आते)

फेफड़े के अलावा अन्य अंगों की टी.बी. – लसिका ग्रंथियों में, हड्डियों व जोड़ में, जननांग व मूत्रांग में, स्नायु तंत्र में, आंतों में।

- **क्षय रोग के लक्षण –** फेफड़ों की टी. बी.–
- 1. दो सप्ताह से अधिक की खांसी (खखार के साथ)
- 2. शाम के समय शरीर गर्म होना
- 3. वजन में कमी
- 4. भूख न लगना
- 5. छाती में दर्द होना
- 6. खखार में खून आना

DOTS क्या है–

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सीधी देखरेख में *अल्पकालीन चिकित्सा* जिसमें मरीज को सामने रह कर क्षय रोग की दवा खिलाई जाती है उसे DOTS कहते है।

- मरीज के रोग मुक्त होने की जिम्मेदारी स्वास्थ्य कार्यकर्ता की है न कि मरीज की।
- मरीजों के लिये एक सेवा क्षय की बीमारी फैलने से रोक कर समाज को इस बीमारी से सुरक्षित रखती है।
- कॉस्ट– इफेक्टिव केवल यही विधि है जिसमें रोग मुक्ति सुनिश्चित है।

डॉट्स के 5 अंग –

1. राजनीतिक एवं प्रशासनिक वचनबद्धता
2. उत्तम जांच –माइक्रोस्कोप से मरीज की निशुल्क: खखार जांच
3. दवाईयों की निरंतर –निर्बाध आपूर्ति (रोगी किट)
4. सीधी देखरेख में मरीज का उपचार
5. सुनिश्चित रिकार्डिंग और रिर्पोटिग प्रणाली

(रोग मुक्ति का रेट)

- कितने मरीजों को चिकित्सा पर रखा गया एवं उसमें से कितने मरीज रोग मुक्त हुए, इसके अनुपात को **क्योर रेट** कहते है। अगर इलाज ले रहे 100 मरीजों में से 85 मरीज रोगमुक्त घोषित किये गये तो क्योर रेट 85 प्रतिशत होगा ।
- ऐसा मरीज जो पहले स्पूटम पॉजिटिव था और अपना इलाज पूरा कर लेता है एवं बाद में कम से कम दो बार स्पूटम नेगेटिव (जिसमें से एक स्पूटम परीक्षण उपचार समाप्ति पर किया गया हो) निकलता है उसे रोग मूक्त घोषित करेगे।

डॉट प्रोवाइडर –

1. ऐसा व्यक्ति जो कि सामान्य पढ़ा लिखा है।
2. व्यवहार कुशल एवं कर्तव्य के प्रति निष्ठावान है।
3. ईर्ष्या, द्वेष, एवं पूर्वाग्रह से ग्रसित न हो।
4. मरीज के परिवार का सदस्य न हो।
5. मरीज को सहज रुप से उपलब्ध हो।

डायरेक्टली ऑब्जर्व्ड ट्रीटमेंट–शॉर्टकोर्स कीमोथेरेपी –

इस प्रणाली के अन्तर्गत क्षय रोग का उपचार दो पक्षों में दिया जाता है

1. गहन पक्ष –

* सहायक प्राध्यापक (जीव विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (जीव विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

- इस पक्ष में औषधियां स्वास्थ्य कार्यकर्ता के सामने खानी है।
- गहन पक्ष 2 से 3 माह तक चलता है।
- इस पक्ष में रोगी को सप्ताह में तीन बार एक दिन छोड़कर (सोमवार, बुधवार, शुक्रवार या मंगल, गुरु, शनि) के दवाईयां दी जानी है।
- इसके उपरान्त यदि बलगम की जाँच ऋणात्मक आती है तो निरन्तर पक्ष प्रारम्भ की जाती है।

2. निरन्तर पक्ष:- निरन्तर पक्ष 4 से 5 माह तक चलता है

- इस पक्ष में रोगी को वीकली काम्बीपैक घर ले जाने के लिए दिया जाता जिसमें से टी. बी. की दवा उसे एक दिन छोड़कर सप्ताह में 3 दिन खाना है।
- बीच के दिनों में उसी वीकली कोम्बीपैक में दिए हुए विटामिन की दवा भी खानी है।
- साप्ताहिक पैकेट की पहली खुराक रोगी को स्वास्थ्य कार्यकर्ता के सामने ही खानी है।
- रोगी द्वारा घर पर दवाईयां खायी जा रही है, इसको सुनिश्चित करने हेतु जब वह अगले सप्ताह की दवायें लेने आवे तो पूर्व में दिये गये साप्ताहिक पैकेट का खाली खोल देखें।
- निरन्तर पक्ष में भी दो माह के पश्चात् एवं इलाज पूर्ण होने पर रोगी के बलगम की जाँच की जानी आवश्यक है।

राष्ट्रीय क्षय नियंत्रण कार्यक्रम – सन् 1962 से विभिन्न जिलों में राष्ट्रीय क्षय नियंत्रण कार्यक्रम के अन्तर्गत सामान्य स्वास्थ्य सेवा के प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं के माध्यम से क्षय रोग हेतु चिकित्सा सेवायें उपलब्ध कराई गईं। इसके परिणाम उत्साहजनक नहीं निकले।

सन् 1992 में क्षय नियंत्रण कार्यक्रम की समीक्षा की गई।

फलस्वरूप 1993 में पायलट टेस्टिंग के बाद 1997 से राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न पक्षों में डॉट्स पद्धति आधारित पूनरीक्षित राष्ट्रीय क्षय नियंत्रण कार्यक्रम (आर0 एन0 टी0 सी0 पी0) लागू की गई।

धीरे-धीरे पूरे देश को 24 मार्च 2006 (विश्व क्षय दिवस) तक कवर कर लिया गया।

उद्देश्य –

1. सभी खोजे गये मरीजों का पंजीयन आवश्यक है। सभी पंजीकृत मरीजों का उनके रोग से मुक्त होने तक इलाज किया जावे।
2. डायरेक्टली ऑबजर्व्ड चिकित्सा, शार्ट-कोर्स कीमोथेरेपी(डॉट्स) सभी को दी जावे।
3. दवाईयों की नियमित उपलब्धि।
4. मरीजों के खखार की जांच दर्शाये गये अंतर से कराकर मरीजों की अवस्था एवं रोग मुक्ति की जांच करें।
5. ऐसे मरीज जिनको 2 सप्ताह या उपर की खांसी चलती हो, स्वास्थ्य संस्था में आते है उनका निदान खंखार की जांच द्वारा किया जावे।

क्षय रोग को पूर्णत: समाप्त करने के लिये पांच मुख्य निर्देश-

1. 2-4 सप्ताह तक ज्वर या बिना ज्वर के खांसी आना और बलगम आना, क्षय हो सकता है? निकटतम स्वास्थ्य संस्था में जांच के लिये जाईये। यदि रोग का पता जल्दी लग जावेगा, उसका उपचार आसानी से हो जावेगा तथा पूर्ण स्वास्थ्य लाभ होगा।
2. इस रोग के हो जाने पर नियमपूर्वक तथा लगातार नियमित इलाज तब तक जारी रखना चाहिये जब तक कि डॉक्टर बंद करने की सलाह न दे।
3. बच्चों को क्षय रोग से बचने के लिये बी.सी.जी. का टीका शीघ्र लगवा देना चाहिये।
4. क्षय रोग को रोका जा सकता है। खांसी की 'स्वास्थ्य शिक्षा 'ही रोग के जीवाणुओं को क्षय रोगी से स्वस्थ्य व्यक्ति में फैलाने से रोक सकती है। खांसते व छींकते समय मुंह पर सदैव कपड़ा रखें। जगह- जगह नहीं थूकें।
5. क्षय रोग संबंधी समस्याओं से जन समुदाय को अवगत कराइये तथा '*पुनरीक्षित राष्ट्रीय क्षय नियंत्रण कार्यक्रम* 'को सफल बनाने में उन्हें प्रेरित करें।

रोगी को निम्नलिखित बातों की जानकारी दें ।

- रोगी को दी जाने वाली दवाईयों का ब्योरा, दवाईयों के बक्से का रंग व इंजेक्शन के बारे में जानकारी दें।
- उपचार नियमित रूप से और पूर्ण लेने का महत्तव
- दवाईयां/इंजेक्शन की मात्रा, अंतराल एवं अवधि के बारे में जानकारी दें।
- बलगम की जांच का महत्त्व एवं निर्धारित समय पर जांच सम्बन्धी जानकारी।
- बलगम परीक्षण के परिणाम साधारण भाषा में रोगी को समझाऐं।
- दवाईयों व इंजेक्शन के संभावित हानिकारक प्रभाव के बारे में जानकारी दें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. wwww.nrhm-mis.nie.m
2. wwww.scnumponline.org
3. wwww.idsp.nic.in
4. wwww.nikshay.gov.in
5. wwww.hrmis.vmcpl.in/users/sign.in
6. wwww.communityactionmp.com
7. wwww.nrhm-mcts.nic.in
8. wwww.nrhmppmp2013.14.in

****

सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी की भूमिका

डॉ. बिन्दु गांधी *

प्रस्तावना – अंग्रेजी भाषा के शब्द स्टेटीक्स का अर्थ राज्य है। इसका हिन्दी अनुवाद सांख्यिकी है। प्राचीनकाल में इसे, राजाओं का विज्ञान अथवा राज्य शिल्प विज्ञान के रूप में जाना जाता था। इस विज्ञान द्वारा प्राचीनकाल में व्यापार, ज्योतिष तथा नक्षत्र विज्ञान आदि के आंकड़े एकत्रित किए जाते थे। वर्तमान में मानव ज्ञान की सभी शाखाओं में इसका प्रयोग सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है।

सांख्यिकी की व्यापक परिभाषा होरेस सिक्राइस्ट ने दी है। वे लिखते हैं, 'सांख्यिकी तथ्यों के उन समूहों को कहते हैं जो अनेक कारणों से पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होते है। जो अंकों में प्रकट किये जाते हैं, यथोचित शुद्धता के अनुसार, जिनका आगणन अथवा अनुमान लगाया जाता हैं, जिन्हें किसी पूर्व निश्चित उद्देश्य के लिए एक सुव्यवस्थित रीति द्वारा एकत्र किया जाता हैं, जिन्हें तुलना के लिए एक दूसरे के संबंध में रखा जा सकता है।

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि सांख्यिकी अनिश्चितता की स्थिति में उचित निर्णय लेने में सहायक विज्ञान है। इसमें अनेक विधियों का संग्रह हैं, जिसके द्वारा किसी घटना से संबंधित उचित एवं विवेकपूर्ण निष्कर्ष निकाले जाते हैं। सांख्यिकी का फिर भी कार्य केवल तथ्यों को संकलित कर उन्हें प्रदर्शित करता हैं, उनमें उचित निष्कर्ष निकालने का दायित्व शोधकर्ता का है।

जब हम सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकी की उपादेयता पर विचार करते हैं तो स्पष्ट होता है कि प्राचीन समय में इस विज्ञान को राजनीतिक अंक गणित कहा जाता था क्योंकि तब इसकी उपयोगिता राज्य तक ही सीमित थी। आज इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखकर इसका ज्ञान के हर क्षेत्र में, चाहे वह सामाजिक विज्ञान हो या प्राकृतिक इसका उपयोग आवश्यक ही नहीं लगभग अनिवार्य हो गया हैं। तात्पर्य यह है कि सांख्यिकी एक ऐसा साधन है जो प्रयोग सिद्ध अनुसंधान के लगभग हर क्षेत्र में, उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है। आधुनिक विज्ञान के कम्प्यूटर युग में इसे यदि मानव कल्याण का गणित कहे तो अतिष्योक्ति नहीं होगी।

मूलतः सांख्यिकी शुद्ध रूप में तथ्यों को संख्यात्क रूप में प्रस्तुत करता है। जिससे सामाजिक समस्याओं की यथास्थिति प्रमाणित जानकारी उपलब्ध हो जाती है। इसमें गुण दोष का वर्णन नहीं होता है। समस्या अंकों में होने से इससे उसके विभिन्न पहलुओं पर विचार कर, समाधान तथा निष्कर्ष की दिशा में अग्रसार होने में अनुसंधानकर्ता को सरलता व सुविधा प्राप्त हो जाती है। जैसे समाज में प्रचलित सती प्रथा, बाल विवाह, आदि समस्याओं के पक्ष – विपक्ष की राय संख्या में ज्ञात होने पर, जनमत के सोच के संबंध में आसानी से किसी निर्णाध पर पहुँचा जा सकता है।

सांख्यिकी की विभिन्न रीतियाँ है, जैसे वर्गीकरण, सारणीयन, चित्रमय एवं बिन्दु रेखीय प्रदर्शन, और केन्द्रिय प्रवृत्ति के माप आदि। इनके द्वारा सामाजिक अनुसंधान के लिये बिखरे हुए जटिल आंकड़ों को बोध गम्य बनाकर शोध में उनकी प्रभावी अभिव्यक्ति की जा सकती है, जैसे हमारी विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं की प्रगति, भारत में राष्ट्रीय आय या प्रति व्यक्ति आय आदि के संबंध में स्थिति को संख्याओं में चित्र, ग्राफ और वक्रों द्वारा प्रदर्शित कर सरलता से सम्प्रेशित किया जा सकता है।

सांख्यिकी का सामाजिक शोध कार्य में, सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान तुलनात्मक अध्ययन की सुविधा प्रदान करता हैं। शोध में विभिन्न तथ्यों की तुलना करने के लिए माध्य, सूचकांक और गुणांक आदि का प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति से दो देशों की प्रति व्यक्ति आय की तुलना करने के साथ ही किसी भी देश में आय के वितरण में पाई जाने वाली व्यापार असमानता आदि का भी पता लगाया जा सकता है। सह संबंध तथा गुण साहचर्य की रीतियों द्वारा विविध घटनाओं जैसे गरीबी, अपराध, भ्रष्टाचार तथा नगरीकरण की दर आदि में पाये जाने वाले संबंधों की खोज में सांख्यिकी का प्रयोग अनिवार्य है।

सांख्यिकी से सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, औद्योगिक व्यापारिक तथा अन्य कई क्षेत्रों में नीति निर्धारण में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। यह प्रायः परिणाम मूलक भी होती है। जैसे देश की आयात–निर्यात नीति, मूल्य नीति, मद्य निषेध नीति तथा जनसंख्या नीति आदि के निर्धारण में, संकलित आंकड़ों का जहां बहुत महत्व है, वहाँ आंकड़ों का विश्लेषण भी अनिवार्य है, जो सांख्यिकी से संभव होता है। समस्या के जुड़े पूर्व आंकड़ों की सहायता से तत्संबंधित विषय की सफलता या असफलता का भी आंकलन होता है। अतः नीति निर्धारण के साथ–साथ नीति के मूल्याकंन का कार्य सांख्यिकी द्वारा ही विश्वसनीय रूप में संभव होता है।

सांख्यिकी की आत्मा का वास गणित में है। पाश्चात्य दार्शनिक प्लेटो तथा अरस्तू आदि ने ज्ञान का उद्गम गणित से मानकर इसकी शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की है। व्यक्ति के ज्ञान और अनुभव को प्रेरक दिशा में अभिप्रेरित करने का कार्य सांख्यिकी कर रहा है। सांख्यिकी के माध्यम से उपलबध आंकड़ों को जानकर शोधकर्ता को पूर्वाग्रह से मुक्ति मिलती है तथा विषय के प्रति तर्क पूर्ण चिंतन की प्रेरणा तथा दिशा मिलती है।

सांख्यिकी सामान्य रूप में उपलब्ध आंकड़ो के विश्लेषण के माध्यम से किसी निष्कर्ष तक पहुँचने की यात्रा है, परन्तु इसके आधार पर भावी स्थितियों का अनुमान लगाने में, इसकी आन्तरगणन, बाह्यगणन और पूर्वानुमान प्रणालियाँ भी बड़ी सहायक होती है। आर्थिक एवं सामाजिक विकास योजनाओं में कल्पना आधारित अनुमानों की अपेक्षा, सांख्यिकी पर आधारित अनुमान अधिक यथार्थ व उपयोगी सिद्ध होते है। सच तो यह है कि एक सांख्यिकी आधारित अनुमान सही या गलत सिद्ध हो सकता है, परन्तु हर स्थिति में यह किसी आकस्मिक अनुमान से अधिक उचित सिद्ध किया जा सकता है।

सामाजिक अध्ययन हो या शुद्ध विज्ञान विषयक कोई वैज्ञानिक अध्ययन सभी में निगमन विधि द्वारा किये जाने वाले पुराने नियमों का

* सहायक प्राध्यापक (रसायन शास्त्र) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

परीक्षण या नवीन सिद्धांतों के निर्माण में सांख्यिकी की उपयोगिता निर्विवाद रूप से सिद्ध हुई है। यहां यह उल्लेख प्रासंगिक है कि माल्थस का 'जनसंख्या सिद्धान्त' तथा अर्थशास्त्र में 'द्रव्य के परिमाण सिद्धांत में कई संशोधन सांख्यिकी के आधार पर ही हुए है।

सांख्यिकी वह साधन है, जिसके उपयोग से, सामाजिक अनुसंधान से जुड़ी कई समस्याओं के विस्तार एवं गहनता की भी सही माप संभव है। समस्या से संबंधित आंकड़ों से अनेक तथ्यों पर प्रकाश पड़ता है। सामान्य कथन की अपेक्षा तथ्यों द्धारा अनुमोदित आंकड़े समस्या के मूल कारणों की विश्वसनीय खोज में अधिक सहायक सिद्ध होते है। यद्यपि वर्तमान समय में सांख्यिकी का प्रयोग, सामाजिक अनुसंधान अथवा वैज्ञानिक विषयों के शोध में अनिवार्य सा होता जा रहा है तदापि प्राचीनकाल में जिस तरह प्रशासन के क्षेत्र में इसका प्रयोग होता था, ठीक यही स्थिति आज भी है। समंकों को शासन प्रबंध के नेत्र कहा जाता है। आय-व्यय, जनसंख्या, उत्पादन, आयात-निर्यात, शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रतिरक्षा सभी विषयों में आंकड़ों के दिशा दर्शन के आधार पर प्रशासन की नीतियाँ निर्धारित करते है।

आज का युग भौतिक समृद्धि और विकास को व्यक्ति व राष्ट्र के जीवन में प्राथमिकता देता है। इसके लिए नियोजन एक प्राथमिक आवश्यकता है, और बिना सांख्यिकी, नियोजन की कल्पना नहीं की जा सकती है। अल्पकालीन हो या दीर्धकालीन नियोजन सभी में आवश्यक आंकड़ों की सहायता के बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता है। नियोजन की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों का अनुमान लगाना तथा तत्पश्चात् कार्य योजना का मूल्याकंन सभी स्थितियों में सांख्यिकी का ही सहायता प्राथमिक आवश्यकता होती है। कहा जाता है सांख्यिकी के बिना आर्थिक नियोजन पतवार और दिशा सूचक यंत्र रहित जहाज के समान है। वस्तुत: सांख्यिकी आर्थिक नियोजन की दृढ़ आधारशीला है।

सामाजिक शोध के संदर्भ में जब अर्थशास्त्री आर्थिक समूहों जैसे सरल राष्ट्रीय उत्पाद, उपयोग, बचत, विनियोग व्यय और मुद्रा मूल्य में होने वाले परिवर्तन आदि के मापन के लिए आंकड़ों पर ही निर्भर करते है। ये आर्थिक सिद्धांतों का सत्यापन तथा प्राकल्पनाओं की जांच भी सांख्यिकी विधि से ही संभव होती है। सांख्यिकी का प्रयोग आर्थिक क्षेत्र की सभी समस्याओं में जमीनी स्तर पर उपयोग होता है।

निष्कर्ष यह कि सामाजिक क्षेत्र के अनुसंधान में वर्तमान में जिन विधियों का प्रयोग हो रहा है, उनमें सांख्यिकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा विश्वसनीय पद्धति है। सामाजिक शोध के क्षेत्र में समाज में हो रहे अपराध, गरीबी, बेकारी, वेश्यावृत्ति, बाल विवाह, पारिवारिक विघटन, निरक्षरता, भिक्षावृत्ति, अस्पृष्यता तथा साम्प्रदायिकता आदि सभी विषय मुख्य आते है, इनमें सर्वेक्षण के माध्यम से सांख्यिकी ही एकमात्र अध्ययन का प्रामाणिक माध्यम होती है। सभी समस्याऐं प्राय: जनसंख्या केन्द्रित होती है, अत: बिना सांख्यिकी अध्ययनकर्ता अंधे की भांति भटकता रहेगा। सांख्यिकी ही वस्तुत: शोध निर्देशक माध्यम है।

आज का युग संचार माध्यमों की आधुनिकतम उपलब्धियों से नया रूप ले रहा है। कम्प्यूटर व इन्टरनेट के माध्यम से जो सूचना क्रांति विश्व में हुई, उसमें मूलत: सभी कुछ आंकड़ों का खेल है। विश्व के सभी देशों में सिर्फ ज्ञान व अनुसंधान के क्षेत्र में ही नहीं उद्योग, व्यापार, भौतिकी तक, यहां तक कि संगीत से लेकर प्रक्षेपास्त्र निर्देशन तक में सांख्यिकी की महत्वपूर्ण भूमिका है। ब्रह्माण्ड के अध्ययन में क्षण-क्षण की दूरी, प्रस्थिति का आकलन सांख्यिकी का नियमित दैन्दिनी कार्य है। आज वैचारिक रूप में आम आदमी पर भी निरन्तर दैनिक समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, इन्टरनेट द्धारा संख्यात्मक तथ्यों तथा सांख्यिकी विश्लेषण व निर्वचन की बौछार हो रही है। लोकतंत्रीय राजनीति में तो सत्ता का सारा खेल ही गणितीय समीकरण पर निर्भर है। एक वोट के निर्णय से ही यह राजनीति प्रेरित और संचालित होती है। वास्तव में वर्तमान युग ही सांख्यिकी का युग है। आज की सामाजिक परिवर्तनों की तेज आंधी गति को समयोचित नियंत्रित करने के लिये तथा उसकी रफ्तार की नब्ज की धड़कन मापकर, उपचार को दिशा देने का प्रभावी साधन एक मात्र सांख्यिकी ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फड़िया डॉ.बी.एल. : शोध पद्धतियाँ : साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
2. खत्री हरीशकुमार : शोध प्रविधि : कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल.
3. मुकर्जी रविन्द्रनाथ : सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी : विवेक प्रकाशन दिल्ली
4. गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा : डॉ. डी.डी. : समाजशास्त्र : साहित्य भवन, आगरा
5. जैन डॉ.बी.एम. : शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीक : रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर.
6. महाजन डॉ. धर्मवीर, श्रीमती कमलेश : सामाजिक अनुसंधान के तत्व: शिक्षा साहित्य प्रकाशन मेरठ.

****

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ते आतंकवाद के कदमों की समीक्षा

डॉ. विजय कुमार राजौरिया *

प्रस्तावना – आज आतंकवाद का नाम सुनकर मानव समाज की रूह कांप जाती है। सम्पूर्ण मानवता आतंकवाद से त्रस्त है इसका खतरा विश्व में तकनीकी विकास के साथ बढ़ रहा है क्योंकि तकनीकी का इस्तेमाल विश्व में सृजनात्मक ऊर्जा को जाग्रत और दिलों के फासलों को दूर करने के बजाय केवल भौगोलिक दूरी को दूर करने के लिये किया जा रहा है। विश्व में अपने-अपने राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित करने, आर्थिक लाभ कमाने और महाशक्ति या महारथ हासिल करने के स्वार्थ ने आज आतंकवाद को बढ़ावा देकर मानव समाज के अस्तित्व को समाप्त होने के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है।

शाब्दिक रूप में 'टैरर' (आतंक) शब्द लैटिन भाषा से आया है और रोमन समूह की भाषाओं में जड़ जमाने के बाद यह शब्द यूरोप की अन्य भाषाओं में भी प्रचलित हो गया है इस शब्द से व्युत्पन्न 'टैररिज्म' (आतंकवाद) और 'एक्ट ऑफ टैररिज्म' (आतंकवादी कृत्य) अब बहुत प्रचलित हो गए हैं। यूनानी लेखक एवं औषधियों के सबसे पहले ज्ञाता हिप्पोक्रेटस ने लिखा है कि मध्य रूस में स्थित घास का मैदान इस आतंकवादी हिंसक कबीले की कर्मस्थली थी जो घोड़े पर सवार होकर सामूहिक रूप से हिंसा करता था जिसकी क्रूरता सोचकर रोगटे खडे हो जाते थे वहीं हेरोडोटस ने लिखा है कि सीथियन अपने शत्रुओं-विरोधियों का सिर काटकर शरीर की खाल तक उतार लेता था और उस खाल से टोपियाँ, बिछाने की चटाइयाँ तथा खोपडियों को साफ कर उसमें शराब पीने के लिए प्याले के रूप में प्रयोग करता था इतना ही नहीं दुश्मनों का खून मदिरा में घोलकर पी जाता था। आतंकवाद के सम्बन्ध में ब्रिटेन के विद्वान पाल विल्किंसन ने आतंकवाद के अन्तर्गत युद्ध आतंक, दमनात्मक आतंक, क्रान्तिकारी आतंक और उपक्रान्तिकारी आतंक को सम्मिलित किया है अमरीका के कैलिम्स ग्राम के अनुसार आतंकवाद घरेलू निरंकुशता विरूद्ध संघर्ष और हिंसा, उन विदेशी विजेताओं के विरूद्ध हिंसा जो राष्ट्र को नष्ट कर देते हैं और नागरिकों को गुलाम बना लेते हैं, साथ ही जनतान्त्रिक संस्थाओं के विरूद्ध हिंसा जैसा कि नाजियों, फासिस्टों और उनके सहायकों ने किया था बेल्जियम के पियरे मेरटेंस के अनुसार युद्ध और शान्ति के समय आतंकवादी कृत्यों के भिन्न-भिन्न अर्थ स्वरूप युद्ध और शान्ति के समय ये कृत्य युद्धिय कानून के दायरे में आते हैं और अनावश्यक रूप से क्रूर तथा घृणित दिखाई देने वाली कार्यवाहियों को सूचित करते हैं अत: युद्ध अपराध, मानवता के विरूद्ध अपराध अथवा मानवतावादी कानून के अतिक्रमण के रूप में होती है।म बेल्जियम के शोधकर्ता फेरिक डेविड के अनुसार 'राजनीतिक, सामाजिक, दार्शनिक, विचारधारात्मक या धार्मिक उद्देश्यों के लिए किया गया कोई भी ऐसा सशत्र हिंसक कृत्य जो मानवतावादी कानून के आदेशों (जिसमें क्रूर तथा बर्बर तरीकों का निषेध, असैनिक लक्ष्यों तथा निर्दोष व्यक्तियों पर आक्रमण का निषेध शामिल है) का उल्लंघन करता हो।'

आतंकवाद विश्व के देशों के विभिन्न भागों में विविध रूपों में दिखाई देता है। आतंकवाद कभी राजनीतिक कारणों से उत्पन्न हुआ है तो कभी आर्थिक कारणों से। कभी सामंतों से विद्रोह करने वाले संगठित गिरोह के रूप में सामने आया तो कभी धर्मों के नाम पर की गई संगठित हिंसा के रूप में, परन्तु विश्व में संगठित आतंकवाद की जो भयंकर स्थिति आज उत्पन्न हुई है, वैसी इससे पहले कभी नहीं थी आज यह दावानल विश्व के विभिन्न भागों के साथ-साथ भारतीय उपमहाद्धीप को भी अपनी चपेट में लिए हुए है जिससे देशों की राजनीति, आर्थिक एवं सामाजिक स्वरूप खतरे में पड़ गया है। यह आग दिन-प्रतिदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है। वर्तमान में आतंकवाद संगठनों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई देशों से चोरी छिपे रासायनिक, परमाणुविक, गनमशीने, बम तथा अन्य हथियारों की प्राप्ति होती है साथ ही आतंकवाद संगठनों की नींव मजबूत की जा रही है। अस्त्र-शस्त्रों की बिक्री की होड़ शक्तिशाली अथवा छोटे या विकासशील राष्ट्रों की आर्थिक स्थिति कमजोर करना तथा अपने-आप को शक्तिशाली अथवा आर्थिक स्थिति मजबूत करना रहा है। वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व आतंक की चपेट में है कहीं सत्तातन्त्र का आतंक है तो कहीं आतंकवादी संगठन अपने-अपने देशों के सत्तातन्त्र से टकरा रहे हैं, कहीं कानून व्यवस्था को जबरदस्त चुनौती दे रहे हैं तो कहीं हिंसा लोकतंन्त्र के लिए चुनौती बन गई है, कहीं मानव अधिकारों का हनन कर रहे हैं। चारों ओर रक्तपात और खून-खराबा मचा है।

आज विश्व में अनेक आतंकवादी संगठन रक्तपात में लिप्त है। विश्व में सक्रिय आतंकवादी संगठनों के अन्तर्गत जर्मनी के रैड आर्मी फेल्शन (आर.ए.एफ.), रिवोल्यूशनरी सैल नामक संगठन जिसने 1984-85 में एक वर्ष के अन्तर्गत 148 हिंसक वारदातें की, जर्मन एक्सन ग्रुप (जी.ए.जी.) जिसने 1980 में हैंबर्ग होटल में बम-विस्फोट कर आतंक फैला दिया था। इटली में नियों आर्डर, ब्लैक आर्डर नामक आतंकवादी संगठन है इस ब्लैक यआर्डर संगठन में रोम से म्यूनिख जाने वाली रेलगाड़ी को 1974 में बम से उड़ाकर तहलका मचा दिया था इजराइल में 'यहूदीवादी कमीशन' नाम से पहला आतंकवादी संगठन बना। इसके पश्चात् 'हागानाह', 'हर्गुन'तथा 'स्टर्न' नाम के आतंकवादी संगठनों का निर्माण हुआ जिन्हें इजराइल की स्थापना के बाद उपप्रधानमंत्री डेविड बेन गुरियान ने आपस में मिलाकर एक गुप्तचर एजेंसी की बुनियाद डाली जिसे मोसाद नाम से जाना जाता है मोसाद की स्थापना 1951 में हुई थी। फिलिस्तीन में यहूदियों द्धारा फिलिस्तीन की धरती पर किये गये अवैध कब्ज हटाने के लिए अरबों ने फिलिस्तीन मुक्ति मोर्चा या संगठन (पी.एल.ओ.) का गठन किया जिसके मुखिया यासिर अराफात थे यासिर अराफात की मृत्यु के बाद महमूद अब्बास पी.एल.ओ. प्रमुख है। इस आतंकवादी संगठन ने अनेक राजनीतिक हत्याऐं, बम-विस्फोट, विमान अपहरण किये उल्लेखनीय है कि विश्व की पहली विमान अपहरणकर्त्ता महिला खालिदा इसी संगठन से जुडी थी श्रीलंका में एल.टी.टी.ई. या लिट्टे (लिवरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम) है जिसकी स्थापना 1976 में मुखिया वेलुपिल्लई प्रभाकरण ने की थी इस संगठन

* अतिथि विद्वान (सैन्य विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, आलमपुर, जिला – भिण्ड (म.प्र.) भारत

द्वारा ही भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी जी की हत्या की थी। आयरलैण्ड में 'आइरिश रिपब्लिकन आर्मी (आई.आर.ए.) और आइरिश नेशनल लिबरेशन आर्मी (आई.एन.एल.ए.) प्रमुख रहे, जिन्होंने ब्रिटेन से पृथक होने के लिए खूनी संघर्ष किया अर्मीनिया में 'सीक्रेट आर्मी फॉर दि लिबरेशन आफ आर्मीनिया चर्चित आतंकवादी संगठन सक्रिय रहा जिसका गठन 1975 में हुआ लेनिनवादी विचारधारा वाले इस संगठन ने 1979 में तुर्की वायुसेना कार्यालय पर हमला किया 1982 में अंकारा हवाई अडडे पर हमला कर निर्दोष 17 व्यक्तियों की निर्मम हत्या तथा अन्य को गम्भीर रूप से घायल किया। स्पेन में 'इबेरियन रिवोल्यूशनरी डायरेक्ट्रेट ऑफ लिबरेशन' जिसे 'डिरिल' नाम से जाना जाता है। इसके अलावा 'ई.टी.ए.' नाम से आतंकवादी संगठन सक्रिय था जिसने 1973 में स्पेन के प्रधानमंत्री लुईस ब्लाको, उसके ड्राइवर एवं सुरक्षा अधिकारियों को रिमोर्ट कान्ट्रोल बम के विस्फोट से हत्या कर दी 1982 में स्पेन में अनेक स्थानों पर बम विस्फोट किये। जापान में जापानी रैड फ्रेट, जापानी रैड आर्मी (जे.आर.ए.) और यूनाइटेड रैड आर्मी के नाम से आतंकवादी संगठन सक्रिय रहे, जिन्होंने जापान में बैंक डकैतियां, एयरपोर्ट पर बम विस्फोट, जापानी एयरवेज विमान अपहरण, यात्री बसों का अपहरण करना तथा अन्य निर्मम हत्याऐं की थी। आतंकवाद संगठनों की आतंक कार्यवाहियों अथवा हुए दुष्कृत्यों को वर्तमान परिपेक्ष्य में नजर डालें तो महाशक्ति कहे जाने वाले अमेरिका जैसे देश पर भी हमला हुए हैं जिसका सारी दुनिया लोहा मानती है। तालिबानी अफगानिस्तान कब्जाधारी और इस्लामी कट्टरवादी आतंकवादी संगठन 'अल-कायदा' जिसका प्रमुख ओसामा बिन लादेन था ने मिलकर 11 सितम्बर 2001 को अमेरिका के रक्षामंत्रालय पेंटागन तथा वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर पर अपहरण किये गये यूनाइटेड एयरलाइन्स के बोइंग 757 तथा बोइंग 767 को टकराकर इमारतों को ध्वस्त कर दिया। सऊदी अरब के रियाद शहर में जन्मा और अमरीकी खुफिया एजेन्सी सी.आई.ए. में प्रशिक्षित ओसामा बिन लादेन ने विश्व में तहलका मचाकर आतंकित कर दिया। इस कृत्य से विश्व के सभी देश आतंकवाद के खिलाफ सोचने और कार्यवाही करने को मजबूर हो गये। जिससे स्पष्ट हो गया कि दुनिया का ताकतवर से ताकतवर देश अकेले आतंकवाद का मुकाबला नहीं कर सकता है।म यहाँ उल्लेखनीय है कि अमेरिका के रक्षामंत्रालय पेंटागन विश्व की सबसे बड़ी इमारत थी जिसका निर्माण द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान 15 जनवरी 1943 को हुआ था तथा 110 मंजिला वर्ल्ड ट्रेड सेंटर जिसकी रूपरेखा (आर्किटेक्ट) इमेरीरोथ और मिनोरू यामासाकी ने तथा निर्माण प्रबंधन कार्य प्रोफेसर हाइमैन ब्राउन ने किया। इसका निर्माण कार्य 1973 में पूर्ण हुआ था। अमेरीका में 09/11/2001 के आतंकी हमले का मास्टर माइंड व अल-कायदा सरगना आखिरकार सी.आई.ए. और अमेरिकी यसील्स कामाण्डो द्वारा ऑपरेशन जेरोमिनों के तहत 1-2 मई 2011 की मध्य रात्रि में पाकिस्तान में इस्लामाबाद के अबोटाबाद में मारा गया।म तत्पश्चात् सी.आई.ए. के पूर्व निदेशक और पूर्व रक्षा मंत्री लियोन पेनेटा ने अपनी किताब यबर्दी फाइट्स : 'ए मेमोयर ऑफ लीडरशिप इन वॉर एंड पीस' में स्पष्ट किया, कि ओसामा बिन लादेन के शव को काले बैग में रखा गया साथ ही बैग में 136 किलो ग्राम (300 पाउंड) वजन की लोहे की जंजीरें रखी गई। शव को विमानवाहक पोत यू.एस.एस. कार्ल विंसल तक ले जाने के बाद मुस्लिम रस्मों के साथ सफेद चादर में ढक कर अरबी में अन्तिम प्रार्थना के साथ बैग को काले बक्से में रखकर समुद्र में डुबोया गया।म

अत: ब्रियां क्रोजर ने ठीक ही कहा है कि आतंकवाद एक विलक्षण स्वरूप है जो समाज और राज्य व्यवस्था के लिए एक कलंक है। कई दशकों से हो रही आतंकित घटनाओं से यह तो स्पष्ट है कि विश्व में बढ़ती तकनीकी व्यवस्थाओं ने आतंकवाद को बड़ावा मिला है परन्तु इस बात में भी दोराह नहीं है कि यदि इस अन्तर्राष्ट्रीय आतंक को मानव शरीर में बढ़ते नासूर की तरह नियंत्रत न किया गया तो शरीर रूपी विश्व में आतंक का जहर फैल जायेगा जो लाइलाज हो जायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के देश अपनी देश की न सोचकर सम्पूर्ण विश्वस्तर की विचारधारा बनाकर अन्तर्राष्ट्रीय सख्त कानून बनाकर और एक-दूसरे को सहयोग करके आतंकवादी संगठनों के खिलाफ ससक्त प्रतिक्रियात्मक कार्यवाही करें तो आतंकवादित घटनाओं को नियंत्रित किये जाने की सम्भावना है।

आतंकवाद को बढ़ावा देने में अशिक्षित बेरोजगारी, धार्मिक सम्प्रदाय, बढ़ती जनसंख्या, तीव्र गति से विकसित की जा रही तकनीकी, राष्ट्र के स्वार्थ हित, राजनीतिक द्वन्दता इत्यादि कई कारण है विश्वस्तर पर आतंकवादी देश माने जाने वाले पाकिस्तान में आतंकवाद का खुला इस्लामिक विश्वविद्यालय चल रहा है, जहाँ आतंकवाद का पाठ्यक्रम पढ़ाया जा रहा है और अनेक देशों से मुस्लिम सम्प्रदाय के नवयुवको को 'जिहाद' के नाम पर मौत के मुंह में ढ़केल दिया जाता है जिनकी शिनाख्त करने से भी आतंकवादी संगठन इंकार कर देते है।

आतंकवाद को रोकने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने कई बुनियादी कानूनी दस्तावेज समझौते किये हैं, जिनके अंतर्गत बंधक बनाने के खिलाफ कन्वेंशन 1979, संयुक्तराष्ट्र एवं सहयोगी कर्मचारी सुरक्षा कन्वेंशन 1994, आतंकवादी बमबारी निरोध निमित्ता अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशन 1997, आतंकवादी वित्तापोषण हेतु निरोध के निमित्त अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशन, विमानो के गैरकानूनी कब्जे के निरोध हेतु कन्वेंशन हेतु 1970 इत्यादि सम्मिलित है, परन्तु आतंकवाद को विश्व स्तर पर आज तक लगाम नहीं लगायी जा सकी है, जब तक विश्व के राष्ट्र अपने राष्ट्रीय हितो की स्वार्थ भावना, विश्व में अपने देश को महाशक्ति बनाने का प्रयत्न एवं मुस्लिम सम्प्रदाय की घृणित विचार धारा का त्याग नहीं होगा, तक तक विश्व शान्ति की कल्पना व्यर्थ है आज विश्वबन्धुत्व, भाई-चारे, सहयोग, आतंकवाद के दुष्परिणामों के सम्बन्ध में विश्वस्तर पर लोगों में जागरूकता की आवश्यकता है विश्व में सभी लोगों को जागरूक होना होगा साथ ही प्रत्येक देश को विश्व मंच पर एक-दूसरे को सहयोग कर असमाजिक अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद संगठनों के प्रति कठोर कदम उठाने होगें तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कानून का पालन कड़ाई के साथ करना होगा तभी आतंकवाद को निवारित किये जाने की सम्भावना साकार हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, आतंकवाद : जिम्मेदार कौन, पृ0 19, 20
2. डॉ. बी.एल.कड़िया : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध पृ0 589, 90
3. फेरिक डेविड, अन्तर्राष्ट्रीय कानून में आतंकवाद, ब्रसेलन विश्वविद्यालय के संस्कर 1979 पृ0 125
4. डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल, आतंकवाद : जिम्मेदार कौन, पृ0 176, से 180
5. डॉ. लल्लनजी सिंह : राष्ट्रीय रक्षा और सुरक्षा पृ0 57, 59
6. डॉ. एस.सी. सिंहल : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध पृ0 348
7. पत्रिका : दैनिक समाचार पत्र दिनांक 8-10-2014 पृ0 17

Nutritional Status of Primary School Children

Shahraj Parveen * Dr. Meenakshi Mathur **

Abstract - The future of the society depends on the quality of life of the children. Nutritional needs change throughout life, depending on genetics, rate of growth, activity and many other factors. Nutritional status is the condition of health of the individual as influenced by the utilization of nutrients. Nutritional needs also vary from individual to individual. The objective of this research was "to assess the nutritional status of primary school children", by measuring height (cm) and weight (kg). A total of 41 children representative from different schools of primary section were purposively selected. The age of the children was from 3-8 years. Out of 41, 18 boys and 23 girls were enrolled in the study. To measure the weight the spring beam balance was used and a stadiometer anthrop meter used to measure height of the children. BMI was calculated by standard formula weight (kg) /height (meter square). Result of the study shows that among both about 50 percent, 53 % boys and 43 % girls found underweight. Only 5 % boys and 4 % girls were found in overweight category. On the basis of result of the study it can be concluded that in urban area health of girl child was better. It is in fact a good sign of parenting.

Introduction - Since 1947, India has made substantial progress in human development. Still the manifestations of malnutrition are at unacceptable levels. Nineteen per cent of world's children live in India. India is a home to more than one billion people, of which 42 per cent are children. More broadly, malnutrition in India is in a state of silent emergency and thereby demands greater priority than ever before. The nutritional status of population is therefore critical to the development and well being of the nation (National Nutrition Policy, 1993 Government of India). The present status of malnutrition in India is that a devastating half of all the newborns are malnourished and 30 per cent are born underweight making them more vulnerable to further malnutrition and diseases. To evaluate nutritional status, assessors can use measure of body composition and development (anthropometric measurements) or measures of how well the body performs certain tasks (functional tests of nutrition status).

Anthropometric measurements and functional tests useful in nutritional assessment indicate that each measurement depends on adequate nutrition. Poor growth in children indicates malnutrition. Malnutrition is an impairment of health resulting from deficiency of calories and/or more essential nutrients, and over nutrition, which is an excess of one or more nutrients and usually of calories. Under nutrition is a major public health problem worldwide, particularly in developing countries (Onis et. al.).

One third of the children under 5 years old worldwide are moderately or severely undernourished. Under nutrition impairs physical, mental and behavioural development of millions of children and is a major cause of child death (World Bank, 1993, Falkner, 1991). Shrivastava, Rahul (2008) - according to 'National Sample Survey Organisation', twenty per cent people in rural India earn only ` 12 a day, of which each person spends just ` 7 on food. In Orissa and Chhattisgarh, 44 per cent people suffer from such a devastating situation. Ever wondered why people migrate from villages to cities? The survey says life is a shade better in urban India where 22 per cent people spend ` 19 daily. In urban Bihar, 56 per cent live on this amount. "Nations where the human resource is undervalued and material resources are overvalued always remain poor." India stands 25th on the Global hunger Index with 46 per cent of underweight children below 5 years of age. (State of World Children, 2008).

Rajasthan: Nutrition Situation - The NFHS-3 in 2006 found that 20% of children under-3 years of age in Rajasthan were wasted, 34% were stunted and 44% were underweight. 20.4% of the children under-5 suffered from wasting and 7.3% suffered from severe acute malnutrition. This means that about 620,000 children in Rajasthan needed emergency treatment in 2006. Same source has shown that adults are the next most affected group by under nutrition: 33.6 % women and 33.8 % men were found to be too thin compared to their height (BMI < 18.5). From the demographic groups, children from Schedule Tribes had highest prevalence of SAM (8.4%) compared to children from Schedule Castes (7.4%) and other Backward Classes (5.2%). Infant mortality rates are similar in urban and rural Rajasthan with an average of 65 deaths per 1,000 live births in the last few years.

The under-nutrition rates fluctuate differently by category in Rajasthan. If the stunting has seen an important decrease between NHFS-2 and NFHS-3, underweight remain relatively

* Research Scholar (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (M.P.) INDIA
** Professor (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (M.P.) INDIA

high (close to the national average of 43%) and wasting has worryingly increased.

The future of the society depends on the quality of life of the children. Nutritional needs change throughout life, depending on genetics, rate of growth, activity and many other factors. Nutritional status is the condition of health of the individual as influenced by the utilization of nutrients. Nutritional needs also vary from individual to individual. The objective of this research was "to assess the nutritional status of primary school children", by measuring height (cm) and weight (kg).

Methodology - The present study was undertaken in private primary schools of Jodhpur District of Rajasthan. A total of 41 children representative from different schools of primary section were purposively selected. The age of the children was from 3-8 years. Out of 41, 18 boys and 23 girls were enrolled in the study. To measure the weight the spring beam balance was used and a stadiometer anthrop meter used to measure height of the children. BMI was calculated by standard formula weight (kg) /height (meter square).

Weight-for-height (W/H) measures body weight relative to height and has the advantage of not requiring age data. Normally, W/H is used as an indicator of current nutritional status and can be useful for screening children at risk and for measuring short-term changes in nutritional status. A child with low WfH is called *wasted* (too thin for their height), an indication that they are *acutely malnourished* (malnourished presently and from recent events)

Weight-for-Age (W/A) is commonly used for monitoring growth and to assess changes in the magnitude of malnutrition over time. However, W/A confounds the effects of short- and long-term health and nutrition problems. A child with low WfA is called *underweight* (too light for their age), which is seen as a composite of acute and chronic malnutrition

Body Mass Index - The BMI is defined as weight in kilograms divided by height in meters squared (kg/m2). A cut-off point of 18.5 is used to define thinness or acute under-nutrition and a BMI of 25 or above indicates overweight or obesity. A BMI of 17.0-18.4 refers to mildly thin and <17.0, refers to moderately/severely thin. A BMI of over 30.0 refers to obesity.

Weighing machine calibration - Researcher should test the scale by measuring the weight of the height board (or the researcher with and without the height board) to see if the height board weight is registered correctly. It is very necessary to check whether the scale is working properly or not. The scale should be checked while it is kept in a cool, shady location and on a hard, flat surface. If the scale does not register the weight correctly to within 0.2kg, notify immediately. If the scale measures the weight of the height board correctly, one researcher should also record his/her weight and remember it for scale adjustments later in the day. While the surveyor's weight will change slightly over the course of the day, it will be an indicator of whether the scale measurements are seriously inaccurate at any point.

Result and Conclusion -

Table: 1. Camparison And Mean Vlaue Of Height And Weight By Sex With Standard Measurements

	Standard weight(kg)	Studied weight(kg)	Standard Height(cm)	Studied Height(cm)
Girls (23)	19.23	16.21	114.1	107.23
Boys (18)	19.63	17.32	114.86	109.51

table 1 shows that the mean value of height (109.51cm) of boys is greater than the girls mean value of height (107.23 cm) but less than the standard height of boys mean value i.e. 114.86 cm. The result of the study shows that it is not a big difference of height mean value of boys with standard mean value of height of boys. The mean value of the standard weight is higher in both boys (19.63 kg) and girls (19.23) of studied mean value of boys (17.32 kg) and girls (16.21 kg) both.The results also show that the difference between the mean value of studied weight of boys and girls was1.11 (kg).

Table and Graph:2 Nutritional Status of Boys and Girls

	Boys	Girls	Total
No of Respondents	18	23	**41**
Underweight (< 5th %ile)	53%	43%	**48%**
Normal BMI (5th - 85th %ile)	42%	52%	**48%**
Overweight or obese (e" 85th %ile)	5%	4%	**5%**
Obese (e" 95th %ile)	0%	0%	**0%**

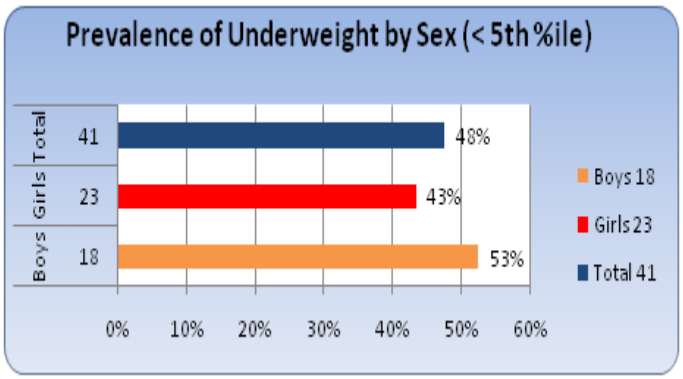

Table and graph 2 depicted the nutritional status of boys and girls. It reveals that 53% boys came in category of underweight while 43% girls came in same category. Study also shows that 52% girls have the normal BMI and 4% in overweight category. Almost half of the total respondents were come in normal BMI and underweight BMI category. Whereas the ratio of normal BMI of boys (42%) is less than the girls normal BMI (52%)

Graph:1 Prevalence of Overweight and Obesity by Sex

Graph 1 depicted that the 5% of the total respondents come in overweight category. Result of the study shows that boys were more prevalent of overweight than girls. 5% boys and 4% girls came in overweight category.

Conclusion - on the basis of the study it can be concluded that the health and nutritional status of girl child was becoming better in urban area. The results also shows that the comparison between standard mean value of height and weight and studied mean value of height and weight of both sex was not huge difference. It can be covered with better nutrition and proper balanced diet. The situation of girl's child health was improving and it's in fact a good sign of parenting but what about boy's child health? The study result found that boy's child health was decreasing.

References :-

1. All statistics from the latest National Family Health Survey (NFHS-3), 2005-06. Report published in 2009.
2. Based on the "stunting" measure, low height for age. Robert E Black, Lindsay H Allen, Zulfiqar A Bhutta, Laura E Caulfield, Mercedes de Onis, Majid Ezzati, Colin Mathers, Juan Rivera, 2008, "Maternal and child undernutrition: global and regional exposures and health consequences, Lancet; 371: 243–60.
3. ALBERTO, G. and FRANCESCO, S. 2007. Child malnutrition and mortality in developing countries: Evidence from a cross country analysis. Polytechnic University of Marche, University of Rome "La Sapienta" and UNCTAD Un. P.2
4. FALKNER, F. Malnutrition and growth. Int Child Health 1991; 11:8-11.
5. ONIS DE M, MONTEIRO C, AKRE J, GLUSTON G. 1993. The worldwide magnitude of protein-energy malnutrition: an overview from the WHO Global Database on Child growth. Bull WHO; 71:703-12.
6. SHRIVASTAVA, RAHUL. 2008. A Suffering Bharat vs Shining India. One World South Asia. National Sample Survey Organisation. NDTV.
7. State of World Children. 2008. A Matter of Magnitude. The Impact of One Economic Crisis on women and Children in South Africa. Unicef,Rosa.
8. World Bank, World Development Report. 1993. Investing in health. Oxford University Press, New York.

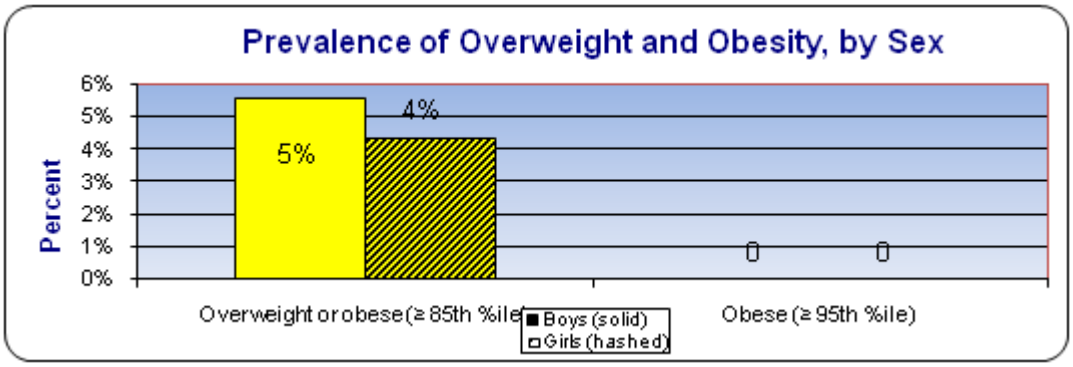

****

महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता (स्त्री शिक्षा के विशेष संदर्भ में)

डॉ. गीताली सेनगुप्ता *

शोध सारांश – वर्तमान युग प्रतिस्पर्धा का युग है। समय परिवर्तन के साथ विज्ञान प्रौद्योगिकी एवं शिक्षा के क्षेत्र में बहुत अधिक परिवर्तन हुए। आम तौर पर जिसे हम विकास की उपमा देते हैं। देश की वास्तविक स्थिति से हम सब भलिभाँति परिचित है आज के संदर्भ में हम दृष्टिपात करे तो चारों ओर असंतुलनता एवं असमानता की स्थिति दृष्टिगोचर होती है।

प्रस्तावना – वर्तमान में संपूर्ण भारत देश मंहगाई आर्थिक असमानता बेरोजगारी एवं विभिन्न समस्याओं से जूझ रहा है। इसका प्रमुख कारण हमारी शिक्षा व्यवस्था है, जिसका ढाँचा सुदृढ़, मजबूत और वास्तविक नहीं है। आज हम महसुस कर रहे हैं कि 'सादा जीवन उच्च विचार' रखने वाले गाँधीजी ने शिक्षा प्रणाली के संदर्भ में जो विचार एवं चिंतन समाज और राष्ट्र को दिया था उस पर पुन: विचार करने की महती आवश्यकता है। गाँधी जी ने शिक्षा का जो दर्शन प्रस्तुत किया था, मुख्य रूप से बुनियादी शिक्षा को शिक्षा का आधारभूत स्तम्भ माना जिसकी मजबूत नींव पर आत्मनिर्भरता एवं स्वावलंबन की दीवार खड़ी हो सकती है।

आज उच्च शिक्षित होने के बावजूद भी हमारे युवाओं के पास रोजगार नहीं है वे बेरोजगारी की कगार पर खड़े हैं उनका भविष्य अनिश्चित है, उनका जीवन दूभर हो रहा है वे तनाव, चिंता मुक्त जीवन यापन कर रहे हैं ऐसे युवा युवती अपराधिक जगत की ओर अपने कदम बढ़ा रहे हैं।

गाँधी जी की शिक्षा की परिकल्पना उनके शिक्षा दर्शन एवं बुनियादी शिक्षा में समाहित है, उन्होंने कहा–शिक्षा मनुष्य की नैसर्गिक चेष्टा है, उनकी विकासशील प्रवृत्ति है मनुष्य आदिकाल से सीखता आ रहा है जो कुछ उसने सीखा उस शिक्षा का रूप दिया। शिक्षा मानव जीवन की संचित सीख है। वह उसे परम्परा और परिस्थिति के अनुसार ग्रहण करता है। शिक्षा कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो किसी पदार्थ या बीज के रूप में प्रदान की जाए। यह एक प्रकार की चेतना है जिसे मनुष्य स्वयं प्राप्त करता है।

गाँधी जी के अनुसार– 'शिक्षा द्वारा बालक के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों यथा शरीर, मस्तिष्क हृदय और आत्मा का सर्वांगीण विकास होना चाहिए।

महादेव देसाई ने गाँधीजी की शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा– गाँधीजी ने शिक्षा को बालक और बालिकाओं के समस्त गुणों का विकास करना चाहिए। वह शिक्षा ठीक नहीं कही जा सकती जो बालक और बालिकाओं की पूर्ण उपयोगी नागरिकता नहीं बनाती।

गाँधी जी ने स्त्री शिक्षा पर विशेष बल दिया–स्त्री, शिक्षा के प्रति उनके विचार संकुचित न होकर वृहद और व्यापक थे।

उनका मत था कि– 'स्त्री न केवल पत्नी, बहिन एवं माता ही है, बल्कि वह मानव निर्माण समाज की नेता तथा ईश्वर की सर्वोत्तम कृति है, इसलिए पुरूषों के समान महिलाओं को भी सुशिक्षित होना चाहिए। उन्होंने स्त्रियों के लिए गृहविज्ञान की शिक्षा को महत्व दिया उनका मानना था कि स्त्रियों का संबंध घर और परिवार से अधिक रहता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन का केन्द्र बिन्दु महात्मा गाँधी जी के बुनियादी शिक्षा के माध्यम से बालिकाओं एवं स्त्रियों को आत्मनिर्भर एवं स्वावलम्बी बनाने के संदर्भ में है। वर्तमान में समाज में व्याप्त कुरीतियाँ दिन प्रतिदिन बढ़ती मंहगाई, बेरोजगारी, समाज में बढ़ते अपराध से जूझने के लिए प्रत्येक बालिका एवं स्त्री का शिक्षित होना आवश्यक है, महात्मा गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता यहाँ खरी उतरती है कि बालिकाओं को ऐसी शिक्षा दी जाना चाहिए ताकि वह शिक्षा समाप्ति के पश्चात् स्वरोजगार व रोजगार की ओर अग्रसर हो सके तथा एक सुदृढ़ व आत्मनिर्भर भविष्य का निर्माण कर सके एवं आर्थिकोपार्जन कर परिवार में सहयोग करते हुए सुरक्षित जीवनयापन कर सके।

स्त्री समाज की धूरी है वह परिवार की केन्द्र बिन्दु होती हैं, इसलिए शैक्षणिक दृष्टि से उसे वंचित रखना अन्यथा होगा। कहा गया है कि 'एक पुरूष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति ही शिक्षित होता है, किन्तु एक स्त्री शिक्षित होती है तो वह एक परिवार को शिक्षित करती है।

उद्देश्य –

1. वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को अधिक से अधिक व्यवसाय पर एक बनाना तथा रोजगार से जोड़ना है।
2. शिक्षा द्वारा विद्यार्थी मात्र डिग्री न हासिल करे वरन् आत्मनिर्भर एवं स्वावलम्बी बन सके।
3. शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थी का सर्वागींण विकास हो सके एवं आत्मीयता तथा नैतिक गुणों का विकास हो सके।

उपकल्पना –

1. उच्चशिक्षा के क्षेत्र में अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का विकास भविष्य के दृष्टिकोण से उपयोगी होगा।
2. वर्तमान में अधिकांश छात्राओं का झुकाव शिक्षाकाल के दौरान जीवन निर्माण कर शिक्षा समाप्ति के पश्चात् आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो सके।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध अध्ययन स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची विधि के द्वारा महाविद्यालय की विभिन्न संकाय की 60 छात्राओं पर सर्वेक्षण किया गया आज के संदर्भ में महात्मा गांधी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता कितनी महत्वपूर्ण है ? इस विषय पर छात्राओं की विचारधाराओं को जानने की चेष्टा की गई।

विश्लेषण – अध्ययन के आधार पर तथ्यों का विश्लेषण निम्न रूप से पाया गया– गाँधीजी के शिक्षा दर्शन एवं बुनियादी शिक्षा के संबंध में 52% छात्राओं की जानकारी है तथा 48% को कोई जानकारी नहीं है।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के प्रति वे कितनी संतुष्ट एवं असंतुष्ट है ? इसके उत्तर में 35% ने सकारात्मकता प्रदर्शित की 65% छात्राओं का रूख नकारात्मक पाया गया वे इस शिक्षा व्यवस्था से संतुष्ट नहीं है।

आधुनिक समय के अनुरूप पाठ्यक्रम में परिवर्तन की आवृत्ती को आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि 70% ने प्रतिक्रिया दी कि पाठ्यक्रम में बदलाव होना चाहिए 30 ने कोई प्रतिक्रिया जाहिर नहीं की।

विश्लेषण के आधार पर कुछ महत्वपूर्ण तथ्य उभरकर सामने आये- 80% किशोरियाँ मूल्य पर एवं रोजगार मूलक पाठ्यक्रम चाहती है। 20% छात्राओं को वर्तमान में रोजगार से सरोकार नहीं है, भविष्य में कभी आवश्यकता पड़ी तो वे सोचेंगी।

45% का मानना था कि स्नातक स्तर पर जो विषय पढ़ाये जाये उनका व्यावहारिक ज्ञान और उसे क्षेत्र से जुड़े रोजगार के विषय में पूर्ण ज्ञान प्रदान किया जाए ताकि वे स्नातक स्तर के दौरान ही पारंगत हो सके और किसी प्रकार का व्यवसाय चुन सके। 55% छात्राओं का अभिमत यह था कि पाठ्यक्रम के रूप में अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन कोर्स खोले जाए ताकि वे विषय का गहरा ज्ञान प्राप्त कर आत्मनिर्भर बन सके।

समाजिक मूल्य, नैतिक व चारित्रिक पतन के प्रश्न पर 80% छात्राओं ने सकारात्मक और 20% ने नकारात्मक जवाब दिया।

निष्कर्ष - निष्कर्ष स्वरूप देखा गया है कि छात्राएँ विषय के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण एवं मान्यताओं को चुनौती देना चाहती है।

किशोरियों का रूझान अब सामान्य शिक्षा (पाठ्यक्रम) के प्रति न होकर भविष्य निर्माण की ओर अधिक हो गया है।

व्यवसाय परक एवं रोजगार मूलक शिक्षा को वे अधिक महत्व देने लगी है। समय के अनुरूप अब वे ठोस ज्ञान एवं आर्थिकोपार्जन की दृष्टि से रोजगार दिलाने वाले डिग्री कोर्सेस के प्रति उनकी रूचि बढ़ी है। विषय से संबंधित पाठ्यक्रम ऐसे हो जो ग्रामीण एवं शहरी दोनों प्रकार के क्षेत्रों से आने वाली छात्राएँ लाभ उठा सके। दूरदृष्टि रखते हुए पाठ्यक्रम निर्मित किए जाये जो भविष्य में छात्राओं को स्वावलम्बी व सक्षम बनाने में योगदान दे सके।

सुझाव - सुझाव के तौर पर यह कहा जा सकता है- अध्ययन, सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार यह साबित करते है कि अभी भी शिक्षा व्यवस्था की दिशा में ठोस प्रयास की आवश्यकता है।

शिक्षा व्यवस्था को अधिकाधिक रूप से उपयोगी बनाने के लिए स्कूल के पाठ्यक्रम में भी परिवर्तन की आवश्यकता है- इस दिशा में प्रयास जारी है।

ऐसे अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन कोर्सेस संचालित किए जाए तथा प्रायोगिक स्तर पर निर्मित वस्तुओं की प्रदर्शनी एवं विक्रय किया जाए ताकि उनको बाजार का रूख पता चल सके।

समय समय पर विषय से संबंधित विषय विशेषज्ञ को आमंत्रित करके विषय से संबंधित संभावनाओं, विभिन्न कोर्सेस एवं रोजगार की जानकारी प्रदान की जाए वर्तमान में कॅरियर गाइडेंस सेल के द्वारा यह कार्य सम्पन्न किए जा रहे हैं, किन्तु अभी भी ठोस धरातल की कमी दिखाई देती है।

सभी विषयों के पाठ्यक्रम ऐसे निर्मित किए जाए जो भविष्य में उन्हें एक निश्चित दिशा और गति की ओर अग्रसर कर सके।

इस दिशा में ठोस प्रयास करने पर छात्राएँ घर परिवार की जिम्मेदारी का वहन करते हुए स्वरोजगार की दिशा में प्रेरित लेकर व्यवसाय, उद्योग स्थापित कर अपनी शिक्षा, समय, बुद्धि विवेक का सदुपयोग कर परिवार समाज और देश को अपना अमूल्य सहयोग प्रदान कर सकती है।

महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता को आज हम पुन: महसूस कर रहे हैं। दिन प्रति दिन शिक्षा का गिरता स्तर सामाजिक मूल्यों का ह्यास, नैतिक एवं चारित्रिक पतन, बेरोजगारी आदि समस्याओं से देश जूझ रहा है अत: गांधीजी ने शिक्षा प्रणाली, बुनियादी शिक्षा के संदर्भ में जो विचार, चिंतन समाज देश और राष्ट्र को दिया इस तथ्य पर पुन: गौर करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. ओम नागपाल एवं-प्रमुख राजनीतिक विचारक एवं विचारधाराएँ श्रीमती वीना नागपाल
2. डॉ. पाठक एवं जौहरी-भारतीय शिक्षा का इतिहास
3. डॉ. वैद्यनाथ प्रसाद वर्मा-विश्व के महान शिक्षा शास्त्री बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी
4. रामबाबू गुप्त -विश्व के महान शिक्षा शास्त्री, रतन प्रकाशन मंदिर, 1/185 c प्रोफेसर्स कॉलोनी दिल्ली गेट, आगरा 282002
5. सीताराम जायसवाल - विश्व के महान शिक्षक
6. गाँधी -व्यक्तित्व विचार और प्रभाव
7. जयजयरामशाकय-विश्व के महान शिक्षक रामपाल एवं सन्स, कश्मीरी गेट दिल्ली
8. Edited by Norman Cousins & Profiles of Gandhi

****

समाज में बढ़ रहे बाल / किशोर अपराध को रोकने में परिवार की भूमिका

डॉ. कलिका डोलस *

शोध सारांश – 'हमें अपने सबसे दुलारे बच्चों को वसीहत के तौर पर देने के लिए अपने जीवन में एक बच्चों के अनुकूल विश्व को देना है।' कैलाश सत्यार्थी, नोबल पुरुस्कार सम्मानित बाल अधिकार कार्यकर्ता।
सत्यार्थी कहते है 'बच्चे हमारे उज्जवल और खुशहाल भविष्य का आधारस्तंभ है, यदि आज हम उन्हें अनुकूल समाज देने में असफल रहते है तो हम बेहतर कल की आशा नहीं कर सकते। दुनिया भर में 16 करोड़ 80 लाख बाल श्रमिकों का बचपन शोषण और कदाचार की भेंट चढ़ रहा है, निश्चित तोर पर ये वह संसार नहीं हो सकता, जो हम अपने बच्चों के लिए छोड़कर जाना चाहेंगे। इन शोषण ओर कदाचार के कारण कब एक बाल श्रमिक, बाल अपराधी बन जायेगा कहा नहीं जा सकता।

प्रस्तावना – अपराध रहित समाज की संरचना एक आदर्श स्थिति है जिसकी कल्पना भी लगभग असंभव है परंतु जिस तेजी से वर्तमान में समाज में अपराध बढ़ रहे है वह स्थिति चिंताजनक जरुर है एवं चिंतन करने योग्य भी। वर्तमान में समाज में वयस्क अपराध के साथ साथ बाल एवं किशोर अपराध भी तीव्र गति से बढ़ रहे है और ये अपराध समाज के हर वर्ग में है चाहे वह निम्न वर्ग हो, मध्यम वर्ग अथवा उच्च वर्ग। वर्ग के अनुसार अपराधों की श्रेणिया एवं कारण अलग–अलग हो सकते है परंतु हर वर्ग के बाल अपराधियों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है, जिसके अनेक कारणों में से निम्न कारण प्रमुख है

1. **मूलभूत आवश्यकताओं से संबंधित कारक –** अपनी सामर्थ्य के अनुसार रोटी, कपड़ा और मकान जैसे हर बच्चें की मूल आवश्यकताएं पूर्ण करना परिवार की जिम्मेंदारी है एवं हर बच्चें का अधिकार है परंतु जब परिवार इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असफल हो जाते है तब बालक इनकी पूर्ति हेतु गलत रास्तों का सहारा लेता है एवं ऐसे बालक किशोर जिनके परिवार ही न हो, अथवा माता–पिता द्वारा ठुकराए गये बालक अथवा अनाथ बच्चों को इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपराध करने का प्रतिशत और बढ़ जाता है। इन्हें हमेंशा ही इन मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जद्दोजहद करते देखा जा सकता है निम्न वर्ग में जहां बालक एवं किशोर अपने मूल आवश्यकताओं के लिए तरसते है एवं उनके अभाव में या उन्हें पूरा करने की चाह में अपराध की ओर अग्रसर होते है, वहीं उच्च वर्ग के बालक किशोर भौतिक सुख सुविधाओं की प्रचुरता के कारण अपराधों की ओर बढ़ रहे है। उच्च वर्ग के अभिभावक अपने बच्चों को वे सभी अनावश्यक साधन भी उपलब्ध करा देते है जो उनके लिए गैर जरुरी है (मोबाईल, गाड़ी, आदि) ऐसी स्थिति में ये बालक उन चीजों को भी जानने लगते है जो उम्र अनुसार उन्हें नहीं जानना चाहिए तथा जानने का तरीका भी गलत होता है जिससे उस बात की गंभीरता किशोर समझ नहीं पाते एवं कुछ समय के मनोरंजन अथवा टाईम पास के लिए अपनी एवं संबंधित की जिंदगी को खिलवाड़ बना देते है। अपरिपक्व मस्तिष्क इन बातों को गलत तरीके से लेता है एंव इनके चलते बालककिशोर कब अपराध में संलग्न हो जाता है, उसे स्वयं ही पता नहीं चलता।

2. **माता पिता का कामकाजी होना –** प्राचीन सामाजिक व्यवस्था में पुरुष वर्ग बाहर कार्य करते थे तथा स्त्री वर्ग अथवा माता, गृहिणी होती थी, जो कि वर्तमान में देखने पर कभी–कभी सही व्यवस्था प्रतीत होती है उसके दो कारण है–

1. माता के घर में होने से बच्चों को पर्याप्त स्नेह मिलता था जिससे बच्चों के भटकने की संभावना कम रहती थी। मनोवैज्ञानिक अध्ययन एवं शोध से यह बात साफ हो चुकी है कि जिन बालकों को बचपन में पर्याप्त स्नेह मिलना है वे आगे चलकर मानसिक रुप से अधिक संतुलित रहते है।
2. माता के घर में रहने से बच्चों में अनुशासन एवं डर बना रहता है तथा मां का बच्चों पर पर्याप्त ध्यान रहता था कि बच्चें कहीं गलत संगत में तो नहीं पड़ रहे, गलत हरकतो से जुड़े हुए तो नहीं है और इसलिए किशोरो की अपराधों की ओर जाने की संभावना कम होती थी।

वर्तमान में स्त्री सशक्तिकरण के धनात्मक पहलू को देखते हुए महिलाओं का कामकाजी होना समाज के लिए गौरव की बात है परंतु इसके अप्रत्यक्ष परिणाम किशोर अपराध के रुप में तो सामने नहीं आ रहे है इस पर विचार करने की आवश्यकता है।

आज बच्चों के लालन पालन में माता–पिता बच्चों को वक्त नहीं दे पा रहे है और उसकी पूर्ती के लिए (अपने गिल्ट को दूर करने के लिए) उन्हें बतौर तोहफा महंगी महंगी चीजे लाकर दे रहे है जिसकी उन्हें आवश्यकता ही नहीं है ऐसी स्थिति में अपने खालीपन, एकाकीपन को दूर करने के लिए बालक टी.वी., मोबाईल आदि का सहारा लेते है, जहॉ भी उन्हें कोई बताने वाला नहीं है कि उन्हें उम्र अनुसार क्या देखना चाहिए।

3. **लुप्त होते रीति–रिवाज व संस्कार –** किसी शायर ने कहा है – 'सुबह होती है, शाम होती है, जिंदगी यू ही तमाम होती है। आज का मानव जिंदगी काट रहा है, तेज रफ्तार से जिंदगी में आगे बढ़ रहा है परंतु जिंदगी जी नहीं रहा है। आज की दिनचर्या में केवल माता–पिता ही नहीं वरन बच्चें भी इतने व्यस्त है कि पारिवारिक सदस्यो को आपस में संवाद स्थापित करने का भी समय नहीं है। ऐसी स्थिति में रीति–रिवाज एवं संस्कारों की बात तो बहुत मुश्किल है। प्राचीन समय में हमारे रीति रिवाज व संस्कारों के माध्यम से ही अप्रत्यक्ष तरीके से हम अपने बच्चों में नैतिक मूल्यों के बीज बो देते थे परंतु

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

आज लुप्त होते रीति रिवाजो व संस्कारों के कारण भी किशोरों को उचित मार्गदर्शन देकर अपराधों से परावृत्त करने में हम अपने आपको असमर्थ पाते है।

निदान व सुझाव – कारण को दूर करना ही समस्या का निदान है। अत: उपरोक्त कारणों का निदान आवश्यक है परंतु मेंरी नज़र में इस समस्या के निदान में सर्वाधिक बड़ी भूमिका परिवार की है। परिवार में यदि बालक को पर्याप्त प्रेम, संस्कार, मार्गदर्शन, समय मिलता रहे तो अभाव में रहकर भी बालककिशोर अपराधों की ओर प्रवृत्त नहीं हो पायेगा। परिवार वह धूरी है जहां से चलकर बालक समाज में जाता है एवं समाज से प्राप्त अच्छे, बुरे अनुभव, परिस्थितियां, हालात, लेकर वापस परिवार में आता है, अब यदि परिवार में आकर उसे उचित मार्गदर्शन एवं प्रेम मिलेगा तब वह समाज से प्राप्त बुरे अनुभवों व व्यवहार का सामना आसानी से कर सकता है, परंतु वर्तमान में माता–पिता बच्चों को प्रेम, संस्कार, समय सभी देने में कम पड़ रहे है केवल पैसा एवं भौतिक सुख सुविधाऐं जुटा रहे है जो कि पर्याप्त नहीं है वह अनावश्यक है।

बालक किशोर अपराध को यदि रोकना है तो इस आयु में परिवार को उनके साथ मिलकर खड़े होना होगा। कुछ अपवाद स्वरुप परिवार ऐसे है जिसमें माता–पिता दोनों कार्यरत होने के बावजूद अपने बच्चों को Quality Time देते है और काम तथा बच्चों की परवरिश के बीच उचित तालमेंल बनाए हुए है ऐसे मामले में बच्चे भी फिर समाज में एक अच्छा स्थान, पद प्रतिष्ठा प्राप्त करते है परंतु ऐसे अभिभावक का प्रतिशत बहुत कम है अत: आज आवश्यकता है कि अभिभावक की काउन्सलिंग की। उन्हीं बच्चों किशोरो पर आपका समाज व भविष्य निर्भर है। जैसे आप संस्कार देंगे, वैसे ही वे आपको सूद समेंत लौटा देंगे। अत: मुझे लगता है कि परिवार अपने प्रेम और संस्कारों से इतनी मजबूत दीवार खड़ी कर सकता है जिससे टकराकर, मुसीबतें, परेशानियां, समस्याएं लौट जाती है एवं किशोर, अपराध की ओर अग्रसर नहीं हो पाता।

वर्तमान में हम भौतिक एवं बौद्धिक दृष्टि से लगातार आगे बढ़ते जा रहे है परंतु भावनात्मक दृष्टि से लगातार पिछड़ते जा रहे है। आज बड़ी से बड़ी दुर्घटना हमारे दिलो दिमाग को झकझोरती नहीं है। यह संवेदनहीनता ही हमारे मनुष्य होने पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। इसलिए–

1. बच्चों को संवेदनशील बनाए। दूसरों से सहानुभूति रखना सिखाऐं। इतना परिपक्व बनाऐ कि उसे आगे बढ़ने में आसानी हों
2. बच्चों का न सुनने की आदत डलवाए, छोटी छोटी बातों पर पंखे में झूलना, हाथ की नस काट लेना, कितना गलत है। बताऐं।
3. मोरल एजूकेशन को प्राथमिक तक सीमित न रखकर स्कूली शिक्षा के अगले चरणों में भी आवश्यक रुप से शामिल करे एवं जो बालक किशोर इन बातों का पालन करे उसे पुरुस्कृत भी करे जिससे उनका अनुसरण दूसरे अन्य बच्चे कर सके।
4. महापुरुषों के प्रेरणास्पद घटनाऐं सुनाने एवं अपनाने हेतु विद्यार्थियों को प्रेरित करें।
5. अभिभावक बच्चों को Quality Time दे।
6. बच्चों के निरन्तर संपर्क में रहे एवं संवाद स्थापित करते रहे।
7. बच्चों किशोरों को भावनात्मक सहारा दे।
8. निर्णय क्षमता विकसित करे, व निर्णय लेने में सहायता करे व मार्गदर्शन दे।
9. किशोरो को रचनात्मक कार्यो में व्यस्त रखे, खाली दिमाग शैतान का घर न बनने दे।
10. माता पिता को समझना चाहिए कि वे पैसे के पीछे न भागते हुए बच्चों पर ध्यान दे क्योंकि बच्चे ही उनकी असली पूंजी, सम्पत्ति है।
11. जीवन अनमोल है, सुंदर है तथा उसे सुंदर तरीके से ही जिए, यह समझाऐ।

बाल किशोर अपराध को दूर करने में कानूनी पहलू से ज्यादा जरुरी है पारिवारिक प्रेम, स्नेह, मार्गदर्शन। अत: कानूनी सजा के प्रावधानों की अपेक्षा बाल किशोर अपराध को रोकने के लिए परिवार की भूमिका ज्यादा सशक्त साबित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाल विकास – भगवान दास
2. किशोरावस्था – श्रीमति गायत्री वर्मा शिवा प्रकाशन श्री गणेश मार्केट खजूरी बाजार इंदौर
3. रोजगार समाचार – 22 से 29 नवम्बर 2014
4. बाल विकास एवं मानवीय संबंध – डॉ.श्रीमति आरती राजहंस बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रेमचन्द्र मार्ग, राजेन्द्र नगर पटना

****

The Evaluation Of MGNREGA In Rajgarh District

Alka Gupta *

Introduction - The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act is an India law that aims to guarantee the right to work and ensure livelihood security in rural areas by providing at least 100 days of guaranteed wage employment in a financial year to every household whose adult members volunteer to do unskilled manual work.

For effective management the legislation mentions implementation principles and key agencies. The principles are collaborative partnership and public accountability and community participation. The agencies are: Gram sabha and Gram Panchayat at the village level , intermediate panchayat and programme officer (PO) at the block level, District panchayat and district programme coordinator (DPC) at the District level, state employment guarantee council, state government and employment guarantee commissioner at the state level and central employment guarantee council and Ministry of Rural Development at the central level. It was starting from 200 districts in 2 February 2006, the NREGA covered all the districts of India from 1st April 2008. For poverty, alleviation and rural development, the mission of MGNERGA is to provide job on demand in order to ensure livelihood security and at the same time create durable assets to augment basic resources available to the poor.

This work guarantee can also serve other objectives :

- generating Productive assets.
- protecting the environment.
- empowering rural women.
- reducing rural urban migration.
- fostering socials equity.

The permissible work under MGNERGA:

- water conservation and water harvesting.
- drought proofing .
- irrigation work.
- restoration of traditional work bodices.
- land development
- flood control.
- rural connectivity.
- work notified by the government.

The act sets a minimum limit to the wages to be paid with gender equality. The states are required to evolve a set of norms for the measurement of works and schedule of rate. Notified wage rate in Madhya Pradesh for MGNERGA 146 per day effective from 1 April 2013. The unemployment allowance must be paid it the work is not provided within the statutory limit of 15 days. MGNERGA has been used an on instrument to reduce gender inequality and if mandates that at least 1/3 of the beneficiaries shall be women. moreover the share of scheduled castes and scheduled tribes has been around 30% showing empowerment of weaker sectionwages hate vial ratio of 60:40 in the MNREGA

Brirfprofile Of Rajgarh District - Rajgarh District is a district of Madhya Pradesh state in central India . The town of Rajarh is the administrative headquarters of the District .The District lies on the northern edge of the Malwa Platue. It is part of Bhopal division.The District was created may 1948.The District has an area of 6154 km2, and a population 1546541 according to the 2011 census. The District has a population density of 251 inhabitants pers quare km. The district has six tehsils Rajgarh ,Khil chipur ,Jirapur, Narsinghgarh ,Biaora and Sarangpur. In 2006 the Ministry of Panchyati Raj named Rajgarh one of the country's 250 most backward district [out of a total of 640].The District has fairly good cultivated lands with about 598200 hectares of total area that are sown and 17706 hectares covered by forest. The District has a sex ratio of 955 females for every 1000 males and average literacy rate of 62.68%.

Objectives -

1. To evaluate the performance of MGNERGA MGNERGA in Rajgarh District.
2. To reveal the positive and negative face of MGNERGA in Rajgarh District.
3. To throw lights on the issue and challenges associated with MGNERGA in Rajgarh District.
4. To evaluate, how successful has been the MGNERGA in poverty alleviation and employment generation in Rajgarh District.

Methodology - The study mainly based on the secondary data collected from websites, magazines, reports and research papers of some researchers .Rajgarh District consists six tehsils (Rajgarh,Khilchpur,Narsinghgarh,Biaora, Sarangpur,Zirapur) all the six tehsils have been considered in the study. The data collected from the various source have been presented with the help of graphs and charts, facts and figures from 2010-11 to 2012-13 have been considered for analysis purpose.**The Positive Face Of MGNREGA**

Awareness And Employment : No. of HHs issued Job Cards

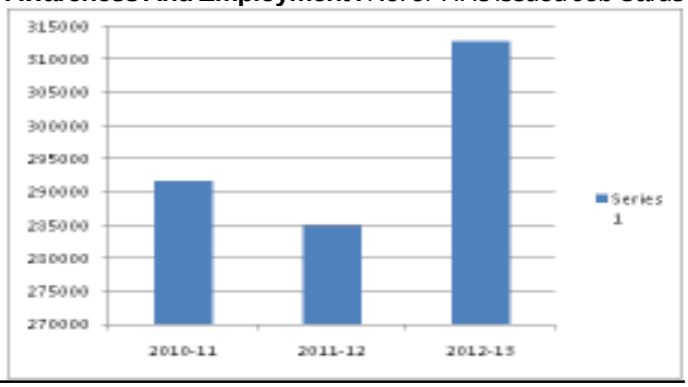

* Research Scholar, Vikram University, Biaora - Rajgarh (M.P.) INDIA

(Source compiled from official website of MGNREGA)
There is a growth of approx 10% in the numbers of job cards issued to House Holds in 2012-13 as compared to 2011-12. In 2010-11 the figure was 291733 & it is decreased to 284804 in 2011-12. But the figure rose to 312770 in 2012-13.Hence it can be concluded that number of job cards issued to HHs is increasing in 2012-13.The awareness level of people towards MGNREGA is also increasing.

Number Of HHs Demanded Employment Vs Number Of HHs Provided Employment

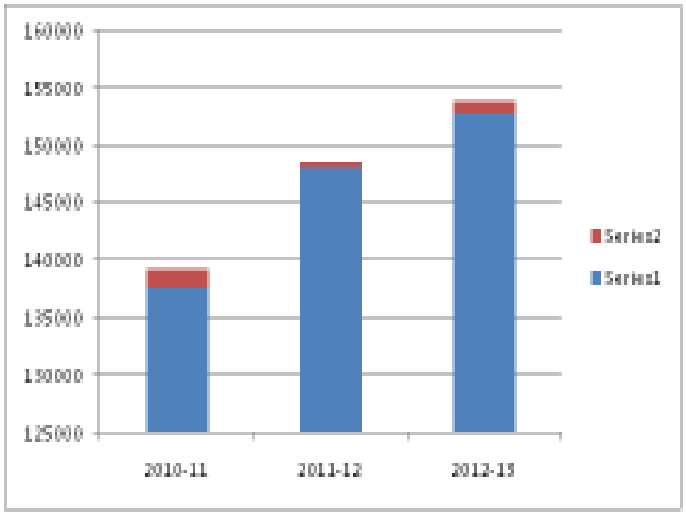

(Source compiled from official website of MGNREGA)

Status Of Employment Demanded Vs Employment Provided In Rajgarh District's

	2010-11	2011-12	2012-13
Number of HHs demanded employment	139373	148612	153921
Number of HHs provided employment	137608	148148	152866

The gap between employment demanded and employment provided is in 2010-11,1765 HHs could not get employment while in 2011-12 it reduced to 464.But in 2012-13 the difference again increase to 1055. However in 2010-11,139373 HHs demanded employment, in 2011-12, 148612 and in 2012-13 ,153921 HHs demanded employment. There is increment of 7% and 4% in number of HHs demanded employment in 2010-11 & 2011-12 respectively.It shows that he awareness among people towards MGNREGA is increasing.

Number Of HHs Completed 100 Days Employment

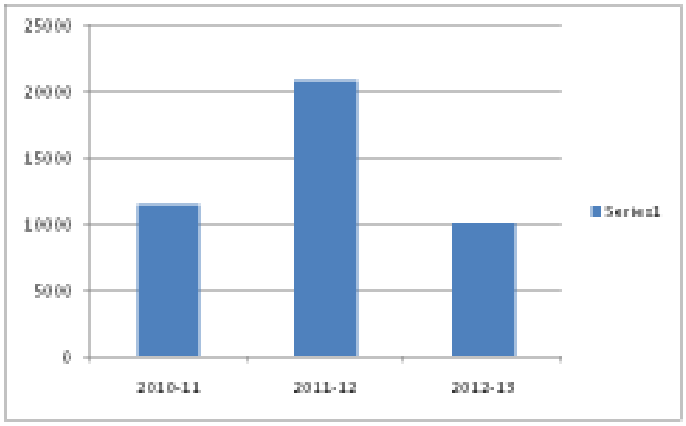

(Source compiled from official website of MGNREGA)
As per official central guidelines of MGNREGA the workers are entitled to demand for a maximum 100 days employment in a year.

Number Of Families Work Under MGNREGA

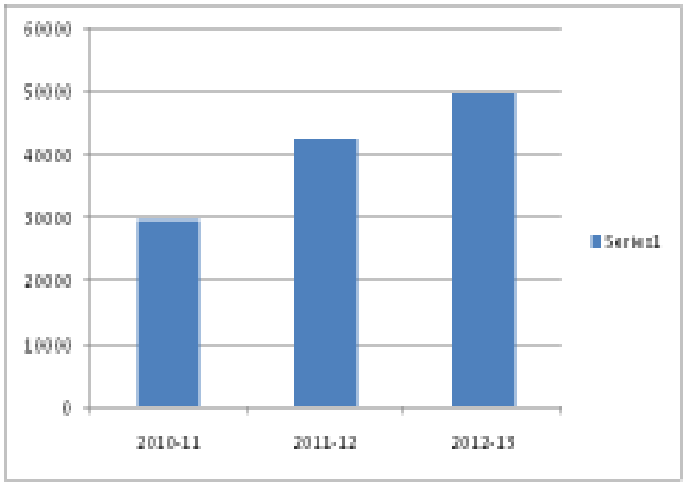

(Source compiled from official website of MGNREGA)
The above mentioned figure shows he positive performance of MGNREG in Rajgarh District. There is a growth rate 44% in 2011-12 and 17% in 2012-13 in number of families work under MGNREGA.

Assets Created During The Financial Year -The assets created means permissible work done through MGNERGA are increasing in the year 2011-12 . Assets created in 2010-11 is 7392 while in 2011-12 it increases to 7614. However in 2012-13 it decreases to 7466 compare to financial year 2011-12 in which 7614 assets created It shows performance of MANERGA in Rajgarh District.

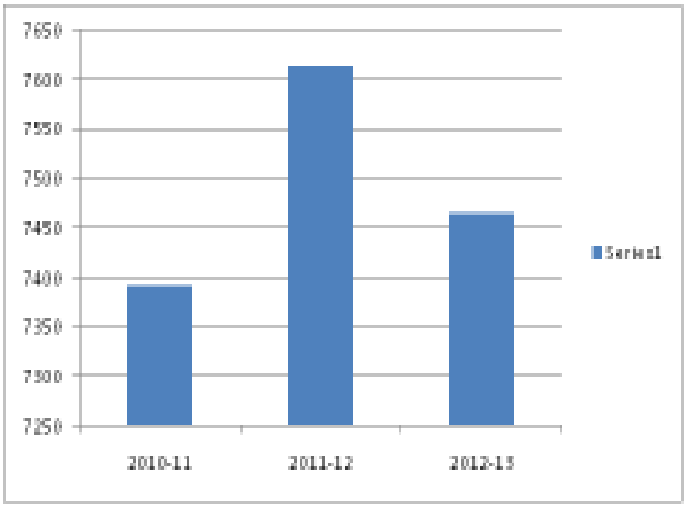

Issues And Challenges - Challenges like low awareness and accessibility, poor worksite facilities, delayed payment of wages etc. have been revealed by many researchers in past .The present study is focused on two important issues:

1. Delay in payments to households.
2. Quality of asset created in rural areas.

Dalay In Payments To Households - Although the employment generation rate and awareness among people towards MGNREGA is increasing but still we have a serious

issue of delay in payment to HHs under MGNREGA. The below mentioned charts Household wise and Amount wise payments to HHs.

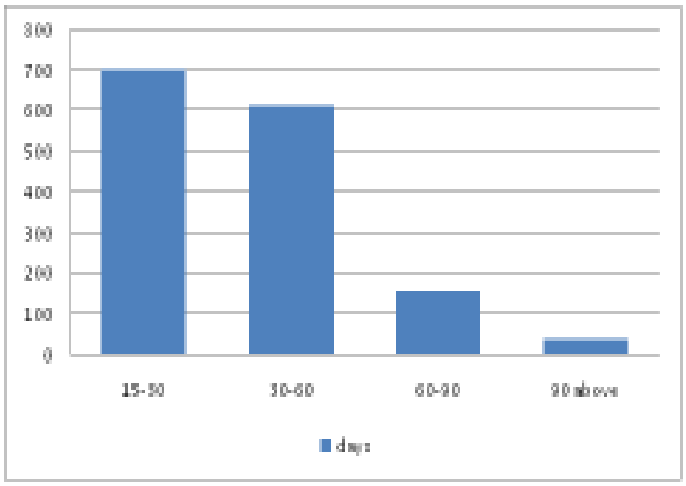

Status of delay in payment Household wise till 30 November 2013.
(Source compiled from official website of MGNREGA)

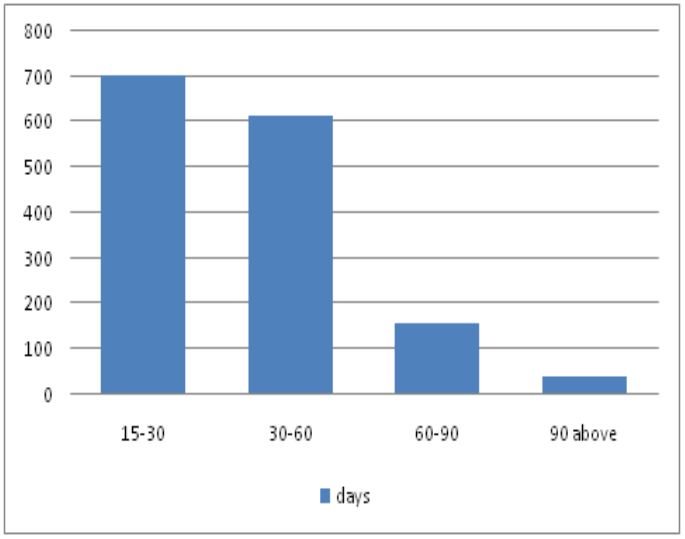

Status of delay in payment amount wise till 30 November 2013 (Source compiled from official website of MNREGS.)

As per the guidelines of MGNREGA payment of wages should be made within 15 days. But in Rajgarh District 5974 Households received wages payment after 15 but before 30 days, 4942 HHs received wage payment between 30-60 days, 1027 HHs received wage payment between 60-90 days and 322 HHs received wage payment after 90 days. This is one of the critical issues associated with MNREGS in Rajgarh District. The delayed in payments unnecessarily increase the burden on State *Government. The delay in wage payments occurs due to following reasons:*

- Corruption
- Lack of professionals.
- Under staffing.
- Delay in Administration.
- Lack of people's planning.
- Workload.

However the government is trying to solve these problems but still there is need of some strong actions.

Quality Of Assets Created In Rural Areas - It has been observed by many researchers that low quality assets are being created in rural area. This is due to lack of on job trainings to the workers. MGNREGA provides job to unskilled workers which led to the creation of low quality asset. It is not surprising that village roads built by unskilled workers are washed away during a heavy rain fall.

Suggestions -

There are following suggestions to overcome these problems:

- Government need to implement strong law against corruption in MGNREGA.
- Sufficient professionals should be recruited for effective working of MGNREGA.
- Job training should be provided to unskilled workers to create quality assets.
- Proper maintenance of records at the Gram Panchayat level.
- Timely payment of unemployment allowance & wages.
- Proper maintenance of account in a uniform format.

Conclusion - The MGNREGA addresses itself mainly to working people and their fundamental right to live with selfrespect. The present study reveals the two faces of MGNREGA in Rajgarh District. On the one hand awareness among people and rate of employment generation is increasing. While on the other hand the delayed in payments to the Household has become critical issue. The assets created in rural areas are also of low quality due to lack of skills among workers. The government need to take serious action to overcome this problem.

References :-

1. All India report on MNREGS : A survey of 20 District INTITUTE OF APPLIED MANPOWER RESEARCH,. Delhi.
2. Evaluation of National Rural Employment Act (MGNREGS) in Tamil Nadu RBTI India Institute of technology,Madrsa 2009.
3. India's National Rural Employment Guarantee Act from poverty to power- www.fp2.prg.
4. Naomi Jacob (2008)The impact of MNREGS on Rural – Urban Migration: Field surey of Villlupuram District, Tamil nadu.
5. Pramathesh Ambasta. P S Vijay Shankar, Mihir Shah Economic and Political weekly EPW. February 23,2008.
6. Yamini Aiyar, Salimah Samji (2009) transparency and accountability in MGNERGA: A case study of Andhra Pradesh.

Websites :-

1. http://www.MGNREGS.in/net MNREGS/home.aspx
2. http://www.MNREGS.net
3. http://en. Wikipedia.org/wiki/Mahatma Gandhi National Rural Development Guarantee act
4. http://knowledge .MNREGS.net/978/2/India.pdf
5. http://www.zeenews.com/news635028.html

Some Reflection of Women Entrepreneurship in Tribal Area of Western Madhya Pradesh [A Case Study of Tribal District Alirajpur-Jhabua of Western MP]

Dr. Rajendra Singh Waghela *

Abstract - Development of women entrepreneurship in rural tribal area is of great significance. With free economy and market economy creating ripples globally, the entrepreneurship among women has become the need of the hour. Women entrepreneurship development should be viewed as a way of not only saving the problem of unemployment factor, but also of overall economic and social advancement of the rural tribal area. Rural development without participation of women is meaningless. Women entrepreneurs are those who explore new paths for involvement and contribution women entrepreneurship has been making a significant impact in all segments of the economy. The paper attempts to analyse the challenges and opportunities of women entrepreneurship in rural area of western Madhya – Pradesh. The western Madhya Pradesh is mainly dominated by poor rural tribals and along with modern innovation techniques are prevalent among them & hence it is of great importance to conduct a systematic study and analyze the effect of the above mentioned in such areas in order to establish the guidelines for the development of rural entrepreneurship. The objective of the study is to examine the involvement of these rural women entrepreneurs. The data has been collected through random sampling of 100 women entrepreneurs in the tribal districts of Western Madhya- Pradesh. The significance of the proper hypothesis has been established statistically. The result revealed that the women entrepreneurs of the study area, have only a high need for achievement, ability for decision making and future planning, but also experience in various challenges like, low risk taking, low education level and low mobility. There is also a need for effective research for locating gaps in emerging needs of women entrepreneurship. The implication of the result of this study is bi-fold: firstly it acts as a guideline to the government machinery in order to re-orient their entrepreneurial strategies in the rural area and secondly, it acts as a mirror of the various NGO's and social organizations, working in the field, to review their policies and programmes for the tribal rural development.

Key words:- Need for achievement, Risk taking ,Tribal development, women entrepreneurs.

Introduction - Women entrepreneurship is consider to be an important factor for the development of tribal area. The role of women worldwide is undergoing a tremendous change. Women empowerment is recognized universally, as a key element to achieve progress in all areas. In developing countries like, India, economy could play a vital role in coping with various socio economic problems. Widespread unemployment is one of the gravest problems confronting the Indian economy. The problem of unemployment can not be resolved, unless the tribal women are trained and involved in entrepreneurship oriented jobs.

Women consist almost half of the tribal population in the tribal areas. Women entrepreneurship has a great potential in empowering women and transforming society. The sustainable development of tribal area is possible only if each rural household is provided with profit oriented employment. In this regard, women entrepreneurs play on important role to generate additional income and to create more employment in tribal economy. So an attempt can be made to analyze some of the significant aspects of women entrepreneurs in tribal areas.

Need for women entrepreneurship - Entrepreneurs have played and are playing a crucial role in the socio-economic development of tribal areas. According to Gunderson-"Not resources, not protestant ethic but entrepreneurship explains economic growth", The availability of entrepreneurial skills is of vital assets and an instrument for economic growth. Entrepreneurship among women in the tribal economy, is significant on the following grounds -

(a) Proper utilization of available human resources.
(b) It promotes equal opportunities and human dignity.
(c) It makes women economically self dependent and provides for new challenges for self-fulfillment.
(d) It provides more status and respect in the society and raises self confidence.
(e) It accelerates the pace of tiny, cottage and small industries development.
(f) It brings special qualities in women such as innovative approach, dedication, risk taking and patience in the work place.

Characteristics of tribal women entrepreneurs :

Today women have made their mark in different walks of life and are completing successfully despite of the social economic and psychological differences. Women have a

* Professor (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee, Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

strong potential in various aspects of economic growth in tribal areas. The researchers found the following characteristics by staying in tribal areas for a long time and by interacting with them from time to time -

1. Tribal women like to work in groups and also like to move together.
2. They have strong organizational skills.
3. They have physical stamina, therefore they can work for longer time.
4. Tribal women are usually risk takers and handling the economic uncertainties.
5. They think of their daily need. Therefore they sell their goods even at lower price.

Introduction to tribal Area in western M.P. - Indore division is a tribal dominated area in western Madhya Pradesh. The division has eight districts, out of these, five districts - Alirajpur, Jhabua, Dhar, Burwani and Khargone are known as tribal districts. The majority of population in these districts belongs to the scheduled tribes. The main tribes in these areas are Bhills and Bhilallas. Alirajpur and Jhabua districts are highly tribal clusters. The majority of population depends upon agriculture as the source of livelihood. Low productivity, low income and unemployment are the basic indicators of the tribal areas. Due to this, from six to ten months in the year, subalterns go for securing employment in urban areas. So, there is a drastic need for expanding and developing the existing entrepreneurial obstacles to exploit the multiple opportunities available in the tribal areas.

Objectives of the study -

1. To study the factors affecting the development of women entrepreneurs in tribal areas.
2. To study the role of women for creation of assets.
3. To study the interest of women entrepreneurs in tribal areas.
4. To measure the economic success of the sample respondents.
5. To study the challenges coming in the development of women entrepreneurs.
6. To identity the opportunities for the women entrepreneurs.
7. To establish the guide line for the success of women entrepreneurship.

Hypothesis - The hypothesis of the present study is that there are many challenges for the department of women entrepreneurship in the tribal areas.

Methodology - The study is based on descriptive survey. An interview schedule used for collection of information from women entrepreneurs. Question asked to respondents such as determining factors of women entrepreneurs, problems faced by women, opportunities available for tribal areas etc. The primary data collected from women entrepreneurship of tribal district Alirajpur and Jhabua of westerns Madhya Pradesh. Alirajpur and Jhabua are highly tribal dominated areas, in western M.P., in which Alirajpur district has 93% of scheduled tribes and Jhabua has 83% schedule tribes. The sample size was 100 women entrepreneurs actively engaged in agriculture and allied activities, cottage, small and household industries and service sectors, in which 50 respondents from Alirajpur and 50 from Jhabua, were interviewed. The primary data analysis has been arrived at with the help of statistical tools such as percentage, chi-secure analysis.

Analysis of survey data - An entrepreneurs is one of the basic segments of economic growth. The emergence of women entrepreneurs and their contribution to the tribal economic is quite visible. The number of women entrepreneur in tribal areas, The primary data analysis has been arrived at with the help of statistical tools such as percentage, chi-square analysis.

Age group wipe - Age group wise analysis of respondents shows that 48 percent respondents were 35-45 age group, while 24 percent were 30-35 age group. District wise data shows that 54 percent respondents in Jhabua district were 35-45 age group while in Alirajpur district were 42 percent. Only 8 percent were 50 and above age group. It has been observed that the work force is mainly the young.

TABLE - 1 (See the last Page)

Social category wise - The survey data shows that 50 percent respondents were scheduled tribe, 28 percent were OBC's and 17 percent were general category. It is clear that scheduled tribes entrepreneurs play greater role in tribal areas.

TABLE-2

Social category of respondents

District	Category				Total
	ST	SC	OBC	General	
Alirajpur	32	2	13	3	50
Jhabua	18	3	15	14	50
Total	**50**	**5**	**28**	**17**	**100**

Sources : Primary data

Classification of respondent's business - Classification of respondents has been done according to their business under three sectors such as agriculture, cottage and small industries and service sectors. The data shows that 46 percent respondents were working in service sectors, 34 percent in tiny, cottage and small scale industries and only 20 percent were engaged in agriculture and its allied activities. It is oblivious that women are highly preferred to work in service sectors such as green marketing, beauty parlor, Boutique , tailoring, Jewellery making etc.

TABLE-3 (See the last page)

Factors affecting women entrepreneur - Question asked through likared method about the factors affecting the women entrepreneur success, more than 50 percent respondents agree and strongly agree with personal factors, need for achievement, risk taking are innovation, social and cultural and economic factors. It is obvious that personal, social, cultural and economic factors strongly affect the women entrepreneurial behavior which contributes to entrepreneur's growth and success.

TABLE-4 (See the next page)

Challenges for women entrepreneurship - The women entrepreneurs faced various problem in tribal areas. Such as social barriers. Problem of finance, marketing and information, large of infrastructure and practical knowledge. To know the respondents opinion about these, five scale likert method is used and the data shows that 70 percent respondents agree or strongly agrees with the inadequate market coverage. More than 50 percent respondents feel that shortage of finance, raw materials, power & skill were main challenging factors for women entrepreneurs. It is obvious that women entrepreneurs are facing challenges in tribal areas.

TABLE-5 (See the Next Page)

Testing of hypothesis

There are many challenges for the department of women entrepreneurship in the tribal areas.

The above hypothesis has been examined through Chi-square test. The various challenges for women entrepreneurial, have been considered through Chi-square. The calculated value of x^2 is 9.13. The table value of x^2, at 7-1= 6 degree of freedom and 5 percent significance level is 12.59 since, the table value of x^2 is more than the computed value. Hence there are many challenges for the development of women entrepreneurship in the tribal areas.

Suggestions -

1. Women entrepreneurs should be provided with achievement motivation training and promotional support.
2. Marketing intelligence should be made available to women entrepreneurs.
3. The development of infrastructure in tribal areas such as road, communication, electricity etc. will promote for women entrepreneurs.
4. To provide more practical knowledge for improving the operation efficiency of women entrepreneurs.
5. To secure concession, subsidies and more assistance to women entrepreneurs.
6. To create environment for development of self confidence and hope among women entrepreneurs.

Conclusion - The study reveals that there is a vast sense of women entrepreneurship development in tribal areas. It is also observed that socio-economic environment of tribals and the opportunities available in the tribal area also influence women entrepreneurship significantly. There is a need for three tier efforts for the development of women entrepreneurs in tribal areas namely first to create entrepreneurs environment including safety sense among women in tribal area, secondly changing social attitude towards women and thirdly, to provide proper infrastructure in tribal area.

Reference :-

1. Naik Sumangala (2009) Need for developing rural women entrepreneurs, Rural entrepreneurial and employment, Indus valley publication PP 122-128.
2. Jayanti, C (2009), Rural women entrepreneurs in the new wave economic development, Indus valley publication PP 118.
3. Verma SB, Singh Mahendra (2009) Rural women entrepreneurs, Indus valley publication PP 117.
4. Pandey Manas (2011) development of women entrepreneurship challenges and opportunities, The Indian Journal of commerce vol 64, No.-2 April-May PP 117.
5. Waghela Rajendra Singh (2011) – Determining factors influencing entrepreneurial growth in tribal area. STM Journal.
6. Sharma, Virendra Prakash (2004) Research methodology Panchsheel Prakashan, PP 166
7. District statistical Book, Jhabua, Alirajpur District.

TABLE - 1
Respondent Age-Group

District	Age group					Total
	18-30	30-35	35-45	45-50	50 and above	
Alirajpur	5	14	21	8	2	50
Jhabua	4	10	27	3	6	50
Total	**9**	**24**	**48**	**11**	**8**	**100**

Source : Primary Data

TABLE-3
Classification of Respondent Business

District	Agriculture	tiny/small Industries	Service Sector	Total
Alirajpur	12	14	24	50
Jhabua	8	20	22	00
Total	**20**	**34**	**46**	**100**

Source : Primary data

TABLE-4
Factors Affecting Entrepreneurial Development

Factors	Strongly agree	Agree	Neutral	Disagree	Strongly Disagree
1. Need for achievement	44	28	10	7	11
2. Risk taking	37	25	25	10	3
3. Innovation	23	38	19	12	8
4. Training and education	41	35	20	3	1
5. Economic factor	51	29	5	9	6
6. Social and cultural	24	24	4	18	10
7. Efficiency and communication	18	28	27	14	13

Sources : Primary data

TABLE-5
Respondent Opinion about Challengers for Entrepreneur Development

Challengers	Strongly agree	Agree	Neutral	Disagree	Strongly Disagree
1. Lack of market coverage	42	28	14	12	4
2. lack of finance	25	32	13	15	12
3. Shortage of Raw material	32	40	3	15	12
4. Shortage of power	45	33	10	12	0
5. Inefficient management	12	19	49	10	12
6. Lack of skill	13	37	21	18	11
7. Lack of entrepreneur ability	8	21	42	25	4
8. Lack of training facilities	24	29	27	15	5

Sources : Primary data

****

Comparative study of Job satisfaction of the employees of Private & Public Sector Banks

Subhash Purohit * **Dr. C.V. Singh** * *

Abstract - It can be said that job satisfaction is largely a matter of an individual comparing his/her job and life expectations with those being offered. In shaping such job expectations, there are economic considerations (e.g. compensation and retirement benefits) and occupational and family considerations (professional satisfaction, job satisfaction, advancement opportunities, relocation, etc.). One of the biggest preludes to the study of job satisfaction was the Hawthorne studies. These studies ultimately showed that novel changes in work conditions temporarily increase productivity (called the Hawthorne Effect). It was later found that this increase resulted, not from the new conditions, but from the knowledge of being observed. This finding provided strong evidence that people work for purposes other than pay, which paved the way for researchers to investigate other factors in job satisfaction. Banking sector is one of those sectors which is not only the backbone of the whole economic system but also one of the biggest employment providers. The study is conducted in the public and private sector banks of Udaipur with the objective to bring out clearly the level of job satisfaction, causes of satisfaction and dissatisfaction in both public and private sector banks. Simple tabulation is used to comprehend the data as clearly as is possible.

Key words - Job satisfaction, Public sector, Private sector, Banks

Introduction - Job satisfaction is a subjective indicator that indicates how contented an individual feels while performing his/her duties. It is subjective in the sense that it cannot be defined by a single measurement alone. It is the amount of pleasure or contentment associated with a job. If you like your job intensely, you will experience high job-satisfaction. If you dislike your job intensely, you will experience job dissatisfaction. Job satisfaction is an individual's emotional reaction to the job itself. It is his attitude towards his job. According to Weiss and Cropanzano (1996), job satisfaction represents a person's evaluation of one's job and work context. This definition is still being debated. It captures the most popular view that job satisfaction is an evaluation and represents both belief and feelings. It is an appraisal of the perceived job characteristics and emotional experience at work. Satisfied employees have a favourable evaluation of their job, based on their observations and emotional experiences. Saleh (1981) states that job satisfaction is a feeling which is a function of the perceived relationship between all that one wants from his job/life and all that one perceives as offering or entailing. The emphasis here is on all that one wants, whether it is important for self-definition or not. Luthans (1989) states that job satisfaction is a pleasurable, or positive emotional state resulting from the appraisal of one's job, or job experience, and is the result of the employee's perception of how well the job provides those things which are viewed as important. Employees are concerned with their work environment for both personal comfort and how it facilitates doing a good job. People get more out of work than merely money or tangible achievements. For most employees, work also fills the need for social interaction. Not surprisingly, therefore, having friendly and supportive co-workers leads to increased job satisfaction.

Factors Responsible for Job Satisfaction and Job Dissatisfaction: Employees tend to prefer jobs that give them opportunities to use their skills and abilities and offer a variety of tasks, freedom, and feedback on how well they are doing. Jobs that have too little challenge create boredom, but too much challenge creates frustration and a feeling of failure. Under conditions of moderate challenge, most employees will experience pleasure and satisfaction (Katzell, Thompson, and Guzzo, 1992). Employees want a fair unambiguous pay system and promotion policies. Satisfaction is not linked to the absolute amount one is paid; rather, it is the perception of fairness. Similarly, employees seek fair promotion policies and practices. Promotion provides opportunities for personal growth, more responsibilities, and increased social status. Individuals who perceive that promotion decisions are made in a fair and just manner are likely to experience satisfaction from their jobs (Witt and Nye, 1992).

Fair promotional policies in any organization become their foundation of growth. When an employee gets fair promotion, which is generally based on his true

* Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** HOD, Dept. of ABST, Government College Salumber, (Raj.) INDIA

assessment, he gets a type of recognition, and hence, increases his job-satisfaction.

In a comparative study between the levels of job-satisfaction of public and private sector bank employees (Lal Madhurima, 2008) it was found that public sector banks score significantly better than private sector banks in terms of image, policies and objectives. Moreover, public sector employees are significantly more satisfied as compared to private sector bank employees as regards the job responsibilities; coworker and supervisor support is concerned. Private sector bank employees are more satisfied over the teamwork and communication as compared to public sector bank employees. Job demands and decision authority give more satisfaction to public sector bank employees as compared to private sector bank employees. The private sector bank employees score significantly higher on the issues of compensation and benefit.

Research methodology - Subjects of the present study were selected from managerial and non-managerial staff of public and private sector banks from Udaipur. One public sector bank and one private sector bank were selected for the study. A total of 50 subjects were selected equally from the two organizations for the study.

Job satisfaction was measured using five point Likert scale. A single item on five-point rating scale ranging from highly dissatisfied to highly satisfy was taken.

Data analysis -

Table 1 (See the next page)

Table 2 - Factors responsible for job satisfaction in PSB

Level of job security	25	100%
Communication & information Flow	25	100%
Interpersonal relationship	25	100%
Job itself	22	88%
Flexibility & independence	22	88%

Table 3 - Factors responsible for job satisfaction in PRSB

Current career opportunities	23	92%
Implementation of change & innovation	20	80%
Extent of personal growth &	20	80%
development Association of job with individual	20	80%
aspiration and ambition Participation in decision making	20	80%

Table 4 - Factors responsible for job dissatisfaction in PSB

Association of job with individual	15	60%
aspiration and ambition Implementation of change & innovation	15	60%
Involvement & identification with org goals	10	40%
Participation in decision making	10	40%

Table 5 - Factors responsible for job dissatisfaction in PRSB

Level of job security	12	48%
Level of salary with respect to	12	48%
experience Credit / value to work	10	40%
The job itself	10	40%

Findings - It has been observed that degree of job satisfaction of private sector banks was found to be comparatively slightly lower than in public sector banks. The main reasons for job dissatisfaction in Private sector bank were job security, salary not at par with experience, not much value or credit was given for the tasks accomplished and monotonous nature of job.

Employees of private sector banks perceive that their jobs are not secure. In fact, the effect of an open economy, globalization, and privatization can be seen more easily in private sector banks than in public sector banks. In private sector banks, the environment in highly competitive and job security is based on performance and various other factors. These may be market situation, existence of competitor, and government policies. Where these factors are adverse in nature, performance automatically suffers. During this period, employees feel insecure, this reduces overall job satisfaction.

It was found that even people with much lesser experience had salaries at par with those who were highly experienced. On further probing it was found that the bank promoted increments based on merit rather than number of years of service.

In public sector banks, welfare policies are clearly defined and legally enforced. Retirement, pensions, gratuity, and other related welfare policies are effectively executed. So there is no problem with social security. In private sector banks, welfare activities are neither well planned nor well executed. Employee turnover is very high and job security is very low.

These findings in the banking sectors could be extended to explain the job situation in other service sectors. In terms of security, promotion, and welfare policy, there is a clear difference between public and private sector employees. It was stated earlier that when we compare the job satisfaction of employees in public and private sector banks or in other service sectors, the public and private sectors become the main factor of comparison. In India, the public or private sector factors neutralize all other factors of comparison. For example, in India, a public sector insurance company like LIC will always be preferred by a new entrant, if he has a choice.

Increasing Job Satisfaction Level of Employees of Private Sector Banks - It has been found that employees of private sector banks were less satisfied with their jobs compared to employees of public sector banks. To increase their satisfaction, private sector banks need to improve job security. The Indian middle class is very protective towards family members, so private sector banks must launch special schemes to safeguard the interests of family members of employees. This may be education facilities for children, pension schemes for employees, accommodation for employees, gratuity, and other retirement benefits.

Status of Job Satisfaction of Public Sector Banks: It has been found that job security, communication & information flow, interpersonal relations and flexibility & independence

are the major factors contributing towards the job satisfaction of public sector ban employees. But assuming that there are no prevalent causes of dissatisfaction would be incorrect. In fact, it is found through the study that the employees are dissatisfied in public sector banks because of low association of job with the employee aspirations & ambitions. As compared to private sector banks, there is low focus on innovation & change strategies. Moreover,

Conclusion - In the light of the findings, job security is one of the most important ingredients of job satisfaction. Secure job environment enhances the degree of job satisfaction. Management must create an environment of job security among employees. Indians work with emotions, so any legal job contract will not motivate them. Instead, there should be a psychological or emotional bond between employees and the organization.

Due to the different social, economic and cultural backgrounds, the hire and fire system is not effective in India. In fact, Indian culture is neither individualistic nor collective, rather it is "Karm" (according to Indian mythology it is do your duty, don't worry about results) oriented. Indians always accept effective leadership. So when management can provide effective leadership and a secure job environment, Karm (job duty) will be in the right direction.

Apart from job security, management must provide job stability. There should be a challenging environment. The job structure should comprise horizontal as well as vertical growth. The job should provide enough scope for the employees in terms of promotion and transfer.

References -

1. Avtgis T, 2000. "Unwillingness to communicate and satisfaction in organizational relationships". Psychological Reports, 87(1), 82-84.
2. Feldman D and H Arnold, 1985. "Personality types and career patterns: Some empirical evidence on Holland's model". Canadian Journal of Administrative Science, 192-210.
3. Foels R, J Driskell, B Mullen, and E Salas, 2000. "The effect of democratic leadership on group member satisfaction: An Interaction. Small Group Research, 31(6), 676-701.
4. Jonge J, F Dollord, C Dormann, and P Le Blance, 2000. "The demand-control model: specific demands, specific control and well-defined groups". International Journal of Stress Management, 7(4), 269-287.
5. Katzell R, D Thompson, and R Guzzo, 1992. "How job satisfaction and job performance are and are not linked", in CJ Cranny, PC Smith, and EF Stone (eds), Job Satisfaction. New York: Lexington Books, 1992, 195-217.
6. Lall Madhurima, 2008. "A comparative evaluation of job-satisfaction in private-sector and public sector bank employees", Samadhan: a peer reviewed journal, Vol. 11, Jan-June 2008, pp 3 – 247. Locke E, 1976. "The nature and causes of job satisfaction" in Handbook of Industrial and Organisational Psychology, M Dunnette, ed, Chicago: Rand McNally, 1297-1350.
7. Luthans F, 1989. Organisational Behaviour, New York, McGraw-Hill, 5th edition, pp 176- 185, 264-283.
8. Saleh S, 1981. "A structural view of job involvement and its differentiation from satisfaction and motivation". International Review of Applied Psychology, 30(1) pp 17-29.
9. Sinha D, 1958. "Job satisfaction in the office and manual workers". Indian Journal of Social Work, 19, 39-46.
10. Taylor H, 2000. "The difference between exercisers and non-exercisers on work-related variables". International Journal of Stress Management, 7 (94), 307-309.
11. Vander G, M Emans, and E VanDe, 2001. "Patterns of interdependence in work teams: A two level investigation of the relation with job and team satisfaction". Personnel Psychology, 54 (1), 51-69.
12. Vigoda E, 2000. "Organisational politics, job attitude and work outcomes: Exploration and implications for the public sector". Journal of Vocational Behaviour, 57 (3), 326-347.
13. Weiss H and R Cropanzano, 1996. "Affective events theory: A theoritical discussion of the structure, causes and consequences of affective events at work". Research in Organisational Behaviour, 18, 191-214.
14. Witt L and L Nye, 1992. "Gender and the relationship between perceived fairness of pay or promotion and job satisfaction". Journal of Applied Psychology, Dec, 910-17.

****

Table 1
Comparing Satisfaction of Public Sector and Private Sector Bank Employees

	Highly Satisfied		Satisfied		Neutral		Dissatisfied		Highly Dissatisfied	
	PSB	PRSB	PSB	PRSB	PSB	PRSB	PSB	PRSB	PSB	PRSB
Communication & information flow	15	10	10	5	0	5	0	5	0	0
Interpersonal relationship	10	5	15	10	0	5	0	5	0	0
Credit / value to work	10	2	10	8	0	5	5	8	0	2
The job itself	15	2	7	5	0	8	3	9	0	1
Degree of motivation for the job	0	0	15	10	2	7	5	8	3	0
Current career opportunities	5	5	10	18	6	0	4	2	0	0
Level of job security	20	0	5	5	0	8	0	7	0	5
Involvement and identification with organizational goals	0	10	10	7	5	3	7	3	3	2
Nature of supervision	0	10	10	5	12	5	0	3	3	2
Implementation of change & innovation	0	10	0	10	10	5	13	0	2	0
Kind of tasks required to be performed	0	5	10	10	8	5	3	5	4	0
Extent of personal growth	5	10	8	10	7	5	5	0	0	0
Conflict resolution	0	0	20	15	0	5	3	5	2	0
Association of job with individual aspiration/ambition	0	5	0	15	10	0	9	3	6	2
Participation in decision making	0	0	10	20	5	5	5	0	5	0
Degree of skill utilization	5	7	10	12	5	4	5	1	0	1
Flexibility & independence	10	5	12	5	0	10	3	5	0	0
Organizational climate	7	0	8	15	5	5	5	4	0	1
Level of salary with respect to experience	8	0	12	10	0	3	5	10	0	2
Satisfaction with organization structure	0	0	12	10	8	11	4	4	1	0
Sum	**110**	**86**	**194**	**205**	**83**	**104**	**84**	**87**	**29**	**18**

****

Business Ethics And Corporate Social Responsibility In Global Scenario

Monika Jain *

Abstract - People have take two extreme positions concerning how managers should behave when conducting business in a country other than their won Some argue that local customs and practices should always be followed even if they would be considered unethical or even illegal in one's home country. Others argue that the ethical and legal standards of the most developed country should always be applied.
International and transnational structures allow us to synthesis the advantages of all cultures while avoiding their excesses. Companies are quite capable of nurturing independence and encouraging achievement. Managing across cultures gives us more possible pathways to our goal.

Introduction - Values in the culture influence ethical standards. The old Sydney Lumet movie Twelve Angry Men tells the story of a juror persuading his eleven colleagues in the American jury room that the accused is not guilty. Earlier eleven members of jury had believed and argued that the accused is guilty. Ultimately they were convinced by lone jury that accused is not guilty. In collective cultures the lone member might not go to that extent against the group.

1. Three Approaches Which Protect Social Interests

There, at present, three approaches having a similar focus in protecting various interests, i.e. corporate social responsibility, business ethics and corporate governance. These subjects have, however, developed separately during different periods.

(i) Corporate Social Responsibility- The first approach, CORPORATE SOCIAL RESPONSIBILITY has its origin in USA about seven decades ago. It is an obligation of decision-makers to take actions which protect which protect and improve the welfare of society as a whole along with their own interests. Such decisions may affect environment, consumers and community. It was Peter Drucker who later emphatically argued that management should assume social responsibility. Management should consider the impact of every business policy and action upon society. It has to consider the actions that are likely to promote the public good and to advance the basic beliefs of society, and to contribute to its stability, strength and harmony. He laid emphasis on "Quality of product and customer service".

Later on Sandra Holmes in her study of 540 top executives emphasized that in addition to making profit, business should help solve special problems whether or not business creates these problems.

(ii) Business Ethics - The second concept, BUSINESS ETHICS with its social values and social concerns came to focus in 1970s in USA, which forced companies to abstain their policies that violate consumer protection and environmental problems. Business ethics safeguards business practices relating to different stake-holders or constituencies (i.e. internal and external constituencies). Business ethics are rules of business conduct, by which propriety of business activities may be judged. Business ethics equally relates to the behaviour and responsibilities of managers and ethical obligations of business professionals. Here focus is on people, how individuals should conduct themselves in fulfilling the ethical requirements of business. There is a growing realization all over the world that ethics is vitally important for any business and for progress of any society. Ethical leadership can attain this by standing the test of environmental performance and development of corporate social performance (CSP) as recently highlighted by Clarkson. Ethics and profits go together in the long-run and it can protect the society. In fact, experience convincingly shows that good ethics is the foundation of good business.

(iii) Corporate Governance- The third approach is CORPORATE GOVERNANCE which advocates enhancing the accountability of the board of directors to shareholders, more transparent auditing and more responsibilities of independent directors, and a division of roles of chairman and chief executive, etc. The importance of good corporate governance can hardly be over-emphasised, specially after witnessing the shocking failures like that o Enron recently, and many such crises caused earlier by inadequacies and malpractices in corporate governance.

2. Ethical Decision-Making In different Cultures

We need to take national culture into consideration when we discuss an individual's approach to decision-making. Decision-making varies from culture to culture.

Our knowledge of power-distance difference, for example, tells us that in high-power-distance cultures, such as India,

* Research Scholar, M.L.S.U., Udaipur (Raj.) INDIA

only very senior-level managers make decisions. But in low-power-distance cultures, such as Sweden, low-ranking employees expect to make most of their own decisions about day-to-day operations. Our knowledge that cultures vary in terms of time orientation helps us understand why managers in Egypt will make decisions at a much slower and more deliberate pace than their American counterparts. Even the assumption of rationality is culturally biased. A North American manager might make an important decision intuitively, but he knows it is important to appear to proceed in a rational fashion. In countries such as Iran, where rationality is not deified, efforts to appear rational are not necessary.

Factors Influencing Ethical Decision-making Behaviour

What accounts for unethical behaviour in organization? Is it immoral individuals or a work environment that promote unethical activity? The answer is both. Ethical or unethical actions are largely a function of both the individual's characteristics and the environment in which he works.

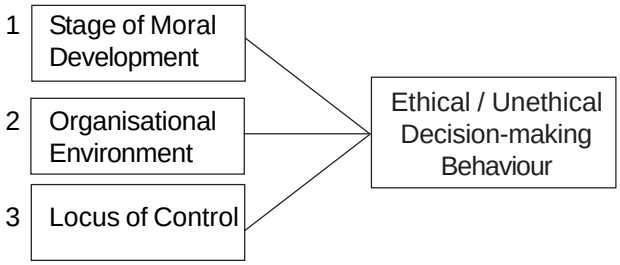

3. Ethics and Corruption - An ethical issue concerns bribes and corruption. Should an international business pay bribes to corrupt government officials to gain market access to a foreign country? To most Westerners, bribery seems to be a corrupt and morally repugnant way of doing business, so the answer might initially be no. Some countries have laws on their books that prohibit their citizens from paying bribes to foreign government officials in return for economic favours. In the United States, for example, the Foreign Corrupt Practices Act of 1977 prohibits U.S. companies from making "corrupt" payments to foreign officials to obtain or retain business, although many other developed nations lack similar laws.

4. Ethics and Human Rights - One major ethical dilemma facing firms from democratic nations is whether they should do business in totalitarian countries, such as China, that routinely violate the human rights of their citizens. There are two sides to this issue. Some argue that investing in totalitarian countries provides comfort to dictators and can help prop up repressive regimes that abuse basic human rights.

In contrast, some argue that Western investment, by raising the level of economic development of a totalitarian country, can help change it from within. They note that economic well being and political freedoms often go hand in hand. Thus, when arguing against attempts to apply trade sanctions to China in the wake of the violent 1989 government crackdown on pro-democracy demonstrators, the U.S. government claimed that U.S. firms and continue to be allowed to invest in mainland China because greater political freedoms would follow the resulting economic growth. The Clinton administration used similar logic as the basis for its 1996 decision decoupling human rights issues from trade policy considerations.

5. Ethics and Safety Regulations - In the mid- 1980s Japan was rocked by a bribery scandal involving the Recruit Company. The firm, in an effort to curry favour, had given politicians and influential executives stocks in a recruit real estate subsidiary at low rates. The shares were eventually listed on the stock exchange at a higher price and these people made huge sums of money. Similarly, in India, Reliance Infocom has allegedly given shares at a very low price to the relatives of an influential politician to get favours in solving licence-related problems.

Concern over bribes in international business resulted in the enactment of the FCPA-Foreign Corrupt Practices Act, 1977, which makes it illegal to influence foreign officials through personal payment or political contributions. Although it was feared that US companies would not be able to compete in countries high on bribery and corruption, in practice US multinationals have, in fact, done better in such countries.

Conclusion - Business organizations have contributed to the problems of the world we can point to pollution, materialism, and alienation of consequences of the modern corporation. Yet modern corporations have within them the powers of change. Interconnected and interdependent, our international corporations have wider interests and wider spans of influence than any government bureaucracy. They are driven by their competitive position to be responsive and adaptive on a global scale. Those companies that seize the ethical initiative will define the future and be around to enjoy it. We must learn to be ethical not only to the level of company and beyond to the level of our national communities, but to extend our ethical boundaries to include the world. Every one knows that more ethical and for signed behaviour is necessary to solve global problems, i.e. global ethics.

References :-

1. Chakraborty, S.K. (1995b), Ethics in Management. Delhi: Oxford University Press.
2. Journal of Social Issues, 50, No. 4, 19-45.
3. Prompenaars, "Guru Guide to the Knowledge Economy", 2001.
4. Rodger Fills, "Organisational Ethics"' Pg. 201, 2005.
5. Siyala A.F., "Personnel Administration and HRM", 1978.
6. Schwartz, S.H. (1994). "Are there Universal aspects in the structure and conduct of human values?"

****

Tourism Innovations : A Challenge To Basic Assumptions

Dr. Renu Jatana * Surbhi Dharmawat **

Abstract - Although much of the discussion of innovation focuses on new products and technologies, all innovation is based on challenging existing assumptions and way of thinking. This paper argues that one option to develop new ways of thinking and innovation in tourism is to argue that there are no such things as sustainable tourism. If we begin with the assumption that tourism cannot be sustainable in its own right but may contribute to the sustainable development of some regions under some circumstances, then a number of new approaches to tourism development emerge. In particular, it is argued that stronger links may emerge between tourism and other economic activities and development options. These potential synergies are described and illustrated with a range of examples. In addition, the paper sets out a series of additional criteria that could be used to evaluate different potential tourism developments and makes suggestions about the development of sustainability performance indicators. Finally, the paper highlights the importance of better knowledge management systems to support innovation in tourism

Keywords: Sustainable Development,Sustainable Tourism,Innovation, Regional Development

Introduction - Innovation can come in many forms but all of these share three common elements - creativity, a problem-solving approach and a new way of thinking. This paper proposes that current approaches to tourism and sustainable regional development have a number of problems and new solutions to these problems could come from using creative thinking methods. It is argued that challenging basic assumptions can lead to very simple but powerful new ideas. Specifically, this paper will seek to demonstrate that by taking the position that there is no such thing as sustainable tourism, a number of new ways of thinking about the role of tourism in sustainable regional development can be described. Typically discussions of tourism development concentrate on the resources, skills and infrastructure that a community offers to tourism developers. This paper will take the inverse of this approach and will explore a number of ways in which regional communities can use tourism developers and tourists to achieve the destination region's broader goals and aspirations .

The problems for tourism and regional development - Tourism is an option chosen by many governments as a key tool for regional development (Forstner, 2004). Despite a relatively long history of use as a regional development tool and substantial investments of resources, there is considerable debate about the value of tourism for communities in rural and peripheral areas. Numerous evaluations have highlighted many negative consequences from tourism development including Modest or no economic returns from tourism of locals (Kiss, 2004) negative impacts on local culture and social structure (Forstner, 2004) restriction of access to land for traditional activities (Vail and Hultkrantz, 2000) disruption of traditional subsistence and other activities (Abaker Ali,2001) and damage to natural and cultural heritage (Briassoulis, 2002). In response to these critical assessments of tourism development in rural and peripheral regions many researchers and governments have argued for the use of alternative forms of tourism such as ecotourism and community based tourism. Such options are claimed to have better outcomes because they are smaller in scale, which is typically associated with more limited environmental and social impacts and greater opportunities for local businesses to get involved (Kirsten and Rogerson, 2002).

Challenging Basic Assumptions - The concept of sustainable tourism development has received considerable academic and government attention and support as evident in the number of policies for sustainable tourism and books, papers and journals. Within this literature, there is considerable debate about what constitutes sustainable tourism and how it can be achieved and several authors have questioned the value of the concept itself. Coccossis noted as early as 1996 that discussions of sustainable tourism are often restricted to an analysis of how to ensure the continuity of tourism by minimizing negative impacts. In other words, it could be suggested that the concept of sustainable tourism is much more about the continuity of tourism than it is about the contribution of tourism to sustainable outcomes (Coccossis, 1996 ; Stabler, 1997). The second important consequence of the sustainable tourism sustainable development contusion is the

* Prof. (Banking and Bussiness Economics) UCCMS, Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (Banking and Bussiness Economics) UCCMS, M. L. S. U., Udaipur (Raj.) INDIA

widespread and uncritical use of tourism planning models that look at communities and their regions only as resources for tourism (Hall, 2000). Richards and Wilson (2006) refer to this as ' serial reproduction ' (p. 1210). This discussion raises the question of what sorts of resources tourism might be able to contribute to the sustainable development of a rural or peripheral region. Holmefjord (2000) suggests that there are three types of synergies between tourism and other activities that can be exploited by rural communities -product synergies, market synergies and marketing synergies .

Consequences of a new way of thinking - According to Devuyst and Hens (2000: 100) 'the road towards sustainable development is inevitably a search for new ways of thinking and acting'. Such a sentiment suggests that innovation in considerations of tourism and sustainability will require changes in ways of thinking. An alternative way to view the role of tourism in sustainable development is to challenge the assumption that it can be sustainable in its own right and more explicitly label it as a potential resource for communities seeking sustainable development options. Re-conceptualizing tourism as just one among many possible development options is likely to result in a more direct comparison of tourism to other development options. Additionally, the treatment of tourism as a development tool just like any other is also likely to encourage the application of concepts and processes from these other activities to tourism, particularly ideas about building community capacity. Literature in agriculture (Bokor, 2001) and health (Slater et at ., 2005), for example, provide models for the development of community capacity that could be adapted for tourism. A consideration of tourism as a resource for communities rather than vice versa might also encourage a discussion of wider and more innovative types of tourism development than are typically considered. Discussions of tourism agricultural, craft and other products (Bessiere, 1998 ; Cawley et al ., 1999 : Hall and Mitchell, 2000). Kangaroo Island, off the South Australian coast, offers an example of this approach. The specific characteristics of this region make traditional agriculture difficult to sustain but do provide good conditions for organic and specialised food products.

Some Ideas For New Ways Of Assessing Tourism Development Proposals - The key innovation that has been suggested in this paper is to reconceptualize tourism as a tool to support the development of activities such as traditional or specialist agriculture, craft, education, health or other socio-economic activities, rather than solely as a development option separate from other activities in the destination region. In addition to new ways to look at types of tourism development, such a change in thinking about tourism can contribute to two important changes in the planning and management of tourism in regional destinations- the use of a different set of assessment criteria for evaluating tourism development proposals, and the development, and more extensive use, of sustainability monitoring systems. Many tourism planning texts provide substantial detail on the methods and contents of audits of the resources available for traditional forms of tourism (Gunn, 2002; Wor1d Tourism Organization, 1998). These approaches focus almost entirely on what the destination region has to offer for tourism developers.

So the following sorts of questions could be posed with regard to a proposed tourism development. Are the tourists likely to be attracted to this tourism development also likely to purchase other products? Are the tourists likely to be attracted to this tourism development likely to promote other products or services to others in their work and home environments? Does this form of tourism provide support for the development of infrastructure for non-tourism economic development activities? Will this form of tourism create sufficient demand for non-tourism products and services to support the development of networks and clusters to provide these non tourism products?

Conclusions - It has already been noted that adherence to the idea of ' sustainable tourism ' tends to be associated with a focus on ensuring the continuity of tourism (Coccossis, 1996; Stabler, 1997) that limits consideration of the possibility that tourism may not be a sustainable option in some places (Wall, 1997). This tendency to assume that there will always be some form of tourism that can be sustainable means that there has been almost no discussion in the government policy literature on provisions for procedures for dismantling tourism or restoration of tourism.

Referencs :-

1. Abakerli, S. (2001) 'A Critique of Development and Conservation Policies in Environmentally Sensitive Regions in Brazil ' , Geoforum , 32 , 551 - 565 .
2. Banerjee, M . J . , Gerhart , V . J . and Glenn , E . (2006) ' Native Plant Regeneration on Abandoned Desert Farmland: Effects of irrigation, social preparation, and amendments on seedling establishment ' , Restoration Ecology ,14 ,3 ,339 - 348 .
3. Bessiere, J . (1998)' Local Development and Heritage: Traditional food and cuisine as tourist attractions in rural areas ' ,Sociologia Ruralis , 38 , 1, 21 - 34 .
4. Bokor, C. (2001) ' Community Readiness for Economic Development: Community readiness checklist', Ontario Ministry of Agriculture, Food and Rural Affairs .
5. Briassoulis , H . (2002) ' Sustainable Tourism and the Question of the Commons' , Annals of Tourism Research ,29 ,4 , 1065- 1085 .
6. Cawley, M. E. I Gaffey, S.M. and Gillmor, D. A. (1999) 'Quality Tourism and Craft SMEs: Evidence relating to formation and development in Western Ireland' , Paper presented at the European Congress of the Regional Science Association, Dublin .
7. Coccossis, H . (1996) 'Tourism and Sustainability : Perspective and implications' , in Priestley, G. K., Edwards, J.A. and Coccossis, H. (eds) ' Sustainable Tourism? European experiences ', CAB International, Wallingford I pp. 21.

8. Franz , M . , Pahlen , G . , Nathanail , P . , Okuniek , N . and Koj , A . (2006) ' Sustainable Development and Brownfield Regeneration: What defines the quality of derelict land recycling ' , Environmental Sciences, 3, 2, 135-151.
9. Hebestreit, C. , Kulczycka, J. , Goralczyk, M . ,Kowalski I Z. and Wirth, H. (2005)' Part Editorial' , Management of Environmental Quality , 16 , 6 , 578 .
10. Inskeep ,E .(1994)' National and Regional Tourism Planning' , Routledge and the World Tourism Organization, London .
11. Johnson ,H . and Wilson, G. (2000)' Biting the Bullet: Civil society ,social earning and the transformation of local governance ' ,World Development , 28 , 11 , 1891 - 1906 .
12. Kirsten , M . and Rogerson , C . (2002) ' Tourism, Business Linkages and Small Enterprise Development in South Africa ' , Development South Africa , 19 , 1 , 29 - 59
13. Kiss, A. (2004)' Is Community-based Ecotourism a Good Use of Biodiversity Conservation Funds', Trends in Ecology and Evolution, 19 ,5 ,232-237 .
14. Reid, D . , Mair, H. and George, W. (2004)' Community Tourism Planning: A self-assessment instrument ' , Annals of Tourism Research , 31 , 3 , 623 - 639 .
15. Richards, G . and Wilson, J. (2006)' Developing Creativity in Tourist Experiences: A solution to the serial reproduction of culture' , Tourism Management, 27, 6, 1209- 1223.
16. Slater , M . D . , Edwards , R . W . , Plested , B .A . , Thurman , P . J . , Kelly , K . J . , Cornelio , M . L . G. and Keefe , T . J . (2005) Using Community Readiness Key Informant Assessments in a Randomized Group Prevention Trail I , Journal of Community Health , 30 , 1 , 39 - 54 .
17. Stabler , M. J. (1997) I An Overview of the Sustainable Tourism Debate and the Scope and Content of the Book', in Stabler, M.J. (ed.), ITourism and Sustainability: Principles to Practice', CAB International, Wallingford , pp. 1-21 .
18. Twining-Ward , L . and Butler , R . (2002) I Implementing STD on a Small Island: Development and use of sustainable tourism development indicators in Samoa ' , Journal of Sustainable Tourism , 10 , 5 , 363 - 387.
19. Vail, D . and Hultkrantz , L . (2000) I Property Rights and Sustainable Nature Tourism: Adaptation andmal-adaptation in Dalarna (Sweden) and Maine (USA)', Ecological Economics, 35, 223-242.

****

मध्यप्रदेश में मत्स्य पालन में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग की सहभागिता - एक अध्ययन

डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश मध्य भारत का एक राज्य जिसकी राजधानी भोपाल है। मध्यप्रदेश 1 नवंबर 2000 तक क्षेत्रफल के आधार पर भारत का सबसे बड़ा राज्य था। इस दिन एवं मध्यप्रदेश के कई नगर उससे हटाकर छत्तीसगढ़ की स्थापना हुई थी। मध्यप्रदेश की सीमाएँ पांच राज्यों की सीमाओं से मिलती हैं। इसके उत्तर में उत्तर प्रदेश, पूर्व में छत्तीसगढ़, दक्षिण में महाराष्ट्र, पश्चिम में गुजरात तथा पश्चिमोत्तर में राजस्थान है। भारत की संस्कृति में मध्यप्रदेश जगमगाते दीपक के समान है, जिसकी रोशनी की सर्वथा अलग प्रभा और प्रभाव है। यह विभिन्न संस्कृतियों की अनेकता में एकता का जैसे आकर्षक गुलदस्ता है। मध्यप्रदेश जिसे प्रकृति ने राष्ट्र की वेदी पर जैसे अपने हाथों से सजरख दिया है। जिसका सतरंगी सौन्दर्य और मनमोहक सुगन्ध चारों ओर फैल रही हैं। यहॉ के जनपदों की आबोहवा में कला, साहित्य और संस्कृति की मधुमयी सुवास तैरती रहती हैं। यहॉ के लोक समूह और जनजाति समूहों में प्रतिदिन नृत्य, संगीत, गीत की रसधारा सहज रुप से फूटती रहती हैं। यहॉ का हर दिन पर्व की तरह आता है और जीवन में आनन्द रस घोलकर स्मृति के रुप में चला जाता है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 7,25,97565 है जिसमें लगभग 20.27 प्रतिशत जनजातीय लोग निवास करते हैं। ये जनजातीय लोग कृषि तथा कृषित्तर कार्यों से अपनी आजीविका चलाते है ।

शोध का उद्देश्य – मध्यप्रदेश में मत्स्य पालन में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग की कितनी सहभागिता है और लाभान्वित हितग्राहियों का अध्ययन शोध का प्रमुख उद्देश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र– प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यप्रदेश राज्य के अनुसूचित जाति एवं जनजातीय परिवारों की मत्स्य पालन में सहभागिता का अध्ययन, द्वितीयक समंको के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

मध्यप्रदेश में मत्स्य पालन के लिए कुल 3.56 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र जो जलाशय, पोखर और तालाब के रुप में उपलब्ध है, जिसमें 2.94 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र जलाशय का तथा 0.62 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र ग्रामीण तालाब एवं पोखर का सम्मिलित है। इसमें से 2.94 लाख हेक्टेयर जल क्षेत्र मछली पालन के अन्तर्गत लाया जा चुका है।

नवीन मछुआ नीति 2008 के तहत् 1000 हेक्टेयर औसत जलक्षेत्र तक के तालाब जलाशय के मत्स्य विकास के अधिकार पंचायत राज संस्थाओं को अंतरित कर विभिन्न योजनाओं हेतु हितग्राही चयन, प्रशिक्षण, आर्थिक सहायता इत्यादि कार्य पंचायत के माध्यम से संचालित कराया जाता है। मत्स्य पालन में अनुसूचित जनजाति सदस्यों की सहभागिता को स्पष्ट करने के लिए शोधार्थी ने मछुआ कल्याण एवं मत्स्य विभाग मध्यप्रदेश, भोपाल से प्राप्त द्वितीयक समंकों की सहायत से विवेचना प्रस्तुत की है।

शोध व्याख्या – यह प्राचीन अवधारणा है कि आप किसी को दो मछलियां दे दो तो उसके एक समय का भोजन उसे मिल जाएगा और यदि हमने उसे मछली पकड़ना सीखा दिया तो वह आजीवन भोजन जुटा लेगा।

राज्य में मत्स्योद्योग के विकास हेतु अनेक कल्याणकारी योजनाऐं क्रियान्वित है। जिसके तहत् अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के मछुओं के साथ-साथ अन्य वर्गों के मछुओं को तकनीकी मार्गदर्शन एवं आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती हैं।

राज्य द्वारा संचालित प्रमुख मत्स्य पालन योजनाएँ –

- मत्स्य पालन प्रचार
- मत्स्य बीज उत्पादन
- सिंचाई जलाशयों में मत्स्योद्योग का विकास
- शिक्षण प्रशिक्षण-मछुओं का अध्ययन भ्रमण
- मछुआ सहकारिता
- मत्स्यालय एवं अनुसंधान
- फिशरमेन क्रेडिट कार्ड योजना
- राष्ट्रीय कृषि विकाया योजना

मध्यप्रदेश में मत्स्य सहकारिता को सफल बनाने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश मत्स्य महासंघ (सहकारी) मर्यादित, भोपाल का गठन किया गया है। मत्स्य महासंघ मत्स्य सहकारिता के क्षेत्र में देश का प्रथम प्रमाणित संस्थान है। इस महासंघ के वृहद् विकसित जलाशयों में मत्स्य उत्पादकता 31 किलोहेक्टेयर है, जो राष्ट्रीय उत्पादकता 12.5 किलोहेक्टेयर से बहुत अधिक है।

तालिका क्र.01

मध्यप्रदेश में मछुओं का दुर्घटना बीमा वर्ष - 2012

क्र	वर्ग	पुरुष वर्ग	महिला वर्ग	कुल
1.	अनुसूचित जनजाति	38537	28023	39133
2.	अन्य	78167	18125	123719
	योग	116704	46148	162852

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश में मछुओं के दुर्घटना बीमा कुल बीमा का लगभग 25 प्रतिशत है जो राज्य की जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति के कुल प्रतिशत से अधिक है।

तालिका क्र.02

मध्यप्रदेश में मछुओं सहकारिता (वर्ष 2011-12)

क्र	वर्ग	समिति संख्या	सदस्य संख्या
1.	अनुसूचित जनजाति	565	17259
2.	अन्य	1496	52678
	योग	2061	69937

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय राजगढ़, जिला - राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.) भारत

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि म.प्र. में मछुओं सहकारी समिति की संख्या कुल संख्या के लगभग 25 प्रतिशत है एवं सदस्य भी कुल संख्या के लगभग 25 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट होता है कि राज्य में अनुसूचित जनजाति वर्ग के परिवारों को उचित प्रोत्साहन देकर लाभान्वित किया जा रहा है।

तालिका क्र.03

मध्यप्रदेश में मछुओं का प्रशिक्षण

क्र	वर्ग	लक्ष्य संख्या	उपलब्धि संख्या	प्रतिशत
1.	अनुसूचित जनजाति	1227	1259	103
2.	अनुसूचित जाति	542	529	98
3.	सामान्य	1796	1751	97
	योग	3565	3539	

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि म.प्र. में मछुआ प्रशिक्षण कार्यक्रम में अनुसूचित जनजाति सदस्यों के प्रशिक्षण शत प्रतिशत से भी अधिक है जो शुभ संकेत है एवं अनुसूचित जाति के सदस्यों का प्रशिक्षण प्रतिशत 98 है जो संतोषजनक है।

तालिका क्र.04

मध्यप्रदेश में मत्स्य पालकों का आर्थिक सहायता (अनुदान रू. लाख में)

क्र	वर्ग	आवंटन	व्यय	प्रतिशत	लाभान्वित हितग्राही
1.	अनुसूचित जनजाति मत्स्य पालक	21.46	19.61	91.37	1259
2.	अनुसूचित जाति मत्स्य पालक	8.10	6.64	81.97	279
	कुल योग	29.56	26.25	68.80	1538

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि म.प्र. में प्रदर्शित व्यय का प्रतिशत इस बात का द्योतक है कि अनुसूचित जनजाति सदस्यों के मत्स्य पालकों को पर्याप्त आर्थिक सहायता अनुदान के रुप में दी जा रही है एवं 1259 लाभान्वित हितग्राही है जो एक उपलब्धि है।

तालिका क्र.05 (देखे)

तालिका से स्पष्ट है कि म.प्र. में मत्स्य सहकारी समितियों को दी गई अनुदान राशि में अनुसूचित जनजाति सदस्यों की सहकारी समितियों को दी गई राशि 25 प्रतिशत से अधिक है।

निष्कर्ष – मध्यप्रदेश में गत लगभग दो दशकों में भारी आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन हुए हैं। पंचायती राज संस्थाओं की सुदृढ़ता व शासन की अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग हितेषी नीतियों के कारण यहाँ तीव्र आर्थिक व सामाजिक विकास हुआ है। यहाँ के अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति परिवार के अधिकांश सदस्य कृषि व कृषित्तर कार्यों में संलग्न है। इनके पास सीमित कृषि भूमि व सीमित साधन है। इसलिए शासन ने पंराज संस्थाओं के माध्यम से हजारों तालाब व जल संरक्षण क्षेत्र बनाकर इन परिवारों की आमदनी बढ़ाने में सराहनीय योगदान दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. मछुआ कल्याण तथा मत्स्य विकास विभाग मध्यप्रदेश शासन, भोपाल
2. मध्यप्रदेश संदर्भ मध्यप्रदेश जनसंपर्क का प्रकाशन, भोपाल, 2012
3. कुमार, प्रमीला : मध्यप्रदेश का भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2008
4. मध्यप्रदेश संदेश, जनसम्पर्क भवन, भोपाल, 2013
5. विक्कीपिडिया
6. योजना 2013
7. कुरूक्षेत्र 2013

तालिका क्र.05

मध्यप्रदेश में मत्स्य सहकारी समितियों को अनुदान के रूप में आर्थिक सहायता

(अनुदान रु. लाख में)

क्र	वर्ग	आवंटन	व्यय	समिति संख्या	सदस्य संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	8.76	7.49	229	5725	63.43
2.	अनुसूचित जन जाति	20.85	17.56	100	2500	27.70
3.	अनुसूचित जाति	7.95	6.15	32	800	8.87
	कुल	32.56	31.20	361	9025	100

****

भारत में बजाज एलियांज जनरल इंश्योरेंस कम्पनी लि. की कार्यप्रणाली का अध्ययन

डॉ. आर.बी. गुप्ता * जया कैथवास * *

प्रस्तावना – पृथ्वी पर मनुष्य को सबसे बड़ा अविष्कारक माना गया है। असुरक्षा के तुफानी समुद्र में मानव सदैव ही निश्चितता का किनारा ढूंढने में प्रत्यनशील रहा है। जिसमें मनुष्य स्वयं का भविष्य तथा वृद्धावस्था के साथ-साथ असमायिक मृत्यु एवं अपने परिवार के भविष्य को सुरक्षित रखने के लिऐ नाना प्रकार के प्रयत्न करता है। इसी प्रयत्न को साकार किया तथा इसी आवश्यकता ने जन्म दिया 'बीमा व्यवसाय' को। प्रस्तुत शोध पत्र में बीमा व्यवसाय में कार्यरत् बजाज एलियांज इ.कं. की कार्य प्रणाली का अध्ययन किया जा रहा है। इस शोध पत्र के माध्यम से बीमा व्यवसाय में अपनी अहम भूमिका निभाने वाली इस निजी कंपनी कि कार्यप्रणाली को समझाया गया है तथा इसके विगत वर्षो के बीमा व्यवसाय को भी तालिका के माध्मम से दर्शाया गया है।

बजाज एलियांज का परिचय – बजाज एलियांज इ. कम्पनी लिमिटेड की स्थापना वर्ष 2000 में की गई। वर्ष 2001 में इस कंपनी ने अपना बीमा व्यवसाय प्रारंभ किया। इसका मुख्यालय पूणे में स्थित है। चूंकि सामान्य बीमा के बीमा व्यवसाय को बढ़ाने के उद्देश्य से सामान्य बीमा व्यवसाय में निजी कम्पनियों को प्रवेश दिया था, इसलिऐ निजी बीमा कम्पनियों ने अपने व्यवसाय को विस्तृत करने के लिऐ विभिन्न नवीन तकनीकियों का प्रयोग किया है। जिससे ग्राहकों को आकर्षित किया जा सके। कम्पनी ने अपने बीमा व्यवसाय को बढ़ाने के लिऐ देश के कोने-कोने में अपने कार्यालय स्थापित किऐ है।

इस कम्पनी ने प्रत्येक व्यक्ति की छोटी से छोटी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पॉलिसियों का निर्माण किया है। ताकि सभी व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुरूप पॉलिसियां ले सके। अपने स्थापना वर्ष से लेकर अब तक बजाज एलियांज कम्पनी ने प्रतिवर्ष प्रीमियम में वृद्धि प्राप्त की है।

परंतु वर्ष 2009-10 में इसकी आय में पिछले वर्ष की तुलना में कमी आयी है। तथा समस्त वर्षो में इसने प्रीमियम में वृद्धि प्राप्त की है। कम्पनी में जहां आप का मुख्य स्त्रोत प्रीमियम से प्राप्त है वही व्यय के रूप में दावे, कमीशन व प्रबंध व्यय को शामिल किया जाता है। बजाज एलियांज अपने बीमा का व्यवसाय अथवा पॉलिसियों का विक्रय अभीकर्ता, डीलर व बैकों के माध्यम से करता है। इस शोध पत्र में शोध के उद्देश्य, क्षेत्र संमको का संकलन व कम्पनी के व्यवसाय का विश्लेषण आदि को शामिल किया गया है।

यह निजी बीमा कम्पनी संयुक्त रूप से अर्थात् बजाज फाइनेंसर बीमा तथा एलियांज के रूप में संयुक्त रूप से कार्य करती है। बजाज एलियांज को इरडा द्वारा 2 मई 2001 को अधिकृत किया गया है। यह कम्पनी भारत में हेल्थ इन्श्योरेंस के साथ सामान्य बीमा व्यवसाय कर रही है। इसने अपने शुरूआती बीमा व्यवसाय में 110 करोड़ की चुकता पूंजी लगाई थी। जिसमें बजाज फाइनेंसर के 74 प्रतिशत तथा 26 प्रतिशत एलियांज से लिया गया था। 31 मार्च 2014 की स्थिति में बजाज एलियांज में कर के पूर्व लाभ के रूप में 587 करोड़ रूपये का लाभ प्राप्त किया है। तथा इसकी अच्छी लाभ दायका के लिऐ, इसे वर्ष 2013 व 14 में बेस्ट फरफारमेंस का आवार्ड भी प्रदान किया गया है इस शोध-पत्र में बजाज एलियांज की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया गया है। तथा इसकी पांच वर्षो की आय व व्यय की मदों का तालिका द्वारा विश्लेषण किया गया है।

शोध का क्षेत्र – शोधार्थी का शोध क्षेत्र केवल भारत में व्यवसाय तक ही सीमित है। अर्थात् यहां हम केवल भारत में बजाज एलियांज बीमा कम्पनी के बीमा व्यवसाय का अध्ययन करेगे।

इसके पूणे कार्यालय की स्थापना वर्ष 2001 में भी गई। इसके सभी कार्यालयों में बीमा व्यवसाय का कार्य सुचारू रूप से किया जा रहा है व ग्राहकों द्वारा प्राप्त जानकारी के माध्यम से यह प्राप्त हुआ है कि बजाज एलियांज बीमा कम्पनी अपनी जगह लोगों के बीच बनाने लगी है इसका परिणाम है इसकी प्रतिवर्ष प्रीमियम वृद्धि। इस शोध पत्र में दर्शाये गये आंकड़े बजाज एलियांज के प्रधान कार्यालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन पर आधारित है। जिनको आगे तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है सम्पूर्ण भारत में इसके 49 कार्यालय है। म.प्र. में बजाय एलियांज के चार शाखा कार्यालय स्थित है। जिसके माध्यम से सम्पूर्ण म.प्र. में बीमा व्यवसाय किया जाता है। अध्ययन की सुविधा के लिऐ भारत में बीमा व्यवसाय ही लिया जा रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में बजाज एलियांज के बीमा व्यवसाय व इसकी कार्यप्रणाली का अध्ययन किया गया है। अध्ययन की सुविधा से इसके व्यवसाय को सम्पूर्ण भारत तक ही लिया गया है। प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया गया है –

1. कम्पनी के बीमा व्यवसाय का अध्ययन।
2. कम्पनी की विभिन्न पॉलिसियों का अध्ययन।
3. कम्पनी की प्रबंध व्यवस्था का अध्ययन।

समंक संकलन – इस शोध पत्र का अध्ययन कम्पनी के सम्पूर्ण भारत में किये गये बीमा व्यवसाय पर आधारित है अत: समंको के रूप में द्वितीयक समंको को लिया गया है। जिसमें कम्पनी द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन शामिल है। इस शोध-पत्र में वर्ष 2003-04 से वर्ष 2013-14 तक के आंकड़े शामिल किये गये है। प्रस्तुत अध्ययन में एकत्र किये गये आंकड़ो के आधार पर औसत, प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
* शोधार्थी , श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

विवेचना – बजाज एलियांज की प्रबंध प्रणाली अन्य बीमा कम्पनियों की भांति ही है इसके कार्यालयों में प्रधान कार्यालय, क्षेत्र कार्यालय व शाखा कार्यालय आते है वर्तमान में इसके प्रबंधक के रूप में राहुल बजाज कार्यरत् है।

- सामान्य बीमा में कार्यरत् बजाज एलियांज बीमा कम्पनी अग्नि बीमा, समुद्री बीमा, मोटर बीमा, व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा तथा अन्य विविध बीमा का कार्य करती है। इसके द्वारा दी जाने वाली पॉलिसियों में निम्न शामिल है – अग्नि बीमा पॉलिसी, मरीन बीमा व मरीन हल बीमा पॉलिसी, मोटर बीमा पॉलिसी, व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा पॉलिसी, स्वास्थ्य बीमा पॉलिसी, मेडीक्लेम बीमा पॉलिसी, यात्रा पॉलिसी आदि प्रदान की जाती है।
- कम्पनी के बीमा व्यवसाय को तालिका क्रमांक 1 में दर्शाया गया है। तालिका क्रमांक 1 को देखने से स्पष्ट होता है कि बजाज एलियांज में वर्ष 2003-04 की तुलना में आय व व्यय में वर्ष 2013-14 में प्रवृत्ति प्रतिशत की वृद्धि 850 व 1171 प्रतिशत रही है। पिछले वर्ष की तुलना में कमी/वृद्धि के अनुसार स्पष्ट होता है कि बजाज एलियांज की आय में एक वर्ष तथा व्यय में एक वर्ष की कमी नजर आ रही है। आय व व्यय में क्रमश: सबसे अधिक वृद्धि वर्ष 2004-05 में 78 प्रतिशत तथा व्यय में वर्ष 2005-06 में 66 प्रतिशत रही हैं अत: उपरोक्त तालिका के आधार पर स्पष्ट होता है कि कम्पनी को प्रत्येक वर्ष लाभ प्राप्त हो रहा है। इसकी लाभ की गणना करने के लिऐ आय में से व्यय की राशि घटायी जाती है। आय अधिक होने पर लाभ तथा व्यय अधिक होने पर हानि की स्थिति उत्पन्न होती है। कम्पनी की आय का मुख्य स्त्रोत प्रीमियम से प्राप्त होने वाली आय तथा व्यय के रूप में मुख्य रूप से दावें, कमीशन व्यय, तथा प्रबंध व्यय शामिल किये जाते है। तालिका क्रमांक-1 में कुल व्यय में प्रबंध व्यय, कमीशन व्यय तथा दावे का योग लिया गया है।

निष्कर्ष – अंत में निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि बजाज एलियांज बीमा कम्पनी अपने बीमा व्यवसाय को चलाने में सुचारू रूप से कार्यरत् है। इसकी आय से प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है तथा इसकी लाभ दायकता में प्रत्येक वर्ष वृद्धि नजर आई है। वर्तमान वर्ष 2012-13 में 409 करोड़ रूपये की लाभ प्राप्त किया था तथा वर्ष 2013-14 में 597 करोड़ रूपये की लाभ प्राप्त किया है। एक निजी कम्पनी होने के कारण इसकी प्रबंध व्यवस्था बेहतर ढंग से चल रही है तथा ग्राहकों को संतुष्ट करने की प्रतिस्पर्धा में यह अग्रसर है। अत: उपरोक्त शोध-पत्र से यह निष्कर्ष निकला है कि एक निजी कम्पनी के रूप में कार्यरत् बजाज एलियांज बीमा कम्पनी अपने साधारण बीमा व्यवसाय को प्रगति का स्तर प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो रही है। वर्ष 2012-13 में कम्पनी को 'बेस्ट फाइनेंसर' कम्पनी का आवार्ड प्रदान किया गया है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य सामान्य बीमा व्यवसाय में कार्यरत् निजी बीमा कम्पनी की कार्यप्रणाली से लोगों को अवगत कराना रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विक्कीपीडिया डॉट कॉम।
2. बजाज एलियांज जनरल इंश्योरेंस वेबसाइट।
3. व्यक्तिगत सर्वे।

आय व व्यय का तुलनात्मक प्रवृत्ति विश्लेषण – तालिका नं. 1

(राशि करोड़ में)

वर्ष	राशि एवं प्रवृत्ति			पिछले वर्ष की तुलना में कमी/वृद्धि				
	आय	प्रवृत्ति (%)	व्यय	प्रवृत्ति (%)	राशि	प्रतिशत (%)	राशि	प्रतिशत (%)
2003-04	480	100	272	100	–	–	–	–
04-05	856	178	414	152	376	78	+142	52
05-06	1285	267	688	252	429	50	+274	66
06-07	1803	374	980	359	518	40	+292	42
07-08	2578	535	1484	545	775	43	+504	52
08-09	2866	595	1983	722	288	11	+499	32
09-10	2725	566	1967	716	-141	-95	-16	-99
10-11	3129	649	2388	869	404	15	+421	21
11-12	3676	762	2655	966	547	17	+267	11
12-13	4109	852	2986	1086	433	12	+331	12
13-14	4584	950	3496	1271	475	11	+510	17

स्त्रोत : बजाज एलियांज का वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2013-14 के आधार पर

****

गरीबी निवारण एवं भारत का विकास

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – भारत के जनमानस एवं भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में एक युक्ति काफी प्रचलित है।

धनी देश किन्तु निवासी निर्धन यह युक्ति हमें विचार करने को प्रेरित करती है। ऐसा क्यों है।

वर्तमान में विकास को मात्र देश की समृद्धि से जोड़ कर देखा जा रहा है अर्थात मनुष्य का स्थान इसमें गौण हो गया है जो सामाजिक कल्याण तथा वास्तविक विकास की दृष्टि से एक दम अनपेक्षित है जबकि किसी के भी विकास का मूल आधार ही मनुष्य होना चाहिये। मैंने अपने अध्ययन मे इसी बात को रेखांकित करने का प्रयास किया है जिसे निम्नलिखित चार भागो मे विभाजित किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य – मेरे अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह रहा है कि विकास सार्थक कैसे हो? इसलिये हमने विकास को गरीबी निवारण के साथ जोड़ा है और अपने अध्ययन द्वारा यह जानने का प्रयास किया है कि क्या गरीबी निवारण को दूर किये बिना विकास वास्तविक विकास होगा?

विश्व और भारत के संदर्भ में विकास की वास्तविकता – आज से 17 वर्ष पूर्व प्रसिद्ध कृषि अथशास्त्री श्री देवेन्द्र शर्मा ने अपनी किताब **इन द फेमिन ट्रेप** मे लिखा है कि उड़ीसा के कुख्यात काला हांडी क्षेत्र में भुख के कारण कई मौते दर्ज की गई थी, वहा जाने पर देखा की गांव के ठीक बीचो – बीच दो सेटेलाईट टावर स्थापित है। वहा हर घर में फोन मौजुद था पर खाने के लिऐ अनाज नहीं था लेकिन उन्हें फोन माहिया करा दिया गया यह जिसके की दीमाग की उपज थी उस पर तरस आता है यह ठीक वैसा ही था, जैसे फटे चिथड़े पहने व्यक्ति के गले में साने का हार। अब हमें यह देखना है कि विकास की व्युह रचना में किन तत्व को समावेश किया जाय। नक्सलवाद, अंतकवाद, मजहबी, उन्माद, युद्ध, अशांति बढते अपराध एवं सामाजिक संघर्ष आदि ऐसी बाते है जो विकास के रिसते नासुर को सबके सामने प्रकट कर रहा है। यदि हमने इसे अनदेखा किया तो संभव है कि विकास के हमारे प्रयास या तो निष्फल हो जाये या हमारा विकास विध्वंस की बलि चढ जाये। हमारी इस बात को सयुक्त राष्ट्र संघ मानव विकास रिपोर्ट भी बल प्रदान करती है जिसमे बताया गया है कि विश्व 212 देशों में भारत का स्थान H.D.I (मानव विकास सूचकांक) 0.602 अंको के साथ **127** है। दक्षिण एशिया में श्रीलंका का H.D.I 0.751 अंको के साथ सबसे आगे 93 नंबर पर है और बांग्लादेश 0.520 अंको के साथ की सबसे बूरी स्थिति वाला देश बनकर 139 नंबर है

इसी प्रकार 103 देशो के मानव गरीबी सूचकांक H.P.I. में भारत 31.3 H.P.I. के साथ **58** नंबर पर है। उरूग्वे 3.6 H.P.I. अंको के साथ दुनिया सबसे अच्छी स्थिति वाला देश है जबकि 64.4 H.P.I. अंको के साथ नाईजीरिया दुनिया में सबसे खराब स्थिति में है। यह बात विकासशील राष्ट्रो की है अगर विकसित राष्ट्रो से तुलना कि जाये तो यह अंतर और भी ज्यादा चौकाने वाला होगा।

तालिका अ मानव गरीबी सूचकांक (H.P.I.)

देश	रेंकिग (103 विकासशील देशो मे)	एच पी आई वेल्यु
उरूग्वे (विकासशील देशो में सबसे अच्छी स्थिती)	01	3.6
ईरान (द.ऐशिया मे सबसे अच्छी स्थिती)	36	16.4
भारत	58	31.3
बांग्लादेश(द.एशिया मे सबसे बुरी स्थिती)	86	44.1
नाईजीरिया (विकासशील देशो में सबसे बुरी स्थिती)	103	64.4

उपरोक्त तालिका को देखने पर ज्ञात होता है कि प्रथम स्थान और अंतिम स्थान की एच पी आई वेल्यु में लगभग 18 गुने का अंतर जो विश्व विकास में असमानता रूपी सच्चाई को उजागर करता है आज विश्व की आबादी लगभग 125 करोड़ के आकड़े को पार कर रही है इसमें से लगभग 81 करोड़ लोगों का फटेहाल स्थिती में होना एक बडी चिंता का कारण है। यह स्थिती उन विकास योजनाओं पर भी प्रश्न चिन्ह लगाती है। जिन पर पिछले 67 वर्षो में अरबो रूपये खर्च किये जा चुके है। यह स्थिती उन नेताओ को भी सवालिया घेरे में लेती हे जो विकास के वादो पर चुनाव जितकर सत्ता पाते है। जर्मनी की दाइचे बैंक द्वारा कराये गए शोध के अनुसार अगले 10 वर्षो में भारत की आर्थिक विकास दर चीन से अधिक हो जाएगी। अभी जापान और चीन को पछाड़ देंगी। भारत की आर्थिक विकास की दर वाकई हैरान कर देने वाली है। कोई ठीक से समझ नहीं पा रहा है कि सवा अरब से ज्यादा आबादी की भीड़ भाड़ वाला देश क्यों दुनिया की सबसे तेजी से विकसीत होने वाली अर्थव्यवस्था बनकर उभर रहा है। पिछले कुछ वर्षो से यहां की आर्थिक विकास दर 8 प्रतिशत बनी हुई है। देश की ऐसी ही विकास दर के चलते पिछले 25 वर्षो में मध्य वर्ग की संख्या बढकर 35 करोड़ पहुंच गई है। वही कुल आबादी के लगभग 1 प्रतिशत लोग प्रतिवर्ष गरीबी रेखा से ऊपर आ रहे है। भारत की सफलता में सबसे हैरान कर देने वाली बात यह है कि आर्थिक विकास के लिये आवश्यक मानदंडो को अपनाये बगैर यह सब करिश्मा हो रहा है।

निर्धनता के कारण एवं इसे दुर करने के उपाय – पुर्व प्रधानमंत्री स्व. इंदिरा गांधी के शासन काल मे पहली बार निर्धनता निवारण का मुददा सामने आया था। उसके पहले केवल मंहगाई एवं बेरोजगारी की बाते ही कही

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र) भारत

जाती थी। शायद तब यह मान्यता थी की भारत में गरीबो की एक बडी संख्या स्वाभावीक बात है। वैसे किसी भी देश में पुंजी के अभाव के कारण वहां उपलब्ध जनसंख्या को उत्पादक कार्यो मे लगाना सम्भव नहीं होता है। इससे बेरोजगारी की समस्या पैदा होती है। बेरोजगारी होने के कारण श्रमिको की आय कम हो जाती है और उन्हें गरीबी की जिंदगी जीने के लिये विवश होना पडता है। बढ़ती हुई जनसंख्या ने इसे और अधिक जटील बना दिया है। गरीबी बढने के प्रमुख कारणो मे जनसख्या की वृद्धि, बेराजगारी मे वृद्धि, कार्यशील जोतो का छोटा होना है। खादय पदार्थो की किमतो मे वृद्धि सामाजिक पिछडापन, श्रम की गतिशीलता मे बाधाए कृषिगत उत्पादन मे धीमी वृद्धि भुमि सुधारो के क्रियांन्वयन मे कमी हरित क्रांति व ग्रामीण निर्धनता लोगों का भाग्यवादी दृष्टिकोण आधुनिक उपकरणो एवं कम्प्युटर राईजेशन का बढ़ता हुआ प्रभाव इत्यादि प्रमुख कारण है और गरीबी निवारण हेतु निम्न उपाय अपनाये जा सकते है।

परीवार कल्याण कार्यक्रम में तेजी, ग्रामीण और लघु उद्योगों का विकास ग्रामीण, परिसंपत्ति, निर्माण का कार्य, गहन कृषि विकास व भुमि सुधार, सामाजिक सेवाओ का विस्तार, राजनैतिक इच्छा शक्ति का विकास, महाविद्यालयो में रोजगार मुलक पाठय क्रमो को बढावा देना इत्यादि।

विकास के मुल तत्व एवं निष्कर्ष – नेहरू युग में अर्थव्यवस्था के प्रबंधन का उद्देश्य गरीबी मिटाना नहीं बल्कि आर्थिक प्रगति करना था। उस समय के नेता और विद्वान मानते थे। कि गरीबी दुर करना कोई मुद्दा नहीं है आर्थिक विकास तेजी से होगा तो गरीबी अपने आप मिट जाएगी। जैसे प्रकाश फैलने पर अंधेरा अपने आप मिट जाता है। दुर्भाग्यवश हमारे भारत में प्रकाश तो आया परंतु अंधेरा नहीं मिटा क्योकि यहां प्रगति तो हो रही है। परंतु जन साधारण की समस्या कम नहीं हो रही है। यानी प्रगति को ठीक से परीभाषीत नहीं किया जा रहा है इस लिये अपेक्षित परीणाम नहीं निकल पा रहे है। अत: प्रगति को ठीक ढंग से परीभाषित कर हमे नये उपायो से प्रगति करने के बारे मे सोचना चाहिए । आज हमारे पास बेहतर स्पर्धा वाला निजी श्रेत्र है। 28 हजार का आकडा छुता शेयर बाजार है, अनुशासीत वाणिज्यिक क्षेत्र है। देश मे 100 से ज्यादा कंपनियां ऐसी है जो मिलीयन डालर क्लब में शामील है। 500 फार्च्युन कम्पनियों में से 125 कंपनियों के पास तो भारत मे रिसर्च एंड डेवलप मेंट की अधोसंरचना भी है, भारत आज एक ऐतिहासिक मुकाम पर खड़ा है इसकी प्रगति न सिर्फ बरकरार रहेगी वरन बढेगी भी क्योंकि देश की 65 प्रतिशत आबादी युवाओं की है। लेकिन इसके लिये जरूरी है विकास की प्रक्रिया जारी रहे भारत में नजर आ रहा उछाल प्रत्यक्ष तौर पर इसके सवा अरब लोगों के लिये अच्छा संकेत है भारत का यह उछाल सिखाता है। कि लोकतंत्र में तीव्र आर्थिक संभव है। बशते शर्ते आपकी नीतियाँ सही हो आज भारत ने टेक्नोलाजी सहित कुछ अन्य क्षेत्रो मे उची छलांग लगाई है। अंतरिक्ष विज्ञान, कच्चे तेल, की खोज संचार, मनोरंजन, जैसे क्षेत्रों में भारत मे अपनी अलग अलग पहचान बनाई है लेकिन विकास के लाभ समान रूप से वितरीत नहीं किया जा सके है। कुछ चुनिंदा क्षेत्रो तक पहुंचे जरूरतमंदो की हालत सुधारने मे नाकाम रहे। जिन्हे उनकी सर्वाधिक आवश्यकता है।

इस हेतु निम्न प्रयास किये जाने चाहिए –

1. अंत्योदय विकास के संबध में सार्थक एवं प्रभावी प्रयास किया जाये
2. गरीबी उन्मुलन इस प्रकार हो कि धन का विकेन्द्रीकरण हो।
3. लघु उद्योग व ग्रामीण उद्योग के विकास पर सर्वाधिक बल दिया जाए
4. आर्थिक विकास की नवीन अवधारणाओं के साथ गांधीवादी अवधारणाओं का भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है।
5. प्रशासन को लाल फीताशाही और भ्रष्टाचार से मुक्त रखा जाए जिससे वंचितो को उनका पुरा हक मिल सके।

इस परिप्रेक्ष्य मे संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रमों के आकड़ो पर गौर करे तो दुनिया के सर्वाधिक 500 धनाद्य लोगो की आय गरीबी रेखा से निचे गुजर बसर कर रही है। 41.60 करोड़ की आबादी की आय के बराबर है। ताजा आकडो की बात करे तो विश्व की कुल आबादी 700 करोड में 3.50 करोड़ के पास इतनी धन सम्पत्ति है जितनी शेष 6696.5 करोड़ लोगो के पास है, इन साढे तीन करोड़ लोगो में 2,50,000 भरतीय है। यदि विश्व का सारा पैसा 15,999 लाख करोड़ रूपये (263 ट्रिलियन डॉलर) इन 700 करोड लोगो मे बराबर बाँट दिया जाए तो विश्व में प्रत्येक व्यक्ति को 22.54 लाख रू मिलेंगे किंतु ऐसा नहीं है।

भारत के संदर्भ में बात करे तो देश में कुल धन 216 लाख करोड़ रू है। मात्र .3 प्रतिशत लोगो के पास 60 लाख रू से ज्यादा दौलत है। 100 सबसे अमीर भारतीयो के पास 20,760 अरब रू है।

असमानता की बात करे तो भारत के 10 प्रतिशत लोगो के पास देश की 74 प्रतिशत संपत्ति है, जबकि शेष 90 प्रतिशत के पास 26 प्रतिशत दौलत है। यदि देश का समस्त धन देश के समस्त व्यतियो में बराबर बाट दिये जाये तो भारत के प्रत्येक व्यक्तियो के पास 1,78,512 रू रहेंगे किन्तु ऐसा हो नहीं सकता यह तो कल्पना मात्र है ।

इस प्रकार एक को भुखा और दुसरे को 56 पकवान हमारे विकास के खोखलेपन को जाहिर करता है। इससे मानव व समाज में वैमनस्य फैलाता है। जो हमारे थोथे विकास को कभी भी धाराशाही कर सकता है। जबकि समानता के साथ विकास की संकल्पना एक स्थायी और सार्थक समृद्धि को प्रदर्षित करती है। सारांश में यह कहा जा सकता है कि गरीबी निवारण की सबसे अच्छी दवा उस देश का आर्थिक विकास ही हो सकता है, जो कि समानता को ध्यान मे रखकर किया जाना चाहिए। यानि आर्थिक प्रगति होने से ही देश के लोगो की गरीबी दूर होगी

अतं में कहा जा सकता है कि आज किसी भी देश मे विकास की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी समानता के साथ विकास रूपी सृजनात्मक सोच रखने की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अर्थशास्त्र–अनुपम गोयल
2. पर्यावरण चेतना–साहित्य ग्रंथ
3. मवन विकास रिर्पोट1998, 2011
4. विश्व विकास रिर्पोट 2003 तथा 2013
5. भारत 2004,2008,2012
6. अन्य पत्र पत्रिकाए
7. विभिन्न इन्टरनेट बेवसाइट

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण (2007 से 2013 के विशेष संदर्भ मे)

डॉ. सी.एस. पान्डे * डॉ. पुनीत कुमार मालवी **

शोध सारांश – किसी भी आर्थिक क्षेत्र की क्रियाओं को भली प्रकार संचालित करने के लिये वित्त की आवश्यकता होती है। केन्द्रीय सहकारी बैंक भारत सरकार के अधीन कार्य करता है। इस पर केन्द्र का नियंत्रण होता है, यह भारत के सभी राज्यों में स्थित है जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की स्थिति पहले अच्छी नहीं थी, लेकिन धीरे–धीरे इसमें बदलाव आया है। अखिल भारतीय ग्रामीण साख–सर्वेक्षण समिति के मतानुसार सहकारी साख के ढांचे में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे राज्य सहकारी बैंकों और अन्य स्तरीय प्राथमिक कृषि समितियों के बीच सम्पर्क कड़ी के रूप में कार्य करते है, भारत में बैकिंग के विस्तार में सहकारी बैंकिंग संस्थाओं द्वारा विगत वर्षो में महत्वपूर्ण सेवा प्रदान की गई हैं। गांव–गांव तक वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति करने के लिये प्राथमिक समितियों की स्थापना जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों के द्वारा की गई है। प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यप्रदेश के जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है। इस हेतु द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है। सभी आवश्यक समंक संबंधित बैंक एवं अन्य शासकीय एवं अशासकीय संस्थाओं से लिये गये हैं।

प्रस्तावना – सहकारी बैंकों की स्थापना भारत सरकार द्वारा सर्वप्रथम स्थापित की जाने वाली वित्तीय अभिकरण के रूप में हुई हैं। भारत में इनकी स्थापना सरकार द्वारा प्रायोजित समर्थित तथा अनुदानित वित्तीय संस्था के रूप में हुई है।

भारतीय वित्तीय प्रणाली के संघटकों में सहकारी बैंकों का विशिष्ट स्थान है। भारत की वित्तीय प्रणाली में सहकारी बैंकों का महत्व इन्हें सुपुर्द की गई भूमिका, इनसे पूरी की जाने वाली संभावनाएं, निरंतर बढ़ती हुई संख्या से पता चलता है।

भारत में सहकारी बैंकिंग व्यवस्था का उद्‌गम सन् 1904 के लगभग हुआ है। सहकारिता के सिद्धांतों के आदर्श पर नवीन प्रकार के संस्थान स्थापित करने के प्रयास प्रारंभ हुए यह प्रयास इस भावना से प्रेरित थे कि भारत जैसे विशाल देश की विकट समस्या का समाधान केवल सहकारी संस्थाओं के विकास में ही निहित हैं। सहकारी बैंकों की स्थापना के पूर्व भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं संबद्ध कार्यो हेतु साख सुविधाओं का अत्यंत अभाव अनुभव किया गया। जब सन् 1951 में भारत में आर्थिक नियोजन युग का प्रारंभ हुआ तो सहकारी बैंक इसकी सफलता हेतु प्रमुख उपकरण के रूप में उभरे। वर्तमान समय में कृषि एवं संबद्ध कार्यो हेतु वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं में सहकारी बैंकों का विशिष्ट स्थान है।

विदिशा जिला मध्य प्रदेश के पश्चिम में तथा मालवा के पठार के उत्तर पूर्व पर अवस्थित है। विदिशा जिले का गठन सर्वप्रथम 1904 में हुआ था, जिला विदिशा 23 200 से 24 200 डिग्री उत्तरी अक्षांश तथा 77 160 से 78 180 डिग्री पूर्वी देशांश के बीच फैला हुआ है जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 7371 वर्ग किलोमीटर है जिले की सीमाएं रायसेन, गुना, अशोक नगर, सागर तथा भोपाल से मिलती है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक से आशय जिला स्तर पर स्थापित होने वाली उस सहकारी संस्था से होता है जिसका कार्य जिले में कृषि एवं अन्य उद्देश्यों के लिए अल्पकालीन एवं मध्यकालीन साख सुविधाएं उपलब्ध कराना होता है। जिले में सहकारी बैंक की स्थापना 21 जनरी 1916 को माधव डिस्ट्रिक्ट को–ऑपरेटिव बैंक के नाम से इस बैंक का कार्य आरंभ हुआ। चूंकि इस समय ग्वालियर राज्य में कोई सहकारी विधान नहीं था। अत: प्रारंभ में बैंक का कार्य बगैर पंजीयन के ही चलाया गया तथा सन् 1918 में सहकारी विधान प्रभावशील होने पर इस बैंक का पंजीयन किया गया। सन् 1918 में ग्वालियर राज्य का सर्वप्रथम सहकारी बैंक होने का श्रेय इस बैंक को मिला। विदिशा जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की स्थापना 19 जुलाई 1918 को हुई। इसके बाद आंदोलन प्रगति की ओर अग्रसर होता रहा परिणाम स्वरूप उद्योग सहकारी समितियों, सहकारी कृषि समितियों, प्राथमिक उपभोक्ता भण्डार, सहकारी दुग्ध उत्पादन समितियों का गठन हुआ, सहकारी आंदोलन विपणन, साख, उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण तथा उद्योगिक क्षेत्रों में प्रवेश करते हुए स्वर्णीय उन्नति की ओर अग्रसर है। बैंक का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण विदिशा जिला है जिसमें 10 तहसीले 7 विकासखण्ड हैं। जिले के 1621 ग्रामों में कुल 247549 कृषक परिवार हैं तथा 166538 व्यक्ति सहकारी संस्थाओं के सदस्य है एवं ऋणी सदस्यों की संख्या 130064 है।

बैंक की रूपरेखा – सहकारिता साख ढांचे में सबसे ऊपर शीर्ष बैंक होता है, जो अधिक विस्तृत क्षेत्र है, शीर्ष बैंक के अंतर्गत केन्द्रीय सहकारी बैंक होते हैं, जो जिला स्तर पर कार्य करते हैं। ये जिले के क्षेत्राधिकार के अन्दर सहकारी साख आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करते हैं, केन्द्रीय सहाकरी बैंक मध्य स्तरीय संस्था है, जिनका कार्य प्राथमिक समितियों की वित्तीय आवश्यकताए पूरी करना है, यह प्राथमिक समितियों और शीर्ष सहकारी बैंकों के मध्य एक कड़ी का कार्य करते हैं। यह अपनी शाखायें जिले के विभिन्न भागों में खोलते हैं ताकि प्राथमिक साख समितियों को मदद मिल सके व उन पर नियंत्रण किया जा सके। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की कुल 21 शाखाएं हैं। जिनमें से 18 ऋण शाखाएं, कृषि ऋण, अकृषि ऋण एवं व्यक्तिगत ऋण आदि समस्त व्यवसाय करती हैं एवं शेष 3 शाखाएं अमानत शाखाएं है जो कि अमानतों के साथ–साथ ऋण व्यवसाय कर प्रात: सायंकाल में अमानतदारों को सेवायें प्रदान करती हैं।

इसके अंतर्गत 154 कृषि सहकारी समितियां तथा 133 अकृषि

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्वामी विवेकानन्द महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नसरूल्लागंज (म.प्र.) भारत

सहकारी समितियां कार्यरत् हैं, यह बैंक सम्बद्ध समितियों को वित्तीय साधन उपलब्ध कराने हेतु बैंकों द्वारा अंशपूंजी एकत्र करके, जनता से जमा प्राप्त करके व राज्य सहकारी बैंकों से ऋण लेकर कोष बनाती हैं तथा उसे बढ़ाती है, इन बैंकों से यह आशा की जाती है, कि यह प्राथमिक सहकारी समितियों से निकटता व निरंतर सम्पर्क बनायें रखें उनकी आवश्यकता एवं कठिनाईयों के प्रति सहानुभूति व सहयोग प्रदान करें और नीति विषयक मामलों पर मार्गदर्शन करें। केन्द्रीय सहकारी बैंक के पश्चात् प्राथमिक समितियां होती हैं प्राथमिक साख समितियां सहकारी साख आंदोलन का महत्वपूर्ण अंग है, इनकी सदस्यता खुली व ऐच्छिक होती है, यह सबसे निचले स्तर पर कार्य करती हैं प्राथमिक समितियां सम्पूर्ण आंदोलन की नीवं है, जिन पर सहकारी आंदोलन का विशाल भवन खड़ा है।

शोध विषय का औचित्य – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति जानने के लिये शोध विषय का अध्ययन किया है।

शोध साहित्य का पुनर्वालोकन – शोधकर्ता अन्सारी यासीन ने वर्ष 1992 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के अंतर्गत वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि क्षेत्र में योगदान' विषय को लेकर संपादित किया है। शोधकर्ता ने अपने अध्ययन से स्पष्ट किया है कि सहकारी बैंक की स्थापना मुख्यत: कृषि क्षेत्र से जुडे लोगों की सहायता करने के लिये की जाती है। शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि क्षेत्र में योगदान रहा है।

शोधकर्ता मुवीन मोहम्मद खांन ने वर्ष 1998 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय से 'मानव संसाधन प्रबंध : मध्यप्रदेश राज्य सहकारी बैंक मर्यादित एवं पंजाब नेशनल बैंक का तुलनात्मक अध्ययन' विषय को लेकर अपना शोध कार्य सम्पादित किया है। शोधकर्ता ने दोनों बैंकों का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकाला है कि दोनों बैंकों ने अपने मानव संसाधन को कुशल एवं दक्ष बनाने की ओर ध्यान दिया है।

शोधार्थी अनन्त कुमार सक्सेना ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में जिला सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीय बैंक का योगदान' विषय को लेकर सम्पादित किया। जिसके अन्तर्गत शोधार्थी ने बताया कि मध्यप्रदेश के ग्रामीय विकास में सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का विशेष योगदान रहा हैं।

शोधार्थी राधेश्याम रघुवंशी ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'कृषि वित्त में सहकारी बैंकों की भूमिका एवं प्रभाव' विषय को लेकर सम्पादित किया जिसके अंतर्गत शोधार्थी ने कृषि के क्षेत्र में वित्त की आवश्यकता का उजागर किया है कृषि एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को वित्त की आवश्यकता पड़ती है। सहकारी बैंकों द्वारा कृषि वित्त की पूर्ति कैसे की जाती है यह शोधार्थी न अपने अध्ययन में बताया है।

शोध के उद्देश्य –

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की उपलब्लियों का अध्ययन करना।
- शोध के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत करना।

शोध प्रवधि – किसी भी समस्या एवं विषय के अध्ययन के लिये विभिन्न सूचनाओं एवं तथ्यों की आवश्यकता होती है जिन्हें विभिन्न विधियों से संग्रहित करना होता है प्रस्तुत शोध पत्र में विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध प्रवधि का मुख्यत: उपयोग किया गया है प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है यद्धपि प्राथमिक समंकों का भी उपयोग किया गया है। इनके माध्यम से ही जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है। इस हेतु शोधार्थी द्वारा शोध कार्य में प्रकाशित समंकों के अंतर्गत जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की वार्षिक प्रतिवेदनों एवं लेखाविवरणों, जिला सांख्यिकी समंकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों, संदर्भित पुस्तकों को एकत्र किया गया है तथा अप्रकाशित समंकों को बैंकिंग व्यवसाय में संलग्न अधिकारियों, कर्मचारियों तथा क्षेत्र विषेष में अनुभव रखने वाले व्यक्तियों से वार्तालाप के माध्यम से एकत्रित किया गया है।

शोध विषय के अध्ययन की सीमाएं –

- इस शोध अध्ययन के लिये सीमित अवधि के समंकों का प्रयोग किया गया है।
- इस शोध अध्ययन के लिये द्वितीय समंकों का उपयोग किया गया है।
- द्वितीय समंकों की विश्वसनीयता अंकेक्षण पर निर्भर करती है।

शोध विषय के अध्ययन का क्षेत्र – मैंने अपना शोध कार्य का अध्ययन क्षेत्र जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण तक सीमित रखा है, अध्ययन के लिये कुछ सीमाएं निश्चित करना पड़ती है और वहीं अध्ययन का क्षेत्र कहलाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में विगत 7 वर्षो में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है।

तालिका **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण – अंशपूंजी – अंशपूंजी में लगातार वृद्धि हुई है। बैंक में वर्ष 2006-07 में अंशपूंजी 1307.75 लाख रू. की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुये वर्ष 2012-13 में 3658.70 लाख रू. हो गई है। जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 179.77 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

कार्यशील पूंजी – कार्यशील पूंजी में तेजी से वृद्धि हुई है बैंक में वर्ष 2006-07 में कार्यशील पूंजी 21437.91 लाख रू. की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2012-13 में 74464.64 लाख रू. हो गई है जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 247.35 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

लाभ – वर्ष 2011-12 को छोड़कर लाभ में कमी आयी है, बैंक में वर्ष 2006-07 में लाभ 644.64 लाख रू. था जो निरन्तर प्रतिवर्ष कम होते हुए वर्ष 2012-13 में 418.13 लाख रू. हो गया। जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 35.14 प्रतिशत की कमी हुई हैं।

ऋण – ऋण वितरण में लगातार वृद्धि हुई है बैंक में वर्ष 2006-07 में 10421.37 लाख रू. ऋण प्रदान किया था जो निरन्तर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2008-09 को छोड़कर वर्ष 2012-13 में 51533.54 लाख रू. हो गया जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 394.50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

वसूली – बैंक में वर्ष 2006-07 में 10221.35 लाख रू. की वसूली अर्जित की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2008-09 को छोड़कर वर्ष 2012-13 में 34951.88 लाख रू. की वसूली अर्जित की गई है जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 241.95 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति अच्छी है बैंक की अंशपूंजी एवं कार्यशील पूंजी में निरंतर तेजी से वृद्धि हुई है जो इस बात की प्रतीक है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति अच्छी है बैंक के लाभों में लगातार कमी आई है जो बैंक की भावी योजनाओं के क्रियान्वयन में वाधक सिद्ध हो सकती है। बैंक की ऋण प्रदान करने की क्षमता में लगातार वृद्धि हुई है तथा वसूली को अर्जित करने में भी वृद्धि हुई है। अत: अध्ययन से स्पष्ट है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. राजीव कुमार, कम्पनी लेखांकन, अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, 2011
2. चन्द्रेश भार्गव, बैंकिंग प्रणाली
3. जिला विकास पुस्तक -2011, जिला सांख्यिकी कार्यालय विदिशा म. प्र.।
4. 92 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2006-07 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
5. 93 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2007-08 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
6. 94 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2008-09 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
7. 95 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2009-10 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
8. 96 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2010-11 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
9. 97 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2011-12 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
10. 98 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2012-13 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
11. समाचार पत्र दैनिक भास्कर। 20/5/2013

तालिका

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की कुल अंशपूंजी
कार्यशील पूंजी, लाभ, ऋण एवं वसूली

(वर्ष 2005-06 से वर्ष 2011-12 तक) राशि लाख रूपये में

वर्ष अंश	पूंजी	कार्यशील पूंजी	लाख	ऋण	वसूली
2006-07	1307.75	21437.91	644.64	10421.37	10221.35
2007-08	1326.99	24943.47	411.83	24532.72	24759.51
2008-09	1323.35	28337.65	312.02	13145.90	9223.44
2009-10	1847.78	34583.69	357.84	22595.75	19201.06
2010-11	2178.34	43533.52	228.85	26896.26	19773.23
2011-12	2429.84	50540.68	782.79	28877.76	25600.09
2012-13	3658.70	74464.64	418.13	51533.54	34951.88

(स्त्रोत - वार्षिक प्रतिवेदन जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, विदिशा
वर्ष 2006-07 से वर्ष 2012-13)

****

मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास – एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन

डॉ. सुनील शर्मा *

प्रस्तावना – भारत ने पिछले चौसठ वर्षों में औद्योगिक क्षेत्र में भारी सफलता प्राप्त की है। भारत में औद्योगिकरण का प्रारंभ 1950 के दशक से हुआ। उस समय उद्योगों की स्थापना के लिए बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश किया गया। औद्योगिक उत्पादन में भारत अनेक वस्तुओं के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया है, वहीं विदेशों को भी अतिरिक्त उत्पादन का निर्यात करने में सफल हुआ है। वहीं मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में औद्योगिक विकास की सहभागिता निरंतर बढती जा रही है।'

मुख्य औद्योगिक नीतियॉ –

1. **प्रथम औद्योगिक नीति 1948 –** संपूर्ण देश के औद्योगिक विकास के लिए 6 अप्रेल 1948 को प्रथम औद्योगिक नीति की धोषणा की गई जिसमें विधमान औद्योगिक इकाईयों के राष्ट्रीयकरण करने के स्थान पर अपने कार्यक्षेत्रों में नवीन उत्पादन इकाईयॉ स्थापित करने का निश्चय किया गया। इसमें मिश्रित एवं नियंत्रित अर्थव्यवस्था की नींव रखी गई।

2. **द्वितीय औद्योगिक नीति 1956 –** 30 अप्रैल, 1956 को नवीन औद्योगिक नीति धोषित की गई। जिसमे आधारभूत, सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों के रूप में समाजवादी विधि से समाज की धारणा मुख्यत: रखी गई। जिसमें उद्योगों को 03 वर्गो में रखा गया।

3. **जनता सरकार की औद्योगिक नीति 1977 –** 23 दिसम्बर 1977 को सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। इस नीति में कुटीर एवं धरेलू तथा ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए विशेष बल दिया गया। जिसके तहत कुटीर उद्योगों के लिए आरक्षित वस्तुऐं 130 से बढाकर 807 की गई।

4. **औद्योगिक नीति 1980 –** 23 जुलाई, 1980 को उधोग मंत्री चरनजी चानना ने 1956 की औद्योगिक नीति को आधार बनाकर नयी औद्योगिक नीति की धोषणा की। जिसमें लधु, मध्यम एवं बडे पैमाने के उद्योगों के विकास के लिए अनेक रियायतों एवं छूटों की धोषणा की गई।

5. **औद्योगिक नीति 1990 –** तत्कालीन उधोग मंत्री श्री अजीतसिंह ने 31 मई, 1990 को जनता दल सरकार की औद्योगिक नीति की द्योषणा की। इसके अंतर्गत लधुस्तर क्षेत्र के उत्पादन के लिए 836 मदों को आरक्षित किया गया। साथ ही ग्रामीण एवं पिछडे क्षेत्रों में क पूंजी लगाकर अधिक रोजगार उपलब्ध करवाने के लिए केन्द्रीय पूंजी सहायता योजना लागू की गई। प्रदेश सरकार ने अपने स्तर पर उद्योगों की स्थापना हेतु विशेष सुविधाऐं, अनुलाभ घोषित किये है। साथ ही 03 ग्लोबल समिट भी आयोजित की है। जिसके माध्यम से देश के साथ–साथ विदेशों के उद्योगपति भी मध्यप्रदेश में उद्योग स्थापित करने की ओर आकर्षित हुए है। वर्तमान समय में विभिन्न चरणों में 104 अरब से अधिक अमेरिकी डालर वाले प्रस्ताव राज्य सरकार के समक्ष उपलब्ध हुए है।

मध्यप्रदेश में औद्योगिक विकास – क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्यप्रदेश भारत का दूसरा बड़ा राज्य होने के साथ ही प्रदेश में औद्योगिक विकास के लिए आधार कच्चामाल खनिज बड़ी मात्रा में उपलब्ध है। मुख्यत: 27 प्रकार के खनिज म0प्र0 में बहुतायत से पाए जाते है। जिसमें अभ्रक, तांबा, डोलोमाईट, ग्रेफाईट आदि शामिल है। प्रदेश में 56 लाख परिवार खेतिहर होने के साथ ही 19.95 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में खेती की जाती है। जिससे कृषि क्षेत्र से भी उद्योगों हेतु कच्चामाल उपलब्ध होता है। प्रदेश का 33 प्रतिशत भाग वनो से आच्छादित है। जिसमें बॉस, गौद, लाख, हर्रा, इमारती लकडी, तेंदूपत्ता आदि बहुतायत से उपलब्ध होते है। इस समय प्रदेश में 8145 मध्यम एवं वृहद स्तर के उद्योग स्थापित है। जबकि लधु उद्योगों की संख्या 2.00 लाख है। मध्यप्रदेश के औद्योगिक क्षेत्र पीथमपुर, मण्डीदीप,मालनपुर आदि क्षेत्रों में बडी संख्या में उद्योगों की स्थापना हुई है। नेपानगर में अखबारी कागज का कारखाना है,। होंशंगाबाद में नोट छापने के कागज का कारखाना है वहीं देवास में नोट छापे जाते है। ग्वालियर तथा इन्दौर में बिस्कीट बनाने की इकाईयॉ है। मध्यप्रदेश में 50 जिलों में से 5 को विकसित एवं 45 को औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना गया है। मध्यप्रदेश शासन के 7 तथा निजी क्षेत्र के 15 उपक्रमों द्वारा सहायक उद्योग कार्यक्रम अपना लिया गया है।

मध्यप्रदेश में स्थापित उद्योग – मध्यप्रदेश में स्थापित उद्योगों में कुछ प्रमुख उधोग इस प्रकार है–

(अ) कृषि आधारित उद्योग –

1. **चीनी उद्योग**–भोपाल शुगर मिल्स, सीहोर, डबरा शुगर मिल्स डबरा, जिवाजीराव शुगर मिल्स दालौदा, सेठ गोविंददास शुगर मिल्स, महिदपुर रोड, जावरा शुगर मिल्स एवं सारंगपुर बरलाई तथा आलोट में भी प्रदेश के प्रमुख चीनी उत्पादक कारखाने स्थाापित हैं।

2. **वनस्पति धी**– प्रदेश के गंजबासौदा, जबलपुर, खंडवा, मण्डीदीप, देवास, ग्वालियर सहित 10 स्थानों पर वनस्पति धी निर्माण के कारखाने स्थापित है।

3. **सूती कपडा उद्योग**– प्रदेश 513 कारखाने सूती कपड़े के उत्पादन में संलग्न है। अधिकांश कारखाने प्रदेश के पश्चिमी भाग इन्दौर, उज्जैन तथा ग्वालियर नगरों में स्थापित है।

4. **फल, सब्जी सरंक्षण एवं प्रक्रिया इकाई**, भोपाल– इस प्रोसेसिंग इकाई में 100 टन फलों का संरक्षण किया जा सकता है। इस इकाई में मैंगों, टमाटो केचप, लेमन तथा आरेंज स्वकैश आदि तैयार किये जाते है।

5. **कीटनाशक संयंत्र बीना**– बीना के इस संयंत्र में 10 हजार टन पाउडर तथा 1 लाख लीटर कीटनाशक औषधियों का निर्माण किया जाता है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य)शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

(ख) खनिज संपदा पर आधारित उद्योग–

1. **चीनी मिटट्री उद्योग**– मुख्यत ग्वालियर, जबलपुर, रतलाम में स्थापित है।

2. **भारी विधुत उपकरण–** सन् 1960 में बिट्रेन के सहयोग से भोपाल में भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स की स्थापना की गई है। यहॉ ट्रांसफार्मर, केपेसिंटर, इंडस्ट्रियल मोटर जैसे भारी उपकरण बनाये जाते है।

3. **सीमेंट फैक्ट्री–** मुख्यत: सतना सीमेंट सतना में, कैमोर सीमेंट, मैहर सीमेंट, आदि मुख्यत: स्थापित है।

(ग) वनों पर आधारित उद्योग–

1. **कागज उद्योग**– 1948–49 में नेशनल न्यूज प्रिन्ट एण्ड पेपर मिल, नेपानगर तथा ओरियेन्ट पेपर मिल शहडोल में स्थापित किये गये। इसके अतिरिक्त छोटे–छोट कारखाने ग्वालियर, भोपाल तथा अमलाई में भी स्थापित है।

2. **बीडी उद्योग–** बीड़ी बनाने के लिए प्रदेश में बहुतायत से तेंदूपत्ता जंगलों में प्राप्त होता है। प्रदेश में बीड़ी बनाने के लगभग 270 कारखाने हैं। इस उधोग का मुख्य केन्द्र जबलपुर तथा सागर है।

3. **लकडी चीरने के उधोग**– प्रदेश में लकडी चीरने के 115 कारखाने स्थापित है। इसका मुख्य केन्द्र जबलपुर, छिदवाडा तथा मंडला जिले है।

4. **अन्य उद्योग**– कत्था बनाने के कारखाने शिवपुरी तथा बानमोर में स्थापित है। ग्वालियर में दियासलाई बनाने का कारखाना, चिप–बोर्ड तथा पार्टिकल बोर्ड बनाने का कारखाना इटारसी में स्थापित है। वहीं कच्चेलाख से सीड लाख तथा शैलाख बनाने का एक शासकीय कारखाना उमरिया में स्थापित किया गया है।

भारत एवं राज्य सरकार द्वारा स्थापित प्रमुख उद्योग – केन्द्र सरकार द्वारा मध्यप्रदेश में गवर्नमेंट आर्डिनेन्स फेक्ट्री, खमरिया, गन कैरिज फेक्ट्री, जबलपुर, रेलवे कोच फैक्ट्री, भोपाल, सिक्योरिटी पेपर मिल, होशंगाबाद, करेन्सी प्रिटिग प्रेस, देवास, एल्कॉलाइड फैक्ट्री, नीमच, भारत हैवी इलैक्ट्रीकल्स, भोपाल, नेशनल न्यूज प्रिंट एंड पेपर मिल, नेपानगर, हिन्दुस्तान कॉपर प्रोजेक्ट, बालाघाट सहित अनेकों उद्योग प्रदेश में केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित किये गये है।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा मुख्यत: ग्वालियर लैदर टेनरी, ग्वालियर, ग्वालियर पॉट्रीज, ग्वालियर, देवास इलेक्ट्रीकल्स, देवास, फर्निचर वर्क्स, जबलपुर, सनावद कताई मिल, सनावद, रतलाम एल्कोहल प्लांट, रतलाम, आदि अनेक उद्योग स्थापित किये गये है।

औद्योगिक विकास केन्द्र – म0प्र0 औद्योगिक विकास निगम की स्थापना 1965 में की गई। जिसका मुख्य उद्देश्य प्रदेश मे औद्योगिक विकास का वातावरण निर्मित कर, उद्योगों को आधारभूत सुविधाऐं उपलब्ध करवाना रहा है। वर्तमान में 26 औद्योगिक विकास केन्द्रों की स्थापना की गई है। जिसमें पीथमपुर (धार), मंडीदीप(रायसेन) देवास मालनपुर (भिंड) आदि में सर्वाधिक उद्योगों की स्थापना हुई है। इसके साथ ही 231 अधिसूचित औद्योगिक क्षेत्र, 04 सेज, 12 विशिष्ट उत्पाद औद्योगिक पार्क भी स्थापित किये गये है।

मध्यप्रदेश मे औद्योगिक विकास तेजी से हो रहा है। इसका एक बडा कारण वर्तमान प्रदेश सरकार की उदारवादी औद्योगिक नीति है। वर्तमान मुख्यमंत्री द्वारा इसी प्रकार के प्रयास सतत् रूप से किये जाते रहे थे तो अगले 10 वर्षो में मध्यप्रदेश औद्योगिक दृष्टि से विकसित राज्य की श्रेणी में आ जायेगा, इसमें संदेह नहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन– ए0एन0अग्रवाल
2. मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास– डॉ अरूण गंगेले
3. भारत 2011, 2012,
4. सामान्य अध्ययन् – आनंद कुमार माथुर
5. रिसर्च लिंक,
6. योजना पत्रिका, सामाजिक सहयोग
7. नवीन शोध संसार आई.एस.एस.एन. 2320–8767, नीमच

****

आयकर सृजता है काला धन

डॉ. आरती मिश्रा *

शोध सारांश – भारत विश्व की सर्वाधिक प्रगतिशील अर्थव्यवस्था में से एक है। यह भी कहा जा रहा है कि भारत अपनी आर्थिक सुधार की वजह से 2020 तक फ्रांस और जर्मनी जैसी अर्थव्यवस्थाओं को भी पीछे छोड़ देगा और 2035 तक विश्व की तीसरी अर्थव्यवस्था बन जायेगा, लेकिन यह सब भविष्य के गर्भ में है। वास्तव में भारत आज भी पब्लिक डेप्टस्, मुद्रा स्फीति और काला धन जैसी ज्वलन्त समस्याओं से जूझ रहा है। काला धन आज सबसे बड़ा राजनैतिक और आर्थिक मुद्दा बना हुआ है, जिसका सृजन दोषपूर्ण आय कर प्रणाली की वजह से हुआ है।

शब्द कुन्जी – पब्लिक डेप्टस्, मुद्रा स्फीति, जी.डी.पी. ।

प्रस्तावना –आयकर का अर्थ तथा इतिहास – आयकर केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया गया अतिमहत्वपूर्ण प्रत्यक्ष कर है। यह प्रत्येक वर्ष में करदाता द्वारा वर्ष भर में कमाई गई कर योग्य आय पर लगाया जाता है। कर योग्य आय का निर्धारण आयकर अधिनियम के अनुसार किया जाता है।

भारत में आयकर प्रथम बार सन् 1860 में ब्रिटिश सरकार में वित्तमंत्री सर जेम्स विल्सन द्वारा 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम के कारण हुई हानियों की पूर्ति के लिए लगाया गया था।

आयकर अधिनियम 1860 में 1863, 1867, 1871, 1873 और 1878 में विभिन्न प्रकार के संशोधन हुए। अंत में सन् 1886 में आयकर अधिनियम 1886 पारित कर आयकर को स्थायी रुप प्रदान किया गया। यह अधिनियम 1917 तक यथावत् लागू रहा। 1918 में एक नया आयकर अधिनियम बनाया गया, जिसमें कर की दरें कुछ ऊँची कर दी गई। इसके बाद लगातार सन् 1922, 1939, 1961 में तथा इसके आगे भी संशोधन होते रहे।

अमीरो से टैक्स और गरीब को राहत यह आयकर संग्रहण की मूल भावना रही है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के जो भी तरीके आज तक अपनाये गये है वो सफल नहीं हो पाये है। कर से बचने की जुगत में काला धन बनता है और फिर यही धन कई अवैध क्रियाकलापों और जटिलताओं को भी जन्म देता है। जिनका हल खोजना अब तक टेढ़ी खीर बना है। यह काला धन अनेक प्रकार की काली गतिविधियों जैसे अवैध शराब, ड्रग्स, हथियार, तस्करी में जाता है। अत: आवश्यकता है कर ढाँचे में इस तरह के सुधार करने की जो आर्थिक वृद्धि दर को बढावा देने के साथ ही कर संग्रहण भी आसान बनाये।

केन्द्र सरकार के कुल राजस्व में करों की हिस्सेदारी

कार्पोरेशन टैक्स	–	32 %
आयकर	–	19.14 %
उत्पाद शुल्क	–	14.56 %
सीमा शुल्क	–	14.20 %
सेवा कर	–	14.20 %
अन्य	–	6.8 %

लाभकारी नहीं रही आयकर प्रणाली –प्रो. के.बी. भानूमूर्ति दिल्ली विश्वविद्यालय के अनुसार – कर के बारे में जो सिद्धान्त है उसके तीन–चार पक्ष है। इनमें से एक समता के सिद्धान्त को छोड़कर सभी का समन्वित निष्कर्ष यही है कि हमारी प्रणाली में आयकर कोई लाभकारी कर नहीं रह गया। इसका एकपक्ष आयकर की लोच की बात करता है अर्थात् आयकर दर कम करने पर कर देने वालों का दायरा कम की गई दर का दो गुना बढना चाहिए जैसे अगर आयकर 35 से 10 प्रतिशत कम कर 25 की जाती है तो आयकर देने वालों की संख्या कम से 10 से दो गुना अर्थात् 20 प्रतिशत बढ़ना चाहिए तभी कर दर कम करना उचित है। अगर ऐसा नहीं होता तो यह माना जाता है कि देश में असमानता ज्यादा हैं और कर दर कम करने का ज्यादा फायदा नहीं है, साथ ही यह भी देखा जाता है कि आयकर संग्रहण करने की लागत प्राप्त होने वाले आयकर की तुलना में कितनी है और आयकर दाताओं की संख्या बढने से कर संग्रहण मशीनरी की कुशलता घटती तो नहीं है, भारत के साथ ऐसा ही है।

इन देशों में नहीं लगता है आयकर – संयुक्त अरब अमीरात , कतर, ब्रूनेई इन देशों को दुनिया के सर्वाधिक अमीर देशों में शामिल किया जाता है, लेकिन इन देशों में आयकर नहीं लगता है। संयुक्त अरब अमीरात में पर्यटन और वित्तीय सेवाकर अर्थव्यवस्था की रीढ़ है तथा कतर में करों की दर दुनिया में सबसे कम है।

करारोपण का आधार खर्च होना चाहिए – सरकारों द्वारा आयकर लगाने के पीछे तर्क से ज्यादा परंपरा का योगदान है। प्रोग्रसिव टैक्स ढाँचे (अधिक आय पर अधिक कर) के समर्थन का आशय आयकर की अनिवार्यता नहीं है। अर्थशास्त्र यह कहता है कि जो लोग अधिक कमायेंगे वे खर्च भी अधिक करेंगे। इसलिए अगर माल–असबाब और सेवाओं (जी0एस0टी0) पर टैक्स लिया जा रहा है तो स्वाभाविक है कि अधिक खर्च करने वाले अधिक कर चुकायेंगे यह अपने आप में प्रोग्रेसिव टैक्स है। इसका फायदा यह है कि आयकर की तरह इस कर से बचना संभव नहीं है। कर की चोरी भी नहीं की जा सकती है।

इसके विपरीत अधिक आय पर अधिक कर की दर का आशय अधिक वसूली कतई नहीं है, अगर आज उच्च आय वर्ग के लोगों पर 30 प्रतिशत आयकर है तो आयकर कानून ही इससे बचने के तमाम रास्ते उपलब्ध कराता है। वेतनभोगी के अलावा सभी लोग अपने खर्चो का भारी भरकम ब्यौरा पेश कर आयकर से छूट हॉसिल कर लेते है और हकीकत में काफी कम टैक्स देते है। जबकि अधिक टैक्स दर रखने से एक तरफ तो देश में व्यापार के माहौल पर नकारात्मक असर पड़ता है तो दूसरी तरफ कर चोरी को बढ़ावा मिलता है और काले धन की अर्थव्यवस्था को बल मिलता है।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, गुढ़, रीवा (म.प्र.) भारत

काला धन इसीलिए है क्योंकि लोग डर से अपनी असल आय नहीं बताते है, जिसकी आवक 20 करोड़ है वह सिर्फ 10 करोड़ ही दिखाता है और 10 करोड़ का कोई रिकार्ड पेश नहीं करता इस तरह आयकर बचाने के चक्कर में काले धन का सृजन शुरु हो जाता है। नगदी आय को नहीं दिखाने के लालच में ही काले धन का दुष्चक्र शुरु होता है।, पर जब आय पर कर ही नहीं होगा तो आय के घोषणा की आवश्यकता ही नहीं होगी यह सवाल भी नहीं होगा कि पैसा आया कहाँ से ? इसलिए अगर आय पर कर खत्म कर देते हैं तो काले धन की समस्या तो खत्म हो जायेगी।

यह कहना भी उचित नहीं है कि प्रत्यक्ष कर (आयकर) की बजाय अप्रत्यक्ष कर (बिक्री, एक्साइज आदि) पर अधिक निर्भरता से मॅहगाई बढ़ती है। यह सही है कि अप्रत्यक्ष करो की जद में गरीब एवं अमीर सभी आते है, पर समाज के वंचित तबके पर इसकी मार न पड़े इसके लिए भी कुछ ठोस उपाय किये जा सकते है ऐसा कई देशों में है भी। अनप्रोसेस्ड आइटम्स जैसे सब्जियाँ गेहूँ आदि और आवश्यक उपभोक्ता सामग्रियों तेल, नमक आदि को कर मुक्त श्रेणी में रख सकते हैं, जबकि प्रोसेस्ड आइटम्स जैसे ब्रेड, रेडीमेंड आइटम्स मॅहगे सामान विलासिता की वस्तुयें मसलन वॉशिंग मशीन सेलफोन आदि पर टैक्स अधिक रखा जा सकता है।

आयकर समाप्ति से देश और समाज दोनों को लाभ –कर विशेषज्ञों की मानें तो आयकर समाप्ति से आमजन के जीवन स्तर में सुधार की पूरी संभावना है और सरकार की माली हालत पर भी किसी तरह का विपरीत असर नहीं पडेगा।

1. **जी0डी0पी0 में वृद्धि होगी –** आयकर समाप्ति से व्यापारी व्यापार से और अधिक कमाने के लिए प्रोत्साहित होगा। आयकर न देने से बची राशि से माँग की नई स्थितियाँ पैदा होगी, जिसकी पूर्ति के लिए नये उद्योग लगेंगे। इससे सकल धरेलू उत्पाद में वृद्धि होगी।

2. **रोजगार के अवसरों में वृद्धि होगी –** आयकर समाप्ति से अधिक से अधिक उद्योगों की स्थापना होगी, जिससे बड़ी संख्या में रोजगार के अवसर बढेंगे। अवैध करोबार में लग रहा काला धन वैध करोबार में लगने लगेगा और अवैध कराबार से जुडे अपराधियों की गतिविधि पर भी अंकुश लगेगा।

3. **मंहगाई घटने की संभावना –** जब उद्योग विकसित होगे तो बाजार में माँग को पूरा करने के लिए माहौल में जोरदार प्रतिस्पर्धा होगी। इसके परिणामस्वरुप उत्पादों की कीमत बेहद प्रतिस्पर्धी रखनी होगी। इसी प्रतिस्पर्धा के चलते बेहतर गुणवत्ता वाली वस्तुओं और सेवाओं के मूल्यों में कमी आ सकती है।

4. **बैंक से सस्ते ऋण उपलब्ध होगे –** आय में वृद्धि से बैंकों पर दबाव आ जायेगा बाजार में मुद्रा का प्रचलन अधिक होने से लोग बैंकों से ऋण कम लेना चाहेंगे और बैंक अधिक से अधिक सरलता के साथ ऋण देना चाहेंगे। इन स्थितियों में बैंक सस्ते ऋण उपलब्ध करा सकते है।

निष्कर्ष – जिनकी आय ज्यादा है वे खर्च भी ज्यादा करते हैं आय को छुपाना आसान है खर्च को नहीं इसलिए खर्च पर कर लगाना अधिक व्यवहारिक है। कर विशेषज्ञों की मानें तो आयकर समाप्ति से आमजन के जीवनस्तर में सुधार की पूरी सभावना है और सरकार की माली हालत में किसी तरह का विपरीत असर नहीं पडेगा।

आयकर की जटिलताओं ने कई अवैध क्रियाकलापों को जन्म दिया है जिनका हल खोजना अब तक टेढी खीर बना हुआ है। अत: जरुरत है आयकर के ढ़ाचे में इस तरह के सुधार करने की जो आर्थिक वृद्धि दर को बढावा देने के साथ ही कर संग्रहण भी आसान बनाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Direct & Indirect Taxes in India, Keller, Tiwari
2. " इण्डियन टैक्सेसन " सिस्टम विकीपीडिया।
3. आयकर विधि एवं व्यवहार डॉ. एस. सी. मेंहरोत्रा साहित्य भवन पब्लिकेशन।
4. आयकर विधान एवं लेखे – डॉ. श्रीपाल सकलेचा।
5. कर नियोजन – डॉ. श्रीपाल सकलेचा।
6. इण्डिया टूडे पत्रिका।
7. कुरूक्षेत्र पत्रिका।
8. योजना पत्रिका।

****

जी-20 और भारत - विशेष संदर्भ 2014

डॉ. गणेश प्रसाद दावरे *

प्रस्तावना – वर्ष 1997 की एशियाई आर्थिक संकट के मद्देनजर विश्व के धनी और उभरती अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक वित्तीय बाजार में स्थायित्व हेतु एक मंच पर लाने के लिए वर्ष 1999 में बर्लिन में जी-20 की स्थापना की गई थी। वस्तुत: यह सदस्य देशों के वित्तमंत्रियों व केन्द्रीय बैंक के गवर्नरो की वार्षिक बैठक है। वर्ष 2008 के वैश्विक आर्थिक संकट के समय इसकी भूमिका और बढ़ गई, सदस्य देशों के शासनाध्यक्ष या प्रधान भी इस सम्मेलन में हिस्सा लेने लगे। 2008 में इसकी बैठक वांशिगटन में हुई। 2009 में लंदन में और पिट्स बर्ग में हुई तथा 2010 में कनाड़ा के टोरन्टो में इसकी बैठक हुई।

जी-20 के उद्देश्य – अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक विकास के लिए जी-20 मुख्यमंच है जो औद्योगिक और उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बीच वैश्विक आर्थिक स्थिरता से जुड़े महत्वपूर्ण आर्थिक मुद्दों पर खुला और सृजनात्मक चर्चा को प्रोत्साहन देना है।

जी-20 के सदस्य देश- अर्जेटीना, आर्स्टेलिया, ब्राजील, कनाड़ा, चीन, फ्रांस, जर्मनी, भारत, इंडोनेशिया, इटली, जापान, मैक्सिको रुस, सउदी अरब, दक्षिण अफिक्रा, कोरियागणराज्य, तुर्की, यू.के., यू.एस.ए., और यूरोपीय संघ।

जी-20 क्यों अहम – जी-20 देशों मे दुनिया की दो तिहाई आबादी बसती है। इनकी अर्थव्यवस्था विश्व जी.डी.पी. में 85 फीसदी योगदान करती है। विश्व व्यापार में इनकी हिस्सेदारी 75 फीसदी है।

जी-20 सम्मेलन 2014 – आस्ट्रेलिया के प्रधानमत्री टोनी एबॉट ने रिटीट सेशन में बोलने के लिए भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को विशेष रुप से आमंत्रित किया। शिखर सम्मेलन से पहले रिटीट सेशन में नरेन्द्र मोदी ने कहा कि सुधार प्रक्रिया का विरोध लाजिमी है लेकिन इसे हर हाल में राजनीतिक दबावों से बचाया जाना चाहिए। उन्होंने कहा दुनिया में सुधारों को लेकर धारणा है कि ये सरकारी कार्यक्रमों के बारे में है ओर जनता पर बोझ है। इसे बदलने की जरुरत है सुधार जनता के हितों पर केन्द्रित होने चाहिए ओर इसमें उनकी भागीदारी भी होनी चाहिए। इसे परदे के पीछे रहने वाले लोग नहीं बल्कि जनता ही आगे बढ़ाये। ऐसी विकास दर बेमानी होगी जो रोजगार पैदा न कर सके।

इस सम्मेलन में पश्चिमी देशों ने युक्रेन संकट में रुस की भूमिका को लेकर फटकार लगाई। पुतिन ने जब कनाड़ा के प्रधानमंत्री स्टीफन हार्पर से मिलाने के लिए हाथ बढ़ाया तो हार्पर ने कहा 'में आपसे हाथ मिलाऊंगा, लेकिन मेरे पास आपसे कहने के लिए एक ही बात है, आपको युक्रेन से बाहर निकल जाना चाहिए।'अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने कहा कि युक्रेन में रुस की आक्रामकता ' दुनिया के लिए खतरा है।' ' ब्रिटेन ने धमकी दी की रुस ने अगर अपने पड़ोसी को अस्थिर करना नहीं छोड़ा तो उन पर नये प्रतिबंध लगाये जायेगे। रुस के राष्ट्रपति ब्लादिमीर पुतिन जी-20 शिखर सम्मेलन में आये नेताओं से नाराज रहे। लगभग सभी देशों के नेता युक्रेन में रुसी हस्तक्षेप को लेकर पुतिन की आलोचना कर रहे थे। पुतिन ने कहा आर्थिक प्रतिबंध बेकार ओर गैरकानुनी है। पश्चिमी देशों की खरी खोटी से नाराज रुस के राष्ट्रपति पुतिन सम्मेलन खत्म होने के पहले ही मास्को लौट गये। ब्रिस्बेन सम्मेलन यूक्रेन संकट, पश्चिमी अफ्रीका में इबोला महामारी , दक्षिण चीन सागर में सीमा विवाद के साए में हुआ। भारत का योगदान मुख्यत: कर वंचन से लडने ओर टैक्स हैवन्स को सार्वजनिक मांग तक सीमित रहा। कालेधन पर अंकुश लगाकर आतंकवाद और ड्रग तस्करी को रोका जा सकता है। सूचनाओं को स्वत: साझा करने का वैश्विक मानक बनाने की पहल का भारत समर्थन करता है। जी-20 सदस्य कर से जुड़ी जानकारीयां साझा करने पर सहमत हो गये।

जी-20 से क्या हासिल हुआ – आस्ट्रेलिया में 2014 मे सम्पन्न हुए जी-20 सम्मेलन में वैश्विक अर्थव्यवस्था को अगले पॉच वर्ष में दो प्रतिशत की दर से बढ़ाने पर सहमती बनी। अगर आर्थिक वृध्दि का यह लक्ष्य हासिल हो पाया तो अर्थ व्यवस्था में दो टिंलियन डालर बढ़ेगे ओर लाखों नौकरियां बढ़ेगी। जी-20 के सदस्य दुनिया के 85 प्रतिशत उत्पादन के लिए जिम्मेदार है लेकिन इनकी आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्थाऐं अलग है तथा नीतियाँ लागू करने का तरीका भी अलग है। भारत ने कुछ नीतियों का विरोध किया जिनमें रुपये को पूँजी खाते पर परिवर्तनीय बनाना ओर बैंकिग को नियंत्रण मुक्त करना शामिल है। भारत का पुरा आर्थिक आकर इतना कम ओर निर्माण उद्योग इतना छोटा है कि यह वैश्विक अर्थव्यवस्था की गाड़ी को आगे ले जाने में महत्वपुर्ण भूमिका नहीं निभा सकता।

निष्कर्ष –

1. जी-20 सम्मेलन (2014) में पहलीबार भारत की और से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भारत के पक्ष को इतनी मजबूती से रखा। जिन मुद्दो को मोदी जी ने उठाया उन पर जी-20 देशों के प्रमुखों द्वारा सहमति दी गई।
2. सम्मेलन में नरेन्द्र मोदी ने अपनी वाकपटुता से जी-20 प्रमुखों को आकर्षित किया।
3. भारत को जी-20 में अपना दबदबा कायम रखने हेतु अपने संसाधनों को विकसित करना होगा।
4. विदेशी निवेशकों को भरोसा दिलाने हेतु भारत में वर्तमान कानूनों में से वही कानून रखे जाये जो अति महत्वपूर्ण हो शेष को हटा दिये जाये।
5. विश्व बैंक ने कारोबार करने में आसानी के लिहाज से 29 अक्टुबर 2014 को कोरोबारी माहौल रैंकिग जारी की। ताजा सूची में भारत को 189 देशों मे 142 वें पायदान पर रखा गया है। पिछले वर्ष भारत इस सूची में 140 वे पायदान पर था। हालाँकि कर्ज मिलने और छोटे निवेशकों की सुरक्षा के मामलें में भारत क्रमश: सातवें ओर छत्तीसवें स्थान पर है विश्व बैंक ने सूची में

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

भारत को 53.97 अंक दिये है, जबकी पिछले वर्ष उसने 52.78 अंक दिये थे। कुल 189 देशों की इस सूची में सिंगापुर 88.27 अंकों के साथ शीर्ष स्थान पर काबिज है। विश्व बैंक ने यह सूची जून,2013 से मई 2014 के आंकड़ो के आधार पर तैयार की है।

इन 10 मानकों के आधार पर हुई रैंकिग

सूची में टॉप-10 देश

क्र.	**विवरण**	**स्थान**	**देश**
1.	छोटे निवेशकों के हितों की सुरक्षा	1.	सिंगापुर
2.	कर्ज की उपलब्धता	2.	न्यूजीलैण्ड
3.	निर्माण की अनुमति	3.	हाँगकाँग
4.	ठेके देने की प्रक्रिया	4.	डेनमार्क
5.	बिजली की उपलब्धता	5.	दक्षिण कोरिया
6.	दिवालिया स्थिति से कंपनियों को बचाने की तैयारी	6.	नॉर्वे
7.	कारोबार की शुरुआत	7.	यूएसए
8.	टैक्स नियम	8.	ब्रिटेन
9.	कारोबार नीति	9.	फिनलैण्ड
10.	विदेश व्यापार की स्थिति	10.	आस्ट्रेलिया

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. दैनिक समाचार पत्र - दैनिक भास्कर, नईदुनिया।
2. प्रतियोगिता दर्पण।
3. शुक्रवार साप्ताहिक पत्रिका।
4. इंडिया टुडे।
5. अरिहंत सम सामयिकी महासागर।
6. लोक स्वामी पाक्षिक पत्रिका।
7. अमर उजाला सफलता।
8. योजना पत्रिका।

****

कृषि आय और आयकर

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – भारतीय कृषि आय को केन्द्रीय आयकर से मुक्त रखा गया है। इसे करदाता की कुल आय मे शामिल नही किया जाता हे लेकिन वित्त अधिनियिम 1973 के अनुसार व्यक्ति व हिन्दु अविभाजित परिवार करदाताओ द्वारा देय आयकर की गणना करते समय कुल आय मे 'शुद्ध कृषि आय' को जोड़कर एक विशेष ढंग से आयकर की गणना की जाती है। कृषि आय को आयकर के दायरे मे लाये जाने से निम्नलिखित उद्देश्यो की पूर्ति हो सकेगी।

उद्देश्य –

1. भारतीय आयकर को न्यायसंगत , समतामूलक एंव पारदर्शी बनाया जा सकेगा
2. ग्रामीण क्षेत्रो मे व्याप्त आय और सम्पत्ति के वितरण की असमानता को कम किया जा सकेगा ।
3. बहुसंख्यक ग्रामीणों व छोटे किसानो पर कोई प्रभाव नही पड़ेगा, केवल अमीर कृषको अर्थात् बड़ी जोत वाले कृषको पर ही आयकर का भार पडेग़ा।
4. फार्म हाउसों की आय को कृषि आय बताकर होने वाले कर की चोरी रोकी जा सकेगी।
5. बड़े किसानो को सब्सिडी से वंचित कर राजस्व खर्च कर किया जा सकता है।
6. केन्द्रीय राजस्व मे वृद्धि होगी।
7. बढ़े हुए राजस्व से छोटे किसानो की अधिक से अधिक मदद की जा सकेगी।

हमारे देश मे 'किसान' शब्द से जो छवि उभरती है वह है एक सीधा-सादा इन्सान, जो खेतो मे खूब मेहनत करता है। गर्मियो मे गर्मी और सर्दियो में सर्दी सहता है, जो आधा भूखा व आधा नंगा है । जिसके मकान कच्चे है या फिर वह झोपडी मे रहता है। खेत जोतने के लिए जिसके पास बैलों की जोड़ी मुश्किल से जुटती है , जो सिंचाई के लिए सिर्फ वर्षा पर निर्भर है इत्यादि। लेकिन क्या हमारे देश मे सभी किसान इसी छवि के अनुरूप है। नही , बिल्कुल नही । इस छवि के अनुरूप सिर्फ छोटी जोत का ही किसान है या वह जो अपनी भूमि को अथवा उसे ठेके पर लेकर जोतता है। ऐसे किसान के बारे में कहा जाता हैं कि वह कर्ज में पैदा होता है, कर्ज में पलते -बढ़ते हैं और कर्ज मे ही मर जाते है । किन्तु हमारे देश में तथाकथित किसान ऐसे भी है जो सूट - बूट पहनते है, कार-जीप में चलते है, जिन्होने कभी हल की मुट्ढ़ पर हाथ नहीं रखा। जिनके पास सिचांई के अधुनिक कृषि यंत्रो पर जखीरा भी, जो गोवों में कम रहते और शहरो में अधिक रहते जहां वे राजनीति के साथ अपने दूसरे काम धन्धे भी देखते है उन्हे जमीन का मालिक होने का दोहरा लाभ होता है। वे सस्ते मानव श्रम से खेती में अच्छा लाभ कमाते है और अन्य धन्धों की आय का बहुत सा हिस्सा कृषि से दिखाकर आयकर में छूट प्राप्त करने में सफल रहते है । ये तथाकथित किसान ही कृषि जिन्सो पर सब्सिडी के लिऐ शोर मचाते हैं और कृषि पर आयकर का विरोध भी करते है।

शहरों व कस्बो में छोटे -छोटे धंधे करने वाले को भी आयकर रिर्टन (Income Tax Return) भरने के लिए परेशान किया जाता है। जबकि गांव व कस्बो के हजारों एकड़ भूमि के मालिक को भी आयकर रिर्टन नहीं भरनी पडती है। खेती अब उद्योग बन चूकि है, खेत मे अब केवल खाद्यान्न ही पैदा नहीं किया जाता है बल्कि फल, कीमती लकड़ी और औषधियाँ भी पैदा की जाती है।

इन चीजों के बाग -बगीचे लाखों रूपयों के ठेकें पर छुटते है। यह कैसी विडम्बना है कि ऋण इत्यादि सुविधाएँ प्राप्त करने के लिऐ तो खेत को उद्योग का दर्जा दिये जाने की वकालत की जाती है लकिन कृषि को उद्योग मानकर आयकर रिर्टन भरने की बात का विराध किया जाता है। तर्क दिया जाता है कि किसान पर आयकर लगाया गया तो कृषि उत्पादन कम हो जायेगा । क्योंकि फिर किसान अधिक उत्पादन के लिऐ ज्यादा मेहनत नहीं करेगें यहाँ सवाल पैदा होता है कि क्या कोई वेतन भोगी आयकर से बचने के लिए वार्षिक वेतन वृद्धि या पदोन्नति ठुकराता है ? एक तर्क यह भी दिया जाता है कि किसान अपनी आमदनी का हिसाब किताब रखना भी कठिन है, लेकिन यहाँ भी यह कहा जाता सकता है कि जो किसान सैकड़ो मजदूर का हिसाब किताब रख लेता है तो वह अपनी वार्षिक आय का हिसाब भी ठीक-ठाक रख सकता है। या फिर जोतो की कोई एक निश्चित सीमा तय करके किसी निश्चित दर से आय की गणना की जा सकती है

जैसे कुछ विशिष्ट प्रकार के व्यवसायों में लगें हुए करदाताओं की परिकालीत आय की गणना धारा 44AD, 44AE, 44AF के अर्न्तगत की जाती है।

1. भवन निर्माण कार्य में लगे हुऐ ठेकेदारों कि परकालित आय (धारा 44AD)
2. माल वाहक चलाने किराये अथवा पट्टे पर देने वाले करदाताओं कि परिकालित आय (धारा 44 AE)
3. फुटकर व्यसाय के लाभो कि गणना करने के लिये परिकालित आय (धारा 44 AF)

भारतीय आयकर को न्याय संगत समतामूलक व पारदर्शी बनाने के लिए कृषि आय को केन्द्रीय कराधान के अर्न्तगत लाये जाने की अत्यंत आवश्यकता है जबकि आयकर के आधार पर सभी प्रकार की आय, चाहे किसी भी स्त्रोत से प्राप्त की गई हो शामिल होनी चाहिए। कृषि आय को 1961 के आयकर कानून से बाहर रखे जाने से करा धन का समता मूलक तत्व गंभीर से प्रभावित हुआ नजर आता है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

कृषि आय को आयकर कानून में शामिल करने के बारे में कई समिति ने विचार किया है। जिनमें

1. Taxation Inquiry Commission 1963-64
2. Committee on aspect of Black Money 1985
3. Tax Reforms Committee 1992

इन सभी समिति ने पाया कि कृषि आय का केन्द्रीय कर कानून में शामिल नहीं होना असमानता कारक है , जिसने कर वंचना (Tax Avoidence) तथा कर बचाव की कई समस्याएँ पैदा कर दी गई है। इन सभी समितियों ने राय प्रकट की कि ऐसी आय कर वसूली योग्य आय के रूप में मानी जाये। असल में कर ढाचे में सुधार की किसी भी कोशिश के साथ साथ इस प्रणाली को भ्रष्टाचार से मुक्त करने तथा करदाताओं की सुविधा के लिए कोई स्वस्थ एवं पारदर्शी प्रणाली लागू करने की जरूरत है।

श्री विजय केलकर (तत्कालीन वित्त मंत्री जसवन्त सिंह के कर सलाहकार) ने भी इस बार पर जोर दिया है कि ठोस राजनिति संकल्प के जरिए यह संभव हो पायेगा। श्री केलकर के अनुसार आज भी कुछ क्षेत्र ऐसे है जिन्हें न केवल आयकर से छुट प्राप्त है बल्कि वे दी गई रियायतो का दोहरा लाभ हासिल कर रहे है। इस सिलसिले में श्री केलकर ने कृषि क्षेत्र को आयकर के दायरे मे लाने का सुझाव रखा है।

यह प्रश्न हालांकि लम्बे समय से विवादास्पद रहा है लेकिन गैर कृषि आय जैसे फार्म हाउस की आय को कृषि आय बताकर होने वाली कर की चोरी तो रूकनी ही चाहिए। महानगरो व बड़े-बड़े नगरो के आसपास सुरसा के मुँह की तरह फैलती हुई फार्म हाउस संस्कृति पर लगाम कसी जाकर इनकी आय को कृषि आय बताकर की जाने वाली कर की चोरी पर अंकुश लग सकता है। हालांकि सरकार इन समितियो, अर्थ वेत्ताओ व कर विशेषज्ञो के तर्को से सन्तुष्ट नजर आती है, परन्तु कृषि आय पर कर लगाने की व्यवस्था करने के लिए संविधान में संशोधन की आवश्यकता है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्णत: राजनीतिक कारणो से राज्य सरकारे ऐसे संविधान संशोधन विधेयक के प्रति उत्सुक नही है। कृषि आय को केन्द्रीय कर सूची में लाने के लिए किये जाने वाले संविधान के संशोधन को राज्यो की विधान सभाओ कि मंजूरी भी आवश्यक है इसीलिए सच्ची राजनीति दृढता से कृषि आय को कर दायरे में मे लाकर ढाचा समता मूलक बनाया जा सकता है। बड़े किसानो को सब्सीडी से वंचित कर आयकर रिर्टन भरने के लिऐ बाध्य किया जाना चाहिए।

किसानो का जोतो के आधार पर वर्गीकरण कर देने से जहाँ राजस्व की प्राप्ति आयकर के रूप में अधिक होगी वहीं बडे किसानो को सब्सिडी से वंचित किए जाने पर राजस्व का खर्च भी कम होगा। अत: इसे बडे हुए राजस्व से छोटे किसानो को अधिक से अधिक मदद की जा सकती है अर्थात राजस्व में हुई वृद्धि को लघु कृषको पर ही खर्च किया जाए सब्सिडी जैसी सारी सहायताओ का असली हकदार सिर्फ छोटा किसान है इससे ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में व्याप्त धन से असमान वितरण की समस्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है तथा लघु कृषको का जीवन स्तर उनकी क्रय शक्ति में वृद्धि होने के कारण उपर उठेगा इसके साथ ही भारतीय आयकर को समतामूलक न्यायसंगत एंव पारदर्शी बनाने के साथ साथ राजस्व वसूली बढ़ाने की दिशा में उचित कदम होगा।

अन्त में आयकर श्रेणीयों के अनुसार निवासी व्यक्ति करदाताओ की आय को करमुक्त रखे जाने से यह तो माना जा सकता है कि बहु संख्यक ग्रामीणो छोटे सीमान्त किसानो पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, केवल अमीर कृषिको अर्थात बडी जोत वाले कृषको पर ही आयकर का भार पडेगा जो तर्क संगत व न्यायोचित कहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आयकर - डॉ. एचसी मेहरोत्रा।
2. आयकर विधान एवं लेखे - डॉ. श्रीपाल सकलेचा।
3. इण्डियन टैक्सेशन सिस्टम।
4. कर नियोजन - डॉ. श्रीपाल सकलेचा।
5. Direct & Indirect Taxes in India. Keller, Tiwari.

****

रूपये के अवमूल्यन का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव व समाधन

डॉ. प्रवीण शर्मा *

प्रस्तावना – 1947 में रूपये का सफर डॉलर की बराबरी पर शुरू हुआ था। भारतीय रूपये का मूल्य विगत 1 वर्ष में लगभग 28% तक गिर गया है। विगत सात वर्षो में आयात व निर्यात का अंतर दो गुना हो गया है।

27 मई 2013 को रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के पास स्वर्ण भण्डार को छोड़कर 261 अरब डॉलर का ही विदेशी मुद्रा भण्डार था जो रूपये को स्थिर रखने के लिहाज से डॉलर की निर्बाध बिक्री करने के लिए पर्याप्त नहीं है, रूपये को विदेशी निवेशकों व एन.आर.आई. को डेट में निवेश की अनुमति देने से कृत्रिम सहारा मिला हुआ है। यह कृत्रिम प्रवाह जून 2013 तक घटा है परिणामत: रूपये ने अब तक सबसे नीचा स्तर 67 रूपये, 1 डॉलर के मुकाबले देखा है। बढ़ते विदेशी व्यापार घाटे के कारण चालू खाते का घाटा खतरे के स्तर तक पहुँच गया है। मुद्रा के अवमूल्यन का अभिप्राय सोने व अन्य देशों की मुद्रा के मुकाबले रूपये के मूल्य में गिरावट आने से है। यह सभी देशों की मुद्रा के मुकाबले या तुलना में हो सकता है। किन्तु किसी एक देश की तुलना में इसकी गणना करना उचित होता है। यदि एक देश आयात ज्यादा व निर्यात कम करता है, तब वहाँ डॉलर की मांग होगी क्योंकि ज्यादातर विदेशी उत्पादों की खरीद डॉलर में होती है। डॉलर की जितनी ज्यादा मांग होगी इसका मूल्य उतना ही बढ़ता जायेगा और रूपये का मूल्य गिरता चला जाएगा। रूपये की दशकीय गिरावट को तालिका क्र. 1 में दर्शाया गया है :-

तालिका क्र. 1 रूपये की गिरावट की दशकीय स्थिति
(1970 से 2013)

दशक	रूपये का मूल्य 1 डॉलर के बराबर	% गिरावट
1970	7.576	—
1980	7.887	4.10 %
1990	17.504	122 %
2000	45.00	157 %
2010	46.21	2.69 %
2013	67	47.25 %

(स्त्रोत:दैनिक भास्कर समाचारपत्र)

तालिका क्रं0 01 के अवलोकन से स्पष्ट हो रहा है कि 1990-2000 के दशक में रूपये की कीमत में डालर के मुकाबले 157: की गिरावट हुई थी जो कि दशकीय स्थिति को देखते हुए सर्वाधिक है। इसके विपरित 2000-2010 के दशक में यह सबसे कम अर्थात 2.69: ही रही है। उदारीकरण की नितियों को अपनाने का प्रभाव 2000-2010 के दशक में स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है,जबकि रूपये की कीमत में डालर के मुकाबले सबसे कम गिरावट दर्ज हुई थी।

रूपये के मूल्य में गिरावट के कारण / रूपये की कीमत तय करने वाले कारक – रूपये की कीमत कई तत्वों पर निर्भर होती है। इसमें 'निवेशक' दूसरे देशों और उनकी मुद्राओं की तुलना में रूपये को कैसे लेते है, यह भी शामिल है। यदि घरेलू अर्थव्यवस्था के बुनियादी कारक सुधर भी जाएँ और निवेशक डॉलर-यूरो अपने पास रखना चाहे तो रूपए में गिरावट ही होगी। विकासशील राष्ट्रों में घरेलू आंतरिक स्थितियाँ व अन्तर्राष्ट्रीय कारण संबंधित राष्ट्रों की मुद्रा की शक्ति (मूल्य) को निर्धारित करते हैं। संक्षेप में भारत में रूपये के अवमूल्यन या उसकी कीमत में होने वाले उतार चढ़ाव के निम्नांकित कारक हैं –

1. **मंहगाई दर (मुद्रा स्फिति) व ब्याज दर –** वर्तमान में अमेरिका में खुदरा मंहगाई दर 1% है व ब्याज दर शून्य कर दी है अत: वहाँ वास्तविक ब्याज दर नेगेटिव (नकारात्मक) 1% से अधिक है। वही भारत में खुदरा मंहगाई दर 9% से अधिक है व रिजर्व बैंक की रेपो रेट 7.25% है। ऐसे में भारत की वास्तविक ब्याज दर और ज्यादा नेगेटिव है। जब हम मंहगाई को समायोजित करते हुए रूपये का मूल्याकंन करते हैं तो इसकी कीमत वास्तविक दर से अधिक हो जाती है। अन्य देशों की तुलना में रूपये अत्यधिक गिरावट का प्रमुख कारण हमारी मुद्रा स्फिति की दर का अधिक होना है।

2. **आयात-निर्यात –** निर्यात के मुकाबले आयात अधिक होने की स्थिति में व्यापार घाटे में इजाफा होने से व निर्यात की रफ्तार कम होने पर रूपये के मूल्य में गिरावट आती है। भारत हर साल 8 लाख करोड़ रूपये से भी ज्यादा का पेट्रोलियम आयात करता है।

3. **विदेशी पूँजी निवेश –** यदि विदेशी पूँजी का प्रवाह चालू खाते के घाटे के अंतर को पूरा करने की स्थिति के अनुरूप नहीं होता है तो देश में अपर्याप्त विदेशी पूँजी प्रवाह के कारण रूपये के मूल्य में गिरावट होती है।

4. **शासकीय नीतियाँ व सुधार कार्यक्रम –** देश की सरकार का आर्थिक सुधारों के प्रति कैसा दृष्टिकोण है धीमा, मध्यम या तीव्र व देश की आन्तरिक परिस्थतियाँ राष्ट्रीय नीतियाँ निवेश लायक हैं या नहीं ये कारक भी रूपये की कीमत को प्रभावित करते हैं।

5. **औद्योगिक कम्पनियों का प्रदर्शन –** यदि देश की औद्योगिक कम्पनियों का प्रदर्शन अच्छा नहीं है तो विदेशी निवेशक शेयर बाजार में पैसा निवेश करने में पीछे रहेंगे परिणामस्वरूप डॉलर का प्रवाह अर्थव्यवस्था में नहीं होने से रूपये की कीमत में गिरावट आएगी।

6. **अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक/मौद्रिक नीतियाँ –** अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विशेष रूप से बड़े देश अमेरिका, फ्राँस, जर्मन व यूरोपीय देशों की आर्थिक /मौद्रिक नीतियाँ भी रूपये के मूल्य को प्रभावित करती है। हाल ही में जून 2013 में अमेरिकी फेडरल बैंक द्वारा की गई यह घोषणा कि आगामी समय में बैंक द्वारा अमेरिकी अर्थव्यवस्था के पट्टी पर आ जाने की स्थिति में, बाजार से हर माह 85 अरब डॉलर के बाण्ड खरीदना धीरे-धीरे बंद कर सकता है। इस घोषणा का प्रभाव यह होगा कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था में कम धनराशि आने से धन का मूल्य जो कि 'ब्याज दर' है बढ़ जाएगा परिणाम स्वरूप उच्च ब्याज दरों का आशय है कि इसका लाभ लेने के लिए ज्यादा से ज्यादा लोग अपनी वर्तमान करेंसी को डॉलर में परिवर्तित करने लगेगें। अतएव डॉलर की तुलना में अन्य करेंसी की कीमत गिरने लगती है। उच्च ब्याज दरों का आशय

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

होता है बाण्ड, स्टॉक की तुलना में अधिक आकर्षक हो जाते हैं और शेयर बाजारों से पैसा बाहर आने लगता है।

7. बढ़ती सट्टेबाजी – विगत समय में कमोडिटी (कच्चे तेल), सोना, मुद्रा व भूमि के भाव वास्तविकता से नहीं वरन् मानसिकता से तय होने लगे हैं अर्थात सट्टेबाजी या कयासबाजी ने विभिन्न वस्तुओं के भावों में भारी उतार–चढ़ाव व उठा पटक का वातावरण निर्मित कर दिया है।

8. भारत एक उभरता बाजार मात्र – विश्व के विकसित राष्ट्रों ने भारत को एक बाजार समझ लिया है, प्रत्येक राष्ट्र भारत में बाजार बढ़ाना चाहता है, जिसके कारण भारत 'आयात के दबाव में आ रहा है। हमारा आयात 60% है तो निर्यात इसके मुकाबले 40% ही है अत: नुकसान स्पष्ट है।

9. घटती विकास दर – विगत कुछ वर्षों से वैश्विक अर्थव्यवस्था में आई मंदी के परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर भी 5 प्रतिशत या उससे कम हो गई है जिसका दबाव रूपये पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है।

अवमूल्यन के नकारात्मक प्रभाव – भारत ढाँचागत रूप से एक आयातक देश है। रूपये का अवमूल्यन भारतीय अर्थव्यवस्था पर दोनों तरह के क्रमश: सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव डालता है। जब देश के निर्यात से आयात अधिक हो जाता है। देश की मुद्रा का अवमूल्यन प्रारंभ हो जाता है। क्योंकि विदेशों में भारतीय वस्तुओं की मांग कम हो जाती है। परिणामस्वरूप संबंधित देशों के द्वारा भुगतान हेतु डॉलर के एवज में रूपये की मांग में कमी आ जाती है। रूपये के मूल्य में गिरावट से निर्यातक कम्पनियों को लाभ होता है क्योंकि निर्यात बढने की स्थिति में रूपये की अधिक मांग विदेशी आयातको द्वारा की जाती है हमारी अर्थव्यवस्था के सामने उस समय दोहरी चुनौती होती है जबकि निर्यात में कमी आती है व दूसरी ओर पैट्रोलियम पदार्थों, सोने–चाँदी का आयात बढ़ता है जबकि विश्व स्तर पर इनकी कीमतें उच्च स्तर पर होती। इस प्रकार डॉलर की मांग निरंतर बढ़ती है क्योंकि आयात के बाबद भुगतान करना होता है। रूपये के मूल्य में गिरावट निम्न प्रकार अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है –

1. पैट्रोलियम पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि परिवहन लागत को बढ़ाकर निर्माण व अन्य लागतों में वृद्धि करती है। दूसरी ओर खाद्य तेल, खाद के मूल्यों में भी वृद्धि होती है। परिणाम स्वरूप 'मुद्रा स्फिति को बढ़ावा मिला है।
2. विदेशों के कच्चे माल पर निर्भर निर्माणी संस्थाओं को मंहगे कच्चे माल के कारण 'लाभों में कमी का सामना' करना पड़ता है।
3. विदेशी विश्वविद्यालयों में 'अध्ययन मंहगा' हो जाता है।
4. विदेश यात्रा मंहगी हो जाती है। डॉलर क्रय करने के लिए अधिक रूपयों की आवश्यकता होती है।
5. इलेक्ट्रॉनिक सामान कम्प्यूटर, टी.वी., मोबाईल फोन, वॉशिंग मशीन व फ्रीज मंहगे हो जाते हैं।
6. देश में अन्तर्राष्ट्रीय फूड चेन, विदेशी ब्रांड की इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की मांग में कमी।

अवमूल्यन के सकारात्मक प्रभाव–

1. विदेशी व्यापार के भुगतान सन्तुलन व भुगतान सन्तुलन की कठिनाइयों के निवारण में सहायक।
2. देशज उत्पादन वृद्धि एवं बेरोजगारी के समाधान में सहायक।
3. देशज उद्योग संवर्धन एवं विनियोगों के प्रत्यायवर्धन में सहायक।
4. देशज राजस्व संवर्धन में सहायक।
5. कालाबाजारी कम करने में सहायक।

मुद्रा के अवमूल्यन के समाधान के उपाय –

1. 'डॉलर के विक्रय' के द्वारा रूपये के मूल्य में होने वाली गिरावट को कम समय के लिए रोका जा सकता है किन्तु यह स्थायी हल नहीं है।
2. केन्द्रीय बैंक द्वारा 'नगद कोषानुपात में वृद्धि' करके या 'बाण्ड जारी करके' अर्थव्यवस्था में मुद्रा की तरलता को कम कर सकती है किन्तु इस उपाय से मुद्रा की कमी ब्याज दरों को बढ़ावा देगी व कम्पनियों के लाभों कमी होगी। जोकि आर्थिक वृद्धि के अनुकूल नहीं होगा यह उपाय भी अस्थायी है।
3. केन्द्रीय सरकार द्वारा 'डॉलर खाते वाली कम्पनियों' को देश में बड़ी मात्रा में डॉलर भेजने के लिए प्रोत्साहित किया जाए जिससे रूपये की मांग बढ़ने से उसके मूल्य में स्थिरता आएगी।
4. केन्द्रीय सरकार कम्पनियों को विदेशों से 'डॉलर में ऋण लेन' की प्रक्रिया को आसान कर सकती जिससे डॉलर को रूपये में परिवर्तित करने पर रूपये की मांग व मूल्य दोनों में सुधार होगा। इससे कम्पनियों को कार्यशील पूँजी की आवश्यकता पूरी करने में सहायता मिलेगी। यदि ऋण वापसी के समय रूपये के मूल्य में मजबूती आ जाती है तो कम्पनी को दोहरा फायदा होगा क्योंकि अब कम रूपये में डॉलर ले सकेगी।
5. केन्द्रीय सरकार अप्रवासी भारतीयों को आकर्षक ब्याज दरों के माध्यम से 'डॉलर जमाओं' (Debits) के प्रस्ताव दे सकती है।
6. केन्द्रीय सरकार द्वारा डॉलर में प्राप्त ऋणों की वापसी में विलम्ब करके या उनकी अवधि का पुनर्निर्धारण करके भी रूपये के मजबूत होने तक डॉलर के ऋण वापसी के भुगतान को टाला जा सकता है।
7. सरकार द्वारा 'सीमा शुल्क में वृद्धि करके' सोने के आयात को कम या प्रतिबंधित किया जा सकता है परिणास्वरूप चालू खाते के घाटे को कम करने में मदद मिलती है।
8. उदार आर्थिक नीतियों के अंतर्गत विदेशी निवेशकों को बीमा, उड्डयन, रिटेल अधोसंरचना व कृषि आधारित क्षेत्रों में विनियोजन के लिए आमंत्रित करके व सबसिडी में कटौती करके एक बेहतर उपाय किया जा सकता है जो कि दीर्घावधि के लिए उपयुक्त साबित होगा।
9. सरकार द्वारा त्वरित विदेशी मुद्रा (डॉलर) की दृष्टि से 'विदेशी संस्थागत निवेश' के अंतर्गत ऋणपत्रों की सीमा में वृद्धि करके भी अच्छे प्रयत्न किये जा सकते हैं जो कि त्वरित रूप से विदेशी मुद्रा के आगमन के लिए उपयुक्त रहेंगे।
10. सरकार द्वारा लम्बे समय से रूके हुए ऐसे घरेलु व अंतर्राष्ट्रीय 'आर्थिक एवं निवेश संबंधी सुधारों' को लागू किया जा सकता है जिनके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था उत्पादन व उत्पादकता में वृद्धि जो कि उत्पादों व सेवाओं की अन्तर्राष्ट्रीय मांग को समयोजित करने में सक्षम हो, इसके कारण मुद्रास्फिति में भी कमी होगी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को प्रोत्साहित करने से निवेशकों में विश्वास लौटेगा और सकल घरेलु उत्पाद में वृद्धि होगी।
11. 'निर्माण क्षेत्र की क्षमता बढ़ाने में निवेश' के द्वारा निर्माण क्षेत्र की मंदी को दूर करना चाहिए तथा 'सेवाओं' की गुणवत्ताा बेहतर करना चाहिए। इस प्रकार उपरोक्त उपायों को अपनाकर रुपये की गिरावट को प्रभावी ढंग से रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था के0पी0एस0 रूद्रदत्ता सुन्दरम
2. send money.com
3. hindustantimes.com
4. authorst.com
5. crackmba.com
6. indiatoday.in
7. भारतीय अर्थव्यवस्था विशेषांक, 2013, प्रतियोगिता दर्पण

पर्यावरण संरक्षण के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सार्थक है

डॉ. अभय कुमार मुंगी *

प्रस्तावना – आज सम्पूर्ण विश्व एक गाँव का रूप ले चुका है। चारों और व्यापार संवृद्धि व विज्ञान की बाते की जा रही है, जबकि भारतीय सिद्धांत पीपल की ही पूजा करो को सभवत: मखौल की दृष्टि से देखा जा रहा है। विचारणीय यह है कि अगर हम विकास चाहते है, व्यापार की वृद्धि चाहते है, व्यापार को राष्ट्र की दहलीज से निकालकर अन्तर्राष्ट्रीय दहलीज पर ले जाना चाहते हैं तो क्या पर्यावरण को अनदेखा कर हम ऐसा कर सकते है कदापि नहीं ? हम इस बात से सहमत होंगे कि पर्यावरण सरंक्षण के बिना व्यापार अत्यंत अल्प जीवी होंगा। क्योकि पर्यावरण के बढते खतरे हमारे व्यापार के बढते स्वरूप को अवरूद्ध कर देंगे सुनामी, कैटरीना , रीटा, डेमरे, स्टेन, हुद हुद, हमारी इन बातो को पुरजोर रूप से सिध्द कर रही है। विश्व के अस्तित्व हेतु पर्यावरण संरक्षण को अनदेखा करना मानवीय अस्तीत्व के लिये घातक है और जब मानव का अस्तित्व ही खतरे में होगा तो हम व्यापार किससे और किसके लिये करेंगे जबकि व्यापार की आवश्यक शर्त दो पक्षो का होना है। यहां तो हम अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की बात कर रहे हैं । हाँ यह बात आपस में बैठकर तय की जा सकती है पर्यावरण संरक्षण और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास में संतुलन किस प्रकार बिठाया जाए और इसमें विकसीत देशो की भागीदारी कितनी हो और अल्प विकसीत व अविकसीत राष्ट्र कितना सहयोग करे। आवश्यक तो दोनों है। अर्थात बेहतर पर्यावरण व विकसीत व्यापार दोनों ही आवश्यक है।

अत: प्रदुषण कम हो ऐसी तकनीकों का विकास तथा औघोगिक संरचना में प्रदुषण नियंत्रण संबधि ऐसे उपाय हो कि जिसमें हम व्यापार को अंतर्राष्ट्रीय और वैज्ञानिक विकास की और ले जाए परंतु स्वस्थ मानव समाज हेतु पर्यावरण भी अनुकुल बना रहे। इसीलिये उपरोक्त विषय में हमने चिन्हीत किया है कि मानवीय अस्तित्व का संरक्षण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हेतु आवश्यक है। पर्यावरण प्रदुषण के खतरे कितने भयानक हो चुके है। और समस्याऐं कितनी आगे बढ चूकि है और विकास के इस दौर में हम उनके प्रति कितने सजग है। यह रचना प्रकाशित एक लेख से सिध्द होती है जिससे उन्होने कहां है कि पर्यावरण प्रदुषण भयावहता की तुलना में हमारे प्रयास ऊँट के मुंह में जिरे की भांति है। ग्रीन हाउस प्रभाव औजोन परत का क्षीण होना तथा जलवायु में परितर्वन के साथ साथ वायु भूमि जल और सौर प्रदुषण से जनीत समस्याओ के बारे में हम आये दिन सुनते रहते है और पढ़ते रहते है परंतु इसके हल हेतु प्रभावी उपाय नहीं किये जा रहे है। यहां तक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सवाल है उपर्युक्त खतरे की इस व्यापार के विकास द्वारा घट रहे है अथवा बढ़ रहे है। अधिक विचारणीय है क्योंकि ऊपर उठती भवन की नींव कहीं दरक तो नहीं रही है इसका ध्यान रखा जाना अत्यंत आवश्यक है ।

इनमें औघोगिक प्रदुषण निश्चित ही अन्तर्राष्ट्रीय विकास की एक आवश्यक बुराई है। क्योंकि उद्योग से निकलने वाला अपशिष्ठ पदार्थ अनेक बिमारियाँ पैदा करता है। और मानव द्वारा दूसरे जीवों का अस्तित्व इससे खतरे में पढ़ जाता है।

इसी प्रकार विकास के फलस्वरूप गंदी बस्तियों एवं झोपड पट्टियों का प्रसार तेजी से होता है। साथ ही रासायनिक अवयवो के कारण अनेक नई नई बिमारियो जन्म लेती है। प्रकृति का क्रूर दोहन मानव अपने लालच के कारण इस सीमा तक करता है। कि जैसे कोई शराबी मदहोश होकर अपने ही घर को आग लगाा रहा है। और रासायनिक पदार्थो के उपयोग के कारण भूमि की उर्वराशक्ति भी नष्ट हो रही है तथा जल जीवन दायनी होने के बजाय जहरीला हो रहा है तो वायु भी अनेक समस्याए पैदा कर रही है। जंगलो के बढते विनाश ने वर्षा को कितना अनियमित अव्यवस्थित कर दिया है यह हम पिछले दिनों व्यापारिक महानगरीय मुंबई के साथ ही गुजरात आंध्रप्रदेश काश्मीर,बिहार, उड़ीसा आदि में देखनो को मिल ही चुका है। आशय है कि हम लाशो के अंबार पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास की बाते करेंगे। यह कितना विचारणीय है।

दुनिया सीना फुलाकर विकास की राह पर दौड रही है। परंतु पर्यावरण घायल हो रहा है। इससे नुकसान पहुँचाने में हम सब शामिल है इसका माध्यम अंतर्राष्ट्रीय व्यापार भी है। चाहे वह पौलेथीन हो या गाडियों का उडता धुंआ या म्युजिक सिस्टम की तेज आवाज हमारी हवा शुध्द नहीं है हमारा पानी पवित्र नहीं रहा और हमारी धरती प्रदुषित हो गई है आश्चर्यजनक तो यह है कि महामारियो को गंभीरता से लेते परन्तु इसके कारण बढ़ते प्रदूषण को नहीं । हमारे मुगालतों ने हमारी रूह को भी प्रदूषित कर दिया है, और अगर हम अब भी नहीं जागे तो विनाश की और बढ रही पृथ्वी को बचाना मुश्किल हो जाएगा।

2. वैश्वीकरण के दौर में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार – अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से आशय उस व्यापार से जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक राष्ट्रो के बीच वस्तुओं एवं सेवाओं का अदान–प्रदान किया जाता है। वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार लगभग सभी देशों के लिए आवश्यक हो गया है। तकनीक विकास और वैज्ञानिक अविष्कारो के कारण विशिष्टीकरण बढ़ रहा है और हर राष्ट्र उन्हीं वस्तुओ का उत्पादन कर रहा है जिन्हें वह कम लागत पर सर्वाधिक कुशलता के साथ तैयार कर सकता है। अर्थात इसे अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु निर्यात करना होगाा तथा आवश्यक वस्तुओ का आयात भी करना होगा।

एल्सवर्थ का यहाँ तक कहना है कि 'बहुत से देशो के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार जीवन–मत्यु का प्रश्न बन गया है।' अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की महत्ता निम्न बिन्दुओ से भी प्रकट होती है।

1. श्रम विभाजन और विशिष्टिकरण के लाभ ।
2. कम कीमत पर अनेक वस्तुओ की उपलब्धता ।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

3. प्राकृतिक साधनो का समुचित उपयोग।
4. राष्ट्रो का आर्थिक एवं औद्यौगिक विकास।
5. रोजगार में वृद्धि।
6. सभ्यता का विकास।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के उपयुक्त लाभो के साथ ही अनेक नुकसान भी है, जिनका उल्लेख हम यहॉ नहीं कर रहे है क्योंकि वैश्विक विकास के इस दौर में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से बच पाना असंभव है। यह अपने आप को कुँए का मेंढक सिद्ध करना है।

अर्थात अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार तो आज का यथार्थ है, आवश्यकता केवल इस बात की है कि व्यापार के विकास के साथ-साथ स्वयं के अस्तित्व के बारे में भी सोंचे और अस्तित्व का मूल आधर कहीं न कहीं पर्यावरण से जुड़ा हुआ है। अत: पर्यावरण संरक्षरण की शर्त के साथ ही व्यापार के विकास की बातें होनी चाहिए।

3. पर्यावरण संरक्षण –

1. मानव अस्तित्व एवं पर्यावरण संरक्षण – देश में पिछले 5 वर्षो में 25000 हजार से अधिक किसानो ने आत्म हत्या की इस देश का धरती पुत्र आत्म हत्या के लिए क्यों मजबूर हुआ, क्योंकि प्रथम एवं द्वितिय विश्व युद्ध के दौरान तबाही के लिए उपयुक्त प्रयुक्त रासायनो का प्रयोग अब खेती में प्रयोग हो रहे कीटनाशकों में भी हो रहा है। 25 वर्ष पहले हुई भोपाल गैस त्रासदी का भयावह यथार्थ आज भी हम भूल नहीं पा रहे है कीटनाशकों के प्रयोग से फसल हेतु लाभदायी जीव मकड़ी,केचुआँ आदि मर जाते है। जबकि नुकसान पहुचाने वाले कीटो की संख्या में वृद्धि देखने को आई है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षरण के साथ मानव अस्तित्व किस प्रकार जुडा है। यह प्रसिद्ध पर्यावरण कर्मी वंदना शिवा के इस लेख से स्पष्ट है जिसमें उन्होंने बताया है की इंदिरा जी की हत्या, भोपाल गैस त्रासदी, हरित क्रांति, आपस में जुडे हुए है। हरित क्रांति में कीटनाशको के प्रयोग से धरती का संतुलन बिगडा है, महंगी रासायनिक खेती के लिए विश्व बैंक से लोन सब्सीडी आदि देकर उन्हें कर्जदार बना दिया है। उधर धरती जहरीली हो चुकी थी,इससे किसानो की आाय पर विपरित प्रभाव पडा है और कर्ज का बोझ बढ़ने लगा है। दूसरी ओर मिट्टी खत्म होने लगी,पानी घटने लगाा फलत: किसान आर्थिक तौर पर कमजोर और बर्बाद हो गये और इनके कारण मजबुरी में नौजवानो ने बन्दुके उठा ली और आतंकवाद पनप उठा।

विकास के नाम पर 3500 एकड़ वाला बड़ा किसान खेत में मेंकडोनाल्ड खोल रहा है। खेतो में जुआघर खुल रहे हैं। संविदा खेती को बढावा मिल रहा हैं तो कहीं खेत में परिणय संस्कार हो रहे हैं इससे छोटी जोते खत्म हो रही हैं अत: आय के साधनों की समाप्ति से किसान आत्महत्या को मजबूर हो रहे हैं।

पर्यावरण का सेहत कैसी हैं यह देखने की किसी को फुर्सत ही नहीं हैं जबकि उसे सर्वाधिक महत्व दिया जाकर ही विकास की अवधारणा सामने लायी जाना चाहिए।

2. व्यापार विकास हेतु उसकी आवश्यकता – व्यापार का विकास ग्राहकों की मांग करता हैं और ग्राहक मनुष्य होते है और मनुष्य का विकास तथा उसका अस्तित्व पर्यावरण से जुड़ा अत: स्वत: सिद्ध हैं कि अगर हम चाहते हैं कि व्यापार का विकास हो, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिक व्यापार हो तो यह अत्यंत आवश्यक होगा कि पर्यावरण संतुलन को बनाऐ रखकर ही कोई कदम उठाया जाऐ अन्यथा पर्यावरण प्रदुषण के कारण व्यापार विकास की संभावना पर कालिख पुत जाएगी।

3. निष्कर्ष एवं सुझाव – वर्तमान में मानव ने स्वयं के विकास हेतु प्रकृति का क्रूर विदोहन किया यह बात स्वामी रामदेव के इस कथन से भी स्पष्ट होती हैं जिसमें उन्होंने बताया हैं कि 'सृष्टि की उत्पत्ति 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख 53 हजार 105 वर्ष पूर्व हुई थी इतने लम्बे समय में प्रकृति का विदोहन हुआ उसके बराबर दोहन तो हमने मात्र 39 वर्षो में कर लिया हैं इससे पूरी दुनिया के प्रकृति प्रेमी और वैज्ञानिक असंमजस में हैं कि इस अनियंत्रण को कैसे संभाला जाऐ क्योंकि यदि ऐसा ही चलता रहा तो महा भयंकर प्रलय को कोई रोक नही सकेगा और तब हमारे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास की बाते कौन करेगा, कहा करेगा ?

अत: आवश्यकता इस बात कि हैं कि व्यापार विकास के साथ ही पर्यावरण संरक्षण को अनिवार्यत: जोड़ा जाऐ इस हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत हैं।

1. पर्यावरणीय लागतों को आर्थिक योजनाओं में स्थान दिया जाए।
2. औद्योगिक विकास के साथ वन संरक्षण का भी ध्यान रखा जाए ।
3. कल कारखानों में भी प्रदूषण मुक्त संयंत्र लगाना आवश्यक किया जाए।
4. प्रकृति का दोहन आवश्यकताओं से अधिक न हो।
5. निर्माण में पर्यावरण संरक्षण एक आवश्यक तत्व हैं ,क्योंकि पर्यावरण एवं मानव जीवन आपस में जुड़े हुए हैं और मानव व्यापार का एक आवश्यक अंग हैं।
6. जैव विविधता हेतु जैविक खेती को प्रोत्साहन दिया जाए।
7. शहरी विकास के साथ जल जरुरतों को व उसके सदुपयोग की बात को भी नियोजन से जोड़ा जाए।
8. औद्योगिक एवं कृषि विकास विरोधी न होकर उनको एक दूसरे के पूरक के रुप में देखा जाए।
9. जनसंख्या नियंत्रण , सामाजिक विकास एवं समानता का भी ध्यान रखा जाए।

उपरोक्तानुसार सुझाव के क्रियान्वयन द्वारा हम अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विकास को न केवल मजबुती एवं प्रसार का अवसर प्रदान करेंगे बल्कि वह अधिक सार्थक और शुभ भी होगा यही कारण हैं कि हमारे प्राचीन मनीषियों ने व्यापार के प्रारंभ के समय लाभ –शुभ दोनों को जोड़ा हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यापार पर्यावरण – डा. एस. के सिंह
2. अर्थशास्त्र – अनुपम गोयल
3. पर्यावरण चेतना –साहित्य ग्रंथ अकादमी
4. मानव विकास रिपोर्ट 2008,2013
5. वर्ल्ड डेव्लपमेंट रिपोर्ट 2013
6. भारत 2014
7. अन्य पत्र –पत्रिकाएँ –
   1. नईदुनिया
   2. दैनिक भास्कर
   3. नवभारत टाईम्स
   4. बैंकिग अनुचिंतन
   5. इकानोमिक्स टाइम्स
   6. विभिन्न इन्टरनेट साईट

****

Brick Kiln Migrant Labourers In Informal Sector : Socio-Economic Issues

Dr. Avinash Shendre *

Introduction - In recent years there has been a growing awareness of the existence, importance of the needs of the unorganized sector. The unorganized sector according to Subrahmanya R.K.A. and Jhabwala R. (2000) refers to no clear-cut employer-employee relationships and lacks most form of social protection. On the other hand, organized sector workers are distinguished by relatively regular salaries, jobs with well-defined terms and conditions of employment, clear-cut rights and obligations and fairly comprehensive social security protection.

The unorganized sector workers and producers include agriculture labourers, small and marginal farmers, forest workers, fisher folk, bidi rollers, garment stichers, construction workers, rag-pickers – people involved in an innumerable variety of tasks and employment. Having no fixed employer, these workers are casual, migrant, home-based, own-account workers who earn a living from whatever meagre assets and skills they possess.

Since the concept of unorganized sector that deals with communities or individuals that do not have permanent and secured income, jobs and means of production as well the required professional livelihood skills. The subject has hence been studied in detail mostly by economists such Kannan K.P. (2004), Dreze and Sen A. (1991), Subrahmanya and Jhabvala (2000), In India studies on unorganized sectors, social insecurity and development issues of the labourers become significant as most of them are migrants, landless nomadic, Scheduled Caste and Tribe category and of course socially, economically, educationally and politically less empowered.

Types of Occupation in Informal Sector - In his book captioned, 'Down and Out' (2000), Breman Jan has studied workers working in Informal compartments of the urban and rural economy in the Southern Parts of Gujarat. Some of the the occupations he mentioned are : construction industry, brick making, stone quarry work, salt pans, sugarcane cutting, basket weaving, cobblers, craftesman, food vendors, road building, cart-pulling, headload carrying, rag picking and scavenging, powerlooms,, embroidery and zari workers, diamond cutting and polishing, dredge and scoop up of pans of sand for construction industry.

Table 1.1
Types of Labourers in Informal Sector

Sr. No	Types of Labourers
1.	Stone Quarry Workers
2.	Construction Workers
3.	Sand Workers
4.	Salt Pan Workers
5.	Vineyard Workers
6.	Restaurant Workers
7.	Scrap Workers
8.	Daily Wage Labourers etc

The Plight of Brick-Kiln Labourers - In their book captioned, "Child Labour and Rights Issues" (2014;6) Tribhuwan Robin and Kharche Jayshree have taken review of brick kiln labourers. Some facts from the same book are given below: According to the All India Brick Kilns and Tile Manufacturers' Federation, there are around 50,000 brick kilns in India. Taking a conservative estimate of five members per family, a staggering figure of 25 million is obtained as those dependent on brick sector for their livelihood, a third of which are likely to be children. (Panjiar Smita, 2007:33). Tribhuwan Robin (2004) has stated that, out of the 45 tribes in Maharashtra Katkari is the poorest, backward and most needy tribe in the State. Despite of 63 years of independence the members of this tribe are below the poverty line, landless, jobless, victims of poverty, debt, food crisis and social stigma. The rate of illiteracy is very high among the Katkaris and so among women. The bench mark survey conducted by the TRTI (2001) states that the illiteracy of Katkaris in Maharashtra T.S.P area is 83.62, with 89 % among males and 78.30 % among females. Tomar YPS and Tribhuwan Robin (2004) in their book captioned 'Development of Primitive Tribes in Maharashtra' have shown that the illiteracy percentage of Katkaris studied in two villages was 97.13%, with 91.66% among males and 90 % among females.Tribhuwan Robin (2010) in his report captioned, 'Human Development Indicators among Scheduled Tribes of Maharashtra' has stated the illiteracy percentage of Katkaris as 83.62%.

Given above is just a brief socio- economic and educational profile of the Katkaris, but the fact remains that despite of their hardship and insecurity they are forced to become victims of economic exploitation at the hands of scruples brick kiln owners.

Review of Literature - Migration - Migration is a process

* **H.O.D (Economics) Pragati College of Arts and Commerce, Dombivli East., Distt. Thane (Maharashtra) INDIA**

through which people move from one place of residence to another. The change in residence results in redistribution of population, both at its origin and at the destination. People migrate on account of economic, social, political, marital, educational and religious reasons. An integral feature of demographic transformation is migration. The process of migration changes the size and structure of population. It affects both the places of origin and destination, of migrants. Migratory movements are considered as physical events shaped by environmental forces. Migratory movements are caused due to pressure on land because of rapid growth of population, decline in the rural industries and handicrafts, lack of employment and livelihood etc. Thus, migration is one of the dynamic constituents of population change and a vital component of development. (Tripathy S.N, 2005:24)

While expressing his views on the unorganized sector, Breman Jan, (1996:3), suggested that, the informal sector also called the unorganized sector, is a part of urban economy; secondly, it lacks clarity concerning its size and dynamics and finally the assumption that self-employment is a principal mode of employment. Breman has used the term 'Informal Sector' for unorganized sector.He further points out (1996:6) that the informal sector is meant to function as a waiting room for unskilled rural workers who manage to migrate to urban destination. After a period of adjustment and skillful formation this first generation of workers then somehow find their way upwards to the formal sector.

Characteristics of unorganized labour -

- There is no authentic data on unorganized workers.
- The unorganized sector suffers from cycles of excessive season ability of employment.
- Majority of the rural workers do not have stable and durable avenues of employment.
- The workplace is scattered and fragmented.
- There is no formal employer-employee relationship between small and marginal farmers, sharecroppers and agricultural labourers.
- In rural areas, society is highly stratified in as much as the sociological factor based on caste and community considerations is based on structure of relationship and functioning in that society. In urban areas while such considerations are much less, it cannot be said that they are altogether absent as bulk of the unorganized workers in urban areas are basically nothing but migrant workers from rural area.
- Agricultural labourers and sharecroppers, who are mostly landless and belong to Scheduled Caste and Scheduled Tribe communities. They are heavily dependent on the landlords and moneylenders for everything.
- Workers in the unorganized sector are usually surrounded by a lot of fads, taboos and outmoded social customs like child marriage, excessive spending on ceremonial festivities etc. which lead to indebtedness and bondage.
- The exploitation of a large section of unorganized workers, particularly, those, belonging to Scheduled Caste and Scheduled Tribe, can be attributed to the existence of malfunction and dysfunctional middlemen.
- Primitive production technologies and feudal production relations, which are rampant in the unorganized sector, do not permit or encourage the workmen to imbibe and assimilate higher technologies and better production relations.

ii) The I-UNDP Employment Mission to Kenya (1972) identified the main characteristics of the informal sector which are as follows:-

- Ease of entry
- Reliance on indigenous resources
- Family ownership of enterprises
- Small scale operation
- Labour intensive and adapted technology
- Skills acquired outside the formal school system
- Unregulated and competitive markets.

iii) Social Security experts on unorganized sector

- The unorganized sector has no clear-cut employer-employee relationships and lacks most forms of social protection.
- The unorganized sector is not a homogeneous category.
- Women particularly are confined to unorganized sector employment, with 96% of all female workers being in this sector.
- In unorganized sector there is difficulty in identifying the employer.
- In unorganized sector employment relations vary considerably, and are in any case very different from those of the organized sector.

Primary Education for Migrant Child Labourers - Landless tribal labourers come to a point of starvation during the period between November and March. Apart from construction, salt pans, stone quarries, vineyards, and one of the major source of employment fro tem are brick kiln sites, that come up in the areas of Wada, Dahanu, Vasai, Bhiwandi, Ulhasnagar and Thane.

Because the entire family migrates, child labour is an industry. Although the work is similar to that of the construction industry brick kiln does not fall under the category of hazardous industries abolition of child labour (Prevention and Regulation) Act, 1986.

In 1995, Vidhayak Sansad and Shramjeevi Sanghatana (NGOs) decided to flight against the injustice done to the children of brick kiln labourers. They opened a school for five hundred children of brick kiln labourers called, 'Bhonga Shala'. By the year 1998- 1999 the number of Bhonga Shalas rose upto 2,500. Both Vivek and Vidyulata Pandit are known for their work on migrant labourers' children, and their campaign for Right to Primary Education (Barhens John, quoted from the website vidhayak sansad.org/campaign_for _edu.htm.

Hypothesis - Based on the pilot study & review of literature following hypothesis were formulated.

1) Poverty, unemployment, landless status, indebtedness, poor housing and socio-economic insecurity forces the brick kiln labourers to their place of destination.

2) Poor socio-economic conditions of the parents working at the brick kilns hooks their children into child labour and ultimately deprives them of their rights to education, recreation, health and nutrition.

Objectives of the Study - Keeping inview the above background following objectives were formed.

1) To study the socio-economic background and living conditions of the brick kiln labourers in Wada block.
2) To explore the process and patterns of seasonal migration among them.
3) To study the impact of forced migration on the rights of their children.
4) To assess the impact of socio-economic and environmental conditions on the brick kiln labourers.
5) To suggest a plan of action for their welfare and development.

Methodology - The methodology for the present study is as below.

Locale of Study - The present study was carried out in Wada block of Thane district in the State of Maharashtra, India.The data was selected from 7 villages of Wada block namely Ganjare, Harsolu, Abitghar, Kachghar, Balighar, Tirsa and Sonara respectively. The researcher has selected 50 % of the brick kilns prevalent in the block, after obtaining the list of the brick kiln owners registered with the Tahasildar of Wada block.

Target Population - The target population of the study will be brick kiln labourers belonging to scheduled tribe and castes, including the Other Backward Classes. The researcher has selected 250 respondents randomly living at brick kilns.

Method of Data Collection - Both primary and secondary data was collected on the brick kiln labourers

Table no. 2.1 reveals caste/tribe wise number of schedules administered, to gather data from the brick kiln workers.

Table no. 2.1

Caste / tribe-wise number of schedules administered

S. No.	Caste/Tribe	No. of Schedules
1	Katkari	150
2	Koli Dhor	50
3	Dhodia	20
4	Dubla	10
5	Warlis	10
6	Mahar	10
	Total	**250**

Table no. 2.2 : Villages Selected for the Study

Sr. No.	Villages
1.	Ganjare
2.	Harsolu
3.	Abitghar
4.	Kachghar
5.	Balighar
6.	Tirsa
7.	Sonara

Research Tools - Following research tools were designed, pre-tested and finalized before carrying out actual data collection.

- Interview Schedule – an interview schedule was designed to gather data from 250 respondents – the brick kiln labourers
- Interview Guide – an interview guide was used to gather relevant data from the brick kiln owners.
- Observation – Observation method was also used to documment relevant facts and cross check data collected by administering interview schedule and interview guide.
- Case Study method – case study method is used present relevant and unique facts and concepts that will crop up from the study.
- Photography – Photographic documentation is also done to support the data of the study.

Anaysis -Quantitative data was analysed using excel software. During data processing, the researcher verifed the data gathered by the investigators, tabulated and interpreted the same after analysing it. Qualitative data was analysed manually.

Sampling Method - Simple random sampling method will be applied to select the brick kilns and the labourers.

Findings - The summary of findings is as below :

1) Migration Season - All the respondents stated that they migrate to the brick kilns for a period of 6-8 months beginning from beginning form October to May. They go back to their native villages in May and are there form June to September. They work as agriculture / daily wage labourers for non-tribal farmers, because during this time the brick kilns are closed, due to rains.

2) Pull and Push Factors - Tribhuwan Robin and Kharche Jayshree (2014) in their conceptual model, namely "child labour and rights model" have revealed that the Katkari brick kiln labourers and Bhil Sugar Cane culters are pushed to their places of work sites due to following factors.

a) Push Factors

- Poverty
- Landless or marginal farmer's status
- Economic, Food and Debt Crisis
- Indebtedness
- Unemployment
- Temporary and poor housing
- Unskilled Labour
- Illiteracy
- Social and Economic insecurity
- Absence of economic assets

b) Pull Factors

Factors that pull them to their places of destiny are :

- Kharchi (weekly expenses)
- Uchal (Loan)
- Labour guarantee

Dr. Tribhuwan and Dr. Kharche's model has been tested by Shri Sadashiv Shende, among the salt pan workers and ship scrap company labourers in Gujarat. Our research to support the model of the above mentioned authors. Their model very aptly points out the causes of migration among

the labourers in unorganized sector.

3) Communities at Brick Kiln Sites - It was observed that majority of labourers working at the brick kilns are Katkaris, Koli Dhor, Mahars and other landless communities, in Wada block.

4) Sex wise number of respondents - 92% of the respondents interviewed were males, while 8% were females.

5) Marital Status - The study revealed that 88% of the respondents were married, 4% were single, 6% were widows, and 2% were widowers.

6) Age Range - 79% of the respondents were between the age range 16 to 40, while 21% were between 41 to 60 years of age. Young adult labourers at the brick kilns form majority of the work force.

7) Educational Status - The data revealed that 80% of the brick kiln workers were illiterate;while 7% studied up to primary; 8% up to high school; 3% up to higher secondary and only 2% were under graduates. Illiteracy as a push factor certainly pushes them to the brick kilns.

8) Family Size - 78% of the respondents had a family size up to 4 members; 11% up to 5 to 6; 8.4% up to 7-8; and 2.4% above 8.

9) Mode of Transportation - The respondents stated that they migrate to the sites with their families by tractors, trucks, bullock cart, bus, train, tempo and at time by walking to the destination.

10) Status of employment at the place of Origin - 100% of the respondents stated that they are unemployed at their place of origin.

11) Type of labourers - 99.2% of the labourers were unskilled, while 0.8% were masons and carpenters.

12) Land Holding - 75% of the brick kiln workers studied were landless, while only 25% were marginal land holders. The Warlis and the Mahars had small land holding.

13) Housing Status - 90% of the respondents lived in huts with thatched roofs and stick/bamboo/brick walls.

14) Electricity - 52% said that there is no source of electricity in their places of origin, while 48% did have electricity.

15) Drainage Facility - 100% said that there was no drainage facility at their place of origin.

16) Drinking Water Source at Brick Kilns - Sources such as wells, taps, streams, bore well, potholes near the streams well the sources of drinking water at the brick kiln sites.

17) Bonded Laboureres - It was observed the 86% of the respondents studied were bonded laboureres.

18) Loan Borrowing - 86% of the brick kiln labourers borrowed money from owners, middle men, contractors and money lenders.

19) Toilet and Bathroom facilities at Brick Kiln Sites - All the respondents revelaed that there were no bathroom and toilet facilities at the brick kilns.

20) Annual Income -% of the brick kiln laboureres interviewed reported that their annual income was below Rs.20,000/-. This amount was after deducting their loan, its interest per month and the weekly expenses they received for the brick kiln owners. 5% of the respondents stated their annual income was between Rs.20,000/- to Rs.40,000/- to Rs.60,000/- and 1% stated it was between Rs.60,000/- to Rs.80,000/-.

21) Possession of Live Stock - 70% of the respondents studied did not possess live stock, while 30% did.

22) Minor Forest Produce - 90% of the respondents collected minor forest produce such as leaves, fuel wood, grass, fruits, Mauha flowers, corms, medicinal herbs, gum, etc. from the forest; while 10% did not.

23) Number of Working Hours - Since the survival of the brick kiln labourers depend a lot on the number of bricks produced by them daily, weekly and monthly to achieve the target given to them by their owners. They are forced to work for 10 to 12 hours a day and even more.

Tribhuwan Robin and Kharche Jayshree (2014) have revealed that both the school going as well as dropout children are forced into child labour so as to help their parents in achieving the required target. Achievement of target is directly proportional to the survival of the brick kiln labourers.

24) Schooling Status of Children - The study revealed that 43% of the children went to Anganwadi and Zilla Parishad Schools including Ashram Schools run by the Tribal Development Department. 50% were non-school going children and 7% were dropouts. As mentioned earlier, both school-going and the non-school going children were involved in supporting their parents to achieve brick targets.

25) Child Rights Deprivation - Since the parents were poor, helpless, illiterate, jobless, landless and socially and economically in-secured, they were pushed to the brick kiln sites. The innocent children too were forced to migrate with their parents and hooked into household and child labour. In return they were deprived of their rights to education, health, nutrition and so on.

The overall impression as reflected through quantitative and qualitative data is that the lives of the brick kiln laboureres is governed and controlled by the brick kiln owners (the capitalists) because they are poor, landless, jobless, helpless and socio-economically backward.

References :-

1. Bremen Jan,1996, Foot loose labour, Cambridge university Press, Cambridge.
2. Tribhuwan Robin & Kharche Jayshree,2014,Child labour & Rights Issues, Discovery Publishing House,New Delhi.
3. Bremen Jan & Das Arvind, 2000,Down & Out, Labouring under global capitalism,Oxford University Press,New Delhi.
4. Jhabavala & subramanya R, 2000,The Unorganised Sector, Sage Publications , New Delhi.
5. Tripathy S N, 2006,Dynamics of Migration, Sonali Publication,
6. New Delhi.
7. Tomar Y P S 7 Tribhuwan Robin, 2004, Development of Primitive Tribes in Maharashtra, TRTI, Pune.
8. Panjiar Smita, 2007, Locked Homes , Empty Schools, Zuban, New Delhi.

Non - Possession and Development : Linkage

Dr. Shiv Prakash Panwar * Prof. Gyanchand Khimesara **

Introduction - The Doctrine of Non-possession - The driving force of human action is the force of self-interest manifesting itself in the pursuit of pleasure or the release of uneasiness. Everybody is always moved in action, solely by desire for his own happiness or pleasure and therefore **John Locke** concluded, "Things are good or evil only in relation to pleasure or pain. That we call 'good' which is apt to cause or increase pleasure, or diminish pain in us". (1) There is natural impulse in man to seek material goods to fulfill his basic needs for the preservation of the body. The contact with the worldly objects creates in man the sensations of pleasure and pain. Now the self-interest drives man to seek pleasure and avoid pain. There is a psychological dimension of pleasure also in addition to that of the sensual. The separation from the infinite created a void within man which he is forever trying to fill up by making constant efforts for expanding the finite self by possessing more and more. The 'I' lives in a constant fear of annihilation and so there is a natural tendency in man to be acquisitive, protective and therefore competitive. Man gets pleasure not only in acquiring more and more but also in acquiring more than others. Self-interest in this way through the mechanism of sensual and psychological pleasure, becomes the prime driving force for human action.

The philosophical roots of the principal of non-possession are to be found in the Ishvasya Mantra, the first verse of the **Ishopanishad**; "All that there is in this universe, great or small, including the tiniest atom is pervaded by God, known as creator or Lord. Isha means the ruler and he who is the creator naturally by very right become the Ruler too …… Thus he (the seer) says, 'Renounce everything, i.e, everything that is on this universe, and not only on this tiny globe of ours, renounce it. He asks us to renounce as we are such insignificant atoms that if we had any idea of possession it would seem ludicrous and then says the Rishi, reward of the renunciation is Bhunjitha, i.e., enjoyment of all you need. But there is a meaning in the word translated 'enjoy', which may as well be translated as 'use', 'eat' etc it means that, as you may not take more than is necessary for your growth. Hence this enjoyment or use is limited by two conditions. One is the act of renunciation.

That act the right of eating, drinking, clothing and housing himself to the extent necessary for his daily life. Therefore, take it as you like, either in the sense that the enjoyment or use is the reward of renunciation, or that the renunciation is essential for our existence, for our soul and as if that condition given in the mantra was incomplete, the Rishi hastened to complete it by adding, "Do not covet what belongs to another". (2)

In contrast to mechanism of sensual and psychological pleasure, **Gandhi** take 'self annihilation' or 'reducing the self to zero' to be the basic driving force for human behavior. Here Gandhian viewpoint stands in sharp contrast to modern economics which looks for a solution to the economic problems within the existing frame work of economics instead of looking at the meta-economic factors or exploring its basic philosophical foundations. For **Gandhi**, voluntary restriction of wants is not a negative activity; it is a positive expression of love for fellow-beings arising out of the holistic vision. In adherence to the law of love, possession should never go beyond what the others are able to possess. "Love and exclusive possession can never go together. Theoretically, when there is perfect love, there must be perfect non-possession"(3) For him, "This principal (non-possession) is really a part of non-stealing. Just as one must not receive so much one not possess anything to which one does not really need. It would be a breach of this principal to possess unnecessary food-stuffs, clothing or furniture. For instance, one must not keep a chair if one can do without it. In observing this principal, one is led to a progressive simplification of life.(4) "Simplification or the principal of non-possession does not at all mean that human labour, talents and capabilities are to be underutilized or wasted in any way. They are to be exercised to the maximum extent, in the right direction. As far as wealth is concerned, after keeping minimum for the needs, the rest is to be used for social welfare. Similarly, if there is extra wealth in one's possession one will act as a trustee of the same and use it in the best interest of the society.

In "**Hind Swaraj" Gandhi** says, "Mind is a restless bird; the more it gets, the more it wants and still remains unsatisfied. The more we indulge in our passions the more unbridled they become". (5) The tendency to accumulate and multiply wants is aggravated by comparison, demonstration, propaganda and advertisements in modern acquisitive societies. Multiplicity of wants beyond a certain limit creates negative feelings like anxiety, fear, envy and frustration. The economic crisis today encircles the social, political,

* Prof. (Economics) Government Post Graduate College, Mandsaur (M.P.) INDIA
** Principal, Government Post Graduate College, Mandsaur (M.P.) INDIA

psychological and ecological life of man. Modern economic system faces the problem of scarcity of resources in relation to the multiplicity of wants. The problem of relative scarcity of world resources confronts us today with all its severity and seriousness. Relentless exploitation of nature as a result of the fragmentary approach has led to the problems of depletion of resources, ecology and pollution. The holistic paradigm takes nature to be a part of the holistic plan and therefore holds nature in reverence. **Gandhi** is convinced that this world had enough for everybody's needs but not enough even for one man's greed.

The motive force behind the '**acquisitive society' (R.H.Tawney)** is the propensity to accumulate wealth composed of goods for current consumption and goods for future consumption. On the positive side, this society has set impressive records in the expansion of productive capacity, advances in technology, exploitation of resources, affluence and abundance of goods and services. On the negative side, the same society has also generated severe strains and stress on life and powerful tendencies towards the degradation of the total environment- social, economic, ecological, political and last but not least moral. The doctrine of non-possession is both a challenge and a response to the 'acquisitive society'. It is a challenge because it proposes a radical transformation of society through the transformation of the individual. It is a response because it suggests a way to fill one of the most serious gaps in modern society-the moral gap, the widening gap between moral progress and technological and other material measures of progress.

It was **Ruskin's "Unto This Last"** that brought about an instantaneous and practical transformation in Gandhi's life, enabling him to involve the concept of sarvodaya (welfare of all). Ruskin vehemently attacked an economic system based on competition, profiteering and accumulation leading to the exploitation and oppression of man. He passionately spoke against the inhuman economic principles leading to the erosion of human life and values and demanded restructuring of economic and social life in which even the last man would be recognized and given his fair due. Denouncing the **Benthamite** principal of greatest good of the greatest number, Gandhi said, "I do not believe in the doctrine of the greatest good of the greatest number. It means, in its nakedness, that in order to achieve the supposed good of 51 percent, the interest of 49 percent may be, or rather should be sacrificed. The only real, dignified human doctrine is the greatest good of all, and this can only be achieved by uttermost self-sacrifice. The good of the individual, therefore, can be in no way neglected. In fact the holistic approach advocates a harmonious development of the individual and the society. The individual must scarifies his interest for the sake of society and the society must look after the interests of the individual.

The doctrine of non-possession would teach that everyone should limit his own possession to what is needed by him and spend the rest for the welfare of others. **Gandhi** considered this as a desirable, non-violent method of reducing inequality of income distribution and maldistribution of wealth **Gandhi** would put utmost reliance on the individual and his moral awakening to bring about radical changes in the distribution of income and wealth in society.

The essence of the doctrine of non-possession is philosophical, not economic. The real question relates to how much to possess, what are the limits to possession for one's own use and how to make meaningful use of excess possession. Viewed in this manner, the doctrine of non-possession emerges as highly positive doctrine.

Development - Economic development is traditionally measured in GNP per capita or real GNP per capita. But the question to ask about a country's developments are therefore: what has been happening to poverty? What has been happening to unemployment? What has been happening to inequality? If all three of these have declined from high levels then beyond doubt this has been a period of development for the country concerned. If one or two of these central problems have been growing worse, especially if all three have, it would be strange to call the result 'development' even if per capita income doubled. Development must, therefore, be concerned of as a multidimensional process involving major changes in social structure, popular attitudes and national institutions as well as the acceleration of economic growth, the reduction of inequality and the eradication of absolute poverty. Development, in its essence, must represent the whole gamut of change by which an entire social system, tuned to the diverse basic needs and desire of individuals away from a condition of life widely perceived as unsatisfactory and toward a situation of condition of life regarded as materially and spiritually 'better'. **Dr. A.P.J. Abdul Kalam** describes holistic development in **Turning Points**. He suggests National Prosperity Index **(NPI)** which is a summation of (a) annual growth rate of GDP ; (b) improvement in quality of life of people, particularly those living below the poverty line and (c) the adoption of a value system derived from our civilization heritage in every walk of life which is unique in India[6]

the genuine objectives of development are -

(i) to increase the availability and widen the distribution of basic life – sustaining goods as food, shelter, health and protection.

(ii) to raise levels of living including, in addition to higher incomes, the provision of more jobs, better education and greater attention to cultural and humanistic values, all of which will serve not only to enhance material well being but also to generate greater individual and national self-esteem.

(iii) to expand the range of economic and social choices available to individuals and nations by freeing them from servitude and dependence but also to the forces of ignorance and human misery.

Linkage - The development thinkers and practitioners focus on high growth rate. They ignore the cost aspects of rapid industrialization. New factories, assembly plants, road systems, airports and housing complexes not only reduce

the amount of natural land but contribute to the demand for more energy and more automobiles and trucks, infrastructure, foodstuffs, paper and packaging, cement, steel and so on. All this increase the ecological damage, more polluted rivers and dead lakes, smog-covered cities, industrial waste, soil erosion and devastated forests litter earth. Since mid century alone, it is estimated that the world has lost nearly one fifth of the top soil from its cropland, one fifth of its tropical rain forests and some tens of thousands of its plant and animal species. The growing high mass consumption society is responsible for environmental degradation. Environmentalists are asking today's societies, in rich and poor countries, to make drastic changes in their economic expectations, way of life, social behaviour in order to avoid deleterious effects a generation or two in the future; they are asking them to alter their own assumptions and life styles now for the sake of their descendants in 30 or 50 years time. A piecemeal approach is insufficient regarding environment protection. It is high time for formulating policies, which could lead to sustainable development.

Business, in our culture is not merely an activity for individual profit. In the Indian milieu, a business person is the custodian of the vital interests of society.

Gandhi articulated this view in his inimitable way. He called on business leaders to consider themselves trustees of the society's wealth. Given this background, the concept of social partnership comes naturally to us. In the old world, society was divided into the have and the have-nots. **Marx** said , one class produces surplus value and another appropriates it. This paradigm has changed dramatically. In the new world, partnership is the cornerstone of business ethos. Sustainable development, human dignity and business ethics are the philosophy of the new world. In the old world, kindness manifested itself as charity. in the new world, empowerment is the enlightened approach.

Economic prosperity, environmental quality and social equality have become integral to the business society interface in the world order. Responsible companies now present triple bottom lines in their annual reports-financial, environmental and social. In this way materializes the concept of corporate social responsibility.

Now-a-day, there are three areas for companies engagement with society are-

(i) The physical environment – Preserving and improving it. – Avoiding pollution, deforestation etc.
(ii) The social environment – engaging with communities needs for services, such as education, health, water infrastructure.
(iii) The political environment – influencing the process of improvement in public policy and governance.

Conclusion - Every country needs to attain high growth rate so as to provide employment and eradicate (ameliorate) poverty. High growth rate is a necessity but not sufficient. We need to study to composition of growth process in a holistic manner. High growth should not be attained by comprising speedy depletion and natural resources, disparity of income and wealth; displacement of people in project affected sites and the like. therefore there is an imperative need to review the course of growth and development. The philosophy of non-possession plays a decisive role in reviewing he entire process of planning. True development stands for enlargement of choices as proposed by **A.K. Sen.** The pragmatic approach to development includes the values of equality, participation and environmental sustainability, as well improving physical well-being.

References :-

1. **Quoted in Bertrand Russel**, History of Western Philosophy, p. 637.
2. **Harijan**, Jan 30, 1937, CWMG, Vol. 64, 1976 p. 264.
3. **M.K. Gandhi**, Economic and Industrial Life and Relations, Vol I, Compiled by V.B. Kher, Ahmedabad Navjivan Publishing House, 1957, p. 160.
4. **Gandhi**, Ashram observance in Action, Ahmedabad Navjivan Publishing House, 1959, p. 113.
5. **M.K. Gandhi**, Hind Swaraj, p. 61.
6. **A.P.J. Abdual Kalam**, Turning Points, Harpercollins Publisher India 2012. P. 53.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Consumer Protection And Welfare

Dr. Rashmi Gupta *

Abstract - This paper talks about consumer and consumer rights protection. But in reality, the consumer gets exploited by the market economy in various forms such as misleading advertisements, poor specifications,etc. Apparently our system seems simple and non-complex. But various nefarious activities are involved from starting point to using point. This paper talks about consumer rights and how can a consumer know about his/her rights and get educated about them and stop getting exploited.

Introduction - The market driven economic reforms in India clearly communicates that consumer is the real deciding factor for economic activities and therefore is treated as a king in changing business scenario. The ordinary citizen today depends on products, design and construction for which they have poor awareness.There is therefore a greater role of regulator or consumer protection mechanism for the betterment of consumers in this changing economic region.

Customers Vs Consumers - The term customer is typically used to refer to someone who regularly purchases from a particular store and company. Thus a person who shops at website or who uses Indane Gasoline is viewed as customer of these firms. Therefore a customer is defined in terms of specific term while a consumer is not. The traditional view point has been to define consumers strictly in terms of economic goods and services. This position holds that consumers are potential purchasers of product and services offered for sale. Organizations like UNICEF, NGO'S and other religious and political groups, can view their various public as consumers. The rational for this position is that, many of the activities that people engaged in providing free services, ideas and philosophies are quiet similar to those they engage in providing commercial product and services.

Those individual who purchase for the purpose of individual or household consumption, are called the ultimate consumers.

Consumer movement in India is as old as trade and commerce - The consumer movement in India is as old as trade and commerce. The market driven economic reforms in India clearly communicates that consumer is the real deciding factor for economic activities and therefore is treated as a king in changing business scenario. But in reality, the consumer gets exploited by the market economy in various forms such as misleading advertisements, poor specifications by the service providers, hidden cost of the products, adulteration etc. The ordinary citizen today depends on products, design and construction for which they have poor awareness.

Till recently, more over there was no organized and systematic movement for safeguarding the interests of consumers in the country. Even in Kautilya'sArthashahtra, there are references to the concept of consumer protection against exploitation. There is therefore a greater role of regulator or consumer protection mechanism for the betterment of consumers in this changing economic region. The need of the hour is, therefore, to highlight the subject matter of consumer protection and their welfare by educating the common consumers particularly those in rural areas who are susceptible to exploitation so that they become aware of different schemes and extract maximum benefits. This will safeguard the common consumers of the country and thus lead to their welfare.

Consumer protection and welfare - *"The customer is the most important visitor on our premises. He is not dependent on us. We are dependent on him. He is not an interruption on our work. He is the purpose of it. He is not an outsider on our business, he is a part of it. We are not doing a favour by serving him. He is doing us a favour by giving us an opportunity to do so."*

-Mahatma Gandhi

An ultimate buyer or purchaser uses the paid up goods and services, either himself or along with family members or sometime with friends and relatives. The ultimate buyer is known as consumer or customer. Market functions only on twin factors – producers and consumers. In between producers and consumers there are many market players as intermediary or agent or whole-seller or retailer/hawker. In limited cases , sometime, produced goods or commodities may be sold directly wile in most cases commodities are sold by simply exchange of hands or value addition. A big producer sells the goods to an agent, an agent to the whole-seller and whole-seller to retailer or hawker. For pushing the commodities in market various advertisement-modes are being utilized, especially due to technological advancement, e.g. radio,TV,e-mail,etc.

Apparently our system seems simple and non-complex. But various nefarious activities are involved from starting point to using point.Our customers are at the receiving end. The pious opinion tendered by Gandhi is irrelevant for unscrupulous traders. The plight of consumer or customer

* Asst. Prof. (Economics) M.J.B. Govt. Girls P. G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) INDIA

can be explained very succinctly by paroding the words consumers and customers which give rise to meaning, dying while consuming for consumers and dying in trouble for customer. A customer is generally, misled by star or model studded advertisements. Advertisements create a void in the mind of the customer.

A customer is often cheated by purchasing less-weighing commodity or purchase of inferior or sometime injurious commodity, purchase of duplicate or expiry dated goods or paying more prices than MRP(maximum retail price). Purchase of goods on more than MRP is done due to compulsion of bandh, strike or extortion. Most of the customers, even educated ones, do not know they can bargain on MRP price as well. In the modern age of science and technology numerous are the ways of profiteering and cheating. Sometime more consumption is equated wrongly with consumerism. More consumption is being now-a-days symbol of one's status while consumerism denotes to consumer movement, a movement to protect consumer right. A consumer has:

1. Right to safety
2. Right to be informed
3. Right to chose
4. Right to be heard
5. Right to seek redressal and
6. Right to consumer education

Above rights are modelled on the basis of UN guidelines for consumer protection

1. Right to safety
2. Right to information
3. Right to chose
4. Right to fair hearing
5. Right to satisfaction of basic needs
6. Right to healthy environment
7. Right to redressal of grievances
8. Right to consumer education

In the face of enormity of consumer, problems, numerous consumer oriented legislation and consumer protection(laws and means designed to ensure fair trading for buyers) for a consumer education is a must. For imparting consumer education schools and colleges may be the best institutions. Schools and colleges , in their elegant manner , may render the best help to consumer movement, a socio-economic movement, which is yet to take concrete and viable status and shape.

Our traditional education doesn't teach students about consumer awareness, consumer rights, consumer laws, etc. Hence many students do not know about grievance redressal system, consumer protection act, consumerism, consumer fund, consumer co-operatives etc. They don't know about the process of cheating. In the wake of such a vast proportion of cheating system, for students who are potential purchasers or guide to their family members in buying ,we have to devise our course-curricula incorporating well defined system of consumer education right from high school level to college level. Course context should be designed to cover essential aspects of consumerism social, legal, moral and alien.

Models of consumer: Four views of consumer decision - The term models of consumers refers to general view or perspective as how(and why) individuals behave as they do. Specifically models of consumers can be discussed in four views.

1. An economic view
2. A passive view
3. A cognitive view
4. An emotional view

Conclusion - There is high exploitation of consumers and this could only be curbed if consumers know about the consumer rights. The consumers can learn about the consumer rights only if the consumers get educated about the rights.

References :-

1. Aaker, D and Joachimsthaler, E (2000) Brand leadership, The Free Press
2. Assael, H. (1992) Consumer Behaviour and Marketing Action, 4th Edition, USA: PWS-Kent
3. Hoyer, W.D. and MacInnis, D.J. (2001) Consumer Behaviour, 2nd Edition, USA: Houghton Mifflin Company
4. Baker, M. (2000) Marketing Management and Strategy, 3rd edition, Macmillan Business.
5. Blythe, J. (2001) Essentials of Marketing, 2nd edition, Prentice Hall
6. Booms, B.H. and Bitner, M.J. (1981), Marketing strategies and organisation structures for service firms, in Marketing of Services, J. Donnelly and W.R. George (eds), American Marketing Association
7. Brassington, F and Pettitt, S, (2000), Principles of Marketing, Second Edition, Prentice Hall, Harlow
8. Brooks, I and Weatherston, J. (1997) The Business Environment. Challenges and Changes, Prentice Hall.
9. Chisnall, P.M. (1997) Marketing Research, Fifth Edition, London: McGraw-Hill

****

The Status of Consumer Protection Act and Rural Consumers of Mandsaur District

Dr. Shiv Prakash Panwar * Prof. Gyanchand Khimesara **

Introduction - Introduction - United Nations adopted guidelines for protection of consumer on 9th April, 1985. All countries were expected to take suitable legislative measures. India being a member, followed the guidelines, Accordingly, the consumer protection Act 1986 was passed with a view mind. The act came into force with effect from 11th june, 1987. This act applies to all goods and services. The objective(1) of the act is to protect the consumer from exploitative ad unfair practices and provide speedy remedy. Thus, it is a social benefit legislation with a view to favour the consumer.

As organized manufacturing activity increased, sellers became bigger and better organized, whereas , buyer continued to be unorganized and week. It is now realized that the common consumer is neither knowledgeable nor well informed. Therefore, the Indian consumer needs support and protection from unscrupulous sellers. His complaints require quick, cheap and speedy justice.

The Constitution of District Forum - The state government establishes a District Forum in each district. The forum consists of a president and two members. Every member shall hold office for five or up to the age of 65 years whichever is earlier. They are not eligible for re-appointment. The district forum shall have jurisdiction to entertain complaints where the value of goods or services and compensation, If any, claimed does not exceed Rs. 20 lacs.

Procedure for filing complaint - A complaint can be sent by post or personally filed. Complaint should contain name, description and address of complainant should contain name, description and address of complainant and opposite filed. Parties, facts relating to complainant,

documents in support and relief being claimed. Every complainant should be accompanied with such amount of fee and payable in such manner as may be prescribed by the state government. After receiving a complaint, the District forum may by order, allow the complaint to be proceeded with or rejected. The admissibility of the complaint should ordinarily be decided with in 21 days from the date on which the complaint was received. A complaint is made by the consumer that

(i) An unfair trade practice or restrictive trade practice has been adopted by any trader or service provider;
(ii) The goods bought by him suffers from one or more defects;
(iii) The services hired or availed of him suffer from deficiency in any respect;
(iv) A trader or the service provider has charged for the goods or for services mentioned in the complaint, a price in excess of the price which has been
(a) fixed by or under any law,
(b) displayed on the goods or any package containing such goods,
(c) displayed on the price list exhibited by him on under any law,
(d) agreed between the parties,
(v) Goods which will be hazardous to life and safety when used are being offered for sale to the public in contravention of any standards relating to safety of such goods as required to be complied with by or under any law and if the trader could have known with due diligence that the goods so offered are unsafe to the public;
(vi) Services which are hazardous or likely to be hazardous to life and safety of the public when used, are being offered by the service provider which such person could have known with due diligence to be injurious to life and safety.

The Sampled case studies - Mandsaur lies in the malwa plateau of Madhya Pradesh. About 72 percent of the population reside in rural areas who come to city for purchasing goods and services. In the present paper, five cases file in the District Forum have bee taken up to draw some inferences.

Case I

Gajendra kumari W/O Bhagwansingh Village-tolkhedi
Versus
Madhya Pradesh State Electricity Board

Gajendra kumari dug a tube well in her farm and installed a pump of 3 horse power capacity in 2004. The village experienced scanty rainfall during 2004,05 and 2006. Therefore, the water was low and thus she could not pump out water from the well to irrigate her land. Further, low voltage aggravated her problem. The Electricity Board imposed Rs. 300.00 per month at flat rate and withdrew electric meter. She made a written request to the Board official in this regard

* Prof. (Economics) Government Post Graduate College, Mandsaur (M.P.) INDIA
** Principal, Government Post Graduate College, Mandsaur (M.P.) INDIA

but of no avail. Finally, she filed a complaint to the district consumer forum against injustice meted out to her. The forum accepted her complaint. After hearing the concerned parties, the forum passed judgment. The forum said that low voltage is the preferred mode of supply but this must be upgraded. The forum realized that investments have been made in rural electrification programs, creating vast expense of network but due to sub-standard practices and poor maintenance, these are in a depleted condition Further, the forum ordered the Electricity Board to clamp a meter on her well so that actual consumption of electricity may be charged. The forum in its judgment awarded Rs. 500.00 compensation to Gajendra kumari on 04.04.08.

Case II

Narendra Singh, Village-Dorana

Versus

Madhya Pradesh State Electricity Board

A marginal farmer Narendra Singh irrigates his piece of land in the village. For the purpose, he has taken an electricity connection. A high tension lines goes above his land. As a result of fault occurred in the line, his prepared crop was burnt. The cause was poor maintenance of electric lines. He filed a complaint with district forum to get compensation for damaged crop. The forum directed the Board either to remove the high tension line or do proper maintenance from time to time. The forum estimated the loss and awarded a compensation of Rs. 2500.00 to Narendra Singh.

Case III :

Surajmal, A Milk Trader, Village-Nahargarh

Versus

District Agriculture ad Rural Co-operative Bank Maryadit, Mandsaur

The complainant purchased 20 cows on 01.08.03 by taking a loan of Rs. 231050.00 from the bank. The bank insured the amount released for purchasing the cows. He deposited premium on the insured amount. Out of 20 cows, 4 cows died in an accident. He informed the bank in this regard. In response, the bank disbursed the claim for 03 cows only. He felt cheated and appealed to the district forum. The forum accepted his application and served a notice to the bank. Till that the decision is pending.

Case IV

Smt. Deu Bai W/o Bheema Bhil, a labourer, Village-Kochavi

Versus

Reliance General Insurance Company Limited, Bhopal

Smt. Deu Bai belongs to below poverty line family by the state government. The BPL families are insured under Vivekanand group Insurance scheme in the state. Her husband Bheema Bhil died in an incident due to electric current on 02.07.07. she approached the local authorities to get benefits under the scheme. She was unable to get compensation due to officialdom. Then, she appealed to the district forum for her redressal. The forum accepted her application and notices served to the concerned authorities and insurance company as well. The concerned parties are yet to respond in this case.

Case V

Ganpatlal Dhakad, Village-Nahargarh

Versus

The Life Insurance Corporation Of India, Mandsaur

Ganpatlal insures his wife with LIC Mandsaur for Rs. 50000.00 The premium for which was paid regularly. His wife Leela Bai died of unnatural death on 22.02.08. He approached LIC to get them claim in this regard.

His appeal went to deaf ear of the authority. Aggrieved Ganpatlal appealed to district forum for quick redressal. The forum has asked LIC to present its stand in the case.

Conclusion - For the preparing this paper, 600 pending cases have been studied and analyzed. About 80% of the cases have been find with the help of advocates. This establishes the fact that consumer forums are taking the form of courts. The working style of advocates has complicated the system at consumer forums. This attacks the simplicity and pragmatic approach of consumer protection act. It was presumed that these forums would extend relief to rural consumers but the concept could not be materialized. Definitely, the lukewarm attitude of rural consumers has bereaved them of the potential benefits of the Act. Therefore it is an imperative need to minimize the entry of complicated advocacy pattern in processing the applications at consumer forums.

Rural consumers have poor purchasing power. Sometimes their purchasing is either unplanned or just to meet some exigency. It is also found that they use to purchase on credit and do not get bills. As a result, they are unable to appeal in such situations.

The five case studies taken up above show that they could file their cases only due to proximity with educated urbanities. Further, it is advised that education pertaining to consumer protection, counseling and awareness programs should be shouldered by institutions imparting higher education. The institutions of higher learning at Mandsaur serves about 70% rural population regarding their educational needs. The awaken and trained youth from these institutions would provide immense benefits to rural consumers in situations of any fraud by traders as well as service providers.

References :-

1. Consumer Protection Act, 1986.
2. Case studies selected from office of the District Consumer Forum, Mandsaur.
3. Naveen Shodh Sansar, ISSN 2320-8767, Neemuch.
4. Consumer Protection in India.
5. Consumer Behaviour.

****

आजीविका परियोजना का ग्रामीण विकास पर प्रभाव (ग्राम में दल्यापानी के विशेष सन्दर्भ में)

हीरालाल खर्ते *

शोध सारांश – वर्ष 1971 से अभी तक प्रदेश में गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों का अनुपात 73 प्रतिशत से घटकर लगभग 37 प्रतिशत हुआ है किन्तु कुल गरीब जनसंख्या इस अवधि में लगभग 2 से 2.5 करोड़ के मध्य रही है। अत: मध्यप्रदेश शासन ने ऐसे क्षेत्रों का चिन्हांकन किया है जहाँ गरीबी की सघनता है। गरीबी के ऐसे गढ़ों में जहां गरीबी मिटने का नाम नहीं ले रही थी वहाँ गरीबी के पूरे परिदृश्य पर समग्रता से विचार करते हुए प्रभावी कार्य करने की आवश्यकता है। यह भी आवश्यक है कि ग्रामीण समुदाय के निर्धनतम सदस्यों/परिवारों की भी विकास प्रक्रिया में सीधी एवं सक्रिय भागीदारी हो। उनकी अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को भी अभिव्यक्ति मिले। विकास प्रक्रियाओं को तय करने में समुदाय के सुझावों को प्राथमिकता दी जा सके। इससे आजीविका विकास के लिये गरीब समुदाय अपनी क्षमता के अनुरूप उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग कर सकेंगे। प्रदेश के आदिवासी बहुल क्षैत्रों के चयनित ग्रामों में संवहनीय आजीविका उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राज्य शासन द्वारा मध्यप्रदेश ग्रामीण आजीविका परियोजना की परिकल्पना की गई। ग्राम सभा की संस्थागत व्यवस्था परियोजना की धुरी है। इसी के माध्यम से समुदाय द्वारा गरीबी से लड़ने की रणनीति का क्रियान्वयन किया जाना है।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश शासन, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा परियोजना के संचालन के हेतु म.प्र. सोसाइटी फार रूरल लाखली हुड्स प्रमोशन का गठन किया गया है। सोसायटी का मुख्यालय वर्तमान में तृतीय तल, बीज भवन अरेरा हिल्स, भोपाल में कार्यरत है। परियोजना अन्तर्राष्ट्रीय विकास विभाग (डी एफ आई डी), युनाइटेड किंगडम द्वारा वित्त पोषित है। परियोजना का प्रथम चरण 30 जून 2004 से 30 जून 2007 तक था। इसके तहत परियोजना के द्वारा 822 गांवों में ग्राम सभा के माध्यम से गरीब परिवारों की आजीविका को सुदृढ़ करने हेतु प्रयास किये गये। ग्रामों का चयन अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की बाहुल्यता एवं महिलाओं की साक्षरता में कमी के आधार पर किया गया है। प्रथम चरण की सफलताओं एवं सीख के आधार पर परियोजना का पांच वर्षीय द्वितीय चरण 1 जुलाई 2007 से प्रारम्भ होकर यह 30 जून 2012 को समाप्त हुआ। द्वितीय चरण में परियोजना का संचालन प्रथम चरण के आठ आदिवासी बाहुल्य जिलों – धार, झाबुआ, बड़वानी, अनूपपूर, शहडोल, डिण्डोरी, मण्डला एवं श्योपूर तथा झाबुआ जिले के पुनर्गठन के फलस्वरूप नवगठित अलीराजपुर जिले के चयनित ग्रामों में किया गया है। द्वितीय चरण में लगभग 4000 आदिवासी बाहुल्य गांवों में कार्य करने की योजना है। इसमें प्रथम चरण के 822 गांवों को भी सम्मिलित किया गया है। वर्तमान में परियोजना लगभग 3000 गांवों में क्रियान्वित हो रही है। द्वितीय चरण हेतु डी.एफ.आई.डी. के द्वारा 45 मिलियन पाउण्ड (लगभग रूपये 360 करोड) की वित्तीय सहायता मंजूर की है। इसमें से राज्य सरकार को डी.एफ.आई.डी. में परियोजना क्रियान्वयन हेतु 42 मिलियन पाउण्ड की राशि भारत सरकार के माध्यम से व्यय की प्रति पूर्ति के आधार पर प्राप्त होगी। शेष 3 मिलियन पाउण्ड तकनीकि सहायता राशि है। इसके प्रबंधन हेतु डी.एफ.आई.डी. द्वारा राज्य सरकार की सहमति से कॉफी इन्टरनेशनल डेवलपमेन्ट संस्था के नेतृत्व में तकनीकि सहयोग परियोजना सहायता इकाई (टीसी–पीएसयू) का गठन किया है। टीसी–पीएसयू का कार्यालय वर्तमान में किसान भवन, अरेरा हिल्स, भोपाल में कार्यरत है। किसान भवन में ही परियोजना की एक और उप इकाई राज्य लर्निंग फोरम कार्यरत् है। जिला स्तर पर जिला परियोजना सहायता इकाई एवं उपखण्ड स्तर पर परियोजना दल कार्यरत् है। वर्तमान में इसका नाम परिवर्तित करके मध्यप्रदेश राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन रखा गया है, जो 1 जुलाई 2012 से कार्यरत होकर 30 जून 2017 तक संचालित होगी।

संबंधित साहित्य समीक्षा –

1. **ऋषभ से 2008 –** आपका कहना एकदम जायज है, यदि पैसा बुनियादी ढाँचे के विकास में लगे तो वाकई गरीबों के लिए साथ वाली बात हो वरना मलुकदास के चेले ही बन जायेंगे।
2. **अमित से 2009 –** सच है कि लूट मची है, इतना पैसा आ गया है, जुगाड़ से ही मेहनत करने की आवश्यकता ही नहीं पैसे झाँसी की ग्रामीण परिवेश में कुछ काम तो हुआ है पर कितने पैसों से हुआ है, यह नहीं मालूम शायद इसलिए सी.सी. जोशी ऑडिटरों की सुरक्षा की बात कर रहे है।
3. **ताऊ रामपुरिया 2009 –** आपका कहना सही है अगर पूरा पैसा ईमानदारी से लगे तो भारत की शक्ल किसी विकसित राष्ट्र से भी अधिक चमकीली होगी, इस मामले में राजीव गाँधी ने सार्वजनिक रूप से कहा था कि 500 रूपया अन्त तक पहुँचते सिर्फ 25 रूपया रह जाता है, ऐसे में वही होगा जो होता आ रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. ग्रामीण आजीविका परियोजना का ग्रामीण विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसरों की स्थिति का मूल्यांकन करना।
3. ग्रामीण लोगों की आर्थिक–सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
4. ग्रामीण आजीविका परियोजना के संबंध में आने वाली समस्याओं का पता लगाकर उचित सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन की विधि – प्रस्तुत शोध में द्वितीयक समंकों के आधार पर अध्ययन किया गया है। द्वितीयक समंक वे समंक होते है, जिनका संकलन पहले से किसी अन्य अनुसंधानकर्ता या संस्था द्वारा किया जा चुका होता है। जो विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते है। अत: मैंने अपने इस शोध कार्य को पूर्ण करने के लिय द्वितीयक समंक ग्रामीण आजीविका परियोजना कार्यालय, बलवाड़ी के संकुल वरला से प्राप्त किया।

तालिका – 1 (देखे अगले पृष्ठ पर) तालिका विश्लेषण – तालिका 1 में ग्रामीण आजीविका परियोजना के अन्तर्गत जल एवं मृदा संरक्षण

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

गतिविधियों का विवरण किया गया है, जिसमें परियोजना द्वारा देय राशि सहभागी का अंशदान, कुल लागत, लाभान्वित परिवारों की संख्या आदि मदों का उल्लेख किया गया है, जिसमें परियोजना द्वारा देय राशि 90% कन्टूर ट्रेन्च के लिए एवं 90% राशि गेवियन एवं कम लागत संरचना अधिकतम देय राशि है, जबकि न्यूनतम राशि 50% मेढ़ बंधान के लिए दी गई। इसी तरह सहभागी अंशदान के रूप में सबसे अधिक अंशदान मेढ़ बंधान योजना के अन्तर्गत 50% राशि ली गई है, जबकि सबसे कम अंशदान कन्टूर ट्रेन्च एवं गेवियन एवं कम लागत संरचना के अंतर्गत 10-10% राशि ली गई है। अत: तालिका विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि सबसे अधिक 180 परिवारों के सदस्यों को मेढ़ बंधान योजना के द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाये गये।

तालिका - 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका विश्लेषण - तालिका 2 में ग्रामीण आजीविका परियोजना के अंतर्गत कृषि एवं उद्यानिकी गतिविधियों का विवरण किया गया है, जिसमें परियोजना द्वारा देय राशि, सहभागी का अंशदान, कुल लागत, लाभान्वित परिवारों की संख्या आदि मदों का उल्लेख किया गया है, जिसमें परियोजना देय राशि 90% बिनाइग फेन के लिए अधिकतम देय राशि है, जबकि न्यूनतम राशि 50% उन्नत कृषि यंत्र एवं स्प्रिक्लनर सिंचाई तथा फलोत्पादन के लिए दी गई। इसी तरह अंशदान के रूप में सबसे अधिक अंशदान उन्नत कृषि यंत्र एवं फलोत्पादन योजना के अन्तर्गत 50-50% ली गई है, जबकि सबसे कम अंशदान विनाइग फेन के अन्तर्गत 10% राशि ली गई है। अत: तालिका विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि सबसे अधिक 200 परिवारों के सदस्यों को कम्पोस्ट पिट योजना के द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाये गये।

तालिका -3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)तालिका विश्लेषण - तालिका 3 में ग्रामीण आजीविका परियोजना के अन्तर्गत जंगल एवं वृक्षारोपण गतिविधियों का विवरण किया गया है,जिसमें परियोजना द्वारा देय राशि, सहभागी अंशदान, कुल लागत, लाभान्वित परिवारों की संख्या आदि मदों का उल्लेख किया गया है। जिसमें परियोजना द्वारा देय राशि अधिकतम एवं न्यूनतम पौधे रोपण, जेट्रोफा रोपण, जंगल भूमि ट्रेंचिंग एवं मेढ़ बंधान, ट्रेन्चिग तथा घांस बीज बुवाई देय राशि 90% है। इसी तरह सहभागी अंशदान के रूप में सबसे अधिक एवं न्यूनतम 10% राशि ली गई है। अत: तालिका विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि सबसे अधिक 150 परिवारों के सदस्यों को पौधे रोपण योजना के द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाये गये।

निष्कर्ष - सम्पूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विकास में आजीविका परियोजना सतत् प्रयत्नशील है। इस योजना के माध्यम से 180 परिवारों के सदस्य को मेढ़ बंधान योजना, के तहत 200 परिवारों के सदस्यों को कम्पोस्ट पिट योजना 150 परिवारों को पशु स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शिविर योजना के माध्यम से लाभान्वित करने का प्रयास किये गये हैं। आजीविका परियोजना का मूल उद्देश्य ही ग्रामीण क्षेत्र का विकास करना रहा है। आजादी के 67 वर्षों में ग्रामीण भारत की तस्वीर में आधारभूत परिवर्तन हो रहे है। योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों की मूलभूत सुविधाओं की पूर्ति की जा रही है। भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकतम जनसंख्या गाँवों में निवास करती है और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी अधिक है। वहाँ ग्रामीण आजीविका परियोजना महत्व चरमोत्कर्ष सीमा पर है। आजीविका परियोजना द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में विकास तो हुआ है, जिसके कारण से आधारभूत सुविधाओं में काफी सुधार हुआ है और उनकी आर्थिक, सामाजिक स्थिति में भी सुधार हुआ है। परन्तु आज भी ग्रामीण क्षेत्र में पूर्ण विकास नही हुआ है। फिर भी आजीविका परियोजना का ग्रामीण विकास पर महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आजीविका कार्यकारी मार्गदर्शिका
2. ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाएँ एवं कार्यक्रम, 2010
3. सूक्ष्म वित्त कार्यकारी मार्गदर्शिका, 2005
4. ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाएँ, 2010
5. पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग मध्यप्रदेश, 2006
6. मध्यप्रदेश रोजगार गारंटी योजना अधिनियम, 2005

तालिका - 1 : ग्रामीण आजीविका परियोजना के अंतर्गत जल एवं मृदा संरक्षण गतिविधियों का विवरण

क्र.	विषय	यूनिट दर	मात्रा	कुल लागत रू.	सहभागी का अंश दान (प्रतिशत में)	परियोजना द्वारा देय राशि	परिवार की संख्या	रिमार्क
1.	कन्टूर ट्रेन्थ	6000 रू. प्रति है.	5	30000	10	27000	25	पहाड़ियों पर जल एवं मृदा संरक्षण
2.	मेढ़ बंधान प्रति है.	5000 रू.	90	450000	50	225000	180	खेतों मे मिट्टी कटाव रोकने हेतु।
3.	गेवियन एवं कम लागत संरचना	15000 रू. प्रति है.	5	75000	10	67500	30	नाले में पानी के बहाव को कम करने के लिए
4.	जल पुर्नभरण कुआ एवं नलकुप	3000	2	6000	25	4500	15	कुए एवं हैण्डपम्प की क्षमता बढ़ाने के लिए
5.	परकोलेशन टेंक	10000	4	40000	25	30000	45	भूमि का जल स्तर बढ़ाने हेतु
6.	जल संभारण संरचना	35000	1	35000	25	26250	17	सिंचाई एवं भूमि का जल स्तर बढ़ाने हेतु
7.	डाईक	10000	1	10000	25	7500	2	नाले एवं नदी जल का अधिकतम उपयोग
8.	कुआ गहरीकरण एवं रिपेयरिंग	35000 प्रति कुआ	20	70000	25	52500	25	सिंचाई एवं पीने के पानी की समस्या को हल करने हेतु
	कुल योग			**716000**	**38.51**	**440250**		

स्त्रोत - ग्रामीण आजीविका परियोजना कार्यालय बलवाड़ी, (संकुल वरला)

तालिका – 2 : ग्रामीण आजीविका परियोजना के अंतर्गत कृषि एवं उद्यानिकी गतिविधियों का विवरण

क्र.	विषय	यूनिट दर	मात्रा	कुल लागत रू.	सहभागी का अंश दान (प्रतिशत में)	परियोजना द्वारा देय राशि	परिवार की संख्या	रिमार्क
1.	बर्मी कम्पोस्ट	3000	4	12000	15	10200	4	उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए
2.	कम्पोस्ट पिट	200	200	40000	25	30000	200	गोबर की खाद का अधिकतम उपयोग
3.	उन्नत कृषि यंत्र	1500	100	150000	50	75000	100	25 प्रतिशत शासन
4.	स्प्रिक्लर सिंचाई	25000 प्रति	2	50000	50	25000	4	25 प्रतिशत शासन
5.	सीडकम फर्टी–लाइजर ड्रिल	3000	3	9000	25	6750	3	महिलाओं का कार्य भार कम करने हेतु
6.	बिनाइग फेन	3000	1	3000	10	2700	1	
7.	फलोत्पादन	20000 प्रति	4	32000	50	16000	4	महिलाओं का स्वास्थ्य सुधार तथा आय अर्जन हेतु।
8.	सब्जी उत्पादन किचिंग गार्डनिंग	100	60	6000	25	4500	60	महिलाओं का स्वास्थ्य सुधार तथा आय अर्जन हेतु
9.	उन्नत एवं नई किस्म के बीज प्रदाय	2500 प्रति	15	37500	25	28125	45	नई एवं उन्नत शील किस्मों की जानकारी हेतु
10.	जैविक खाद	50	10	500	25	375	10	उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए
	कुल योग			**340000**	**41.57**	**198650**		

स्त्रोत – ग्रामीण आजीविका परियोजना कार्यालय बलवाड़ी, (संकुल वरला)

तालिका – 3 : ग्रामीण आजीविका परियोजना के अंतर्गत जंगल एवं वृक्षारोपण का विवरण

क्र.	विषय	यूनिट दर	मात्रा	कुल लागत रू.	सहभागी का अंश दान (प्रतिशत में)	परियोजना द्वारा देय राशि	परिवार की संख्या	रिमार्क
1.	पौधे रोपण	5	7000	35000	10	31500	150	पर्यावरण सुधार के लिए
2.	जेट्रोफा रोपण	1000 /हैक्टेर	3	3000	10	2700	25	मिट्टी कटाव रोकने के लिए
3.	जंगल भूमि ट्रेंचिंग मेढ़ बंधान	6000 /हेक्टेर	30	180000	10	162000	50	जंगल समिति के सहयोग से
4.	शासकीय भूमि							
5.	ट्रेन्चिग	6000 /हेक्टेर	5	30000	10	27000	10	जंगल एवं मृदा संरक्षण
6.	घांस बीज बुवाई	1000 /हेक्टेर	2	2000	10	1800	5	पशु चारा में वृद्धि हेतु
	कुल योग			**250000**	**10**	**225000**		

स्त्रोत – ग्रामीण आजीविका परियोजना कार्यालय बलवाड़ी, (संकुल वरला)

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण (2007 से 2013 के विशेष संदर्भ मे)

डॉ. सी.एस. पान्डे * डॉ. पुनीत कुमार मालवी * *

शोध सारांश – किसी भी आर्थिक क्षेत्र की क्रियाओं को भली प्रकार संचालित करने के लिये वित्त की आवश्यकता होती है। केन्द्रीय सहकारी बैंक भारत सरकार के अधीन कार्य करता है। इस पर केन्द्र का नियंत्रण होता है, यह भारत के सभी राज्यों में स्थित है जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की स्थिति पहले अच्छी नहीं थी, लेकिन धीरे–धीरे इसमें बदलाव आया है। अखिल भारतीय ग्रामीण साख–सर्वेक्षण समिति के मतानुसार सहकारी साख के ढांचे में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे राज्य सहकारी बैंकों और अन्य स्तरीय प्राथमिक कृषि समितियों के बीच सम्पर्क कड़ी के रूप में कार्य करते है, भारत में बैंकिंग के विस्तार में सहकारी बैंकिंग संस्थाओं द्वारा विगत वर्षो में महत्वपूर्ण सेवा प्रदान की गई हैं। गांव–गांव तक वित्तीय आवश्यकता की पूर्ति करने के लिये प्राथमिक समितियों की स्थापना जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों के द्वारा की गई है। प्रस्तुत शोध पत्र में मध्यप्रदेश के जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है। इस हेतु द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है। सभी आवश्यक समंक संबंधित बैंक एवं अन्य शासकीय एवं अशासकीय संस्थाओं से लिये गये हैं।

प्रस्तावना – सहकारी बैंकों की स्थापना भारत सरकार द्वारा सर्वप्रथम स्थापित की जाने वाली वित्तीय अभिकरण के रूप में हुई हैं। भारत में इनकी स्थापना सरकार द्वारा प्रायोजित समर्थित तथा अनुदानित वित्तीय संस्था के रूप में हुई है।

भारतीय वित्तीय प्रणाली के संघटकों में सहकारी बैंकों का विशिष्ट स्थान है। भारत की वित्तीय प्रणाली में सहकारी बैंकों का महत्व इन्हें सुपुर्द की गई भूमिका, इनसे पूरी की जाने वाली संभावनाएं, निरंतर बढ़ती हुई संख्या से पता चलता है।

भारत में सहकारी बैंकिंग व्यवस्था का उद्‌गम सन् 1904 के लगभग हुआ है। सहकारिता के सिद्धांतों के आदर्श पर नवीन प्रकार के संस्थान स्थापित करने के प्रयास प्रारंभ हुए यह प्रयास इस भावना से प्रेरित थे कि भारत जैसे विशाल देश की विकट समस्या का समाधान केवल सहकारी संस्थाओं के विकास में ही निहित हैं। सहकारी बैंकों की स्थापना के पूर्व भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं संबद्ध कार्यो हेतु साख सुविधाओं का अत्यंत अभाव अनुभव किया गया। जब सन् 1951 में भारत में आर्थिक नियोजन युग का प्रारंभ हुआ तो सहकारी बैंक इसकी सफलता हेतु प्रमुख उपकरण के रूप में उभरे। वर्तमान समय में कृषि एवं संबद्ध कार्यो हेतु वित्त प्रदान करने वाली संस्थाओं में सहकारी बैंकों का विशिष्ट स्थान है।

विदिशा जिला मध्य प्रदेश के पश्चिम में तथा मालवा के पठार के उत्तर पूर्व पर अवस्थित है। विदिशा जिले का गठन सर्वप्रथम 1904 में हुआ था, जिला विदिशा 23 200 से 24 200 डिग्री उत्तरी अक्षांश तथा 77 160 से 78 180 डिग्री पूर्वी देशांश के बीच फैला हुआ है जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 7371 वर्ग किलोमीटर है जिले की सीमाएं रायसेन, गुना, अशोक नगर, सागर तथा भोपाल से मिलती है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक से आशय जिला स्तर पर स्थापित होने वाली उस सहकारी संस्था से होता है जिसका कार्य जिले में कृषि एवं अन्य उद्देश्यों के लिए अल्पकालीन एवं मध्यकालीन साख सुविधाएं उपलब्ध कराना होता है। जिले में सहकारी बैंक की स्थापना 21 जनरी 1916 को माधव डिस्ट्रिक्ट को–ऑपरेटिव बैंक के नाम से इस बैंक का कार्य आरंभ हुआ। चूंकि इस समय ग्वालियर राज्य में कोई सहकारी विधान नहीं था। अत: प्रारंभ में बैंक का कार्य बगैर पंजीयन के ही चलाया गया तथा सन् 1918 में सहकारी विधान प्रभावशील होने पर इस बैंक का पंजीयन किया गया। सन् 1918 में ग्वालियर राज्य का सर्वप्रथम सहकारी बैंक होने का श्रेय इस बैंक को मिला। विदिशा जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की स्थापना 19 जुलाई 1918 को हुई। इसके बाद आंदोलन प्रगति की ओर अग्रसर होता रहा परिणाम स्वरूप उद्योग सहकारी समितियों, सहकारी कृषि समितियों, प्राथमिक उपभोक्ता भण्डार, सहकारी दुग्ध उत्पादन समितियों का गठन हुआ, सहकारी आंदोलन विपणन, साख, उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण तथा उद्योगिक क्षेत्रों में प्रवेश करते हुए स्वर्णीय उन्नति की ओर अग्रसर है। बैंक का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण विदिशा जिला है जिसमें 10 तहसीले 7 विकासखण्ड हैं। जिले के 1621 ग्रामों में कुल 247549 कृषक परिवार हैं तथा 166538 व्यक्ति सहकारी संस्थाओं के सदस्य है एवं ऋणी सदस्यों की संख्या 130064 है।

बैंक की रूपरेखा – सहकारिता साख ढांचे में सबसे ऊपर शीर्ष बैंक होता है, जो अधिक विस्तृत क्षेत्र है, शीर्ष बैंक के अंतर्गत केन्द्रीय सहकारी बैंक होते हैं, जो जिला स्तर पर कार्य करते हैं। ये जिले के क्षेत्राधिकार के अन्दर सहकारी साख आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करते हैं, केन्द्रीय सहकारी बैंक मध्य स्तरीय संस्था है, जिनका कार्य प्राथमिक समितियों की वित्तीय आवश्यकताएं पूरी करना है, यह प्राथमिक समितियों और शीर्ष सहकारी

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्वामी विवेकानन्द महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नसरूल्लागंज (म.प्र.) भारत

बैंकों के मध्य एक कड़ी का कार्य करते हैं। यह अपनी शाखायें जिले के विभिन्न भागों में खोलते हैं ताकि प्राथमिक साख समितियों को मदद मिल सके व उन पर नियंत्रण किया जा सके। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की कुल 21 शाखाएं हैं। जिनमें से 18 ऋण शाखाएं, कृषि ऋण, अकृषि ऋण एवं व्यक्तिगत ऋण आदि समस्त व्यवसाय करती हैं एवं शेष 3 शाखाएं अमानत शाखाएं है जो कि अमानतों के साथ-साथ ऋण व्यवसाय कर प्रात: सायंकाल में अमानतदारों को सेवायें प्रदान करती हैं।

इसके अंतर्गत 154 कृषि सहकारी समितियां तथा 133 अकृषि सहकारी समितियां कार्यरत् हैं, यह बैंक सम्बद्ध समितियों को वित्तीय साधन उपलब्ध कराने हेतु बैंकों द्वारा अंशपूंजी एकत्र करके, जनता से जमा प्राप्त करके व राज्य सहकारी बैंकों से ऋण लेकर कोष बनाती हैं तथा उसे बढ़ाती है, इन बैंकों से यह आशा की जाती है, कि यह प्राथमिक सहकारी समितियों से निकटता व निरंतर सम्पर्क बनाये रखे उनकी आवश्यकता एवं कठिनाईयों के प्रति सहानुभूति व सहयोग प्रदान करे और नीति विषयक मामलों पर मार्गदर्शन करे। केन्द्रीय सहकारी बैंक के पश्चात् प्राथमिक समितियां होती हैं प्राथमिक साख समितियां सहकारी साख आंदोलन का महत्वपूर्ण अंग है, इनकी सदस्यता खुली व ऐच्छिक होती है, यह सबसे निचले स्तर पर कार्य करती हैं प्राथमिक समितियां सम्पूर्ण आंदोलन की नीवं है, जिन पर सहकारी आंदोलन का विशाल भवन खड़ा है।

शोध विषय का औचित्य – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति जानने के लिये शोध विषय का अध्ययन किया है।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन – शोधकर्ता अन्सारी यासीन ने वर्ष 1992 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के अंतर्गत वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि क्षेत्र में योगदान' विषय को लेकर संपादित किया है। शोधकर्ता ने अपने अध्ययन से स्पष्ट किया है कि सहकारी बैंक की स्थापना मुख्यत: कृषि क्षेत्र से जुडे लोगों की सहायता करने के लिये की जाती है। शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि क्षेत्र में योगदान रहा है।

शोधकर्ता मुवीन मोहम्मद खान ने वर्ष 1998 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय से 'मानव संसाधन प्रबंध : मध्यप्रदेश राज्य सहकारी बैंक मर्यादित एवं पंजाब नेशनल बैंक का तुलनात्मक अध्ययन' विषय को लेकर अपना शोध कार्य सम्पादित किया है। शोधकर्ता ने दोनों बैंकों का अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष निकाला है कि दोनों बैंकों ने अपने मानव संसाधन को कुशल एवं दक्ष बनाने की ओर ध्यान दिया है।

शोधार्थी अनन्त कुमार सक्सेना ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में जिला सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का योगदान' विषय को लेकर सम्पादित किया। जिसके अन्तर्गत शोधार्थी ने बताया कि मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का विशेष योगदान रहा हैं।

शोधार्थी राधेश्याम रघुवंशी ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य 'कृषि वित्त में सहकारी बैंकों की भूमिका एवं प्रभाव' विषय को लेकर सम्पादित किया जिसके अंतर्गत शोधार्थी ने कृषि के क्षेत्र में वित्त की आवश्यकता का उजागर किया है कृषि एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को वित्त की आवश्यकता पड़ती है। सहकारी बैंकों द्वारा कृषि वित्त की पूर्ति कैसे की जाती है यह शोधार्थी ने अपने अध्ययन में बताया है।

शोध के उद्देश्य –

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की उपलब्लियों का अध्ययन करना।
- शोध के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत करना।

शोध प्रवधि – किसी भी समस्या एवं विषय के अध्ययन के लिये विभिन्न सूचनाओं एवं तथ्यों की आवश्यकता होती है जिन्हें विभिन्न विधियों से संग्रहित करना होता है प्रस्तुत शोध पत्र में विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध प्रवधि का मुख्यत: उपयोग किया गया है प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है यद्यपि प्राथमिक समंकों का भी उपयोग किया गया है। इनके माध्यम से ही जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है। इस हेतु शोधार्थी द्वारा शोध कार्य में प्रकाशित समंकों के अंतर्गत जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की वार्षिक प्रतिवेदनों एवं लेखाविवरणों, जिला सांख्यिकी समंकों, पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों, संदर्भित पुस्तकों को एकत्र किया गया है तथा अप्रकाशित समंकों को बैंकिंग व्यवसाय में संलग्न अधिकारियों, कर्मचारियों तथा क्षेत्र विशेष में अनुभव रखने वाले व्यक्तियों से वार्तालाप के माध्यम से एकत्रित किया गया है।

शोध विषय के अध्ययन की सीमाएं –

- इस शोध अध्ययन के लिये सीमित अवधि के समंकों का प्रयोग किया गया है।
- इस शोध अध्ययन के लिये द्वितीय समंकों का उपयोग किया गया है।
- द्वितीय समंकों की विश्वसनीयता अंकेक्षण पर निर्भर करती है।

शोध विषय के अध्ययन का क्षेत्र – मैंने अपना शोध कार्य का अध्ययन क्षेत्र जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति का विश्लेषण तक सीमित रखा है, अध्ययन के लिये कुछ सीमाएं निश्चित करना पड़ती है और वहीं अध्ययन का क्षेत्र कहलाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में विगत 7 वर्षों में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति को दर्शाया गया है।

तालिका (देखे अगले पृष्ठ पर)

जिला सहकारी केन्द्रिय स्थिति का विश्लेषण – अंशपूंजी – अंशपूंजी में लगातार वृद्धि हुई है। बैंक में वर्ष 2006-07 में अंशपूंजी 1307.75 लाख रू. की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुये वर्ष 2012-13 में 3658.70 लाख रू. हो गई है। जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 179.77 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

कार्यशील पूंजी – कार्यशील पूंजी में तेजी से वृद्धि हुई है बैंक में वर्ष 2006-07 में कार्यशील पूंजी 21437.91 लाख रू. की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2012-13 में 74464.64 लाख रू. हो गई है जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 247.35 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

लाभ – वर्ष 2011-12 को छोड़कर लाभ में कमी आयी है, बैंक में वर्ष 2006-07 में लाभ 644.64 लाख रू. था जो निरन्तर प्रतिवर्ष कम होते हुए वर्ष 2012-13 में 418.13 लाख रू. हो गया। जिसमें वर्ष 2006-07 की

तुलना में 35.14 प्रतिशत की कमी हुई हैं।

ऋण – ऋण वितरण में लगातार वृद्धि हुई है बैंक में वर्ष 2006-07 में 10421.37 लाख रू. ऋण प्रदान किया था जो निरन्तर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2008-09 को छोड़कर वर्ष 2012-13 में 51533.54 लाख रू. हो गया जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 394.50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

वसूली – बैंक में वर्ष 2006-07 में 10221.35 लाख रू. की वसूली अर्जित की थी जो निरंतर प्रतिवर्ष बढ़ते हुए वर्ष 2008-09 को छोड़कर वर्ष 2012-13 में 34951.88 लाख रू. की वसूली अर्जित की गई है जिसमें वर्ष 2006-07 की तुलना में 241.95 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति अच्छी है बैंक की अंशपूंजी एवं कार्यशील पूंजी में निरंतर तेजी से वृद्धि हुई है जो इस बात की प्रतीक है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित की आर्थिक स्थिति अच्छी है बैंक के लाभों में लगातार कमी आई है जो बैंक की भावी योजनाओं के क्रियान्वयन में बाधक सिद्ध हो सकती है। बैंक की ऋण प्रदान करने की क्षमता में लगातार वृद्धि हुई है तथा वसूली को अर्जित करने में भी वृद्धि हुई है। अत: अध्ययन से स्पष्ट है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. राजीव कुमार, कम्पनी लेखांकन, अर्जुन पब्लिकेशन हाउस, 2011
2. चन्द्रेश भार्गव, बैंकिंग प्रणाली
3. जिला विकास पुस्तक -2011, जिला सांख्यिकी कार्यालय विदिशा म. प्र.।
4. 92 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2006-07 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
5. 93 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2007-08 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
6. 94 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2008-09 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
7. 95 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2009-10 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
8. 96 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2010-11 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
9. 97 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2011-12 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
10. 98 वां वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2012-13 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा।
11. समाचार पत्र दैनिक भास्कर। 20/5/2013

तालिका

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की कुल अंशपूंजी कार्यशील पूंजी, लाभ, ऋण एवं वसूली (वर्ष 2005-06 से वर्ष 2011-12 तक)

राशि लाख रूपये में

वर्ष	अंश पूंजी	कार्यशील पूंजी	लाख	ऋण	वसूली
2006-07	1307.75	21437.91	644.64	10421.37	10221.35
2007-08	1326.99	24943.47	411.83	24532.72	24759.51
2008-09	1323.35	28337.65	312.02	13145.90	9223.44
2009-10	1847.78	34583.69	357.84	22595.75	19201.06
2010-11	2178.34	43533.52	228.85	26896.26	19773.23
2011-12	2429.84	50540.68	782.79	28877.76	25600.09
2012-13	3658.70	74464.64	418.13	51533.54	34951.88

(स्त्रोत - वार्षिक प्रतिवेदन जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, विदिशा वर्ष 2006-07 से वर्ष 2012-13)

****

ग्राम स्वराज बनाम रामराज्य (म.प्र. के परिप्रेक्ष्य में)

डॉ. प्रमोद भारतीय *

प्रस्तावना – राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने विकेन्द्रीकरण की सार्थकता को महसूस किया और उन्होंने अहिंसात्मक समाज की व्याख्या करते हुए कहा था 'ऐसा समाज असंख्य गॉवों का बना होगा उसका फैलाव एक के ऊपर एक के ढंग का नहीं, बल्कि लहरों की तरह एक के बाद एक के रूप में होगा, जहॉ ऊपर की तंग चोटी को नीचे पाये पर खड़ा रहना पड़ता है, उसमें तो समुद्र की लहरों की तरह जीवन एक के बाद एक घेरे की शक्ल में होगा और व्यक्ति इसका केन्द्र होगा। बाहर का घेरा अपनी सत्ता और शक्ति का उपयोग भीतरी घेरे को कुचलने में नहीं करेगा, बल्कि उसके भीतर के सब लोगों को बल देगा और स्वयं उनसे बल ग्रहण करेगा'

'गॉधीजी के सपनों का भारत' धारणा को साकार करने के लिए ग्राम स्वराज के क्रियान्वयन पर बल दिया गया। पंचायती राज के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर ग्रामीण अंचलों को विभिन्न योजनाओं से लाभान्वित करने तथा ग्रामवासियों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने का प्रयास किया गया। **गॉधीजी कहा करते थे कि '** शहरी विकास निर्माण में गॉव रक्त (सीमेंट) की भॉति है। ग्रामीण रक्त शहरी धमनियों में प्रवाहित होता है, अत: शहरों द्वारा इन ग्रामीणों के रक्त शोषण को रोका जाना चाहिये और यह तब संभव है जब गॉवों (धुरी) को विशाल देश (पेड़) के विकास हेतु मजबूत (सत्ता) भागीदारी प्रदान कही जाये।'

एक स्वतंत्र विकेन्द्रीकृत भारत गॉधीजी का राजनीतिक आदर्श था। सत्ता के विकेन्द्रीकरण के उद्देश्य से वे भारत में 'पंचायती राज' के पक्षधर थे। पंचायत राज एवं उसकी स्थापना का महत्व उनके इन शब्दों से स्पष्ट होता है 'अगर भारत के प्रत्येक गॉव में पंचायत राज कायम हुआ तो अपनी तस्वीर की सच्चाई को साबित कर सकूंगा, जिसमें सबसे पहला एवं सबसे आखिरी' दोनों बराबर होगें अथवा यह कहिए कि वहॉ न कोई पहला होगा और न आखिरी'

महात्मा गॉधी ने कहा – 'गॉव वालों का उद्धार तो पंचायत राज द्वारा ही हो सकता है। पंचायत भारत की प्राचीनतम संस्था है, इसलिए उसका फिर से प्रचलन देश में कोई नई बात नहीं होगी'जैसे पिण्ड में ब्रह्माण्ड है, ऐसे देहात में हिन्दुस्तान है' एस.के.डे. ने पंचायत राज को व्यक्ति तथा ब्रह्माण्ड के मध्य एक सेतु स्थापित करने वाली संस्था के रूप में प्रतिष्ठित किया है। उन्होंने राष्ट्रीय संदर्भ में ग्राम सभा से लोकसभा तक लोकतंत्र की कल्पना की है। उनका कहना है कि एक व्यक्ति, व्यक्ति का परिवार,परिवार से अनेक परिवार, अनेक परिवारों से गॉव, गॉव से देश और देशों से विश्व सृजन हुआ है। अत: विश्व एक परिवार के रूप में विकसित हो सकता है और इसमें पंचायती राज एक महती भूमिका निभा सकता है।

शोध का उद्देश्य –

1. क्या ग्राम स्वराज से रामराज्य का सपना साकार हुआ है ?
2. क्या ग्राम स्वराज केवल राजनीतिक स्वतंत्रता मात्र है ?
3. पंचायतों द्वारा ग्राम विकास का कार्य स्वयं तय किया जाना, उनके ऊपर से आदेश नहीं थोपे जाने चाहिए।
4. राज्य सरकार द्वारा ग्राम पंचायत के वित्तीय संसाधनों में वृद्धि।
5. गॉव के झगड़े और विवाद थाने और न्यायालय के बजाऐं पंचायतों द्वारा ही सुलझाये जाए।
6. पंचों द्वारा भ्रष्ट आचरण करने पर वापस बुलाने का अधिकार एवं उसके खिलाफ कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए।
7. महिलाओं को शिक्षित एवं जागरूक करना तथा उनकी सुनिश्चित भागीदारी को सफल बनाना।
8. पंचायतों द्वारा नियमित कार्यालय खोलना।
9. ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रति जन जागृति पैदा की जाये।
10. महिला सरपंच पति/पुत्र परम्परा को समाप्त करना।
11. कार्यों एवं समस्याओं का मूल्यांकन समय पर करना।

वित्तीय अधिकार से संबंधी सुझाव –

1. करों की वसूली निष्पक्षतापूर्ण, कठोरता व दृढ़ता से की जाए तथा करों का निर्धारण वर्तमान मूल्यों के आधार पर करना।
2. पंचायत स्तर पर साप्ताहिक बाजार बढ़ाने की व्यवस्था।
3. पशु मेले से आय में वृद्धि तथा रेती, पत्थर से रायल्टी वसूली जाये।
4. पूँजीपतियों से प्राप्त दान,अंशदान को सार्वजनिक सुविधाओं में लगाना। गॉधीजी ने कहा था कि 'यदि गॉव नष्ट होते है तो भारत नष्ट हो जायेगा'

ग्राम स्वराज की समस्याएँ –

1. पंचायतों के चुनाव में गॉव का विभाजन जाति,समाज,धर्म के आधार पर होता है।
2. नवीन व्यवस्था में नौकरशाही महत्वपूर्ण बनी हुई है।
3. स्थानीय संस्थाएँ वित्तीय दृष्टि से आत्म निर्भर नहीं है।
4. शिक्षा के अभाव में योजनाओं का लाभ लेना कठिन होता है।
5. अशिक्षित होने से महिलाओं के कर्त्तव्य का निर्वहन नहीं करने पर अप्रत्यक्षत: भ्रष्टाचार पनपता है।
6. पंचायती राज की असफलता का कारण दलगत राजनीति है।
7. जातिवाद धर्म, गरीबी,भ्रष्टाचार, राजनीति अपराधीकरण की विषैली गैस, देहातों में पहुँच चुकी है। अत: ग्राम स्वराज के लिये वातावरण तैयार करना आवश्यक है।

ग्राम स्वराज की सार्थकता हेतु सुझाव –

1. चुनाव दलगत आधार पर नहीं होना चाहिए, हर वर्ग का योग्यता अनुसार प्रतिनिधित्व होना चाहिए।

* विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहगढ़, जिला – राजगढ़ (म.प्र.) भारत

2. चुनाव में पंच/सरपंच उत्तम आचरण,स्वच्छ व सच्चरित्रता योग्यताधारी हो।
3. पंचों की संपत्ति की सार्वजनिक घोषणा अनिवार्य की जाऐं।

मुख्यमंत्री श्री दिग्विजयसिंह द्वारा महात्मा गॉधी के ग्राम स्वराज की कल्पना के अनुरूप लोकशाही को सच्चे अर्थो में स्थापित करने की यह एक और पहल थी। सरकार के इस कदम से राजनीति से लोकनीति की और बढ़ने की पदचाप सुनाई दे रही है।

ग्राम स्वराज का महत्व – 'राजनीति दृष्टि से पंचायती राज ने भारतीय भूमि में लोकतंत्र के बीजारोपण का काम किया है और एक औसत नागरिक को पहले से अधिक अपने अधिकारों के प्रति सजग बनाया है। प्रशासनिक दृष्टि से पंचायती राज ने कुलीन नौकरशाही वर्ग और जनता के बीच की खाई को पाटा है। सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से इसने नया नेतृत्व पैदा किया है। यह न केवल आयु की दृष्टि से अपेक्षाकृत कम उम्र का है,बल्कि दृष्टिकोण में अधिक आधुनिक और सामाजिक परिवर्तनों का पक्षधर भी है। पंचायती राज ने ग्रामीण जनता के मन में विकास की भावना जागृत करने में मदद की है। कल्याणकारी राज्य को सफल बनाने के लिये पंचायतों का होना आवश्यक है, क्योंकि पंचायतों को सारी शासन प्रणाली की बुनियादी इकाई माना गया है, क्योंकि पंचायत प्रणाली स्वावलंबी और लोकतांत्रिक है।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में, सामाजिक एवं आर्थिक तथा पश्चिम की चकाचौंध से इस आस्था एवं विश्वास पर थोड़ा आवरण जरूर चढ़ गया और वह विस्मृत सी प्रतीत हो रही लेकिन वह मृत नहीं हुई, केवल आवरण हटाने की ही जरूरत है। अत: परिवर्तित परिवेश में पंच परमेश्वर की अवधारणा भले ही स्वप्निल प्रतीत होती है, लेकिन वर्तमान भारत शासन द्वारा पंचायत व्यवस्था को पुनर्जीवित कर पंचों को जो महत्व एवं अधिकार प्रदत्त किये जा रहे है, उससे लगता है कि यदि निष्ठा, ईमानदारी एवं पूर्ण सक्षमता से इस दिशा में प्रयास किये जाय तो वह दिन दूर नहीं, जब :

1. गॉधीजी के सपनों का भारत बन पायेगा ?
2. आर्थिक विषमता समाप्त होगी ?
3. भारत को भावी परिपक्व और कर्मठ नेतृत्व मिल पायेगा ?
4. ग्रामीण भारत की समस्याओं का समाधान ढूंढेगा ?
5. सत्ता का हस्तान्तरण कुछ लोगों के हाथ से बहुतों के हाथ में होने से आम जन को लाभ होगा ?
6. केन्द्र एवं राज्य सरकार स्थानीय समस्याओं के भार से मुक्त हो सकेगी?
7. लोकतंत्र की सफलता में महत्वपूर्ण आयाम बन पायेगी ?

उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु इस शोध आलेख को प्रस्तुत किया जा रहा है।

मध्यप्रदेश में ग्राम स्वराज की स्थापना – संविधान के 73 वें संशोधन अधिनियम को 23 अप्रैल 1993 को सम्पूर्ण देश में लागू किया गया तथा सभी राज्यों को एक वर्ष के अन्दर इस पर अपने कानून बनाने के लिए कहा गया। म.प्र. ने 24 जनवरी 1994 को इसके परिपालन में अधिनियम बनाया जिसका नाम ' म.प्र. पंचायत राज अधिनियम 1993' रखा गया।

इस अधिनियम में कुल 15 अध्याय है। इस अधिनियम के अनुसार त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई :-

1. प्रथम स्तर – ग्राम पंचायत
2. द्वितीय स्तर – जनपद पंचायत
3. तृतीय स्तर – जिला पंचायत

तीनों स्तर पर पंचायतों को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई तथा अपने अधिकारों का प्रयोग करने के लिए पर्याप्त संवैधानिक सुरक्षा प्रदान की गई। म.प्र. के लिए यह गौरव की बात है कि संविधान के 73वें, 74वें संशोधन के बाद यह देश का पहला राज्य है, जिसने सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर त्रिस्तरीय पंचायत राज्य के माध्यम से प्रजातंत्र को मजबूत बनाया। ग्राम और नगर स्वराज को सफलता से लागू करने का श्रेय म.प्र. को है।

1. पंचायतों में स्थायित्व लाने हेतु जनचेतना शिविर एवं कार्यशालाओं का आयोजन।
2. प्रशासनिक अधिकारियों को दबाव से मुक्त किया जाये, तथा स्वतंत्र न्याय अधिकरण की स्थापना की जाये।
3. राजनीतिक दलों को दलगत राजनीति से ऊपर उठकर मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता सिद्ध करनी होगी।
4. सार्वजनिक वित्त के दुरूपयोग पर रोक एवं भ्रष्टाचारी को लोकपाल के माध्यम से कड़ी सजा का प्रावधान।
5. रोजगार के साधनों का विकास एवं लघु उद्योग को प्रोत्साहन।
6. राजनीति में अपराधी तत्वों पर रोक।

ग्रामीण विकास की अनिवार्यता है **'पंचायतराज'**। पंचायत को भारत के विकास की रीढ़ कहा जाये तो अनुचित नहीं होगा। **पंडित जवाहरलाल नेहरू का विचार था कि '**गॉवों के लोगों को अधिकार सौंपना चाहिए, उनको काम करने दो चाहे वे हजारों गलतियाँ करें, इससे घबराने की जरूरत नहीं है, पंचायतों को अधिकार दो'

लार्ड ऐक्टन का कथन है कि – सत्ता व्यक्ति को भ्रष्ट करती है तो पूर्ण सत्ता व्यक्ति को पूरी तरह भ्रष्ट करती है

भारत के विकास की दिशा दिल्ली से नहीं, बल्कि पंचायतों की गति से निर्धारित होनी चाहिए। महात्मा गॉधी ने अपने राजनैतिक विकेन्द्रीकरण में गॉवों को अपने कार्यो की व्यवस्था के लिये स्वत: कार्य करने की स्वतंत्रता की बात की है। ग्राम स्वयं में संपूर्ण इकाई के रूप में स्वावलंबी बने एवं वर्तमान औद्योगीकरण में मशीनें मनुष्य को अपना दास बनाने का साहस न कर सके, बल्कि स्वयं मनुष्य ही उनका स्वामी बना रहे।

गांधी दर्शन के अनुसार 'रामराज्य की कल्पना के तहत् ग्राम पंचायत की व्यवस्था गांधी जी का सपना था, प्रजातंत्र की सफलता के लिये स्थानीय निकायों की सम्पूर्ण रूप से व्यवस्था आवश्यक है'

गॉधीजी ने यंग इण्डिया में लिखा था कि ' मैंने किसी नये सिद्धान्त की सृष्टि न करके प्राचीन सिद्धान्तों को ही नवीन ढंग से दुहराने की चेष्टा की है।' गॉधीजी ने लिखा है कि मेरे सपनों के स्वराज्य में जीवन के लिए आवश्यक सामग्री धनी तथा निर्धन को समान रूप से प्राप्त होगी और किसी के लिए भी भोजन तथा वस्त्र का अभाव नहीं रहेगा।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि ग्राम स्वराज को प्रभावी बनाने के लिये राजनीतिक इच्छा शक्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस बात को समझा जाना चाहिए कि जिले को प्रशासन के तीसरे स्तर के रूप में विकसित करके ही लोकतंत्रात्मक विकेन्द्रीकरण को सफल बनाया जा सकता है। म.प्र. में पंचायती राज का यह नया सजीव और कार्यकारी स्वरूप महज एक प्रशासकीय व्यवस्था नहीं है, यह एक बड़ा बदलाव है। ऐसा बदलाव जो नीचे की जड़ों से शुरू हुआ है। इससे प्रदेश में एक और जहाँ निचले या गॉव के स्तर पर लोकतंत्र मजबूत हुआ है, वहीं लोकतंत्र लोगों के द्वार तक भी पहुँचा है। इससे लोगों को जनतांत्रिक प्रक्रिया में शामिल होने का मौका मिला है, दबे एवं पिछड़े वर्गो को आवाज मिली है। यही है ग्राम स्वराज्य।

गॉधीजी ने कहा था – ' जब अपने दोष दिखने लगते है, तभी से उत्कर्ष का प्रारंभ होता है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. पुखराज जैन एवं बी.एल. कड़िया - भारतीय शासन और राजनीति।
2. डॉ. पुखराज जैन - राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त।
3. डॉ. एम.पी.राय - भारतीय राजनीति एवं शासन।
4. डॉ.जे.एल.बोस - भारतीय शासन और राजनीति।
5. डॉ. शंकरदयाल शर्मा - चेतन स्त्रोत।
6. गॉधी मोहनदास - मेरे सपनों का भारत।
7. हर्ष देव मालवीय - जन संपर्क संचालनालय म.प्र.शासन।
8. शर्मा ब्रह्मदेव - नीति मार्ग विकेन्द्रीकरण का असली चेहरा।
9. भारतीय सविंधान अनुच्छेद 40।
10. कलोड़े जा.गो.आदर्श ग्राम रचना अर्थात ग्राम पंचायत मार्ग दर्शिका - 1955 पृ. 12।
11. म.प्र. मे नया पंचायत राज खुला है - 1994 म.प्र. शासन पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग म.प्र. पृ. 521।
12. म.प्र. में नया पंचायत राज - पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय (म.प्र.)।
13. म.प्र. पंचायिका - म.प्र. माध्यम, अरेरा हिल्स भोपाल जून 1998
14. ग्रामीण विकास न्यूज लैटर - ग्रामीण विकास मंत्रालय कृषि भवन नई दिल्ली जुलाई 1993।
15. कुरूक्षेत्र मई 1997 - ग्रामीण विकास मंत्रालय कृषि भवन नई दिल्ली
16. भारत 1999 वार्षिक संदर्भ ग्रंथ प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली ।
17. जन संपर्क संचालनालय म.प्र. शासन।
18. दिवाकर क.रा.गॉधीजी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव स. 1996।
19. इण्डिया टुडे, इण्डियन एक्सप्रेस, सर्वोदय टाइम्स ऑफ इण्डिया विधायिनी।
20. गॉधी एम.के. 'हरिजन' 28 जुलाई 1946 पृ. 51।

****

ग्रामीण आर्थिक जीवन और पंचायती राज

डॉ. विमला जैन *

प्रस्तावना – भारत वर्ष ग्राम प्रधान राष्ट्र है। यहां की अधिकतर जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण समाज की आर्थिक संरचना वहाँ के परम्परागत व्यवसाय, जीवन स्तर, कृषि, पशुपालन तथा स्थानीय बाजार एवं जन–जीवन की आवश्यकता पूर्ति पर निर्भर करती है। गाँवों के आर्थिक सशक्तिकरण का मूल वहाँ की पंचायतें है। पंचायतें लोकतंत्र का स्वरूप ग्रामीण आर्थिक जीवन की उन्नति में मील का पत्थर है।

योजना कमीशन के शब्दो में 'ग्रामों की उन्नति पूर्ण रूप से इन बात पर अवलम्बित है कि ग्राम में कोई ऐसा क्रियाशील संगठन हो जो प्रत्येक परिवार तक पहुँचे और समाज के सभी भागों, यहाँ तक कि दुर्बल वर्गो को भी उत्पादन कार्य में तथा अन्य कार्यक्रमों में लगाये और सरकारी सहायता से चलाई जाने वाली ग्राम की व्यापक योजनाओं में ग्राम के दुर्बल वर्गो, भूमिहीन मजदूरों की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखा जावे। क्योकि ऐसा देखने में आया है कि सरकारी सहायता का अधिक लाभ अब तक गाँवो में सम्पन्न वर्गो ने अधिक उठाया है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए सभी पंचायतों को विभिन्न स्थानीय कार्यक्रमों से सम्बद्ध करने के लिए अधिक उत्तरदायित्व सौपें जाने चाहिए। भारत में सफल लोकतंत्र ने यह सिद्ध कर दिया है कि पंचायतें ग्रामीण आर्थिक जीवन का समग्र विकास करने में पूरी तरह सक्षम है। सर चार्ल्स मेटकाफ ने तो हमारे यहां की व्यवस्था देखकर पंचायतों को ऐसे छोटे–छोटे गणराज्य कहा था जो स्वयं में आत्मनिर्भर थे। गाँधी जी ने भी आत्मनिर्भर भारत के लिए गाँव गणराज्य की बात कही है।

भारत में पंचायत राज व्यवस्था संविधान के 73 वे संशोधन के माध्यम से प्राप्त हुई है तथा पंचायत राज को संवैधानिक दर्जा मिला। बाद के वर्षो में ग्रामीण सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में सुधार के दृष्टिगत म.प्र. में पंचायत राज अधिनियम 1993 बनाया गया। त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था में ग्राम पंचायत, जनपद और जिला पंचायतों को ग्रामीण विकास एवं जन – कल्याणकारी नीतियों के क्रियान्वयन की महत्ती जवाबदारी दी गई है।

ग्रामीण आर्थिक जीवन में पंचायती राज की भूमिका पर यदि हम विचार करें तो यह सर्वमान्य तथ्य प्रकट होता है कि ग्रामीण आबादी के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में पंचायतों की अपनी अहम भूमिका है।

ग्राम पंचायते गाँव के सर्वांगिण विकास हेतु शिक्षा व्यवस्था का संचालन करती है। जनकल्याण्कारी शिक्षा मानवीय चेतना का विकास करती है। व्यक्ति में अच्छे बुरे का ज्ञान शिक्षा के माध्यम से ही आता है। शिक्षा व्यक्ति का विवेक जागृत करती है तथा अपना जीवन स्तर उन्नत करने के लिए प्रेरित करती है। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति में जीवन मूल्यों का बीजारोपण होता है।

ग्राम स्तर पर गठित पंचायते अपने प्रदत्त संवैधानिक अधिकारों के माध्यम से गाँव में ग्रामोपयोगी शिक्षा तंत्र की मजबूत व्यवस्था करती है। शिक्षा जागरूकता के नए द्वार खोलती है। जागरूक व्यक्ति आर्थिक सशक्तिकरण के लिए निरंतर प्रयासरत रहता है।

हमारे कस्बों में जनमानस का मुख्य व्यवसााय कृषि अथवा कृषि आधारित है। पूरे परिवार के परिवार कास्तकारी कार्यो में लगे रहते है। ग्राम पंचायतें सामुदायिक आधार पर कृषि कार्यो का सम्पादन करवाकर उन्नत खेती का सुत्रपात करती है। कृषि उपज का सुमचित बाजारीकरण तथा उसके मूल्य आदि की उचित व्यवस्था में कृषक पंचायतों से सहायता ले सकता है। परिणामस्वरूप परिवार की आय में वृद्धि होती है तथा आर्थिक पिछड़ापन में सुधार की सम्भावना बन पड़ती है।

कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में सिंचाई एक आवश्यक घटक है। पंचायतें अपने स्तर पर विभिन्न जल स्त्रोतों का निमार्ण करवाती है जिनका उपयोग सिंचाई आदि में किया जाता है। ग्रामीण जन जीवन से सम्बधित बेरोजगारी के उन्मूलन हेतु पंचायतें अपने नगर में गृह उद्योगों को बढावा देने के लिए सतत प्रयत्नशील है। लघु एवं गृह उद्योगों के विकास हेतु पंचायतें आधारभूत बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध करवाती है। परम्परागत उद्योग धन्धों के लिए भी विभिन्न प्रकार की सहायता मुहैया करवाने का प्रावधान है।

पशुपालन ग्रामीण समाज का मुख्य व्यवसाय है तथा आजीविका का प्रमुख साधन भी है। पंचायती राज व्यवस्था में इस व्यवसाय को पूरी तरह संरक्षण दिया जाता है। पशुओं के लिए चारागाह तथा दुग्ध आदि के मार्केटिंग के लिए सहकारी व्यवस्था के निर्माण एवं संचालन में पूरी तरह सहायता प्रदान की जाती है। पशुओं के गर्माधान आदि के लिए भी ग्राम पंचायतें मदद करती है। पशुओं के गोबर से निर्मित खाद तथा गोबर गैस संयत्र के निर्माण में भी प्रोत्साहन का प्रावधान रहता है।

ग्रामीण आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को समुन्नत करने के दृष्टिगत पंचायत स्तर पर शासन द्वारा भी अनेक योजनाऐं प्रारम्भ की गई है जिनमें प्रमुख रुप से **'मुख्यमंत्री ग्रामीण आवास मिशन'** है जिसके अंतर्गत हितग्राही को पात्रतानुसार स्वयं के आवास निर्माण हेतु ऋण पुनर्भुगतान क्षमता के आधार पर बैंक द्वारा दिया जाता है।

ग्रामीण कारीगरों के जीवन स्तर में सुधार हेतु शासन स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में कम लागत के आवास निर्माण की तकनीकी को प्रोत्साहित करने के लिये उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है। हितग्राहियों को गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम/ राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन के माध्यम से आजीविका गतिविधियों से संबद्ध किया जाता है।

पंचायती राज व्यवस्था में पंचायतें ग्रामीण जन–जीवन के आर्थिक एवं सामाजिक विकास हेतु स्वास्थ्य, चिकित्सा, यातायात, पेयजल, न्याय, विद्युत, मनोरंजन, मातृत्व एवं बाल कल्याण आदि लोक कल्याणकारी प्रकल्पों को अपनाएँ हुए है। अत: कहा जा सकता है कि पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण आर्थिक जीवन के उन्नयन के अपने उद्देश्य में सफल हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र. पंचायती राज अधिनियम 1993
2. नवीन शोध संसार, आई.एस.एस.एन. 2320–8767
3. योजना पत्रिका।
4. कुरूक्षेत्र।
5. पत्रिका।
6. इण्डिया टुडे।
7. नवभारत टाईम्स।
8. दैनिक भास्कर।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र) भारत

ग्रामीण विकासीय कार्य में स्थानीय नेतृत्व की भूमिका का अध्ययन (म.प्र. के बालाघाट जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. आरती व्यास * कल्पना चौरे * *

शोध सारांश –विकास को वेद और उपनिषद् काल में ग्रामीण प्रशासन, विकास एवं राजस्व संग्रह के लिए ग्रामीण प्रशासन को प्रधानता दी गई थी। 73वें संविधान संशोधन के पश्चात देश के लोकतांत्रिक इतिहास में पहली बार स्थानीय स्तर की निकायों को संवैधानिक दर्जा दिया गया जिसके फलस्वरूप आज पंचायतें गाँव के विकास हेतु सबसे सशक्त माध्यम बन कर उभरी है। गाँवों के विकास हेतु (केन्द्र एवं राज्य) शासन द्वारा अनेक योजनाऐं चलाई जा रही हैं, जिनके प्रभावी क्रियान्वयन की जिम्मेदारी स्थानीय नेतृत्व की है।)

शब्द कुंजी – गाँव, स्थानीय, नेतृत्व, विकास, शिक्षा

प्रस्तावना – भारत गाँवों का देश है। भारत का समुचित विकास गाँवों के विकास पर ही निर्भर है। हमारी कुल जनसंख्या का 3/4 भाग (75% जनसंख्या) गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण विकास का दर्शन नवीन नहीं बल्कि पौराणिक है, भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास पूर्णत: ग्रामीण विकास पर ही आधारित है। ग्रामीण विकास को समझने से पहले विकास को समझना आवश्यक है। जिस प्रकार कुछ देशों को अन्य देशों की अपेक्षा अधिक विकसित कहा जाता है। अधिक विकसित देशों की तुलना में अल्पविकसित देशों की प्राय: चर्चा की जाती है। चूंकि विकास एक सापेक्षित संकल्पना है, इसलिए विकास की तुलना करने के लिए कुछ मापदण्ड होने आवश्यक हैं, जैसे व्यापक निर्धनता, बेरोजगारी और अल्परोजगार को अधिकता,

- आय का निम्न स्तर तथा सीमित लोगों में आय का संकेन्द्रीकरण
- उत्पादकता या उत्पादिता का निम्न स्तर तथा पिछड़ी हुई प्रौद्योगिकी
- पोषण, स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, कल्याण आदि का घटिया स्तर,
- स्त्रियों का निम्न स्तर और
- प्राथमिक क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भरता तथा औद्योगिकीकरण का निम्न स्तर आदि।

हम अपनी ग्रामीण आर्थिक विपन्नता के प्रति न्यूनाधिक मात्रा में सदैव से ही जागरूक रहे हैं। विकास को वेद और उपनिषद् काल में ग्रामीण प्रशासन, विकास एवं राजस्व संग्रह के लिए ग्रामीण प्रशासन को प्रधानता दी गई थी। ब्रिटिश काल में इस कार्य का लाभ हुआ, लेकिन 20वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में ग्रामीण क्षेत्र के विकास में कई अग्रणी प्रयोग किये गए, जिनमें मुख्य थे श्री रविन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा 'ग्राम श्री' तथा राष्ट्र पिता महात्मा गांधीजी द्वारा ग्राम स्वावलंबन।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में ग्रामीण समाज के सर्वांगीण विकास के लिए सन् 1951 से देश में आर्थिक नियोजन युग का सूत्रपात हुआ, जिसके माध्यम से विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू किया गया। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में तीव्र ग्रामीण विकास के उद्देश्य को उचित प्राथमिकता दी जा रही है। अनेक वित्तीय कार्यक्रम अपनाए गए। ग्रामीण विकास से हमारा तात्पर्य मूल रूप से तीन प्रमुख मुद्दों से है। जिनमें पहला है – यहाँ व्याप्त गरीबी को दूर करने हेतु रोजगार के अवसर पैदा करना।

दूसरा है – गाँवों में शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली तथा आवास जैसी मूलभूत सुविधाओं को विकसित करना और

तीसरा है – देश के शासन में ग्रामीणो की भागीदारी सुनिष्चित करने हेतु उनमें चेतना और जागरूकता का संचार करना। इस प्रकार की व्यवस्था से ही गाँवों के लोगों का सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास होना संभव है।

ग्रामीण विकास से आशय ग्रामीण जीवन को उन्नत बनाना है। ग्रामीण विकास के अन्तर्गत कृषि, ग्रामीण उद्योगों, शिक्षा एवं सेवाओं का विकास, सम्मिलित है। इसमें नवीन उपकरणों का प्रयोग, विपणन एवं सुधार तकनीकि ज्ञान में वृद्धि, परिवार नियोजन एवं सवास्थ्य सेवाएँ, आर्थिक एवं सामाजिक अधोसंरचना का निर्माण, भूमिहीनों के लिए उचित मजदूरी, मकान बनाने के लिए भूमि, ग्राम नियोजन, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, साक्षरता संचार आदि शामिल है।

ग्रामीण क्षेत्रों में निम्न आय वर्ग को ग्रामीण योजनाओं का प्रमुख लाभार्थी बनाना ग्रामीण विकास की प्रमुखता है। ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए चलाई जा रही योजनाओं का लाभ गाँव की गरीब जनता तक पहुंचाने का कार्य व पूर्ण विकास हेतु स्थानीय नेतृत्व करने वाले प्रतिनिधियों द्वारा कार्य किये जा रहे हैं।

हमारे देश में अति प्राचीन काल से ही स्थानीय नेतृत्व की व्यवस्था मौजूद रही है। यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि स्थानीय नेतृत्व की भूमिका क्या है ? ग्रामीण विकास में इनकी भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है।

वास्तव में नेतृत्व व्यक्ति की मानसिक शारीरिक विलक्षणता है जो दूसरों को अपने व्यवहार से प्रभावित करते हैं, लक्ष्यों को हासिल करने की बेहतर क्षमता होती है। यही कारण है कि सम्पूर्ण जन समुदाय नेतृत्वों की नीतियों एवं सिद्धांतों से प्रभावित होते हैं। नेतृत्व युक्त व्यक्ति समाज के हितों की पूर्ति करने चहुदिशाओं में विकास करने एवं विकास के रास्ते में आने वाली बाधाओं को दूर करने मे सक्षम होता है। यह जन समुदाय के साथ ही राज्य एवं शक्ति को प्रभावित करता है।

ग्रामीण विकास में स्थानीय नेतृत्व की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ग्रामीण क्षेत्र की दयनीय दषा को सुधारने हेतु 15 अगस्त 1947 को भारत की आजादी के बाद देश में स्थानीय शासन/नेतृत्व का नवयुग प्रारंभ हुआ। ग्रामीण विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कई समितियाँ व संस्थाओं

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

का संगठन किया गया। इसके बावजूद भी भारतीय ग्रामीण समाज व्यवस्था के वह सोपान प्राप्त नहीं कर सका जो उसे राहत प्रदान करते।

इस कारण ग्रामीण क्षेत्रों के पूर्ण विकास हेतु सत्ता के विकेन्द्रीकरण की ओर भारत सरकार का ध्यान केन्द्रित हुआ। चूंकि आधुनिक समय में किसी भी लोक कल्याणकारी राज्यों का प्रशासन देश या राज्यो की राजधानियों से ही संचालित नहीं किया जाता, स्थानीय शासन/नेतृत्व करने वाले प्रतिनिधि भी प्रशासनिक कार्यों में हाथ बढ़ाती है। स्थानीय नेतृत्व या शासन का श्री गणेश सन् 1870 ई. के लार्ड मेमो प्रस्ताव के आधार पर लागू किया गया था। स्थानीय नेतृत्व के सदस्य स्थानीय जनता द्वारा चुने जाते हैं। स्थानीय नेतृत्व के कार्यों को दो भागों में रखा गया है। ऐच्छिक एवं अनिवार्य।

- **ऐच्छिक –** ऐच्छिक कार्य सदस्यों की मनोवृत्ति एवं जनता की मांग पर निर्भर करते हैं। उदा0 किसी एक समय विशेष में अधिकांश लोगों का झुकाव पार्कों को सुव्यवस्थित करना हो सकता है।
- **अनिवार्य –** अनिवार्य कार्य में उन सेवाओं को लेते हैं जो सामाजिक उपयोगिता के लिए आवश्यक है। उदा. पानी, बिजली, स्वास्थ्य आदि की सेवाएँ। स्थानीय नेतृत्व के दो क्षेत्र है शहरी एवं ग्रामीण।

तालिका क्रमांक 1

भारत में स्थानीय शासन/नेतृत्व के क्षेत्र

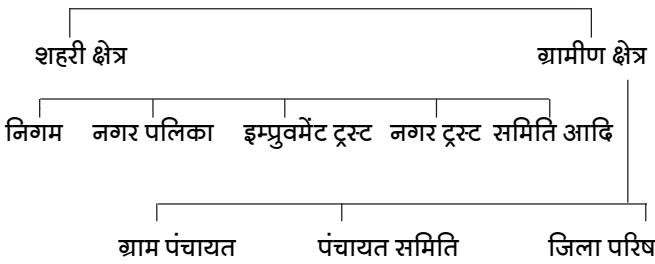

भारत में देहाती क्षेत्रों के विकास के लिए त्रिस्तरीय व्यवस्था लागू की गई है। जिनकी तीन मुख्य इकाईयाँ हैं – 1) ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, 2) विकास खण्ड स्तर पर पंचायत समिति एवं 3) जिला स्तर पर जिला परिषद्। सबसे निम्न धरातल पर ग्राम पंचायत है और सबसे ऊपर जिला परिषद्। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय नेतृत्व का ढांचा सीढ़ीनुमा है। इस प्रकार स्थानीय नेतृत्व के द्वारा देहाती भारत का पुनर्निर्माण करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस त्रिस्तरीय व्यवस्था को 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण' कहा जाता है। इस तरह ग्रामीण लोगों को स्वयं के द्वारा अपनी सामाजिक स्थिति को ऊँचा उठाने एवं शक्ति को प्रदर्शित करने का पूर्ण अवसर दिया जा रहा है। 73वें संशोधन अधिनियम 1992 पारित हुआ जिसे मध्यप्रदेश में 1993 से लागू किया गया।

उद्देश्य –

- विकास कार्य में स्थानीय नेतृत्व करने वाले प्रतिनिधियों कि भूमिका की सहभागिता को ज्ञात करना।
- ग्रामीण विकास में आने वाली बाधाओं को जानना।

परिकल्पनाएँ –

- शिक्षा के क्षेत्र में चलाये जा रहे कार्यक्रमों से ग्रामीण विकास में गुणात्मक परिवर्तन आ रहे हैं।
- ग्रामीण विकास में ग्रामीण गुटबाजी का प्रभाव प्रभावी होता है।

निर्देशन – बालाघाट जिले में कुल 6 तहसील है समस्त तहसील की ग्राम पंचायतों से निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या 434 हैं। तहसील अनुसार पुरूष व महिला निर्वाचित सरपंचों की संख्या को नीचे की तालिका में स्पष्ट किया गया हैं। तालिक से स्पष्ट है कि समस्त तहसील में पुरूष व महिला सरपंचों की संख्या अलग–अलग हैं। अत: प्रत्येक तहसील से 50 सरपंचों का चयन स्तरीत यादृच्छिक प्रतिनिधित्व निर्देशन प्रणाली के तहत किया गया हैं। जिले को 6 उपसमूहों में विभाजित कर प्रत्येक तहसील को एक 'स्तर' (स्ट्राटा) मानते हुए 20 पुरूष एवं 30 महिला सरपंचों का चयन प्रत्येक स्तर से किया गया हैं। इस प्रकार 120 पुरूष सरपंचों एवं 180 महिला सरपंचों कुल 300 सरपंचों को प्रतिचयन में सम्मिलित किया गया हैं। निदर्शन का आकार 300 हैं।

तालिका क्रमांक 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

- **तथ्यों का संकलन –**प्रस्तुत अध्ययन हेतु दो प्रकार के तथ्यों का संकल्प किया गया हैं प्राथमिक तथ्य एवं द्वितीयक तथ्य।
- **परिणाम एवं विवेचन–**

तालिका क्रमांक 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि 108 (36.00) प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त हैं। जबकि 67 (22.33) प्रतिशत उत्तरदाता प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त हैं। उच्चतर माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त उत्तरदाताओं का प्रतिशत 52 (17.34) है। 31 (10.33) प्रतिशत उत्तरदाता निरक्षर हैं एवं 22 (07.33) प्रतिशत उत्तरदाता केवल साक्षर हैं अर्थात् वे कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं हैं। तो स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त मात्र 20 (06.67) प्रतिशत उत्तरदाता ही हैं। इसी संदर्भ में यदि महिला उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति को देखें तो तालिका से स्पष्ट है कि 58 (32.22) प्रतिशत महिला उत्तरदाता माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त है एवं 45 (25.00) प्रतिशत महिला उत्तरदाता प्राथमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त है। उच्चतर माध्यमिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त महिला उत्तरदाताओं का प्रतिशत 27 (15.00) है। निरक्षर महिला उत्तरदाता 21 (11.67) प्रतिशत है। जबकि 18 (10.00) प्रतिशत महिला उत्तरदाता मात्र साक्षर हैं व स्नातक स्तर तक शिक्षा प्राप्त महिला उत्तरदाता मात्र 11(06.11) प्रतिशत हैं।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि निरक्षर उत्तरदाता कम हैं इससे यह पता चलता है कि स्थानीय नेतृत्व करने वाले शिक्षित प्रतिनिधियों की संख्या अधिक और निरक्षर प्रतिनिधि कम हैं। इसका कारण यह है कि शिक्षा को अब गंभीरता से लिया जा रहा है। वर्तमान शिक्षा पद्धति निर्धारित पाठ्यक्रम शिक्षा हेतु प्रत्येक स्तर पर दी जा रही छात्रवृत्ति अपनी ओर आकर्षित करने में सफल रही है। इसके अतिरिक्त एक विशेष तथ्य यह भी है कि जो भी थोड़ी बहुत संख्या उच्चतर माध्यमिक शिक्षा या उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों की है उन्हें आरक्षण के प्रावधानों के कारण कहीं न कहीं नौकरी प्राप्त हो जाती है एवं उनकी ग्रामीण राजनीति के प्रति कोई रूचि नहीं होती है।

तालिका क्रमांक 4 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका का विश्लेषण करने पर तथ्य यह बताते हैं कि राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत् समस्त विकासीय कार्य करवाये जाते हैं। जिनमें सामाजिक कल्याण का तत्व निहित हैं। स्थानीय प्रतिनिधियों के अनुसार जल संरक्षण, वृक्षारोपण, तालाबों की गाद निकालना, सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराना, तालाब एवं कूप खुदवाना आदि कार्य होते हैं। जिसके द्वारा गाँवों का विकास हो रहा है।

ग्रामीण गुटबाजी की स्थिति से संबंधित जानकारी – ग्रामीण अंचल में अकसर देखा गया है कि ग्रामीण गुटबाजी का दबाव पंचायतों पर बना रहता है इसके अन्तर्गत संबंधित आंकड़ों का विश्लेषण किया गया है।

तालिका क्रमांक 5
ग्रामीण विकास में ग्रामीण गुटबाजी की स्थिति

क्र.	स्थिति	पुरूष	महिला	योग
1	हाँ	101 (84.17)	152 (84.44)	253 (84.33)
2	नहीं	19 (15.83)	20 (11. 11)	39 (13.00)
3	पता नहीं	-	8 (4.44)	8 (02.67)
	योग	120 (100)	180 (100)	300 (100)

स्त्रोत - शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षित आँकड़े।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित 253 (84.33) प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार ग्रामीण विकास के लिए चलाये जा रहे कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करते समय ग्रामीण गुटबाजी का हस्तक्षेप होता है। 39 (13.00) प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार ग्रामीण गुटबाजी नहीं होती जबकि 8 (02.67) प्रतिशत उत्तरदाताओं को पता नहीं है कि गुटबाजी होती है या नहीं।

निष्कर्ष - शोध अध्ययन से निष्कर्ष प्राप्तहोता हैकि शिक्षा के क्षेत्र में चलाई जा रही योजनाओं का प्रभाव शिक्षा पर अवश्य रूप से पड़ा है। जो समूह ग्रामीण विकास हेतु उभरकर आ रहा है वे अधिकतर शिक्षित है। स्थानीय नेतृत्व करने वाले प्रतिनिधियों को विकास में बाधाओं का सामना करना पड़ता है और चुनावों के समय गुटबाजी सर्वाधिक देखने को मिलती है। ग्रामीणों मेंगुटबाजी के आधार पर लड़ाई, झगड़े एवं हत्याएँ तक होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, उमेशचन्द्र, 'भारत में ग्रामीण विकास, सिविल सर्विसेज, क्रांतिकल नवम्बर', 2001
2. अग्रवाल डॉ. जी.के. 'ग्रामीण समाजशास्त्र'
3. द्विवेदी, राधेश्याम, मध्यप्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1993, सुविधा लॉ हाउस, भोपाल,1996
4. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला बालाघाट, 2011
5. म.प्र. जनसम्पर्क संचालनालय, '
6. म.प्र. में सत्ता विकेन्द्रीकरण की ऐहिासिक प्रक्रिया', भोपाल,1999
7. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ, सामाजिक अनुसंधान तथा सांख्यिकीय

तालिका क्रमांक - 2 - तहसीलवार सरपंचों की संख्या एवं निदर्शन का आरेखण

क्रं.	तहसील का नाम	महिला सरपंच	पुरूष सरपंच	योग	निदर्शन हेतु चयनित सरपंचों की संख्या		
					पुरूष	महिला	योग
1	बालाघाट	43	34	77	20	30	50
2	वारासिवनी	31	29	60	20	30	50
3	बैहर	36	20	56	20	30	50
4	किरनापुर	42	41	83	20	30	50
5	कटंगी	40	41	81	20	30	50
6	लांजी	38	39	77	20	30	50
	कुल	**231**	**203**	**434**	**120**	**180**	**300**

तालिका क्रमांक - 3 - उत्तरदाताओं की शैक्षणिक पृष्ठभूमि

क्रमांक	शैक्षणिक योग्यता	पुरूष	महिला	योग (प्रतिशत)
1	निरक्षर	10 (08.33)	21 (11.67)	31 (10.33)
2	साक्षर	04 (03.33)	18 (10.00)	22 (07.33)
3	प्राथमिक स्तर	22 (18.33)	45 (25.00)	67 (22.33)
4	माध्यमिक स्तर	50 (41.67)	58 (32.22)	108 (36.00)
5	उच्चतर माध्यमिक स्तर	25 (20.84)	27 (15.00)	52 (17.34)
6	स्नातक	09 (07.50)	11 (06.11)	20 (06.67)
	योग	**120 (100)**	**180 (100)**	**300 (100)**

तालिका क्रमांक - 4 - राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना अन्तर्गत विविध कार्यों को संचालित करने में स्थानीय सरपंच की भूमिका

क्रमांक	विविध कार्य	पुरूष	महिला	योग (प्रतिशत)
1	जल संरक्षण	14 (11.67)	21 (11.67)	35 (11.67)
2	वृक्षारोपण	64 (53.33)	87 (48.33)	151 (50.33)
3	सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराना	09 (07.50)	18 (10.00)	27 (09.00)
4	तालाबों की गाद निकालना	29 (24.17)	51 (28.33)	80 (26.67)
5	कूप खुदवाना	04 (03.33)	03 (01.67)	07 (02.33)
	योग	120 (100)	180 (100)	300 (100)

भारतीय समाज में प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं की सकारात्मक एवं नकारात्मक छवि

डॉ. विमला गोयल *

शोध सारांश – भारतीय परिवेश में जहां नारी को केवल पुरूष की प्रतिछाया के रूप में ही स्वीकार किया गया है, जहां वह पुत्री पत्नी या माता तो हो सकती है किन्तु इस प्रतिमान मे कोई विचलन असामान्य ही नहीं वरन् अनुचित माना जाता हो वहां नारी का अविवाहित रहना किसी चुनौती से कम नहीं माना जा सकता। **परम्परागत** भारतीय समाज में 'आदर्श नारी' का जो चित्रण किया गया है उसमें प्रौढ़ अविवाहित महिलाएं किसी भी प्रकार से फिट नहीं बैठती। भारतीय आदर्श नारी चरित्र की सम्पूर्ण व्याख्या में 'विवाह' एक मूलत: अनिवार्य कल्पना है बल्कि विवाह के बिना नारी की सम्पूर्णता को ही कल्पना से परे ठहराया गया है। 'मनु' ने तो विवाह को ही स्त्री का उपनयन कहा है। ऐसे में यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि विवाह न करने वाली महिलाओं को समाज की परम्पराऐं किस हद तक स्वीकार करती होंगी।

प्रस्तुत शोध पत्र में प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं की उनके अपने मूल परिवार में, समाज में और स्वयं इन महिलाओं के विचार में क्या स्थिति है। उन्हें क्या महत्व सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त है इन्हीं सब बातों पर विचार करने के प्रस्तुत शोध पत्र का मूल उद्देश्य है।

प्रस्तावना – भारतवर्ष जो कि अपनी समृद्ध परम्पराओं विशाल आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक विरासत के लिये जाना जाता था, आज परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। प्राचीन मान्यताऐं यद्यपि पूरी तरह से ध्वस्त नहीं हो पायी हैं किन्तु नयी मान्यताएँ स्वयं को स्थापित करवाने के लिये पूरी शिद्दत से संघर्षरत हैं। इस परिवर्तन का प्रभाव सम्पूर्ण जीवन पद्धति और सामाजिक संरचना पर स्पष्टत: देखा जा सकता है। भारतीय नारी भी परिवर्तन के इस प्रभाव से अछूती नहीं रही है। अनेक अध्ययनों से प्राप्त निष्कर्ष इस बात के साक्षी हैं। नगरों एवं महानगरों में परिवर्तन की यह प्रक्रिया अधिक तीव्र दिखाई पड़ती है। विवाह संस्था पर भी इसका प्रभाव महत्वपूर्ण रूप से देखा जा सकता है। देरी से विवाह करना, अविवाहित रहना अब उतना बुरा नहीं समझा जाता। नगरीकरण एवं औद्योगिकरण ने नारी शिक्षा एवं नारी रोजगार के अवसरों में जो अभूतपूर्व वृद्धि की उसका परिणाम यह हुआ कि आज उसमें स्वतंत्रता, समानता, स्वाभिमान और स्वाधिकार की भावना को बल मिला है। फलस्वरूप उसमें अविवाहित रहने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला है। आज के भौतिकवादी युग ने व्यक्ति को आवश्यकताओं का गुलाम बना दिया है फलस्वरूप दहेज-प्रथा विकराल रूप लेती जा रही है जो कि अविवाहित महिलाओं की संख्या में वृद्धि का एक महत्वपूर्ण कारण है। पारिवारिक विघटन, गरीबी, बीमारी, जिम्मेदारी आदि कारण भी समान रूप से जिम्मेदार कहे जा सकते हैं।

आज हमें भारत के लगभग सभी महानगरों, नगरों और कस्बों में ऐसी महिलाओं आसानी से देखने को मिल सकती हैं जिन्होंने अविवाहित जीवन-शैली को स्वीकार किया है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. इन महिलाओं के प्रति परिवार एवं समाज के दृष्टिकोण का अध्ययन करना
2. स्वयं इन महिलाओं का अपने विषय में क्या दृष्टिकोण है उसे जानना
3. इन महिलाओं की वास्तविक स्थिति को जानना

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत अध्ययन इन्दौर शहर की 40 वर्ष से अधिक आयु की अविवाहित महिलाओं से किये गए साक्षात्कार एवं व्यक्तिगत अध्ययन पद्धति प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त की गई सुचनाओं पर आधारित है। सामग्री संकलन हेतु इन्दौर शहर में रही रही प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं से सामाजिक संजाल पद्धति Social network method के माध्यम से सम्पर्क किया गया। उत्तरदाताओं से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष निम्नानुसार हैं। अविवाहित जीवन-शैली का चयन करने वाली और पारिवारिक, सामाजिक परिस्थितिवश अविवाहित जीवन-शैली को स्वीकार करने वाली महिलाऐं। 60% दोनों ही वर्ग की अपनी-अपनी विशिष्टताऐं है। दोनों की ही स्थिति लाभ-हानि, समस्याओं और सुविधाओं को मद्देनजर अलग-अलग है। जहॉ स्वेच्छया अविवाहित महिलाओं के विचार में उन्हें समस्याग्रस्त मानना ही 'बीमार मानसिकता का परिचायक है वहीं परिस्थितिवश अविवाहित महिलाओं के लिये समस्याओं का कोई अन्त नहीं। कभी-कभी तो उनके लिये जीवन अभिशाप बन जाता है। दोनों ही वर्ग की इन्हीं विशेषताओं ने इन्हें दो किनारों पर ला खड़ा किया है। प्रथम वर्ग पूरी तरह से पाश्चात्य सभ्यता का पोषण करता है तो दूसरा वर्ग भारत की प्राचीन परम्पराओं, पूर्वाग्रहों, मान्यताओं और मूल्यों की चक्की में पिसा जा रहा है। वास्तव में ये दो पृथक-पृथक वर्ग अपने आस-पास दो भिन्न-भिन्न व्यक्तिवों, जीवन-शैलियों और विचारधाराओं का निर्माण करता है। तथापि परिस्थितिवश अविवाहित जीवन अपनाने वाली महिलाऐं भी बाद में इस जीवन-शैली को इतना आत्मसात कर लेती है कि दोनों में अन्तर कर पाना कठिन हो जाता है।

2. आज विवाह एवं परिवार दोनों की ही प्रतिष्ठा को ठेस लगी है, किन्तु इसके बावजूद परिवार में रहना और जीवन-शैली को अपनाना आज भी एक सामाजिक मूल्य माना जाता है। इस परम्परागत प्रतिमान में कोई भी विचलन अनेक प्रश्न उपस्थित करता है। परिणामस्वरूप अनेक मिथ्याधारणाओं का जन्म होता है। अध्ययन में शामिल 37% उत्तरदाता विवाह को अनिवार्य मानती है तथा परिणामस्वरूप अनेक मिथ्याधारणाओं का जन्म होता है। अध्ययन में शामिल 40% अनिवार्य नहीं मानती जबकि 37% उत्तरदाता विवाह को अनिवार्य मानती हैं। तथा 40% अनिवार्य नही मानती जबकि 37% उत्तरदाता इस विषय में तटस्थ हैं। 16% उत्तरदाता अकेली
रहती है, 84% उत्तरदाता अपने किसी रिश्तेदार के साथ रहती है।

3. आज अविवाहित जीवन-शैली अनेक समाजशास्त्रियों एवं मनोविश्लेषण के गहन अध्ययन का विषय बन चुकी है। पिछले कुछ दशकों

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय बी.एस.महाविद्यालय, देपालपुर (म.प्र.) भारत

से इस विषय पर गहन शोध किया जा रहा है। पश्चिमी देशों में इसकी संख्या अधिक है। भारत में अवश्य इस प्रकार के शोध सीमित हो पाए है जिसका कारण भी स्पष्ट है। पाश्चात्य देशों में जो खुलापन है वह इस प्रकार के अध्ययनों को सफल बनाने में काफी मददगार सिद्ध होता है, किन्तु भारत जैसे परम्परा प्रधान देशों में आज भी अविवाहित जीवन शैली को सामाजिक मान्यता नहीं मिल पाई है, परिणामस्वरूप अविवाहित जीवन शैली लोगों के लिये उत्सुकता, आश्चर्य और कल्पना का केन्द्र बन जाती है। ऐसे में अविवाहित जीवन-शैली से जुड़े लोग शोधार्थी के सामने खुल नहीं पाते परिणामस्वरूप गहन अध्ययन की सफलता सन्धित हो जाती है। यदि कहा जाए कि भारत में अविवाहित जीवन शैली का प्रचलन बहुत हद तक पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाववश हुआ है तो गलत नहीं होगा। भौतिकवादी और आत्म-केन्द्रित विचारधारा ने ही लोगों में अविवाहित रहने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिया है। जिम्मेदारी से पलायन और अतिस्वाभिमानी प्रवृत्ति ने भी इसमें भरपूर सहयोग दिया है। आज की भागमभाग जिन्दगी में व्यक्ति को किसी दूसरे के विषय में सोचने की फुर्सत नहीं है। वह अपनी संपूर्ण क्षमता, धन, शक्ति और सामर्थ्य का प्रयोग केवल और केवल अपनी सुख सुविधाओं के लिये करना चाहता है और इसका सबसे आसान उपाय है विवाह न करना अर्थात् अविवाहित जीवन शैली को स्वीकारना। अध्ययन में शामिल उत्तरदाताओं में 75% कार्यतर, 11% अकार्यरत तथा, 14% सेवा निवृत्त है।

4. अविवाहित महिलाएं निश्चित तौर पर आत्मनिर्भर होती है और यही आत्मनिर्भरता उनकी पारिवारिक प्रतिष्ठा में और अन्ततः सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि करती है। परिणामस्वरूप उनमें श्रेष्ठता की भावना आने लगती है जो कि उनके व्यक्तित्व पर भी धीमी गति से अपना प्रभाव जमाने लगती है और अन्ततः एक नवीन व्यक्तित्व का विकास होता है। ठोस धरातल, प्रभावशाली व्यक्तित्व एवं प्रतिष्ठित जीवन शैली ये ही उसकी पहचान बन जाते है। चूंकि यौवनावस्था में और बाद में भी विवाह को लेकर कोई पारिवारिक और सामाजिक दबाव उन पर नहीं होता अतः वे अविवाहित जीवन शैली को अधिमान्यता प्रदान करती है। 50% उत्तारदाता निम्न आयवर्गीय 3000/- तक, 25% मध्यम आयवर्गीय 3000-6000 तक 25% उच्च आय वर्गीय 6000-7000 तक।

5. यद्यपि इस वर्ग की महिलाएं अपने संपूर्ण परिवेश के तहत काफी सुदृढ़ स्थिति को प्राप्त कर पाने में सफल होती हैं किंतु इसका यह अर्थ नहीं निकाला जाना चाहिए कि वह श्रेष्ठतम जीवन जी रही है। वास्तव में दोहरी जीवन शैली की आदी होती है। समस्याओं, कष्टों और परेशानियों को उजागर न होने देना, ऊपरी दिखावा करना, जो वास्तव में है उसे छिपाना और जो नहीं है उसका प्रदर्शन करना आदि इनकी विशेषता होती है। ये भले ही स्वयं की नजरों में पूर्ण संतुष्ट और सुखी हैं और प्रदर्शित करती हो कि समस्याएँ इन्हें छू कर गुजरने से डरती हैं परंतु सच इतना उज्जवल नहीं है। यदि हम गहराई में जाएं, पर्दे के पीछे झांके तो इस चकाचौंध के पीछे कहानियाँ छुपी हुई मिलेगी। समस्याएँ इन्हें भी हैं किंतु उनका स्वरूप अलग है। इनके व्यक्तित्व की ही तरह इनकी समस्याएँ भी जटिलता लिये हुए होती है। 17% उत्तर को किसी प्रकार की मनो सामाजिक समस्या नहीं है जबकि शेष 83% महिलाएँ किसी न किसी समस्या से ग्रस्त है। परिस्थितिवश अविवाहित महिलाओं में 45% महिलाएं पारिवारिक जिम्मेदारी के कारण अविवाहित रही है। शेष अन्य कारणों से दूसरी ओर है वे महिलाएँ जो अविवाहित रहना नहीं चाहती थी किंतु पारिवारिक जिम्मेदारियों ने या समाज की क्रूर परम्पराओं, मान्यताओं और रूढ़ियों ने उन्हें उपहार स्वरूप यह जीवन दिया होता है। उनका जीवन अलग प्रकार के तानों बानों से बुना होता है। वह स्वयं अपने लिये नहीं वरन् परिवार के लिये जी रही होती हैं माता पिता या छोटे भाई बहनों या विधवा बहन या भाभी के परिवार की संपूर्ण जिम्मेदारी का पूरी मुस्तैदी से निर्वाह करना ही उनके जीवन की सार्थकता होती है। कभी-कभी वह समाज की सड़ी गली मान्यताओं के बोझ तले इस जीवन शैली को स्वीकारने को बाध्य होती है। गरीबी, देहेज प्रथा, अन्तः जाति विवाह प्रथा उसके लिये जैसे अभिशाप बन जाते है, और फिर होता है एक अन्हीन सिलसिला परिवार की उपेक्षा, उलाहनों और सन्त्रास का। अपने आत्मसम्मान को तिल-तिल कर करने से बचाने के प्रयास में कभी-कभी वह बिखर भी जाती है। कुल मिलाकर उसका अविवाहित रहना किसी अपराध से कम नहीं माना जाता। उसे संपूर्ण समाज से सतत् संघर्ष करना पड़ता है। संपूर्ण जीवन के संघर्ष और बलिदान के बाद भी वह स्वयं को सिद्ध कर पाने में अपने सम्मान को प्रतिष्ठित कर पाने में सफल नहीं हो पाती। यदि वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है तब तो ठीक है वरना उसके लिये समस्याओं की कोई सीमा नहीं है। उसकी स्थिति दयनीय होती जाती हैं न परिवार में और न ही समाज में उसे वह सम्मान मिल पाता है जिसकी वह हकदार होती है। एक साथ उसे कई समस्याओं से जूझना होता है। पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक। वह न केवल समस्याओं से जूझती है वरन् शोषण का शिकार भी होती हैं अवस्था में वृद्धि के साथ समस्याओं में भी क्रमशः वृद्धि होने लगती है। खाली समय के उपयोग की समस्या, जीवन में उत्साह की कमी, नीरसता, एकाकीपन आदि उसे मानसिक पीड़ा पहुँचाते है।

भारतीय परिवेश में जहाँ नारी को केवल पुरूष की प्रतिछाया के रूप में ही स्वीकार किया गया है, जहाँ वह पुत्री, पत्नी और माता तो हो सकती है किन्तु इस प्रतिमान में कोई विचलन, असामान्य ही नहीं वरन् अनुचित माना जाता हो वहां नारी का अविवाहित रहना किसी चुनौती से कम नहीं माना जा सकता फिर चाहे वह स्वेच्छा से अविवाहित रही हो या परिस्थितिवश। दोनों ही स्थितियों में उसे समाज से जूझना होता है, न केवल अपने स्वतंत्र अस्तित्व को मनवाने के लिए बल्कि अपने सम्मान को प्राप्त करने के लिए भी। नगरीयकरण, औद्योगीकरण एवं शिक्षा के प्रसार से लोगों के विचारों में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। महिलाओं की स्वतंत्रता, समानता और जागरूकता में वृद्धि हुई है। भारतीय समाज के परम्परागत ढाँचे में 'विवाह' संस्था भी अपने प्रभाव को क्रमशः खोती जा रही है। पहले विवाह ही महिलाओं का उपनयन माना जाता था, अविवाहित महिलाओं को मोक्ष की अधिकारिणी नहीं माना जाता था, कन्या जीवन की सार्थकता विवाह में ही समझी जाती थी, वहीं अब विवाह अपने धार्मिक संस्कार के महत्व को खोता जा रहा है। महिलाओं का अविवाहित रहना अब उतना बुरा नहीं माना जाता किंतु इन सबके बावजूद भी अविवाहित महिलाओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन नहीं हो पाया है। विवाह के प्रति भले ही लोगों के झुकाव में कमी आई है किंतु फिर भी विवाहित जीवन शैली को सामाजिक प्रतिमान के रूप में मान्यता दी जाती है।

प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं की समाज में क्या छवि है, अर्थात उनके बारे में लोग कैसी धारणा रखते हैं। उन्हें भी अन्य महिलाओं की तरह सहज, सामान्य समझा जाता है अथवा विशेष। परिवार के अन्य सदस्य उनके बारे में क्या सोचते है? और सबसे महत्वपूर्ण बात कि स्वयं इन महिलाओं की अपने बारे में राय क्या है? इन तमाम प्रश्नों के जवाब में हमें भिन्न-भिन्न तथ्यों से रूबरू होने का मौका मिलता है।

परम्परागत भारतीय समाज में 'आदर्श नारी' का जो चित्रण किया गया है उस ढांसे में प्रौढ़ अविवाहित महिलाएं किसी भी प्रकार से फिट नहीं बैठती। क्योंकि यभारतीय आदर्श नारी चरित्र की संपूर्ण व्याख्या में 'विवाह' एक मूलतः अनिवार्य कल्पना है, बल्कि विवाह के बिना नारी की संपूर्णता को ही कल्पना के परे ठहराया गया हैं मनु ने तो 'विवाह को ही स्त्री का उपनयन'

कहा है। ऐसे में यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि विवाह न करने वाली महिलाओं को समाज की परम्पराएँ किस हद तक स्वीकार करती होगी। आमतौर पर अविवाहित महिलाओं के प्रति लोगों का नजरिया बहुत साफ सुथरा नहीं होता। सतही तौर पर कुछ लोग भले ही अच्छा व्यवहार करते है, हमदर्दी रखते है, सम्मान प्रकट करते है, किंतु वास्तव में पीठ पीछे उनके बारे में हल्के स्तर की बातें सोची और की जाती है। उनका नाम किसी के साथ जोड़ा जाता है। उनकी गतिविधियों पर नजर रखी जाती है। कुल मिलाकर सब कुछ सामानय रूप से नहीं समझा जाता। अपवादों को यदि छोड़ दिया जाए तो सामान्य तौर पर पुरूष प्रधान समाज में अविवाहित रहकर स्वयं को सम्मानजनक प्रतिष्ठा दिलावाना इनके लिये कठिन ही प्रतीत होता हैं इस तथ्य की साक्षी है। 53% उत्तरदाता जो कि इस सत्य से पूर्ण सहमत है। 16% उत्तरदाता इस संबंध में तटस्थ है जबकि 31% उत्तरदाता इस बात से असहमत है।

यदि परिवार की बात की जाए तो स्थिति उतनी त्रासदायी नहीं है। चूंकि परिवार के लोग उन्हें जानते समझते है इसीलिये उन्हें कम से कम सन्देह के दायरे में तो नहीं रखते। बल्कि देखने में यह आया है कि परिवार में उनकी महत्ता, मान सम्मान उनके अविवाहित होने या न होने से उतना प्रभावित नहीं होता, जितना

9. परिवार में उनकी स्थिति अच्छी है ऐसा मानती है 52% उत्तरदाता, जहां 11% उत्तरदाता तटस्थ है वहीं 37% उत्तरदाता इससे असहमत है। इस बात से कि उनकी आर्थिक स्थिति कैसी है? यदि वह सुदृढ़ आर्थिक स्थिति में होती है तो परिवार में उसकी स्थिति श्रेष्ठ (बल्कि कहीं-कहीं श्रेष्ठतम भी) होती है, यदि मध्यम है तो परिवार में उसकी स्थिति बुरी नहीं कही जा सकती, किंतु यदि वह आर्थिक रूप से किसी पर निर्भर है और परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत मजबूत नहीं है ऐसी स्थिति में उसे परिवार में वह सम्मान नहीं मिलता जिसकी वह हकदार होती है। घर के लोग उसे बोझ मानते है। कभी कभी तो यह अपमान चरम स्थिति में भी देखा जा सकता है।

10. अध्ययन में शामिल सिर्फ 13% उत्तरदाताओं को ऐसा लगता है कि विवाह नहीं करके उन्होंने गलती की है जबकि 87% उत्तरदाता सोचती है कि उन्होंने विवाह नहीं किया तो अच्छा ही हुआ और इसके लिये वे अनेक लाभ भी गिनवाती है।

अब यदि इन महिलाओं के नजरिये से देखा जाऐ तो तस्वीर का दूसरा ही रूप हमारे सामने उपस्थित होता हैं अपनी नजर में वह खुद को किसी से कम नहीं समझती, लोग समझा करें उससे उसे कोई फर्क नहीं पड़ता। आमतौर पर ये महिलाएँ यही समझती है कि उनकी स्थिति प्रतिष्ठा, मान सम्मान का निर्धारण उनके कार्य, व्यवसाय, धन, सम्पत्ति और पद से होता है, विवाहित या अविवाहित होने से नहीं। यह दृष्टिकोण उन महिलाओं का होता है जो उच्च पदों पर आसीन होकर समाज में स्वयं को पूर्ण प्रतिष्ठित कर पाने में सफल हो पाती है।

11. गैर कामकाजी महिलाओं के लिये समस्याओं की कोई कमी नहीं है वे पाई पाई के लिए मोहताज है। (10/33) परिवार उन्हें बोझ समझता है (11/33) कोई उनका सुख दुख बंटाने वाला नहीं (8/33) है।

वरना वे महिलाएँ जो मध्यम या निम्न आय वर्गीय परिवार से संबंधित है उनका सोचना बिल्कुल भिन्न है। वे बेहिचक इस बात को स्वीकार करती है कि समाज में यदि रहना है तो समाज के नियम कायदों को तो मानना ही पड़ेगा। अविवाहित रहने का सीधा मतलब है विवाह से मुंह मोड़ना। और यदि हमने किसी नियम का उल्लंघन किया है, तो निश्चित है कि, हमें लोगों की बातें सुनने के लिये तैयार रहना चाहिए। ये महिलाएँ स्पष्टत: कहती हैं कि न केवल समाज में बल्कि स्वयं उनके ही परिवार में उन्हें वह सम्मान नहीं मिलता जो कि परिवार की अन्य विवाहित महिलाओं को मिलता हैं लोग हमें सन्देह के दायरे में रख कर हमारा मूल्यांकन करते है। यदि हम किसी से मिलें जुले तो उसके साथ हमारा नाम जोड़कर हमें बदनाम किया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से हम आसानी से यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि अपवादों को छोड़कर आमतौर पर प्रौढ़ अविवाहित महिलाओं की छवि समाज में, परिवार में और स्वयं इन महिलाओं के मन में भी बहुत अच्छी नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Alterkar, A.S., Position of women in Hindu civilization, From Pre-historic times to the Present Day, New Delhi, Motilal Banarsidas, 1973.
2. Barooah Jeuti, `Single women in Assamese Hindu society', Gyan Publishing House, new Delhi, 1993.
3. Cargan Leonard and Mathew Melko, Singles : Myths and Realities, Beverly Hills, CA : Sage, 1982.
4. Devendra., K., Status and Position of women in India, Shakti Books, Vikas Publishing House, Pvt. Ltd; 1985.
5. कापड़िया, के.एम., भारतवर्ष में विवाह एवं परिवार अनुवादनक, हरिकृष्ण रावत, मोतीलाल बनारसीदास, दिलली, 1990.
6. Katherine R. Allen, Single Women / Family Ties : Life Histories of older women, Sage Publications, Newbury Park, London, New Delhi.
7. Krishna Kumari, W.S., Status of Single Women in India (A study of Spinstors, Windos and Divorcees), New Delhi, 1987.
8. Leonard, C. and Mathew M., Singles : Myths and Realities, Bevely Hills, CA : Sage Publiscations, 1982.
9. मिश्र, डॉ. उर्मिला प्रकाश, प्राचीन भारत में नारी, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1987.
10. Thackersey Nathibai D., Women Studies Index – A Guide to Indian Periodical Literature, Bombay Womens University Library Information Centre, 1986.
11. Wright, E., Single Careers : Employment, House Work and Carying, london-Routledge and Kegan Poul, pp. 89-105, 1983.

Articles -

1. Cargen, L., `Singles : An Examination of two Stereotypes', Family Relations, 30, pp. 377-385.
2. Cauthen, N.R., Robinson I.E. and Krouss, H.H., `Stereotypes : A Review of the Literature 1926-1968', Journal of Social Psychology, 84 : 103-125.
3. Chambers schiller, `Liberty : A Better Husband : Single Women in America : The Generations of 19780-1846, 1987.
4. Cornell, L.L., (1984), `Why are there No Spinsters in Japan `Journal of Family History, 9, 326-339.
5. Desai Arvindrai N., `The Spinster has a World to Win', Journal of Family History, 1979, 4, 1969-83.
6. Dixit, Asha, `The Survey of Leisure, Time Activities of Working Women in Jaipur, Indian Journal of Adult Education, 1976 (1), 37, 11-14.

भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ में वृहद् एवं लघु परम्पराऐं

डॉ. मनीष कुमार कलवार *

प्रस्तावना – भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ में सभ्यता, संस्कृति एवं परम्पराओं का विशिष्ट स्थान है। ग्रामीण भारतीय समाज व्यवस्था परम्पराओं के दृष्टिकोण से और भी अधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज अत्यंत विविधताओं से युक्त होने के साथ ही अनेक प्रकार की परंपराओं प्रथाओं, कर्मकाण्डों, रीति रिवाजों, धार्मिक विश्वासों से मिलकर बना है। अनेक विद्धानों ने भारतीय समाज का अध्ययन करने के लिए इसे अनेक परम्परागत आधारों जैसे वर्ण, धर्म, कर्म, पुरूषार्थ एवं आश्रम द्धारा स्पष्ट किया है। परम्पराऐं हमारी सामाजिक विरासत का वह अभौतिक पक्ष (प्रथाऐ, रूढियॉ, आदतें, विचार, विश्वास, रीति–रिवाज, धर्म, कानून आदि) है जो हमारें व्यवहार के स्वीकृत तरीकों का द्योतक है और जिसकी निरंतरता पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण की प्रकिया द्धारा बनी रहती है।

भारतीय समाज में सांस्कृतिक परंपराओं की तीन प्रमुख धाराऐं दिखाई देती है। प्रो.योगेन्द्रसिंह ने अपनी पुस्तक 'ट्रेडिशन एण्ड मोड़रनिटी इन इण्डिया' में इन्हें सांस्कृतिक उप संरचनाओं के नाम से पुकारा है। (1) अभिजात– उपसंरचना (2) लोक–उपसंरचना (3) जनजातीय उपसंरचना। राबर्ट रैडफिल्ड महोदय ने मंदिरों एवं प्रसादो के विशाल प्रस्तर निर्मित वास्तु शिल्प, परिशठकृत कला, खगोल विज्ञान, पंचाग, चित्रालिपि में लिखित साहित्य, देवताओं एवं प्राकृतिक शक्तियों तथा धर्म पर आधारित राज्य व्यवस्था को वृहद् परम्परा एवं इसके विपरीत छोटे गाँवों एवं मठों के नगरों में पाई जाने वाली जीवन उपार्जन की क्रियाओं , शिल्प, गओर उससे संबंधित संगठन और प्रकृति पर आधारित धर्म को लघु परंपरा के नाम से पुकारा है। वृहत परंपराऐं बड़े क्षेत्रों एवं मंदिरों में पोषित होती है। लघु परंपराऐं ग्रामीण समुदायों के अशिक्षितों के जीवन में विकास करती है। वृहद् एवं लघु परंपराऐ प्रथमत: अपनी स्वंय की सृजनात्मक शक्ति के कारण विकसित होती है। इन पर बाह्य सभ्यताओं की परम्पराओं का प्रभाव भी पड़ता है।

भारतीय संदर्भ में परंपराओं को देखने का प्रयास करे तो हम पाते है कि वे देवी–देवता (राम, कृष्ण), धार्मिक अनुष्ठान (कथा, मुंडन), रीतिरिवाज, मेलें (कुंभ), त्यौहार (होली, दिपावली), साहित्य, संगीत तथा विभिन्न सांस्कृतिक तत्व जिनका अखिल भारतीय धर्म–ग्रंथो जैसे वेद, पुराण, महाभारत, रामायण, उपनिषद, गीता और इसी प्रकार के अन्य ग्रंथो मे लिखित आलेख प्राप्त होता है। उन्हें वृहद परंपराओं के अंतर्गत रखे जाते है।

दूसरी और स्थानीय देवी–देवता (हरदौन लाला, कारसदेव) त्यौहार (गणगौर, भगोरिया), धार्मिक अनुष्ठान (पूर्वज पूजा), रीति रिवाज, मेलें, लोक कथाऐं, लोकगीत, लोक नृत्य, जादुई कथाऐं तथा अन्य सांस्कृतिक कथाऐं जिनका वर्णन अखिल भारतीय धर्म ग्रंथों एंव अन्य पुस्तकों में लिखित रूप में नहीं मिलता है और जो मुख्यत: मौखिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते रहते है, लघु परंपरा के अंतर्गत आते हैं।

भारत में इन दोनों परंपराओं को अत्यंत प्राचीन समय से ही देखा जाता रहा है। इन परंपराओं की अपनी कुछ विशिष्टताऍ भी है। दोनों परम्पराऐं एक दूसरे से काफी निकट रही है।

इनसे संबंधित लोग भी एक दूसरे के निकट संपर्क में रहे है। फलस्वरूप इन परंपराओं में निरंतर अन्त: क्रिया भी होती रहती है

डॉ. बी. आर. चौहान ने राजस्थान के गॉव 'राणावतों की साढ़ड़ी' में किए गए अध्ययन के आधार पर वृहद एवं लघु परंपराओं के अंतर को अग्र प्रकार से सारणीबद्ध किया है–

वृहद परंपराऐं	**लघु परंपराऐं**
कार्य क्षेत्र राष्ट्रीय स्तर पर	स्थानीय स्तर पर
लिखित	अलिखित
विषय वस्तु से शास्त्रीय –सांस्कृतिक	अशास्त्रीय
अधिक व्यवस्थित	कम व्यवस्थित
अधिक चिंतनशील	कम चिंतनशील

राबर्ट रेडफिल्ड के द्धारा प्रस्तावित परंपराओं के विश्लेषण ढाँचे का प्रयोग मैकिम मेरियट, मिल्टन सिंगर तथा इनके अन्य सहयोगियों ने भारत में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने हेतु किया है। मैकिम मेरियने उत्तर प्रदेश के एक ग्राम किशनगढ़ी के अपने अध्ययन के आधार पर वृहद एवं लघु परंपराओं के मध्य होने वाली अन्त: क्रिया को 'स्थानीयकरण' एवं 'सार्वभौमिकरण' के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है। परंपराओ की सामाजिक संरचना दो स्तरो पर क्रियाशील होती है – प्रथम जनसाधारण निरक्षर कृषकों के स्तर पर एवं दूसरी अभिजात या कुछ चिंतनशील व्यक्तियों के स्तर की सांस्कृतिक प्रकियाऍ वृहद परंपराओं को बनाती है। परंपराओ के इन दोनों ही स्तरों पर निरंतर अन्त: क्रिया होती रहती है। लघु एवं वृहत परंपराओं में आदान–प्रदान की इस प्रवृति को जानने के लिए हमें संस्कृति के प्रवाह की दिशा को जानना होगा। यह दिशा वृहद् परंपरा से लघु परंपरकी ओर एवं लघु से वृहद् परंपरा की ओर है। इतना अवश्य हैं कि वर्तमान समय में लघु परंपरा से संबंधित ग्रामवासियों ने वृहत परंपरा से अधिक ग्रहण कर रही है। लघु परंपरा से संबंधित ग्रामवासियों ने वृहद् परंपरा से संबंधित अभिजात लोगो से अनेक भौतिक सुख सुविधाओं की वस्तुओं को ग्रहण किया है, उन पर अभिजात संस्कृति का प्रभाव स्पष्टत: दिखाई पड़ता है। इसी के साथ ही वृहत परंपराओं से संबंधित अभिजात लोग लघु परंपरा से संबंधित जनसाधारण लोगों की तुलना में अधिक तार्किक एवं ज्ञान संपन्न है, परंतु फिर भी उन पर लघु परंपरा में प्रचलित विश्वासों और अंधविश्वासों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पड़ता है। लोग नवीन ढंग से बने बंगलों एवं विशाल कोठियों को 'नजर' लगने से बचाने के लिए उसके ऊपरी भाग पर कोई काली मिटटी का बर्तन, मटकी लटका देते है। दुकानों पर निम्बू –मिर्ची, छोटा

* संचालक, श्री सांई समर्थ क्लासेस, भंवर कुंआ, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पुतला उल्टा लटकाते है। लोहे की नाल लगाते है। अभिजात लोग भी इन लघु परंपराओं शकुन–अपशकुन में विश्वास करने लगे है। निष्कर्षत: इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि सांस्कृतिक प्रवाह की दिशा वृहद् परंपरा से लघु परंपरा की ओर ही नहीं वरन् लघु परंपरा से वृहद् परंपरा की ओर भी है। शहरों में ठाणी का खुलना, ग्रामीण व्यंजनों, ग्रामीण हस्तशिल्प, कला नृत्य, संगीत की कार्यशालाओं का आयोजन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में ब्यूटी पार्लरों का खुलना, कान्वेन्ट कल्चर के स्कूल का बनना, सुपर मार्केट का निर्माण, शहरी परंपराओं की अन्त: क्रिया का ही परिणाम है। वर्तमान समय में बढ़ता हुआ नगरीकरणऔद्योगिकरण, आधुनिकीकरण एवं वैश्वीकरण हमारी सामाजिक सांस्कृतिक जीवन शैली को प्रभावित कर रहा है। टी.बी. तथा अन्य साधनों द्धारा हो रहा सांस्कृतिक प्रदूषण बहुत अधिक चितंनीय तथ्य है। युवा भारतीयों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे अपनी गौरव एवं गरिमावान लघु एवं वृहद् परंपराओं को संरक्षण प्रदान करते हुए उन्हें अपने जीवन में उतारें तथा उनके सरंक्षण संर्वधन के लिए हमेशा दृढ़ संकल्पित होकर प्रयत्नशील रहें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, प्रो.एम.एल, शर्मा, डॉईडी.– समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा संस्करण – 2010
2. पाण्डेय, तेजस्कर एवं ओजस्कर – समाजकार्य– भारत बुक सेंटर अशोक मार्ग, लखनऊ, संस्करण – 2010
3. पहाड़िया, बी.एम. – भारत में ग्रामीण समाज – अलंकार प्रकाशन, 9 कुंवर मंडली (खजूरी बाजार) इन्दौर (मप्र)
4. चौधरी, एस.के.– समाजशास्त्र एक विस्तृत अध्ययन – उपकार प्रकाशन आगरा
5. तिलारा, कुँवरसिंह – सामाजिक नियोजन, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ (उत्तरप्रदेश)
6. सचदेवा, डी.आर., विद्याभूषण – समाजशास्त्र के सिद्धांत – किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद ,संस्करण 2009
7. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ – सामाजिक विचारधारा – काम्टे से मुखर्जी तक, विवेक प्रकाशन , जवाहर नगर , दिल्ली।
8. श्रीवास्तव, डॉ.ए.पी.– यूनिफाईड समाजशास्त्र – रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल
9. संस्करण– 2009
10. बघेल, डॉ.डी.एस.– समाजशास्त्र , कैलाश पुस्तक सदन ,भोपाल , संस्करण 2003
11. भारत में ग्रामीण समाज, जीक़े जैन, सूर्या प्रकाशन इन्दौर (मध्यप्रदेश) संस्करण –2012
12. दीक्षित , डॉधुव्रकुमार, ग्रामीण समाजशास्त्र, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी इन्दौर
13. शर्मा, एमसी– अग्रवाल श्रीमती आर.– भारत में ग्रामीण समाज, विद्या भवन , इन्दौर
14. शर्मा, अमित कुमार – भारतीय सामाजिक संरचना, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली
15. श्रीवास्तव, ग्रामीण समाजशास्त्र, रामप्रसाद एण्ड संस ,आगरा ,संस्करण – 2011

****

सामाजिक न्याय, न्यायपालिका एवं मानव अधिकार

डॉ. सपना चक्रवर्ती *

शोध सारांश – भारतीय संविधान के अन्तर्गत मानव अधिकारों को मान्यता प्रदान की गई है। जिन मानव अधिकारों को संविधान के तृतीय भाग में सम्मिलित किया गया है वे मौलिक अधिकार के रूप में है तथा जिन अधिकारों का उल्लेख संविधान के चतुर्थ अध्याय में किया गया है उन्हें राज्य के नीति–निर्देषक सिद्धान्त के रूप में मान्तया प्राप्त है। नागरिक तथा राजनीतिक मानव अधिकार संविधान के तृतीय भाग में हैं तथा आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार संविधान के चतुर्थ भाग में है। सैद्धान्ति रूप से मौलिक अधिकारों का प्रवर्तन अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय द्वारा तथा अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालयों द्वारा किए जाने की व्यवस्था की गई है। राज्य के नीति–निर्देशक तत्व यद्यपि न्यायालयों द्वारा अप्रवर्तनीय हैं तथापित न्यायिक सक्रियतावाद तथा लोकहित वाद के प्रभाव में राज्य के नीति–निर्देशक तत्व भी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय हो गए हैं।

प्रस्तावना – संविधान में मौलिक अधिकारों के उल्लेख से अधिक महत्वपूर्ण बात उन्हें क्रियान्वित करने की व्यवस्था है, जिसके बिना मौलिक अधिकार अर्थहीन सिद्ध होंगे। संविधान निर्माताओं ने इस उद्देश्य से संवैधानिक उपचारों के अधिकार को भी संविधान में स्थान दिया है जिसका तात्पर्य यह है कि नागरिक अधिकारों को लागू करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की शरण ले सकते हैं। इन न्यायालयों के द्वारा व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित उन सभी कानूनों और कार्यपालिका के कार्यों को अवैधानिक घोषित कर दिया जाऐगा जो मौलिक अधिकारों के विरूद्ध हो। नागरिकों के अधिकारों के बारे में सर्वोच्च न्यायालयों को संविधान ऐसे निर्देश, आदेश या लेख जारी करने की शक्ति प्रदान करता है जिन्हें वह आवश्यक समझता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सर्वोच्च न्यायालय निम्नलिखित आदेश दे सकता है। इसे अनुच्छेद 368 के द्वारा संशोधित कर नष्ट नहीं किया सकता। [1,2]

1. **बन्दी प्रत्यक्षीकरण –** व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए यह लेख सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह उस व्यक्ति की प्रार्थना पर जारी किया जाता है जो यह समझता है कि उसे अवैध रूप से बन्दी बनाया गया है। इसके द्वारा यह न्यायालय बन्दीकरण करने वाले अधिकारी को आदेश देता है कि वह बन्दी बनाय गये व्यक्ति को निश्चित समय और स्थान पर उपस्थित करे जिससे न्यायालय बन्दी बनाये जाने के कारणो पर विचार कर सके।

बन्दीकरण की अवस्था में संरक्षण (अनुच्छेद 22) – अनुच्छेद 22 के द्वारा बन्दी बनाये जाने वाले व्यक्ति को कुछ अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसमें कहा गया है कि उसके अपराध के बारे में अथवा बन्दी बनाने के कारणों को बतलाये बिना किसी व्यक्ति को अधिक समय तक बन्दीगृह में नहीं रखा जाऐगा।

2. **परमादेश –** परमादेश का लेख उस समय जारी किया जाता है जब कोई पदाधिकारी अपने सार्वजनिक कर्तव्य का निर्वाह नहीं करता है। इस प्रकार के आज्ञापत्र के आधार पर पदाधिकारी को उसके कर्तव्य का पालन करने का आदेश जारी किया जाता है।

3. **प्रतिषेध –** यह आज्ञापत्र सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा निम्न न्यायालयों तथा अर्द्ध न्यायिक न्यायाधिकरणों को जारी करते हुए आदेश दिया जाता है कि इस मामले में अपने यहाँ कार्यवाही स्थगित कर दें क्योंकि यह मामला उनके अधिकार क्षेत्र के बाहर है।

4. **उत्प्रेषण –** यह आज्ञापत्र अधिकांशत: किसी विवाद को निम्न न्यायालय में भेजने के लिए जारी किया जाता है जिससे यह अपनी शक्ति से अधिक अधिकारो को उपभोग न करे या अपनी शक्ति का दुरूपयोग करते हुए न्याय के प्राकृतिक सिद्धांतों को भंग न करे।

5. **अधिकार पृच्छा –** जब कोई व्यक्ति ऐसे पदाधिकारी के रूप में कार्य करने लगता है जिसके रूप में कार्य करने का उसे वैधानिक रूप से अधिकार नहीं है तो न्यायालय अधिकार पृच्छा के आदेश द्वारा उस व्यक्ति से पूछता है कि वह किस आधार पर इस पद पर कार्य कर रहा है और जब तक वह इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर नहीं देता, वह कार्य नहीं कर सकता।

इस आदेशो के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय नागरिकों के मौलिक अधिकारो की रक्षा करते हैं। प्रत्येक नागरिक आश्वस्त हैं कि संविधान ने उसके जो मौलिक अधिकार दिए हैं संवैधानिक उपचारों के कारण वह उनका प्रयोग कर सकता है।

निष्कर्ष – हेराल्ड पाटर पर विचार है अधिकांश लोग समझते हैं कि वे न्यास के अभिप्राय को जानते हैं लेकिन वास्तविकता यह हैं कि न्याय के बारे में उनकी धारणा अत्यधिक अस्पष्ट होती है। पाश्चात्य तथा पूर्वात्य दोनों ही राजनीतिक दर्शन में न्याय की अवधारणा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया हे। वास्तविकता तो यह है कि न्याय न केवल राजनीतिक वरन् नैतिक चिन्तन का भी अनिवार्य तत्व रहा है।

सामान्य धारणा यह है कि न्याय के तात्पर्य न्यायिक संस्थाओं के माध्मय से विवादों का निपटारा करना है किन्तु वर्तमान लोकतांत्रिक व्वस्था में न्याय के तीन व्यापक आयाम हैं – सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय। सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में लोकतंत्र के अन्तर्वेक्षण से न्याय के अर्थ का इतना विस्तार हो गया है कि वर्तमान में इसके अन्तर्गत मानव जीवन के समस्त पहलू आ जाते हैं। वर्तमान राज्य इस दृष्टि से अत्यधिक जागरूक है कि व्यक्ति के अधिकारों को उसने समाज के व्यापक हितों में युक्तियुक्त रूप से सीमित किा जाना चाहिए ताकि सामाजिक न्याय के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सके।

सामाजिक अवधारणा को मूर्तस्वरूप प्रदान करने की दृष्टि से संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के माध्यम से मानव अधिकारों की व्यवस्था की गई तद्नुरूप भारतीय संविधान के भाग तीन में

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र) भारत

मौलिक अधिकारों की व्यवस्था कर मानव अधिकारों को मौलिक अधिकारों के रूप में मान्यता प्रदान की गई। इस तथ्य को दृष्टिगत रखकर मैंने 'सामाजिक न्याय, न्यायपालिका एवं मानव अधिकार' विषय का चयन किया है।

भारतीय संविधान के अन्तर्गत मानव अधिकारों को मान्यता प्रदान की गई है। जिन मानव अधिकारों को संविधान के तृतीय भाग में सम्मिलित किया गया है वे मौलिक अधिकार के रूप में है तथा जिन अधिकारों का उल्लेख संविधान के चतुर्थ अध्याय में किया गया है उन्हें राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्त के रूप में मान्तया प्राप्त है। नागरिक तथा राजनीतिक मानव अधिकार संविधान के तृतीय भाग मे हैं तथा आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकार संविधान के चतुर्थ भाग में है। सैद्धान्ति रूप से मौलिक अधिकरों का प्रवर्तन अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय द्वारा तथा अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालयों द्वारा किए जाने की व्यवस्था की गई है। राज्य के नीति-निर्देशक तत्व यद्यपि न्यायालयों द्वारा अप्रवर्तनीय हैं तथापित न्यायिक सक्रियतावाद तथा लोकहित वाद के प्रभाव में राज्य के नीति-निर्देशक तत्व भी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय हो गए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 1948 सी.एस.डी. खण्ड 7, पृष्ठ 953.
2. रूरल लिटिगेशन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1989) एच.एस.सी.सी.504.
3. Agrawal, H.O., Implementation of Human Rights Convents with Special Reference to India, Kitab Mahal, Allahabad, 1983.
4. Agrawal, R.S., Human Rights in the Modern World, Chetana Publications, New Delhi, 1979.
5. Anderson, Sir Norman, The Minlyn Lectures, Thirteen Series, Library, Law and Justice.
6. Ashjorn Eide and August Shou, (ed), International Production of Human Rights, Interscience Publishers, Stockblom, 1968.
7. Austin, Granville, The Indian Constitution : Cornerstone of a Nation, Oxford University Press, Bombay, 1966.
8. Banerjee, D.N., Our Fundamental Rights – Their Neture and Extent, The World Press, Calcutta, 1968.

****

भारतीय सामाजिक परिदृश्य एवं स्वामी विवेकानन्द

डॉ. सुधा लाहोटी *

प्रस्तावना – आज 21 वीं शताब्दी में भारत में राष्ट्रीय पराभव, सामाजिक विकृति एवं नैतिक मूल्यों के पतन के निराकरण हेतु एक बार फिर से स्वामी विवेकानन्द जैसे सन्यासी के उत्प्रेरक विचारों एवं भाषणों की आवश्यकता महसूस हो रही है। स्वामी विवेकानन्द भारत के ऐसे आलोकपुंज है जिनके आभामंडल से आज भी सम्पूर्ण विश्व आलोकित है उनका ऊर्जावान व्यक्तित्व, कालजयी विचार आज के सामाजिक पतन की स्थिति को देखते हुए ज्यादा प्रासांगिक एवं प्रभावशील है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत वर्ष रूढ़िवादिता एवं धार्मिक कुरीतियों से ग्रस्त था। संपूर्ण भारतीय समाज में अनेक कुप्रथाएँ प्रचलित हो गयी थी। बाल विवाह, सती प्रथा, भ्रुणहत्या, छुआछुत, नारियों के प्रति असम्मान, जातिगत भेदभाव, इत्यादि दोषों ने भारतीय समाज की श्रेष्ठता ओर भारतीय संस्कृति की उच्चता को खो दिया था। प्रयाग, गंगासागर एवं जगन्नाथपुरी में स्वर्ग प्राप्ति के लिए आत्मबलि देना सामान्य बात हो गयी थी। यदि किसी व्यक्ति का रोग असाध्य हो जाये तो उसे गंगा में आत्म विसर्जन के लिए विवश कर दिया जाता है।

यहीं से भारत में आधुनिक चिन्तन की पृष्ठभूमि बनी। भारतीय सभ्यता और संस्कृति को डूबते हुए देखकर बौद्धिक और दार्शनिक वर्ग चुप नहीं रह सका और तत्कालीन समाज सुधारकों ने आंदोलन प्रारंभ किये।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में पाश्चात्य की चकाचौंध से जब हमारी ऑखे चौंधिया रही थी, सम्पूर्ण राष्ट्र दिग्भ्रमित हो रहा था। राष्ट्र के सामने प्रश्न के बाद प्रश्न, संदेह के बाद संदेह बढ़ता जा रहा था। विजातीय पथ पर स्वजातिय का सुधार रथ चलने में असमर्थ होकर रूक सा गया था ऐसे ही समय में भारतीय समाज में अर्विभूत हुए स्वामी विवेकानन्द जिन्होंने समाज के नव निर्माण का प्रयास किया। इसके लिए विवेकानन्द जी को प्राचीन भारत की वर्ण व्यवस्था में साकार हुए सामाजिक सामंजस्य तथा समन्वय के आदर्श से प्रेरणा मिली थी। वह एक ऐसे समाज की स्थापना चाहते थे जो पारस्परिक सक्रिय प्रेम एवं सामन्जस्य पर आधारित हो। उनके अथक प्रयासों से सामाजिक परिवर्तन हुए, किन्तु आज समाज फिर गलत दिशा की ओर अग्रसर हो रहा है। जिसमें विवेकानन्द के विचारों के माध्यम से युवावर्ग को पुनर्जागृत करने की आवश्यकता है। युवाशक्ति ही वह शक्ति है जो विवेकानन्द जी के बलिदान को व्यर्थ होने से बचा सकती है, इसके लिए आध्यात्मिक, शैक्षणिक, सामाजिक, धार्मिक जागृति एवं चिन्तन की आवष्यकता है। विवेकानन्द के अनुसार 'हमारी आध्यात्मिकता ही हमारा जीवन रक्त है हमारा धर्म ही हमारा तेज, हमारे बल और हमारे राष्ट्रीय जीवन का मूल आधार है'।

स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं को संदेश देते हुए कहा था – 'हमारे व्यक्तित्व की उत्पत्ति हमारे विचारों में है, इसलिए ध्यान रखे कि आप क्या विचारते है, शब्द गौण है, विचार मुख्य और उसका असर दूर तक होता है'। 'ऐसे आशावादी विचारों पर यदि आज का युवा वर्ग, जो पाश्चात्य संस्कृति की दौड़ में अपने नैतिक मूल्यों का ह्रास कर रहा है, चिन्तन करे तो निश्चित ही राष्ट्रीय सामाजिक एवं व्यक्तिगत विकास की ऊँचाईयों को छू सकता है'।

इसके साथ ही साथ विवेकानन्द जी ने धर्मान्धता, रूढ़िवाद और मिथ्या विश्वासों को दूर करने पर जोर दिया। सामाजिक रूढ़िवादिता का घोर विरोध करते हुए उन्होंने उसे एक तालाब के सड़े हुए पानी के समान बताया जो जीवन दान देने के बजाय मृत्यु देती है। उन्होंने आम जनता को कूपमंडूक न बने रहकर खुली ऑखो से दुनिया को देखने के लिए कहा। उनके अनुसार जीवन प्रगतिशील है, आज का हमारा जीवन पिछली अनेक सदियों में की गयी प्रगति तथा विकास का परिणाम है। अतएव रूढ़िवादिता और अप्रगतिशील विचारों से दूर रहकर सदैव प्रगति पथ का राही बनना चाहिए। समाज में फैले अंधविश्वास को दूर करना चाहिए। प्रत्येक बात को तर्क तथा बुद्धि की तराजू पर तौलकर ग्रहण करना चाहिए। स्वामी जी चाहते थे कि सभी व्यक्ति और समूह अपने कर्तव्यों ओर दायित्वों के पालन में ईमानदार हो। उन्होंने उग्र क्रांतिकारी परिवर्तनों की अपेक्षा अवयवी ढगं के और धीमें सुधार का समर्थन किया। उनके अनुसार समाज दर्शन का मूल आध्यात्मिकता है। जिसमें चरित्र की शुद्धता तथा भ्रातृत्वपर अधिक बल दिया गया है।

विवेकानन्द जी के अनुसार 'आप को अपने भीतर से ही विकास करना होगा कोई आपको सीखा नहीं सकता, कोई आपको आध्यात्मिक नहीं बना सकता आपको सीखने वाला और कोई नहीं सिर्फ आपकी आत्मा ही है'। इसलिए विवेकानंद जी एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था की बात करते है जिसके द्वारा उन सब दोषों को दूर किया जा सकता था जो वर्तमान काल में देश के पतन का कारण हुए है। तथा दूसरी ओर जन समुदाय में उन गुणों का निर्माण किया जा सकता था जो देश की प्रगति के लिए आवश्यक है। विवेकानन्द जी वेदान्त पुरूष के रूप में शिक्षा के माध्यम से स्वस्थ विचारधारा एवं उन्नत विचारों वाले समाज की स्थापना करना चाहते थे। वे स्वंय एक ऐसे क्रियाशील व्यक्ति थे जिन्होंने परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस करते हुए उसकी निरन्तरता को बनाये रखने पर जोर दिया। उनके निरन्तर बौद्धिक विचार विमर्श और चिन्तन के उनके विराट नैतिक चरित्र ने युवाओं को अपनी ओर प्रेरित किया। समाज में फैले अंध विश्वास और कुरीतियों से दूरी बनाये रखने के लिए शिक्षा अनिवार्य है। उनके अनुसार 'शिक्षा से आत्म विश्वास आता है' और आत्मविश्वास से गलत का विरोध व सामना करने की क्षमता आती है। शिक्षित होने से विचारों की स्वतंत्रता, चरित्र विकास,एकाग्रता, चिन्तन आदि की शक्ति प्राप्त होती हैं। कहते है कि सक्रिय दुर्जन से निष्क्रिय सज्जन ज्यादा खतरनाक होते है। इसी से बचने के लिए विवेकानन्द जी ने युवा शक्ति को जागृत कर उन्हें सामाजिक परिवर्तन एवं उत्थान के लिए प्रेरित किया। वे कर्म

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

में तथा आज में विश्वास करते थे, वे चाहते थे कि सभी व्यक्ति और समूह अपने कर्तव्यों का ईमानदारी एवं निष्ठा से पालन करे। साथ ही उन्होंने स्त्री–पुरूष, धनी निर्धन सभी की शिक्षा पर जोर दिया। शिक्षा के माध्यम से ही भ्रातृत्व की भावना तथा अधिकारों के प्रति जागरूक होने की प्रेरणा मिलती है। शिक्षा के माध्यम से सम्पूर्ण देश के प्रत्येक नर नारी को जगाना चाहते थे। उन्हें शारीरिक, भौतिक, नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से सच्चे अर्थो में मनुष्य बनाना चाहते थे ओर स्वंय इसी का प्रसार करने के लिए नगर–नगर घूमते रहे। उन्होंने इसके लिए पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय साहस, आत्म – विश्वास, एकाग्रता, अनासक्ति तथा उच्च नैतिक चरित्र के गुण निर्माण करने पर विशेष रूप से ध्यान दिया। हर जगह साम्यवादी एवं संतुलित दुष्टिकोण रखते हुए शिक्षा के माध्यम से समाज में मानववाद स्थापित करने का प्रयत्न किया। उनके अनुसार मानव को मानव समझना और उसे ईश्वर समझकर उसकी सेवा करना ही सच्चा मानव धर्म है। आज के इस कठिन समय में विवेकानन्द के विचारो की जागृति की आवश्यकता है। यदि मनुष्य स्वंय उन्नति के रास्ते पर अग्रसर होना चाहता है तो उसे विवेकानन्द जी के आदर्शो, नियमों, अनुशासन का अनुसरण एवं उनको आत्मसात करना पड़ेगा। यही आज के समय की, समाज की, धर्म की, और मानवता की मांग है। आज उनका सार्वभौमिक सत्यवचन – 'उठो जागो और ध्येय की प्राप्ति तक रूको मत' भारत के पुनरूत्थान के लिए अति आवष्यक है। भारत उनके बहुआयामी विचारो के लिए हमेंशा ऋणी रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. विवेकानन्द का दार्शिनक चिन्तन – डॉ. भरत कुमार तिवारी
2 संचयन – श्री रामकृष्ण – विवेकानन्द साहित्य
3. हिस्ट्र ऑफ ब्रम्ह समाज – सीतानाथ शास्त्री

****

भारतीय समाज पर पश्चिम के प्रभाव का अध्ययन (निरन्तरता और परिवर्तन के विशेष सदंर्भ में)

सादिक मोहम्मद खान *

प्रस्तावना – भारतीय समाज में पश्चिम से परिचय व्यापार के माध्यम से हुआ है। सन् 1600 ई.के लगभग ईस्ट इण्डिया कंपनी भारत में आयी तब इसका उद्देश्य भारत से तैयार माल, जैसे कपड़ा, आभूषण और मसालों को पूर्व में यूरोप जाकर बेचना था। धीरे-धीरे यह कंपनी भारत की शासक बन गयी । इन विदेशियों ने समझा की यहॉ लम्बी अवधि तक रहने के लिए स्थानीय हिंदूओं के सामाजिक रिवाजों और धार्मिक अवस्थाओं में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। ब्रिटिश सरकार के साथ-साथ दो और महत्वपूर्ण बाते इस देश में आयी। एक तो ईसाई मिशनरी और दूसरा अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से अध्ययन और अध्यापन। अंग्रेजी मिशन ने भारतीयों को ईसाई धर्म में परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। शिक्षा को अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाने का विकल्प दिया गया। इसके परिणामस्वरूप संस्कृत पाठशालाओं का परिवेश ही बदल गया। अब अंग्रेजी रोजगार प्राप्त करने का साधन बन गयी।

मिशन और अंग्रेजी शिक्षा के अतिरिक्त यातायात, संचार साधन, प्रौधोगिकी और न्यायपालिका ने भी भारतीय समाज को प्रभावित किया। पश्चिमी देशों के साथ हिन्दू परम्परा का संपर्क एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रघटना है। पश्चिमी देशों में समानता, स्वतंत्रता और वैज्ञानिक तथा प्रौधोगिकीय दृष्टि बहुत व्यापक थी। इसका प्रभाव भारतीय समाज और जातिय व्यवस्था पर भी पड़ा।

अंग्रेजी शिक्षा का सूत्रपात – ब्रिटिश सरकार के आने के पहले, यहॉ राजकाज चलाने के लिए फारसी, संस्कृत, उर्दू और स्थानीय भाषायें थी। पहली बार मेकाले ने अंग्रेजी शिक्षा और भाषा को बढ़ावा देने के लिये सन् 1835 में शिक्षा नीति को तय किया। इस नीति में यह प्रस्तावित किया गया कि अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया जाये, शिक्षा के प्रसार में ईसाई मिशनरियों को एक निश्चित भूमिका दी जाए। सन् 1882 में प्रथम शिक्षा आयोग ब्रिटिशकाल में बनाया गया। इस नीति के अंतर्गत उच्च शिक्षा पर अधिक बल दिया गया। इधर दूसरी और प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों पर शिक्षा की अवहेलना की गयी।

संचार का जाल – ब्रिटिश सरकार ने संचार साधनों का विस्तार कई तरह से किया। सूचना और विचारों का सम्प्रेषण करने के लिए छापाखाने स्थापित किये गये। तार और टेलीफोन की व्यवस्था के साथ-साथ आवागमन के साधनों में रेलगाड़ी का सूत्रपात किया गया। परिणाम यह हुआ कि सम्पूर्ण ब्रिटिश राज में नये समाचार-पत्र और पत्रिकाएॅ विशेषकर क्षेत्रीय भाषाओं में प्रारंभ की गयी। ब्रिटिश शासन ने ही डाक सेवाएॅ, चलचित्र और रेडियो आदि प्रारंभ किये। इन नई युक्तियों ने जाति, पवित्र-अपवित्र की अवधारणाओं पर कुठाराघात किया। अब लोगों को लगने लगा की जीवन में गतिशीलता भी कोई महत्व रखती है।

विचारों में क्रांति – ब्रिटिशकाल में भारतीय आचार विचार में व्यापक परिवर्तन आये। अब लोग फ्रांसीसी क्रांति के स्वंतत्रता, समानता और बंधुत्व के विचारों को व्यापक दृष्टिकोण से समझने लगे। इन विचारों का प्रभाव भारतीयों के मानस पटल पर पड़ा। अंग्रेजी भाषा ने भारतीय समाज को पश्चिमी देशों के रूबरू कर दिया। अब शिक्षण संस्थाओं ने विचारो के क्षेत्र में बहुत बड़ा परिवर्तन ला दिया।

नई दण्ड संहिता– अंग्रेंजी शासन ने एक और परिवर्तन भारतीय दण्ड संहिता के माध्यम से किया। अंग्रेजो के आने से पहले यहॉ शास्त्रीय हिन्दू विधि काम करती थी। अंग्रेजो ने इस विधि में परिवर्तन किया। देश की विभिन्न जातियों के जातिगत नियमों को उन्होंने शास्त्रियों ओर पण्डितों की सलाह पर कानूनी जामा पहनाया। अंग्रेजो ने बडे व्यवस्थित रूप से हिन्दुओं और मुसलमानों के जातीय रिवाजों पर भारतीय दण्ड संहिता या ताजीरात हिन्द को बनाया। इस दण्ड संहिता ने कम से कम ब्रिटिश भारत को कानून की दृष्टि से एक सूत्र में बांध दिया। पहली बार कानून की दृष्टि से भारत के सभी लोग समान हो गये। इस नीति के अनुसार ब्रिटिश शासन ने एक पृथक न्यायपालिका, न्यायालय बनाये और पहली बार विवाह, परिवार, तलाक, दत्तक ग्रहण, सम्पति हस्तांतरण, अल्पंसख्यक, भूमि अधिकार, लेन-देन, व्यापार, उद्योग और श्रम आदि के बारे में नये कानून लागू किये। यह कानून संपूर्ण ब्रिटिश शासन पर समान रूप से लगता था।

नगरीकरण और औद्योगीकरण – यूरोप में औद्योगिक क्रांति लगभग 18 वीं सदी में आयी। भारत में औद्योगीकरण ब्रिटिश शासन के माध्यम से ही आया। औद्योगीकरण के साथ-साथ नगरीकरण भी आया। देखा जाए तो ये दोनों प्रकियाएॅ नगरीकरण और औद्योगीकरण एक-दूसरे की पूरक और पारस्परिक है। विकसित देशों की तुलना में भारत में नगरीकरण एक धीमी प्रक्रिया है। यह होते हुए भी नगरों की जनसंख्या में वृद्धि हुई हैं। आज स्थिति यह है कि अधिकांश सुख सुविधाएॅ नगरों में केन्द्रीत है। परिणाम यह हुआ की नगरीकरण का फैलाव सम्पूर्ण देश में असमान रहा है। औद्योगीकरण भी असमान रूप से हुआ है। पंजाब, महाराष्ट्र, तमिलनाडू और कर्नाटक जैसे राज्य औद्योगिक दृष्टि से विकसीत है, तो बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश अपेक्षाकृत अल्पविकसित औद्योगिक राज्य रहे है।

राष्ट्रीयता के विकास में वृद्धि– ब्रिटिश शासन काल के समय भारत में राष्ट्रीयता की नवीन लहर विकसित हुई। ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन ने भारतीयों को स्वतंत्रता व समानता के विचार भी दिये। यद्यपि स्वंतत्रता की लडाई हमनें स्वंय लड़ी लेकिन इसमें अंग्रेजो का योगदान भी कोई कम नहीं था। उपनिवेशवादी शासन की यह विशेषता थी की वह हमारें जातीय मामलों में दखल नहीं देता था फिर भी उन्होंने कहीं-कहीं यह साहस दिखाया और

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय ,इन्दौर (म.प्र.) भारत

हमारे रीति रिवाजों पर अंकुश लगाया। उदाहरण के लिए सती प्रथा। स्वंतत्रता की लड़ाई एक अनोखी लड़ाई थी इसमें विभिन्न जातियों, पुरूष स्त्रियों ओर विभिन्न सांस्कृतिक क्षेत्रों ने पूरी ताकत के साथ अंग्रेजी शासन का मुकाबला किया। महात्मा गांधी ने ब्रिटिश परम्परा के अनेक मानवतावादी तत्वों को अपनाया और उनको राष्ट्रीय भावनाओं और राजनैतिक चेतना को उभारने के लिए उपयोग में लिया। हमारी इस स्वंतत्रता की लडाई में यूरोप की विचारधारा ने बड़ा सहयोग किया।

उपसंहार – समकालीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में समझना बहुत आवश्यक है। यह भारतीय समाज 5000 वर्ष पूर्व के आर्य समाज का सतत् प्रवाह है। आर्यो से लेकर यानी धार्मिक समाज की जड़ो पर विकसित होता हुआ यह समाज आज एक सार्वभौम, प्रजातांत्रिक, समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रीय समाज है। इसे बनाने में कई संस्कृतियों ने योगदान दिया है। इसकी बहुत बड़ी विशेषता निरंतरता है। इसकी सभ्यता में इतिहास की चादर में कई सलवटे आयी, उतार–चढ़ाव आये फिर भी यह आज बराबर बना हुआ हैं। जिसे पम्परागत हिन्दू समाज कहते है। वह आज एक धर्मनिरपेक्ष समाज है। राज्य का धर्म से कोई संबंध नहीं है उसके सामने सभी धर्म समान है। इस समाज की परम्परागत संरचना में एक और विशेषता इसके कर्मकाण्ड यानी रीति–रिवाज है। अब भी यह समझा जाता है कि कर्मकाण्डों की अध्यक्षता ब्राह्मण ही करेगें।

परम्परागत हिन्दु समाज की एक और विशेषता कर्म के सिद्धांत में विश्वास हैं। बहुसंख्यक हिन्दु और एक सीमा तक आदिवासी यह मानते है कि मनुष्य का पुनर्जन्म होता है। शायद इसी धारणा ने परिवर्तन की प्रकिया के होते हुए भी इस समाज की यथास्थिति को बनाये रखा है। देखा जाये तो भारतीय सामाजिक व्यवस्था की जड़ में इसकी भाषायी प्रस्थिति, संयुक्त परिवार और जाति व्यवस्था है। उपनिवेशकालीन भारत में यह एक विवाद उठा था कि भारत को एकीकरण की अवस्था में लाना कितना संभव है, क्योंकि अंग्रेज इसे एक उपनिवेशकारी साम्राज्य बनाना चाहते थे। भारत को एकीकृत करने में सबसे बड़ी समस्या जाति व्यवस्था की रही है। समाजशास्त्री रिजले ने यह कहा था कि जब तक जातियॉ रहेगीं, भारत एक नहीं हो सकता। इससे नृजातीयता समाप्त नहीं होगी।

हमारे संविधान निर्माता इस तथ्य को समझ गये थे और इसलिए उन्होंने संविधान में जाति व्यवस्था को समाप्त करने का प्रावधान रखा और कहा कि इस देश में राज्य, जाति, लिंग और धर्म में काई भेदभाव नहीं करेगा। यह सब होने पर भी यानि जाति पर प्रतिबंध होते हुए भी आज राष्ट्रीय जीवन के हर पहलू को जाति प्रभावित करती है। जाति में क्षेत्रियता है। जाति एक नृजातीय तत्व है और ऐसी अवस्था में देश की बहसांस्कृतिक स्थिति को देखते हुए धर्मनिरपेक्षता ही एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से जातीय सामाजिक व्यवस्था को एकीकृत रूप में रखा जा सकता है।

सदंर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Sharma, K.L. , Indian Social Structure and Change (hindi) Rawat publication, jaipur, 2006
2. Singh, K.S. , People of India : An Introduction, Anthropological Survey of India , Colcutta 1992
3. Indra Deva and Shri ram, Society and culture in India, Rawat Publication jaipur 1999
4. Panikkar, K.M. , Hindi Society at cross Roads, Asia Publication House Bomboy 1955
5. Dube, Sourabh (ed) Post coloniol passges, oxford university press new Delhi 2004
6. Kumar Dharmendra Sociology , Upkar Publication Agra
7. Mukharji, Agrwal Sociology, Shivlal Agrwal and company indore

****

गल - पर्व : भील - संस्कृति का पुरातन पर्व

प्रो. मीना मावी * प्रो. बंशीलाल डावर * *

प्रस्तावना – भारत एक ऐसा राष्ट्र है, जिसमें विभिन्न प्रकार की सस्कृति और समुदाय के लोग निवास करते है। अनेक जाति, धर्म, सम्प्रदाय,भाषा,बोली और प्रजाति के होने के कारण भारतीय समाज में विविधता दिखाई देती है। इस विविधता में एक ऐसा समूह भी है,जिसे हम जनजाति कहते है। भारत के 29 राज्य और 6 केन्द्रशासित प्रदेशो में लगभग 705 जनजाति समूह है, जो के वर्ष 2011 की जनगणना अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का 8.67 प्रतिशत है।

मध्यप्रदेश का जनजातीय समाज काफी प्राचीन और सांस्कृतिक एवं सामाजिक विशेषताओं से युक्त है। जनजातीय संस्कृति, धार्मिक विश्वास, गीत, संगीत, नृत्य, मिथक, लोककथाओं और उत्सवों से भरपूर है। इसी प्रकार जनजातीय समाज की अपनी परम्पराएं और मान्यताएँ है। मध्यप्रदेश की जनजातियों में जन्म, नामकरण, विवाह, तलाक आदि की मान्य परम्पराएँ है। यद्यपि ये परम्पराएँ अलग-अलग जनजातियों में अलग-अलग है,तथापि सभी की अपनी मान्य सामाजिक व्यवस्थाएँ है।

जनजातीय संस्कृति का मूल और विस्तार उनकी प्रथाओं में देखा जा सकता है। ऊपर से इनकी प्रथाएँ विचित्र, कौतुहलपूर्ण और आश्चर्यजनक लग सकती है, लेकिन नजदीक से देखने पर ये प्रथाएँ उनके जीवन के अनेक मिथकों,संस्कारों, परम्पराओं और व्यवहारों को खोलती है। धार्मिक विश्वासों, मान्यताओं अदृश्य शक्तियों के रहस्यों और पुरा स्वप्न स्मृतियों की खोज तक पहुँचती है। प्रथाओं में आदिवासियों की ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक परम्प्राओं का उल्लेख ही नहीं मिलता, बल्कि उनके चरित्र के निर्माण और जातीय सीमाओं में बांधे रखने का कार्य भी प्रथाएँ करती है।

आदिवासियों के पर्व-त्यौहार किसी न किसी मिथक, आस्था और प्रथाओं से जुड़े होते है,जो आदिम जीवन-परम्परा के सबसे आनंददायी अवसर है। शराब आदिवासियों के जीवन का अनिवार्य पेय है। आदिवासियों के जीवन में कोई भी ऐसा अवसर नहीं होता है, जिसमें महुआ से बनी दारू का सामाजिक और आनुष्ठानिक उपयोग न होता हो। सभी आदिम जातियों में पारम्परिक वस्त्रों, गहनों, मालाओं और गुदनों, रंगों से शरीर अलंकृत करने की प्रथा है। परंपराएँ और प्रथाएँ लोगों के आचरण, व्यावहारिक संतुलन को बनाएँ रखने की कुंजियाँ है। मध्यप्रदेश का अधिकांश भाग आदिम जनजातियों से भरा है, जिनमें गौंड़, भील, बैगा, कोल, सहरिया एवं कोरकू आदि प्रमुख है। वर्ष 2011 की जनगणना अनुसार मध्यप्रदेश की कुल जनसंख्या 7,25,97,565 में से जनजातीय जनसंख्या 1,53,16,784 है इसमें सर्वाधिक 34.74 प्रतिशत गौंड़ जनजाति है, इसके बाद 22.32 प्रतिशत भील जनजाति है जो भारत की तीसरी बड़ी जनजाति है।

भील जनजाति- भील जनजाति का मुख्य निवास मध्यप्रदेश के पश्चिमी जिलें है,जिनकी सीमाएँ राजस्थान, गुजरात व महाराष्ट्र से लगी है। इसके अन्तर्गत झाबुआ, अलिराजपुर, धार, बड़वानी एवं पश्चिमी निमाड़ जिलें है। झाबुआ जिले में भील जनजाति की संख्या सर्वाधिक है। वर्ष 2011 की जनगणना अनुसार, झाबुआ जिले की कुल जनसंख्या-10,25,048 में से जनजातीय जनसंख्या-8,91,818 है,जो जिले की कुल जनसंख्या का 87 प्रतिशत है।

आदिवासी समाज गल पर्व को बलिदान एवं श्रद्धा के रूप में मनाता है। यह पर्व होली के दूसरे दिन (धुलेण्डी) दोपहर बाद प्रारम्भ होता है। गल पर्व लकड़ी के चार खम्बो पर तैयार किये गये मचान तथा इसके मध्य भाग से एक लकड़ी का खम्बा जो मचान के ऊपर तक निकलता है, उस खम्बे के ऊपर एक अन्य लकड़ी को बान्धा जाता है; जिसकी आकृति अंग्रेजी के टी अक्षर की तरह दिखाई देती है,जिसके एक किनारे पर मन्नतधारी व्यक्ति को औंधा लिटाकर बाँधा जाता है तथा दूसरे छोर पर रस्सी बाँधकर जमीन पर नीचे खड़े पुरूष मचान के चारों ओर घुमते है। जितने चक्कर की मन्नत माँगी जाती है उतने चक्कर मन्नतधारी को घुमाया जाता है।

पुरानी मान्यता के अनुसार बीमारी या किसी संकट के समय गल देवरा से मन्नत ली जाती है तथा मनोकामना पूर्ण होने पर होलिका दहन के दूसरे दिन गाँव के बाहर बने मचान पर गाजे-बाजे तथा परम्परागत ग्राम देवता के गीतों को गाते हुए गल स्थल पर आते है।जिस दिन गल पर्व का आयोजन होता है, वहाँ सबसे पहले गल बाबजी के नीचे विराजित इंद्र राजा की पूजा ग्राम का तड़वी करता है।बीमार या किसी समस्या से पीड़ित व्यक्ति के परिवार बारी-बारी से आकर बड़वा के सामने मन्नत लेते है कि बीमारी या समस्या से छुटकारा मिलने पर अगले वर्ष मानता पूरी करेंगे। इसके बाद जिन लोगों की मन्नत पूरी हो जाती है,वह गल बाबजी की परिक्रमा करके मन्नत उतारता है। आदिवासी संस्कृति में परिक्रमा करने वाले व्यक्ति को वीर कहा जाता है, यह मन्नत केवल विवाहित पुरूष ही ले सकते है।मन्नतधारी व्यक्ति के हाथों में नारियल,काँच,कंघी एवं अन्य पूजन सामग्री रहती है। यह व्यक्ति सात दिनों तक नंगे पाँव घुमता है।ब्रम्हचर्य का पालन करके शरीर पर लाल या सफेद धोती का कपड़ा क्रास के आकार में लपेटे हुए पूरे शरीर पर हल्दी लगाकर रखता है। प्रतिदिन प्रात: उठकर पूजापाठ करता है। महिलाओं द्वारा तैयार भोजन नहीं करता है स्वयं सात दिनों तक खाना पकाकर एक समय भोजन करता हैं, घर में प्रवेश नहीं करता है तथा बाहर ही सोता है। आसपास आयोजित होने वाले भगोरिया हाट में सम्मिलित होता है। झाबुआ जिला मुख्यालय में ग्राम बिलिडोज कॉलेज के निकट गल पर्व का आयोजन होता है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र) भारत
* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला - झाबुआ (म.प्र) भारत

यहाँ दो गल बने हुए है। गल के सम्बन्ध में धन्ना ताहेड़ ने बताया कि उनकी जमीन पर राजाओं के शासन काल से गल बना हुआ है। इस गल से 100 मीटर दूरी पर ग्रामवासियों ने चंदा एकत्रित करके दूसरा गल भी बनाया है। मन्नतधारी गाँव के लोगों के साथ गल स्थल पर आता है। मचान पर दो व्यक्ति बैठे रहते है। सीढी की सहायता से मन्नतधारी मचान पर चढता है। वहाँ उपस्थित व्यक्ति मन्नतधारी को पेट के बल लिटाकर आडी लकड़ी से उसे बाँध देते है, नीचे खड़ा व्यक्ति ली गई मन्नत के अनुसार चक्कर लगाता है। मन्नतधारी व्यक्ति गल देवरा-गल देवरा का उच्चारण करता है। निर्धारित चक्कर पूर्ण होने के पश्चात मन्नतधारी को नीचें उतार दिया जाता है।

इस अवसर पर बकरे की बलि दी जाती है। बकरे की बलि देने से पूर्व उसके शसिर एवं शरीर अभिमंत्रित जल एवं शराब वहाँ के पुजारी द्वारा छिड़का जाता है। यदि बकरा सिर हिलाकर अपने शरीर से जल को झटक देता है, तो माना लाता है कि देवता प्रसन्न है फिर बकरे के सिर पर तलवार से वार किया जाता है,बकरे का सिर एक ही झटके में धड़ से अलग होना भी शुभ माना जाता है। बकरे का सिर मचान के नीचें रख दिया जाता है और धड़ को मन्नतधारी के गाँव में प्रसादी के रूप में बाँट दिया जाता है या सामुहिक भोज का आयोजन होता है।

यदि अभिमंत्रित जल छिड़कने के पश्चात बकरा सिर व शरीर नहीं झटकता है, तो उसे वहीं छोड़ दिया जाता है। उसकी बलि नहीं दी जाती है।गल पर्व सूर्यास्त तक चलता है, यदि गल पर घूमने के दौरान कोई मन्नतधारी गिर जाता है,तो उसका सिर धड़ से अलग कर दिये जाने का प्रावधान है। इसमें पुलिस व प्रशासन का भी हस्तक्षेप नहीं होगा। लेकिन अभी तक मन्नतधारी की बलि की घटना प्रकाश में नहीं आई। मान्यताओं के आधार पर यह बात कही जाती है।

यह पर्व एक तरफ आदिवासियों की अपने देवी-देवताओं पर आस्था और विश्वास का प्रतीक है,तो दूसरी ओर अपने देवी-देवताओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने का द्योतक है।

आदिवासियों का गल पर्व देखने के लिए हजारों की सख्या में आदिवासी व गैर आदिवासी एकत्रित होते है तथा ग्राम देवता व कुल देवता के साथ गल देवता की पूजा-अर्चना कर उनकी प्रशस्ति में गीत गाये जाते है।यह अनूठा पर्व आदिवासी बहुल झाबुआ व अलिराजपुर जिलों में मनाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाटिल डी. अशोक(1998) भील जनजीवन और सस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
2. शर्मा श्रीनाथ (2007) जनजातीय समाजशास्त्र, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
3. श्रीवास्तव ए.आर.एन.(2002) जनजातीय सस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
4. तिवारी शिवकुमार (2005) मध्यप्रदेश की जनजातीय सस्कृति म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
5. त्रिपाठी मधुसूदन (2008) भारत के आदिवासी, ओमेगा पब्लिकेशन दिल्ली
6. वर्मा एम.एल.(1992) भीलों की सामाजिक व्यवस्था, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी दिल्ली
7. नई दुनिया 19.03.2014 पृष्ठ संख्या13-14 ,दैनिक भास्कर 19.03.2014 पृष्ठ संख्या11
8. जनगणना 2011 के आँकड़े

****

मन्दसौर जिले के कृषि भूमि उपयोग एवं फसल प्रतिरूप में अभिनव परिवर्तन (2000-01 से 2010-11)

डॉ. बी.एल. पाटीदार * डॉ. आर. के. श्रीवास्तव **

प्रस्तावना – भूमि संसाधन धरातल पर मनुष्य द्वारा किये गये सभी विकास कार्यों को अपने में समाहित करता है। भूमि पर मानव द्वारा विभिन्न क्रिया-कलाप किये जाते हैं। सम्प्रति भूमि उपयोग भौगोलिक अध्ययन में एक महत्वपूर्ण परिवर्तनशील पक्ष है क्योंकि प्रारंभिक काल से लेकर मानव प्रविधि विकास क्रम के अनुसार यह अब तक परिवर्तित होता रहा है।

कृषि के प्रचलन से मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति हुई है। इस कार्य से उसके घुमक्कड़ जीवन में स्थायित्व आया है। इस प्रकार धीरे-धीरे सभ्यता का विकास हुआ एवं मनुष्य पशुचारण युग से वर्तमान अंतरिक्ष युग में प्रवेश कर गया। निरन्तर बढ़ते जनसंख्या दबाव के कारण मनुष्य ने जंगलों को साफ कर उसे कृषि कार्य हेतु परिवर्तित कर दिया धीरे-धीरे नदी-घाटियों के अतिरिक्त पठारों एवं मरू-भूमियों में भी कृषि क्षेत्र फैलता गया। गाँवों एवं नगरों का जाल सा बिछ गया और भूमि के एक निश्चित क्षेत्र से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए प्रयास किया जाने लगा। अधिक कृषि उत्पादन एवं लाभ के लिए शोधों और अध्ययनों की शुरूआत हुई जिससे कृषि भूमि उपयोग में सैद्धान्तिक उपागम के अनेक दृष्टिकोण अपनाए गये जो भिन्न-भिन्न आधारों पर अवबोधित है।

भारत में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण कृषि योग्य भूमि पर इतना अधिक दबाव बढ़ता जा रहा है कि एक ही भू-भाग पर विविध उपयोग के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ गई है। इस स्थिति में यह आवश्यक हो गया है कि कृषि संसाधनों का उपयोग इस तरह से किया जाए कि उससे हमें समुचित लाभ भी मिल सके एवं भूमि संसाधन को भविष्य के लिए सुरक्षित भी रखा जा सके।

पिछले दो दशकों में मन्दसौर जिले के कृषि भूमि उपयोग में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। खरीफ के साथ-साथ रबी फसलों के क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। साथ ही खाद्यान्न फसलों के स्थान पर व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र भी बढ़ा है। व्यावसायिक फसलों के उत्पादन से जिले में निश्चित रूप से आर्थिक उन्नति बढ़ी है लेकिन स्थानीय खाद्य उपलब्धता में कमी हो गई। अब कृषक भी खाद्यान्नों के लिए बाज़ार पर निर्भर होने लगा है। 2010-11 के अनुसार जिले के कुल भौगोलिक क्षेत्र में से 65.77 प्रतिशत कृषि के अन्तर्गत था। कुल कृषि क्षेत्र के 37.92 प्रतिशत भाग पर खाद्यान्न फसलें तथा 62.02 प्रतिशत भाग पर अखाद्य फसलें बोई गई। 2000-01 के मुकाबले 2010-11 में निरा बोया गया क्षेत्र में 1.17 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है कि जिले में जनसंख्या दबाव के कारण अन्य भूमि, कृषि भूमि में परिवर्तित हो रही है।

अध्ययन क्षेत्र – मन्दसौर जिला मध्यप्रदेश के उत्तर-पश्चिमी भाग में $23^{o}45'$ से $24^{o}45'$ उत्तर अक्षांश तथा $74^{o}22'$ से $75^{o}55'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य 5517 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ भौगोलिक दृष्टि से मालवा पठार का एक भाग है। जिला उष्ण कटिबंधीय मानूसनी जलवायु के अन्तर्गत आता है। यहाँ की औसत वार्षिक वर्षा 860 मिलीमीटर है। 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1339832 है जो 9 नगरीय बस्तियों तथा 906 ग्रामों में निवासरत है।

विधितंत्र – शोध हेतु द्वितीयक आंकडे भू-अभिलेख कार्यालय एवं जिला सांख्यिकी पुस्तिका मन्दसौर से प्राप्त किये गए। प्राप्त आंकडों का प्रतिशत में विचलन ज्ञात करते हुए 2000-01 एवं 2010-11 के दौरान विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल में हुए परिवर्तन को ज्ञात कर निष्कर्ष निकाले गए। सुगमता से समझने के लिए आंकडों को सारणी एवं आरेखों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया।

खरीफ-रबी कृषि भूमि उपयोग एवं परिवर्तन – दोनों ऋतुओं की अलग-अलग एवं सम्मिलित खाद्य एवं अखाद्य फसलों का एक साथ अध्ययन किया गया इससे पता लग सके कि खाद्य-अखाद्य फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल में परिवर्तन का क्या रूझान है। सारणी 1 को देखने से ज्ञात होता है कि 2000-01 में समस्त बोया गया क्षेत्र 4,06,921 हेक्टेयर था जो 2010-11 बढ़कर 5,52,363 हेक्टेयर हो गया। इस प्रकार इसमें 35.74 प्रतिशत की दशकीय वृद्धि देखने को मिलती है जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ कृषि क्षेत्र में भी वृद्धि हो रही है।

सारणी 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस दशक में खाद्यान्न फसलों के रकबे में जहाँ 31.92 प्रतिशत क्षेत्र की कमी हो गई है वहीं अखाद्य फसलों के क्षेत्रफल में 13.26 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। अत: खरीफ फसलों में खाद्यान्न फसलों का क्षेत्रफल तेज़ी से घट रहा है। ज्वार एवं मक्का जैसी खाद्यान्न फसलों का स्थान व्यावसायिक फसल सोयाबीन ने ले लिया है। 2000-01 से 2010-11 के दशक में रबी फसलों के क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि देखी जा सकती है। इसका कारण क्षेत्र में सिंचाई साधनों का विस्तार है। साथ ही 2010-11 के रबी सीजन में हुई मावठे की वर्षा ने भी रबी कृषि क्षेत्र में वृद्धि की है। इस प्रकार दशकीय परिवर्तन को देखें तो खाद्य फसलों के क्षेत्र में 197 प्रतिशत एवं अखाद्य फसलों के क्षेत्र में 439 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। गेहूँ जैसी खाद्यान्न फसल के क्षेत्र में अपेक्षित वृद्धि नहीं हुई है।

कृषि भूमि उपयोग एवं मुख्य फसलों के क्षेत्र में परिवर्तन – वर्तमान में कृषि तकनीकी के विकास के साथ-साथ कृषि फसलों के प्रारूप में भी परिवर्तन हो रहा है। जिले की जलवायु, मिट्टियों एवं भौगोलिक भिन्नताओं के कारण यहाँ खरीफ एवं रबी दोनों फसलों में विविधता देखने को मिलती हैं। खाद्यान्नों के उत्पादन की अपेक्षा यहाँ का किसान नकदी फसलों अर्थात लहसुन, धनिया, सोयाबीन, अफीम, ईसबगोल आदि की ओर आकर्षित हुआ है। जिले में उगाई जाने वाली प्रमुख फसलें एवं उनके अन्तर्गत क्षेत्रफल निम्नानुसार है :

खाद्यान्न फसलें – अध्ययन क्षेत्र में गेहूँ प्रमुख खाद्य अनाज है। 2010-11 में कुल कृषि क्षेत्र के मात्र 17.80 प्रतिशत भाग पर ही खाद्यान्न (अनाज)

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, पिपल्या मण्डी, जिला – मन्दसौर (म.प्र.) भारत

फसलों का उत्पादन किया गया, वहीं 2000-01 में कुल कृषि क्षेत्र की 23.24 प्रतिशत भूमि पर खाद्यान्न फसलों का उत्पादन किया गया था। इस प्रकार कृषि क्षेत्र में इन दस वर्षों में खाद्यान्न फसलों का रकबा 5.44 प्रतिशत कम हो गया। इस कारण गेहूँ जैसे खाद्यान्न की आपूर्ति भी यहाँ पर बाहर से आयात कर की जाती है।

गेहूँ – गेहूँ अध्ययन क्षेत्र का सबसे अधिक उपभोग किया जाने वाला खाद्यान्न है। यह रबी सीजन में बोई जाने वाली सिंचित फसल है। 2010-11 में जिले में 57,370 हेक्टेयर कृषि भूमि पर गेहूँ का उत्पादन किया गया जो कुल खाद्यान्न फसलों का 58.32 प्रतिशत है। गेहूँ के क्षेत्र में 2000-01 के मुकाबले 2010-11 में 161.58 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। अच्छी वर्षा एवं सिंचाई साधनों के विस्तार के परिणाम स्वरूप यह वृद्धि देखी गई है।

सारणी 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

ज्वार – तीन दशक पूर्व ज्वार अध्ययन क्षेत्र के ग्रामीण भागों का सबसे अधिक उपभोग एवं उत्पादन किया जाने वाला खाद्यान्न था। 2010-11 में खाद्यान्न फसलों के मात्र 3.57 प्रतिशत भाग पर ही ज्वार का उत्पादन किया। जबकि 2000-01 में यह रकबा 13.18 प्रतिशत था।

मक्का – जिले में 2010-11 में 37,232 हेक्टेयर भूमि पर मक्का का उत्पादन किया गया था जो कुल खाद्यान्न क्षेत्र का 37.85 प्रतिशत है। 2000-01 में कुल खाद्यान्न फसलों के 63.34 प्रतिशत भाग अर्थात 59,910 हेक्टेयर भूमि पर मक्का का उत्पादन किया गया था। अत: इस दशक के दौरान इसके क्षेत्र में 37.85 प्रतिशत की कमी हो गई।

दलहन फसलें –

तुअर – जिले में इसके उत्पादन क्षेत्र में निरन्तर कमी हो रही है। 2010-11 में जिले के 823 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र पर तुअर का उत्पादन किया गया जो कुल दलहन फसलों का मात्र 1.33 प्रतिशत भाग ही है। इसके उत्पादन क्षेत्र में 2000-01 की तुलना में 2010-11 में 39.92 प्रतिशत की कमी हो गई है।

उड़द – जिले में 2010-11 में 14,232 हेक्टेयर क्षेत्र पर उड़द का उत्पादन किया गया जो दलहन फसलों का 23.09 प्रतिशत भाग है। इसके क्षेत्र में 2000-01 के मुकाबले 19.50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

चना – 2010-11 में जिले में 42,786 हेक्टेयर कृषि भूमि पर चने का उत्पादन किया गया जो कुल दलहन फसलों का 69.42 प्रतिशत था। 2000-01 में चने का कुल रकबा 13,473 हेक्टेयर था जो दलहन फसली क्षेत्र का 46.89 प्रतिशत भाग है। इस प्रकार 2000-01 की तुलना में 2010-11 में चने के उत्पादन क्षेत्र में 217.75 प्रतिशत की वृद्धि देखी जा सकती है।

सारणी 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तिलहन फसलें – क्षेत्र में तिलहन फसलों के अन्तर्गत सोयाबीन, सरसों, अलसी, मूंगफली एवं तिल का उत्पादन होता है।

सोयाबीन – 'सोयाबीन' प्रोटीन प्राप्ति का एक धनी स्रोत है। खरीफ फसलों के अन्तर्गत सोयाबीन मन्दसौर जिले की प्रमुख तिलहन फसल है। 2010-11 में 2,61,475 हेक्टेयर भूमि पर सोयाबीन का उत्पादन किया गया था जो कुल खरीफ क्षेत्र का 74.15 प्रतिशत भाग है। इस वर्ष यह समस्त तिलहन क्षेत्र के 86.83 प्रतिशत भाग पर बोई गई थी। 2000-01 की तुलना में 2010-11 में सायाबीन के क्षेत्र में 19.81 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सोयाबीन जिले की कृषि अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्रोत है।

सरसों – रबी ऋतु फसल के अन्तर्गत बोई जाने वाली यह प्रमुख तिलहन फसल है। इसे स्थानीय भाषा में रायड़ा भी कहते हैं जो राई वर्गीय फसल है। मुख्य रूप से यह व्यावसायिक फसल है। 2010-11 में 30,359 हेक्टेयर भूमि पर सरसों का उत्पादन किया गया था जो समस्त तिलहन फसलों का 10.08 प्रतिशत था। 2000-01 की तुलना में इसके क्षेत्रफल में लगभग दस गुना वृद्धि हो गई है। कम सिंचाई में अच्छी उपज प्राप्त होने एवं उपज का अच्छा मूल्य प्राप्त होने के कारण इसका रकबा तेज़ी से बढ़ रहा है। 2000-01 में 2,668 हेक्टेयर भूमि पर सरसों की खेती की गई थी।

मूंगफली – मन्दसौर जिले में दो दशक पूर्व तक मूंगफली का उत्पादन कृषि के बड़े क्षेत्र पर होता था लेकिन इसका स्थान पूर्ण रूप से सोयाबीन फसल ने ले लिया है। अधिक उत्पादन लागत एवं मजदूरों की अनुपलब्धता के कारण जिले में इसकी पैदावार नगण्य हो गई है। 2010-11 के फसल वर्ष में 1,227 हेक्टेयर भूमि पर ही इसकी बुवाई की गई थी।

अलसी – क्षेत्र में अलसी का उत्पादन 2010-11 में मात्र 1,259 हेक्टेयर कृषि भूमि पर किया गया था जो तिलहन फसली क्षेत्र का मात्र 0.41 प्रतिशत था। मावठे की वर्षा होने पर क्षेत्र में इसका रकबा बढ़ जाता है।

सारणी 4 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

अन्य फसलें –

अफीम – मन्दसौर जिला अफीम की खेती के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यह एक औषधि एवं मादक पदार्थ फसल है। इसका उत्पादन भारत सरकार के नाकोटिक्स विभाग के नियंत्रण में होता है। रबी मौसम में अफीम का उत्पादन किया जाता है। विशेष तरीके के अफीम डोड़े से अफीम निकाली जाती है। डोड़े के सूखने के बाद उसमें से 'खस-खस' दाना प्राप्त होता है। 2010-11 में 13,763 हेक्टेयर भूमि पर अफीम का उत्पादन किया गया। अफीम की फसल यहाँ के लायसेंस प्राप्त कृषकों के लिए अर्थव्यवस्था का प्रमुख स्रोत है।

मिर्च-मसाले – 2010-11 में 43,758 हेक्टेयर भूमि पर मिर्च-मसाले की खेती की गई जबकि यह रकबा 2000-01 में 13,502 हेक्टेयर था। इसके अन्तर्गत जिले में धनिया तथा लहसुन की खेती मुख्य रूप से होती है।

फल एवं साग-सब्जी – विभिन्न प्रकार के फल एवं साग-सब्जियाँ पोषक तत्वों का भण्डार होते हैं लेकिन अध्ययन क्षेत्र में फलोद्यान के अन्तर्गत केवल संतरे का ही उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है। भानपुरा एवं गरोठ तहसीलों में संतरे की पैदावार सबसे अधिक होती है। मन्दसौर नगर के आस-पास क्षेत्र में अमरूद की खेती थोड़ी मात्रा में की जाती है। अन्य फलों की खेती जिले में नगण्य है।

2010-11 फसल वर्ष में कुल 5,730 हेक्टेयर भूमि पर फल एवं साग-सब्जी की खेती की गई। 2000-01 में इसके अन्तर्गत मात्र 3,730 हेक्टेयर भूमि का ही उपयोग हुआ था। इस प्रकार इनके कुल उत्पादन क्षेत्र में 53.61 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष – कृषि भूमि उपयोग के उपर्युक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कृषि भूमि पर जनसंख्या दबाव बढ़ता जा रहा है। 2000-01 के मुकाबले 2010-11 में निरा बोया गया क्षेत्र में 1.17 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है कि जिले में जनसंख्या दबाव के कारण अन्य भूमि, कृषि भूमि में परिवर्तित हो रही है। साथ ही खाद्यान्न फसलों के स्थान पर व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र भी बढ़ा है। इस कारण स्थानीय खाद्य उपलब्धता में कमी हो गई। अब कृषक भी खाद्यान्नों के लिए बाज़ार पर निर्भर होने लगा है।

खाद्यान्न फसलों के रकबे में जहाँ 31.92 प्रतिशत क्षेत्र की कमी हो गई है वहीं अखाद्य फसलों के क्षेत्रफल में 13.26 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है। दशकीय परिवर्तन को देखें तो खाद्य फसलों के क्षेत्र में 197 प्रतिशत एवं अखाद्य फसलों के क्षेत्र में 439 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। गेहूँ जैसी खाद्यान्न फसल के क्षेत्र में अपेक्षित वृद्धि नहीं हुई है। 2000-01 की तुलना में 2010-11 में सायाबीन के क्षेत्र में 19.81 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

एकाधिक फसलें पैदा करने के कारण कृषि उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव दिखाई देने लगा है। साथ ही अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अधिक रासायनिक दवाइयों एवं उर्वरकों के प्रयोग से क्षेत्र की मिट्टी की उर्वरा शक्ति निरन्तर कम हो रही है। सिंचित क्षेत्र बढ़ाने की लालसा में नलकूपों का अन्धाधुन्ध खनन हुआ है। परिणाम स्वरूप भूमिगत जल स्तर जवाब देने लगा है। अत: अब पोषणीय (Sustainable) कृषि पद्धतियों को अपनाने की आवश्यकता है जिसमें पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना ऐसी फसलों का उत्पादन किया जाए जिससे स्थानीय खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति सुगम हो सके। उपजाऊ कृषि भूमि के गैर कृष्येत्तार कार्यों हेतु उपयोग पर भी रोक लगना चाहिए।

संक्षेप में हमें ऐसी कृषि विधा अपनाने की आवश्यकता है जो पारिस्थितिक दृष्टि से न्यायोचित एवं मानवीय हों।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पाण्डेय, जे.एन. एवं कमलेश, एस.आर. (2006), कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।
2. सिंह, जगदीश, सिंह कामेश्वर एवं पटेल रामबरन (2002), भारत ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
3. तिवारी, आर.सी. एवं सिंह, बी.एन (2006), कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
4. हुसैन, एम. (2004), कृषि भूगोल, राव पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
5. Review (2000), Geographical Review of India, 2000 Vol. 62 No.1-4 .
6. जिला सोख्यिकी पुस्तिका,मन्दसौर 2001एवं 2011
7. बुकलेट, कार्यालय अधीक्षक, भू-अभिलेख विभाग, मन्दसौर 2011

सारणी 1

मन्दसौर जिला : खरीफ-रबी कृषि भूमि उपयोग (क्षेत्रफल हेक्टेयर में)

वर्ष		खरीफ फसलें		रबी फसलें		योग खरीफ-रबी		समस्त बोया
		खाद्य	अखाद्य	खाद्य	अखाद्य	खाद्य	अखाद्य	गया क्षेत्र
2000-01	क्षेत्र	90,840	2,56,707	49,710	9,664	1,40,550	2,66,371	4,06,921
	प्रतिशत	26.14	73.86	83.72	16.28	34.53	65.47	100
2010-11	क्षेत्र	61,835	2,90,752	1,47,652	52,124	2,09,487	3,42,876	5,52,363
	प्रतिशत	17.53	82.47	73.91	26.10	37.92	62.08	100
परिवर्तन	क्षेत्र	-29,005	34,045	97,942	42,460	68,937	23,495	1,45,442
क्षेत्र	प्रतिशत	-31.92	13.26	197	439.36	49.04	-8.82	35.74

स्त्रोत : कार्यालय अधीक्षक, भू-अभिलेख विभाग, मन्दसौर 2011

सारणी 2

मन्दसौर जिला : अनाज के अन्तर्गत क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)

वर्ष		गेहूँ	चावल	ज्वार	मक्का	अन्य	योग
2000-01	क्षेत्र	21,932	21	12,470	59,910	240	94,573
	प्रतिशत	23.19	0.2	13.18	63.34	0.25	100
2010-11	क्षेत्र	57,370	निरंक	3,517	37,232	242	98,361
	प्रतिशत	58.32	निरंक	3.57	37.85	0.24	100
दशकीय	क्षेत्र	35,438	-21	-8,953	-22,678	2.00	3788
परिवर्तन	प्रतिशत	161.58	-100	-71.80	-37.85	0.83	4.00

स्त्रोत : कार्यालय अधीक्षक, भू-अभिलेख विभाग, मन्दसौर 2011

सारणी 3

मन्दसौर जिला : दलहन फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र (हेक्टेयर में)

वर्ष		तुअर	उड़द	चना	अन्य	योग
2000-01	क्षेत्र	1,370	11,909	13,473	1,978	28,730
	प्रतिशत	4.76	41.45	46.89	6.88	100
2010-11	क्षेत्र	823	14,232	42,786	3,785	61,626
	प्रतिशत	1.33	23.09	69.42	6.14	100
परिवर्तन	क्षेत्र	547	2,323	29,313	1,807	32,826
	प्रतिशत	-39.92	19.50	217.75	91.35	114.50

स्त्रोत : कार्यालय अधीक्षक, भू-अभिलेख विभाग, मन्दसौर 2011

सारणी 4

मन्दसौर जिला : तिलहन फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र (हेक्टेयर में)

वर्ष		सोयाबीन	सरसों	मूंगफली	अलसी	तिल	अन्य	योग
2000-01	क्षेत्र	218241	2668	1681	1149	115	132	223986
	प्रतिशत	97.43	1.19	0.75	0.51	0.05	0.058	100
2010-11	क्षेत्र	261475	30359	1227	1259	569	6224	301113
	प्रतिशत	86.83	10.08	0.40	0.41	0.18	2.08	100
परिवर्तन क्षेत्र	क्षेत्र	43234	27691	-454	110	454	6092	8715
	प्रतिशत	19.81	1037.89	-27.00	0.09	394.78	4615	38.90

स्त्रोत : कार्यालय अधीक्षक, भू-अभिलेख विभाग, मन्दसौर 2011

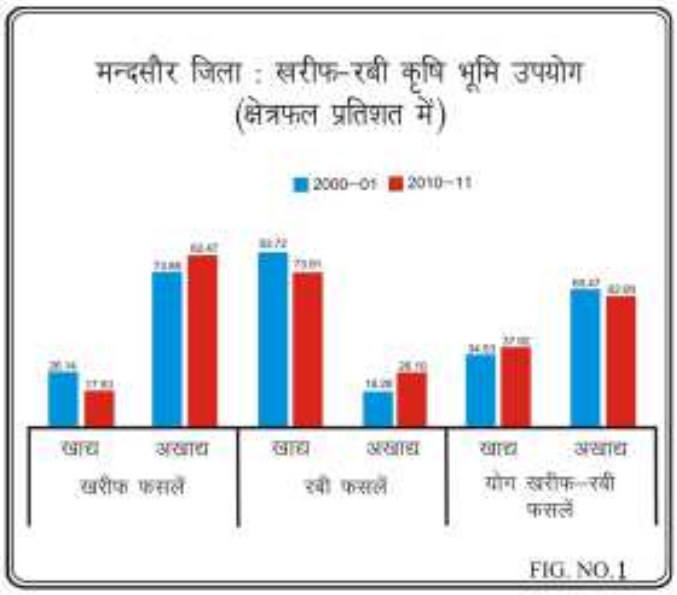

FIG. NO.1

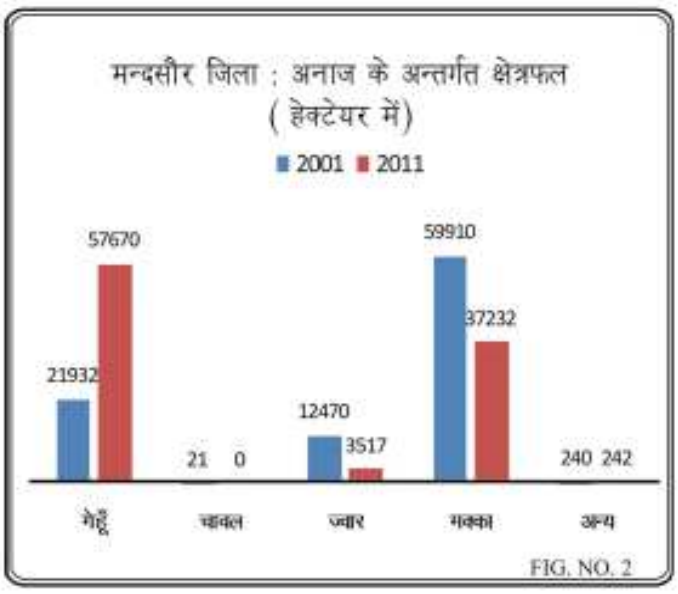

FIG. NO. 2

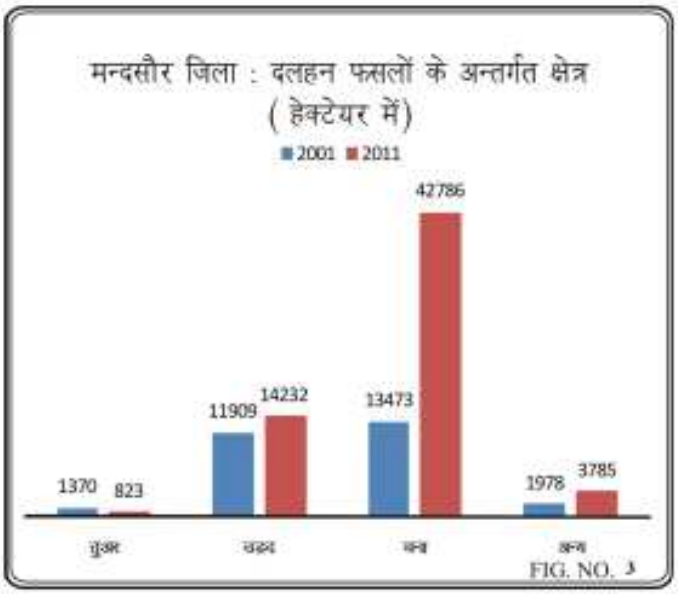

FIG. NO. 3

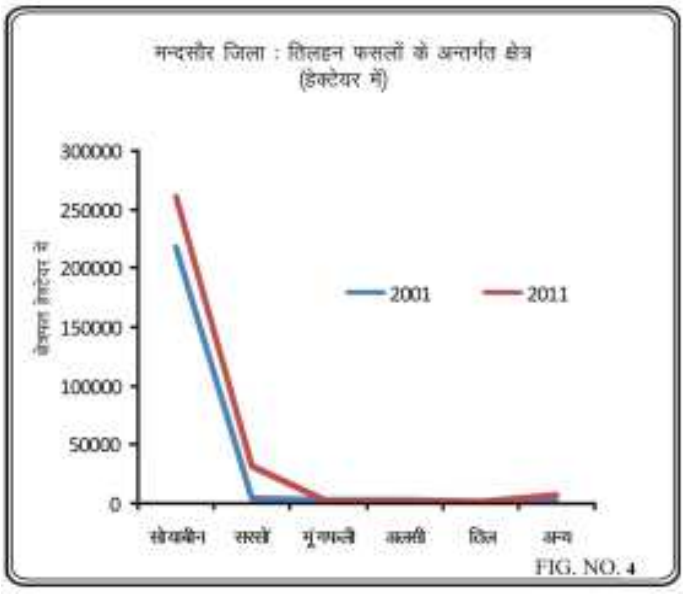

FIG. NO. 4

21 वीं सदी की सबसे बड़ी चुनौती– जल प्रबंधन एवं प्रदूषण निवारण

डॉ. रवीन्द्र कुमार सोहोनी* प्रो. शांतिलाल ईरवार **

शोध सारांश – आज सम्पूर्ण मानव समाज एक असाधारण युग में जीवन यापन कर रहा है। इस युग की चुनौतियां भी असाधारण है। भौतिकवादी संस्कृति की अंधी दौड़ में शामिल मानव समाज ने इन समस्याओं को जन्म भी स्वयं ही दिया है। पश्चिम की भोगवादी सभ्यता की दृष्टि हैं कि जल, जंगल और जमीन संसाधन मात्र है और मानव इसका एकमात्र स्वामी है। जब मनुष्य प्रकृति का स्वामी बन जाता है तो वह उसके साथ क्रूर व्यवहार करने लगता है। जल, जंगल और जमीन एक का दूसरे से घनिष्ट संबंध है और यदि इनका अंधाधुन्ध दोहन किया जाय तो ये भंडार खाली हो जाएँगे। प्रकृति के साथ समाज की अन्त:क्रिया इतनी व्यापक है कि उससे समस्त मानव जाति को प्रभावित करने वाला प्रश्न उत्पन्न हो गया है। विकास की अंधी दौड़ के परिणामस्वरूप अन्तरजीवितता (Sustainability) जो सम्पूर्ण आर्थिक विकास की धूरी है, पीछे छूटता चला जा रहा है। आधुनिक परिस्थितिकीय (Ecologycal Research) अनुसंधानों से यह स्पष्ट हो गया है कि जैवमण्डल पर मनुष्य के अनवरत, एक तरफा और काफी सीमा तक अनियंत्रित प्रभाव से हमारी सभ्यता एक ऐसी सभ्यता में बदल सकती है, जो मरूभूमिओं को मरूद्यानों में रूपांतरित करने के अलावा मरूद्यानों के स्थानों पर रेगिस्तानों को स्थापित कर देगी और पृथ्वी पर सारे जीवन के विनाश का खतरा उत्पन्न हो जाएगा। एक आश्चर्यजनक किन्तु सुखद संकेत यह है कि भौतिक दृष्टि से सम्पन्न समाजों में ही एक नैतिक चेतना का अभ्युदय हुआ कि मनुष्य के जिन्दा रहने के लिए प्रकृति का अंधाधुँध शोषण और दोहन नहीं बल्कि उसका संरक्षण होना चाहिए। विश्व संगठनों द्वारा **'विश्व संरक्षण नीति'** को आत्मसात करना भी इसका बड़ा प्रमाण है। इस नीति का उद्देश्य दोहन के स्थान पर संरक्षण को प्रतिष्ठित एवं संस्थापित करना है।

प्रस्तावना – सभ्यता के प्रारंभ में सर्वत्र सुगमता से प्राप्त होने के कारण मनुष्य के कार्यकलापों में जल की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। यह एक सर्वविदित ऐतिहासिक तथ्य है कि संसार की लगभग सभी महान् सभ्यताएँ नदियों अथवा जलपूरित झीलों के आसपास ही विकसित हुई। पृथ्वी का 78 प्रतिशत भाग जल से आच्छादित है। इस उपलब्ध जल में से भी 97.3 प्रतिशत जल खारा होने के कारण पीने योग्य नहीं है तथा शेष 2.7 प्रतिशत जल ही पीने योग्य है। इस 2.7 प्रतिशत ताजे जल में से भी 77.2 प्रतिशत ध्रुवीय हिम ग्लेशियर के रूप में, 22.4 प्रतिशत भू–जल के रूप में, 0.35 प्रतिशत झीलों तथा दलदलों में, 0.04 प्रतिशत वातावरण में और मात्र 0.01 प्रतिशत नदियों एवं धाराओं में बहता है। उपलब्ध इन ऑकडों के आधार पर अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि जिन जल भण्डारों के भरोसे हम अपने जीवन के प्रति आश्वस्त है, उनकी क्षमता और उनमें उपलब्ध पानी की मात्रा कितनी कम है।

नदियों में उपलब्ध 0.01 प्रतिशत जल का 70 प्रतिशत भाग हम कारनामों से प्रदुषित कर चुके हैं। 'दामोदर नदी के जल में विषैले बेजोपायरित का भी पता चला है। इसके प्रदूषित जल से अब तक आसपास की 25 हजार वर्ग किलोमीटर धरती पूर्णत: बंजर बन चुकी है। इस नदी में प्रदूषण रोकने के लिये 1983 में ऑपरेशन दामोदर तामझाम के साथ शुरू हुआ था, लेकिन 1986 के आते–आते यह अभियान बंद हो गया।'[1] राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् ने 1987 में राष्ट्रीय जल नीति बनाई थी। इसमें कहा गया था कि विकासीय योजनाओं में जल का अत्यधिक महत्व है, इसलिये राज्यों की मांग को ध्यान में रखते हुए वातावरणीय ठोस आधार पर जल योजना, विकास और संरक्षण का काम समन्वित ढंग से किया जाए।

राष्ट्रीय जल नीति बनने के पश्चात् इन 16 वर्षो में अनेक समस्याएँ और चुनैतियाँ उभरकर सामने आई है। प्रबंधन तथा नियोजन, विकास, संरक्षण, भागीदारी, क्षेत्रीय प्राथमिकताएँ, बढ़ता जल प्रदूषण आदि अनेक मुद्दे नई सहस्त्राब्दी में गंभीर चिंतन और मनन की मांग करते दिखलाई पड़ रहे हैं।

'वर्तमान परिस्थितियों में पेयजल की मांग तथा पूर्ती सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, इसलिये राष्ट्रीय जल नीति में इसे प्राथमिकता दी गई है। अभी भी देश में साधारणत: मानव तथा पशुधन के लिये पेयजल की आवश्यकता 25 मिलियन घनमीटर की है, जबकि 2025 में बढ़कर 40 मिलियन तक हो जायेगी।'[2]

नई सहस्त्राब्दी की बदली हुई परिस्थितियों में मनुष्य के जीवन यापन का तरीका भी तेजी से बदल रहा है और इसी अनुरूप जल की अवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और मानव के लिये जल का महत्व बढ़ता जा रहा है। मानव ने अपनी दानवी प्रवृत्तियों के कारण प्रकृति से प्रदत्त इस नि:शुल्क (मुफ्त) किन्तु बहुमूल्य उपहार की जितनी अवमानना की है, आज उसी का परिणाम है कि जल और जल के प्रबंधन का प्रश्न सबसे बड़ी चुनौती के रूप में मानव समाज के सामने मुँह बाएँ खड़ा है। इसे विचित्र किन्तु सत्य विडम्बना ही कहना होगा कि यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि मनुष्य प्रत्येक आनेवाले नये दिन से कुछ न कुछ सीखता रहता है किन्तु पानी के उपयोग में अपनी अविवेकी और गड्ड–मड्ड नीतियों के बाद भी हम आने वाले प्रत्येक नये दिन से कोई सबक नहीं सीख रहे हैं।

भारतवर्ष में प्रतिवर्ष 400 मिलियन हैक्टेयर मीटर वर्षा होती है। पृथ्वी पर गिरने वाले इस जल की मात्रा 17,68,000 मिलियन क्यूबिक मीटर का 50 प्रतिशत ही हम उपयोग अच्छे से कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त भू–जल के रूप में 4,22,900 मिलियन क्यूबिक मीटर प्रतिवर्ष उपलब्ध है, जिसमें से हम न केवल 1,00,000 मिलियन क्यूबिक मीटर जल का उपयोग उचित ढंग से कर पाते है।'[3]

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान), शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

वर्ष 2025 में हमे विभिन्न कार्यो के लिये शुद्ध जल की आवश्यकता निम्नानुसार होगी –

Table - 4
Annual Requirement of Fresh Water (km^3)

	2000		2025	
Surface Water	Surface Water	Ground Water	Surface Water	Ground Water
(I) Irragation	420	210	510	260
(II) Other Uses	80	40	190	90.00
(a) Domestic and live stock		24.20		40.00
(b) Industries		30.00		120.00
(c) Thermal power		5.80		15.00
(d) Miscellaneous		60.00		105.00

भारतवर्ष में 14 बड़ी 44 मध्यम श्रेणी तथा 55 छोटी तथा 12 अन्य छोटी नदियाँ है इस प्रकार कुल 125 स्वतंत्र नदियाँ प्रवाहित हो रही है जिन्हें निम्न तालिका से समझा जा सकता है।

Table – 5 **(देखेअगले पृष्ठ पर)**

नदियों और झीलों के अतिरिक्त भू–जल भी शुद्ध जल का एक महत्वपूर्ण साधन है। क्योंकि गाँवों में आबादी का 85 प्रतिशत तथा शहरों की 50 प्रतिशत आबादी भू–जल पर निर्भर है। ' भारत सरकार के केन्द्रीय भू–जल बोर्ड के अनुसार भारतवर्ष में 300 मीटर की गहराई में 3 अरब 70 करोड़ हैक्टेयर मीटर जल का भंडार उपलब्ध है।'[6]

सामान्यत: यह समझा जाता है कि धरती की सतह के नीचे पानी उसी तरह भंडारित रहता है, जैसा झीलों या नदी नालों में। किन्तु यह सही नहीं है। वास्तव में भू–जल वह है जो धरती की ऊपरी सतह यानी पर्पटी का निर्माण करने वाली चट्टानों या मिट्टी की परतों के बीच संग्रहित होता है।

'पृथ्वी में मिट्टी या चट्टानों की वे संरचनाएँ जिनमें पानी जमा होता है – 'भू–जल स्त्रोत (एक्वीफायर) कहलाती है। धरती की एक निश्चित गहराई पर ऐसी स्थितियाँ है कि वहां सभी रंध्रों (छिद्रों) या खाली स्थानों में पानी भरा है। इसे ही भू–जल स्तर कहते है। कहीं यह 'भू–जल स्तर' धरती की सतह से ठीक जरा सा नीचे हो सकता है तो कहीं बहुत गहरे–कई मीटर नीचे हो सकता है।'[7]

भू–जल स्तर की मात्रा चट्टानों की पारगम्यता पर निर्भर करती है। चट्टानों में जल के प्रवेश करने या रिसने की क्षमता को पारगम्यता कहते है। जिन चट्टानों मे पारगम्यता अधिक होती है उनमें स्वाभाविक है कि जल अधिक मात्रा में प्रवेश करेगा। इससे भू–जल की मात्रा बढ़ जाती है। कुछ चट्टानों की प्रकृति अर्द्धपारगम्य होती है और इनमें कुछ मात्रा में ही जल प्रवेश कर पाता है तथा कुछ चट्टानों की प्रकृति अपारगम्य होती है इन शैलों में जल बिल्कुल प्रवेश नहीं कर सकता।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जल प्रबंधन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण चुनौती प्रदूषित होते जल तथा उसके शुद्धिकरण की भी है। जल पर्यावरण का जीवनदायी तत्व है तथा पारिस्थैतिकी के निर्माण में जल आधारभूत कारक है। वनस्पति, जीव–जन्तु और मनुष्य स्वयं अपने अनेक पोषक तत्वों की प्राप्ति जल के माध्यम से करता है। मनुष्य के शरीर का लगभग दो तिहाई भाग जल से निर्मित है और यही कारण है कि तापमान के घटते–बढ़ते प्रभावों को हम रक्त में मिश्रित 80 प्रतिशत जल के कारण ही सहन कर पाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार – 'जब जल में भौतिक या मानवीय कारणों से कोई बाह्य सामग्री मिलकर जल के स्वाभाविक या नैसर्गिक गुण में परिवर्तन लाती है जिसका कुप्रभाव जीवों के स्वास्थ्य पर प्रकट होता है तो उस जल को प्रदूषित जल कहा जाता है।'[8] जल का प्रदूषण प्राकृतिक और मानवीय दोनों ही स्त्रोतों से होता है, किन्तु प्राकृतिक स्त्रोतों से होने वाला जल प्रदूषण इतना न्यून तथा इतनी धीमी गति से होता है कि उसके कुप्रभाव अधिक नहीं होते हैं। जल को बड़े पैमाने पर प्रदूषित करने में मानव की भूमिका अधिक खतरनाक है। शुद्ध जल का मान 7 से 8.5 पी.एच. माना गया है। लेकिन जब भी पी.एच. मान 6.5 से कम या 9.2 से अधिक हो तो ऐसा जल प्रदूषित जल की श्रेणी में आता है।

शुद्ध पेयजल के लिये विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मानक (1971) निम्नानुसार है[9]।

तालिका

अपद्रव्य	उच्चतम निर्धारित सीमा मि. ग्रा./लीटर
कैल्शियम	75.00
मैग्नीशियम	30.00
सल्फेट	200.00
क्लोराईड	200.00
जस्ता	5.00
लोहा	0.1
मेगनीज	0.5
तांबा	0.05

देश की प्रमुख नदियों के अतिरिक्त अब भू–जल भी तेजी से प्रदूषित होता जा रहा है। भू–जल प्रदूषण के कारण मुख्य औद्योगिक नि:सृत कचरा, घरेलू जल–मल तथा कृषि कार्यो में बड़े पैमाने पर उपयोग में लिये जा रहे रासायनिक उर्वरक जिसमें खाद तथा दवाइयाँ दोनों ही शामिल है। 'पिछले तीन दशकों में भारत में कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति के साथ–साथ कीटनाशक दवाइयों की खपत बढ़ी है और आज वह 2300 टन वार्षिक से बढ़कर 66,000 टन वार्षिक हो गई है।'[10] सरकारी आंकड़ों के अनुसार पाँच कीटनाशकों में बी. एच. सी., डी. डी. टी., मैलीथियान, इन्डोसल्फान और पाशिथियान का देश में व्यापक तौर पर प्रयोग किया जा रहा है।

रासायनिक उर्वरकों का 50 प्रतिशत भाग फसल को पोषण प्रदान करता है तथा 50 प्रतिशत में से 25 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा अन्य गैसों में परिवर्तित होता है बचा हुआ 25 प्रतिशत भाग भू–जल में घुलमिल जाता है। भू–जल में घुलमिल गये उर्वरकों के इस 25 प्रतिशत भाग के कारण भूमिगत जल का अम्लीकरण होता है। इस प्रकार प्रदूषित जल में जस्ता, सीसा, फास्फेट, पोटेशियम, मैग्नीज एवं अल्युमिनियम की अधिकता होती है। यही अधिकता कालांतर में जाकर परिवर्तित होकर रेडियोधर्मिता के तत्वों में बदल जाती है तथा भूमिगत जल में चुपके–चुपके रेडियोधर्मिता के तत्व प्रवेश कर जाते है। इस प्रकार रेडियोधर्मिता से प्रदूषित जल कैंसर तथा अन्य जानलेवा बीमारियों का सबब बनता जा रहा है।

संसदीय अध्ययन समिति ने 9 वीं योजना के अपने प्रतिवेदन में स्वयं यह स्वीकार किया है कि भारत के 5 प्रतिशत ग्रामीण इलाकों में शुद्ध पेयजल की कोई व्यवस्था नहीं है। इन गाँवों में पीने के पानी की व्यवस्था करने के लिये राज्य सरकारों को अपने बजट प्रावधानों को दुगना करना होगा लेकिन तब तक स्थिति और ज्यादा विस्फोटक तथा घातक हो चुकी होगी।

बढती जनसंख्या और तीव्रगति से हो रहे औद्योगिकीकरण के परिणामस्वरूप जहाँ एक और भू–जल का अंधाधुंध दोहन हो रहा है। वहीं

दूसरी और भूमिगत जल बड़ी तेजी से प्रदूषित हो रहा है। भारत में उद्योगों द्वारा 3000 करोड़ लीटर अपशिष्ट जल छोड़ा जा रहा है, जिसमें से हमारे पास 200 करोड़ लीटर जल को शुद्ध कर पाने की क्षमता है। जल-प्रदूषण और बढ़ती आबादी के कारण सभी को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना असंभव सा कार्य दिखने लगा है।

वर्ल्ड वॉच इन्स्टीट्यूट के अध्यक्ष तथा 'विश्व की वर्तमान स्थिति 2001' के सह-लेखक क्रिस्टोफर फ्लेविन ने अपनी रपट में स्पष्ट लिखा है कि 'विश्व के सवा अरब लोगों को पीने का स्वच्छ पानी उपलब्ध नहीं है।[11]

समय की मांग है कि अब आर्थिक नीतियों का प्रमुख बिन्दु 'जल' होना चाहिए। जितनी तेजी से दोहन तथा जितना ज्यादा जल प्रदूषण किया जा रहा है वह गहरी चिंता का विषय है। भू-जल का पुनरावर्तन औसतन चौदह सौ वर्षो में होता है। अर्थात खींचा गया भू-जल आने वाली कई पीढ़ियों के लिये जल संकट की इबारत लिख रहा है। भू-जल का दोहन अब शोषण की सीमा को पार कर रहा है। क्या हम सबको इस तथ्य की फिक्र नहीं होना चाहिए?

'सन् 2015 तक जल संकट सभी देशों के लिये एक बड़ी समस्या के रूप में उभरकर सामने आ जाएगा, दुनिया में 3 अरब से ज्यादा लोग जल संकट से जूझ रहे होगें।'[12]

आज आवश्यकता इस बात की है कि जल का दोहन तथा उपयोग विवेकपूर्ण ढंग से किया किया जाए। प्रदूषित होते जल को प्रदूषण से बचाया जाए। औद्योगिक नि:सृत कचरे, अपशिष्ट जल तथा मलजल को परिशोधित कर निसरित किया जाय।

प्रकृति के साथ छेड़छाड़ करने की हमारी गति और प्रवृत्ति यदि यही रही तो सम्पूर्ण जल जहरीला हो जाएगा तब उसका परिशोधन करना नितांत असंभव होगा। इस कडुऐं यथार्थ को हमने यदि आज गंभीरता से नहीं लिया तो हमारी आने वाली पीढ़ियाँ शारीरिक, मानसिक रूप से विकलांग तथा कैंसर जैसे महारोग लेकर पैदा होगी और तब उनमें क्षमा की अपेक्षा करना पूर्णत: बेईमानी होगी। इस सबका मकसद भय पैदा करना नहीं है। कहने का आशय सिर्फ इतना है कि **'होश में आओ, पानी कम बचा है।'** यदि ऐसा नहीं किया गया तो वह दिन दूर नहीं जब पानी के अभाव में हम होश खो बैठेगें।

Come my Friends,
Tis not too late
To seek a better world ...
- Lord Tennyson

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा दामोदर, सुखलाल, घनश्याम - (सम्पादित), वायु प्रदूषण, साहित्यागार जयपुर-3, 1996 पृष्ठ 180-81।
2. गोयल, मदनमोहन, पर्यावरण शिक्षा, (प्रथम संस्करण) अनुप्रिया पब्लिशिंग हॉउस, जयपुर, 2000 पृष्ठ-67।
3. Goel, M. M., Sharma, M. C., & Purohit, N. K. Problem of Environment Managment in India] Anupriya Publishing House, Jaipur 1999, Page-460
4. Ibid Page-460
5. केन्द्रीय भू-जल बोर्ड, नई दिल्ली (भारत सरकार) वार्षिक प्रतिवेदन-2000।
6. 'ए वॉटर हॉरवेस्टिंग मैनुअल' सेन्टर फार रिसर्च एण्ड एनवायरमेंट, नई दिल्ली।
7. श्रीवास्तव, वी. के. एवं राव बी. पी. - पर्यावरण पारिस्थैतिकी, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 2002 पृष्ठ-303।
8. रघुवंशी, अरूण एवं रघुवंशी, चन्द्रलेखा-पर्यावरण तथा प्रदूषण, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 1987 पृष्ठ-114।
9. भाटिया, अरविन्द- पर्यावरण के नवीन आयाम, इन्डस वैली पब्लिकेशन, जयपुर (प्रथम संस्करण) 2000, पृष्ठ-452।
10. फ्लेविन क्रिस्टोफर - विश्व की वर्तमान स्थिति - 2001 वर्ल्ड वॉच इन्स्टीट्यूट की रिपोर्ट।
11. ग्लोबल ट्रेन्डस - 2015, नेशनल इंटेलिजेंस कॉउन्सिल, न्यूयार्क, दिसम्बर 2000, (अध्ययन रिपोर्ट)

Other Source Books -

1. गुर्जर एवं जाट, पर्यावरण भूगोल, पंचशील प्रकाशन जयपुर, प्रथम संस्करण, 2006, पृ.-268
2. सिन्हा, राजकुमार 'भूमि तथा जल उपलब्धता : समस्या एवं समाधान', कुरूक्षेत्र, मार्च 2006 वर्ष 52 अंक 4 पेज-31
3. मोदी, अनिता, 'बढ़ता जल संकट', कुरूक्षेत्र 2006, 52 अंक 4 पृ.-33
4. Kulshreshtha and Dev, "Groundwater quality evalution for irrigation application in mandsaur region", Journal of Geological Society, 2006, Vol. 34, PP – 161.
5. Jhon, H. Boldwin- Environmental Planing and Manegement. International Book Distributers Dehradoon 1988.
6. Tripathi, G. & Panday, G. C.- Current Topic in Envirinment science, ABD Publidhers, Jaipur, 2001

Table – 5
Division of Rivers based on the extent of Drainage Basin

Category (River)	No. of river Basin	Drainage Basin (km 2)	Catchment area (Milion km2)	%of Total catchment area	Total Run off 100 milions m3	% of Total run off	% of population Basin
Major	14	More than 20,000	2.58	83	11,406	85	80
Medium	44	Between 2000 to 20,000	0.24	8	112	7	20
Minor Desert	55	Less than 2000	0.30	9	127	8	-

****

जनजाति उपयोजना में ग्रामीण विकास एवं गरीबी निवारण एक भौगोलिक विश्लेषण

अम्बालाल कटारा * प्रो. एल.सी. खत्री **

शोध सारांश – गरीबी निवारण एवं ग्रामीण विकास दोनों एक दूसरे से काफी घनिष्ठ रूप से सम्बन्ध है। ग्रामीण विकास तभी सम्भव है जबकि गरीबी निवारण की दिशा में उचित पहल की जाए, लेकिन राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बडा राज्य होते हुए भी राज्य में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत करवाये गये सभी प्रकार के विकास कार्यो के बावजूद आज भी यह स्थिति है कि राजस्थान के क्षेत्रफल, जनसंख्या, कृषि, उद्योग आधारभूत ढांचे की सरंचना, खनिज सम्पदा व प्रति व्यक्ति आय आदि की स्थिति का अध्ययन भारतीय परिप्रेक्ष्य व अन्य राज्यों की तुलना से पता चलता है कि राज्य काफी पिछड रहा है लेकिन उपयोजना क्षेत्र के द्वारा विशेष क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों क लाभ भी उन लोगों को अधिक मिला जिसके पास सक्षम संसाधन परिपूर्ण हो व योजनाओं की जानकारी थी। इसलिए समाज कमजोर पिछडे गरीब जो ग्रामीण दूर दराज जगंलों, पहाडी भागों में बसे निरक्षर आदिवासी जनजाति जो उन योजनओं के उद्देश्यों व लाभ को लेने में शिक्षा एक बाधा बनी हुई है, जो अशिक्षित है शिक्षा के दौर मे समय के साथ परिवर्तन व कार्यक्रमों के प्रचार प्रसार से धीरे धीरे गांवों में रोजगार के साधनों व चिकित्सा सुविधा, शिक्षा, पेयजल, खादबीज वितरण, कौशल विकास कार्यक्रम कृषि उद्यमिता प्रषिक्षण स्वरोजगार प्रषिक्षण के माध्यम से रोजगार के अवसर बढ़े रहे है।

शब्द कुंजी – टी.एस.पी, उपयोजना क्षेत्र, जनजाति, विकास।

प्रस्तावना – ग्रामीण विकास कार्यक्रम का इतिहास काफी पूराना है फिर भी नियोजित ढ़ग से ये कार्यक्रम भारत में योजना युग के प्रारम्भ से शुरू किये गए ह और विगत वर्षो में अनेक नामों से इन कार्यक्रमों को तैयार किया गया कि ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों विशेषकर निर्धन वर्ग के लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत किया जा सके। इन कार्यक्रमों क क्षेत्र काफी विस्तृत रखा गया है। जिनके अन्तर्गत प्रमुख: उत्पादन, रोजगार, स्वास्थ्य एवं शिक्षा, यातायात एवं संवेदनावाहन, व्यापार, विद्युत एवं जलपूर्ति का नियन्त्रण सामाजिक एवं राजनीतिक जनचेतना आदि को शामिल किया गया है।

निर्धनता एक साधारण बीमारी नही है इसका अर्थ है सांसारिक वस्तुओं से इतना वंचित होन जिसकी अमीर राष्ट्रों के निवासी बिना देखे कल्पना भी नही कर सकते है। लगभग खाली उदर, अर्द्धनग्न शरीर, नंगे पॉव सुखे हुए पेट सिकुडे अंग, व्यापक बीमारी तथा निर्बलता आदि सामान्य गरीबी के लक्षण है। सरकार ने राज्य प्रचलित योजनाओं नीतियों और कार्यक्रमों का केन्द्र बिन्दु बनाकर कल्याणकारी कार्यक्रमों का निर्धारण कर उनका क्रियान्वयन प्रारम्भ किया, जिससे इन वर्गो के जीवन में उत्साह के साथ बदलाव लाया जाए। टी.एस.पी. क्षेत्र में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए प्रोत्साहन के रूप में राशि, छात्रावास निर्माण, आवासीय विद्यालय, मॉ बाडी केन्द्र, स्कॉलरशिप योजना रोजगार के लिए महानरेगा योजना, मुख्यमंत्री आवास योजना, नि:शुल्क चिकित्सा सेवा, आदि योजनाओं के द्वारा जनजाति क्षेत्रों में ग्रामीण विकास होने लगा है। आज भी गांवों में रोजगार की अपार संभावनाऐं है बस जरूरत है थोडे से प्रयास की जिन लोगों के पास कृषि आधारित कारोबार शुरू करने के लिए पैसा नही है, उनके लिए समस्या है क्योंकि अशिक्षा की वजह से योजना के लाभ हकदार बनने से पिछड़ रहे है।

उद्देश्य – जनजाति उपयोजना के माध्यम से जनजाति के लोगों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति सुधारने में विकास की सम्भावनाओं पर ध्यान केन्द्रित करना।

1. उपयोजना क्षेत्र में जनजाति ओं के युवक युवतियों के रोजगारोन्मुखी प्रषिक्षण के द्वारा लाभान्वित करना।
2. जनजाति उपयोजना क्षेत्रों में सरकार की कल्याण कारी योजनाओं के माध्यम से आधारभुत सुविधाओं के विस्तार कर विकास की और ध्यान केन्द्रित करना।

तथ्यात्मक विश्लेषण –

1. राजस्थान जनजाति क्षेत्र की जनसंख्या 9.39 लाख व्यक्ति (कुल जनसंख्या का 13.5 प्रतिशत)
2. दक्षिणी राजस्थान के जिलों बांसवाडा, डूंगरपुर, उदयपुर प्रतापगढ़ एवं सिरीकी में जनजाति लाख व्यक्ति कुल जनसंख्या का 73.17 प्रतिशत।
3. बांसवाडा जिला सर्वाधिक जनजाति आधारित क्षेत्र 76.38 प्रतिशत एवं डूंगरपुर जिले में 70.8 प्रतिशत है।
4. डूंगरपुर जिला सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या अनुपात 93.6 प्रतिशत 2011 में

अध्ययन क्षेत्र –

जनजाति उपयोजना क्षेत्र – प्रशासनिक दृष्टि से जनजाति उपयोजना क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान के सम्पूर्ण बांसवाडा, डूंगरपुर प्रतापगढ़ (छोटी सादडी, छोडकर) सिरोही जिले के आबुरोड उपखण्ड तथा उदयपुर जिले की खेरवाडा, कोटडा, झाडोल, सलुम्बर, सराडा, तथा गिर्वा तहसील के 81 गांवा की समाहित करता है। 23 पंचायत समितियों तथा 19 तहसीलों के 4409 गांवों का 19770 वर्ग इस क्षेत्र सम्मिलित किया गया है। 2001 की जनगणना के अनुसार राजस्व गाँव उपयोजना क्षेत्र $23^{0}1'$ उत्तरी अंक्षाश से

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल विभाग) सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत

25°45' 30' अक्षांश तथा 73° पूर्वी देशान्तर से 74°45' पूर्वी देशान्तर तक उच्चावच की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र को तीन भागों में विभक्त है

अ) दक्षिणी अरावली।

ब) छप्पन का मैदान।

स) माही बेसिन का लगभग 40 प्रतिशत भूभाग पहाडी तथा पठारी है।

राजस्थान का प्रसिद्ध पर्वतीय पर्यटन स्थल माउण्ट आबू तथा सबसे ऊँचा पर्वत शिखर 'गुरू शिखर' (1722 मी.) सामाजिक व धार्मिक पर्यटन स्थल बेणेश्वर धाम जो आदिवासियों का 'महाकुंभ' एवं मानगढ धाम, घोटिया आम्बा, इसी क्षेत्र में स्थित है माही, सोम, जाखम, साबरवमली, नदीयों का उद्गम भी इसी क्षेत्र से है।

अध्ययन की आधार सामग्री – इस शोध पत्र में द्वितीय आंकडो का संकलन के द्वारा किया गया है–द्वितीयक आंकडो का संकलन भारत के जनगणना 2011 द्वारा प्रकाशित आंकडे विभाग द्वारा व उपयोजना कार्यालय जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग द्वारा उपलब्ध निम्न सामग्री द्वारा किया गया है।

जनजाति क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम – 2011 की जनगणन के अनुसार राजस्थान में 92.39 लाख जनजाति के लोग है जो राज्य की कुल जनसंख्या का 13.48 प्रतिशत है जिससे जनजाति उपयोजना में 2001 के अनुसार 69.85 ग्रामीण 12.63 प्रतिशत नगरीय अनुसुचित जनजाति जनंसख्या निवास करती है। सन् 2011 में अनुसूचित जनजाति व 73.17 प्रतिशत जनजाति जनसंख्या निवास करती है। उपयोजना क्षेत्र में भील, मीणा, डामोर, गरासिया, कथौडी, व सहरिया आदि जनजाति के व्यक्ति निवास करते है। राज्य की जनजातिओं के आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक तथा ग्रामीण विकास हेतु राज्य में जनजाति क्षेत्र विकास की स्थापना 1975 में की गई। राज्य की सभी जनजातिओं का संर्वागीण विकास हो सके। जिसमें राज्य सरकार ने राज्य के अलग अलग क्षेत्रों के अनुसार योजना व उनके विकास हेतु क्षेत्रों का निर्धारण किया गया। राज्य में अलग–अलग क्षेत्रों अनुसार विभिन्न क्षेत्रों निम्न नामों से पहचाना जाता है।

जनजाति क्षेत्र	जनजाति जनसंख्या	जनजाति प्रतिशत	राज्य में प्रतिशत
जनजाति उपयोजना क्षेत्र टी.एस.पी.	4188056	45.33	6.10
माडा क्षेत्र योजना	1830253	19.81	2.67
माडा कलस्टर क्षेत्र योजना	67451	0.73	0.09
सहरिया विकास क्षेत्र	102124	1.10	0.14
बिखरी हुई जाति विकास	3050650	33.02	4.45
कुल योग	**9238534**	**100**	**13.48**

उपरोक्त सभी जनजाति क्षेत्र विकास की जनसंख्या अनुपात 20.01 प्रतिशत है। अकेले उपयोजना जनजाति क्षेत्र टी.एस.पी. में 45.33 प्रतिशत जनसंख्या है। साथ ही जनजाति उपयोजना में अजजा जनसंख्या 73.17 प्रतिशत है। उपयोजना में अजा की जनसंख्या का अनुपात 5 प्रतिशत से अधिक है।

जनजाति उपयोजना द्वारा विकास के कार्यक्रम – विकास की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अभाव ग्रस्त व रोजगारमुखी कृषि वनो आधारित या सरकारी नौकरी पेशा में आरक्षण पद्धति द्वारा कमजोर लोगों को मुख्य धारा में लाने के निम्न योजना या कार्यक्रमों संचालित किया जाता है।

1. **मानव ससाधन –** शिक्षा की गुणात्मक परिवर्तन, व्यवसायिक शिक्षा के लिए मार्गदर्षन केन्द्र औद्योगिक प्रषिक्षण, शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता, रोजगार प्रशिक्षण का संचालन, आश्रम, स्कूल, मॉ बाडी केन्द्र आवासीय विद्यालय, खेल छात्रावास, खेल प्रशिक्षण एवं छात्रावास व्यवस्था उच्च शिक्षा एवं राज्य सेवाएं व सिविल सर्विस PMT, PET, IIT, IIM हेतु प्रोत्साहन राशि की व्यवस्था

2. **कृषि क्षेत्र की उत्पादकता –** कृषि जनजाति क्षेत्र का मुख्य रोजगार है इसमें न्यून क्षेत्र एवं अधिक उत्पादकता तकनीक का प्रयोग किया गया जिसमें (1) गहन कृषि (2) सब्जियों व फलों के पौधों का रोपण (3) कृषि शिक्षा एवं अनुसन्धान केन्द्र महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के अधीन संचालित कृषि विज्ञान केन्द्र (4) कृषि में आधुनिक यन्त्रों, बीज व तकनीकी का प्रयोग बढाना (5) कृषि प्रदर्शनियां (6) जल संसाधन का प्रयोग (7) गोल्डन मक्का बीज, खाद 50 किलों नि:शुल्क वितरण करना।

3. **वृक्षारोपण व वानिकी –** (1) पर्यावरण सुधार के लिए वनों का विस्तार, विकास की अति आवश्कता है। (2) व्यर्थ भूमि का विकास एवं प्रयोग, पहाडी क्षेत्र में विकास कार्य (3) सरकारी वृक्षारोपण एवं सामाजिक सुरक्षा का लक्ष्य पूर्ण करना। (4) जनजाति क्षेत्र में पौधशालाओं (नर्सरी) का विकास, बागवानी प्रशिक्षण।

4. **पशु सम्पदा का विकास –** पशु सम्पदा को आय एवं रोजगार से सम्बन्धित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये– (1) मत्स्य व कुक्कुट शलाओं का विकास प्रशिक्षण (2) पशु चिकित्सालय का विस्तार एवं शंकर नस्ल का विस्तार, (3) खरगोश पालन योजना व बकरी पालन योजना

5. **पेयजल व बकरी पालन योजना –** उपयोजना क्षेत्र में सिंचाई सुविधाऐं उपलब्ध करने के लिए माही बहुउद्देशीय परियोजना जाखम, सोम कमला, आम्बा परियोजना पूर्ण की गई। फलस्वरूप इस क्षेत्र सिंचाई सुविधाओं में विस्तार हुआ है।

6. **पेयजल सुविधा** में माही लिफ्ट परियोजना ढेबर, जाखम, सोम कमला आम्बा व अन्य पम्पसेट, ट्यूबवेल द्वारा जनजाति क्षेत्रों में पेयजल समस्या की कमी हुई है।

7. **आधारभूत सुविधिाओं का विकास –** इन सुविधाओं को सन्तुलित आधार पर विकसित करना ताकि विकास गति त्वरित हो सके। आधार सुविधा होती है लेकिन इनके शोषण व विदोहन की आवष्कता अतितीव्र है। अत: बेरोजगारी एवं गरीबी निवारण में प्राकृतिक संसाधनों का विकास अति आवष्यक है।

8. **शोषण के विरूद्ध सुरक्षा –** जनजाति क्षेत्र को शोषण से मुक्त कराने की गहन आवश्कता आज भी है। यह वर्ग अशिक्षा एवं गरीबी के दुश्चक्र के कारण शोषित होता रहा है। अत: इस क्षेत्र के आरक्षण का लाभ यहां के जनजातियों को नही मिल पाया है, जो आज भी द्वितीयक श्रेणी नौकरियों तक की देय है जिनका लाभा माडा जनजातियों व अन्य जिलों के मीणा जनजाति वर्ग के लोग पहले से लाभ उठारहे है। राज्य सरकार मे इस वजह से टी.एस.पी. उपयोजना क्षेत्र में निवास सामान्य व अन्य पिछडा वर्ग को भी इस योजना में शामिल किया गया है साथ ही एक अलग क्षेत्र मानकर स्थानिय युवाओं को रोजगार दिया जाएगा ताकि उस क्षेत्र का विकास बढेगा।

9. **योजनाओं व कार्यक्रमों का प्रसार व प्रसार से विकास –** इस क्षेत्र में अधिकांश जनसंख्या दूर दराज सीमावर्ती क्षेत्रों में जंगलों पहाडी क्षेत्रो

में निवास करने वाली जनसंख्या को योजनाओं पता नही रहता है, जिसकी जिम्मेदारी ग्राम स्तर व ब्लॉक स्तर के कर्मचारियों की जिम्मेदारी व दायित्व से कर्तव्यों पालन कर ग्राम सभा या अन्य माध्यम से उचित प्रावधान किया जाए ताकि वास्तविक हकदार को लाभ प्राप्त हो सके।

गरीबी निवारण के कार्यक्रम – प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर आठवीं योजना के अन्त तक सरकार ने अनेक निर्धनता निवारण कार्यक्रमों को अपनाया है जिनमें मुख्यता सामुदायिक विकास योजना, पंचायती राज, लघु किसान विकास अभिकरण, सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक विकास अभिकरण, काम के बदले अनाज, एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम जवाहर रोजगारा आदि प्रमुख है। भारतीय अर्थव्यवस्था से गरीबी को हटाने के लिए ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना अनिवार्य आवश्यकता है। इसके साथ ही ग्रामीण विकास हेतु निम्न उपायों को अपनाया होगा–

1. ग्रामीण सामाजिक सेवाओं जैसे – शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास आदि प्रमुख सुविधाओं का विकास करना।
2. व्यावहारिक लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास।
3. स्थानीय पूँजी विनिर्माण परियोजनाओं विशेष रूप से ऐसी परियोजनाएँ जिनके द्वारा कृषि उत्पादकता में शीघ्र वृद्धि हो सके, जैसे – लघु एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाये, नालियों का निर्माण, संग्रहण की सुविधा का विकास, स्थानीय परिवहन एवं सडकों का विकास आदि।
4. भूमि का कुशल वितरण, उसका विकास एवं व्यवस्थापन करना।

ग्रामीण विकास में कठिनाई के रूप में गरीबी एक अत्यधिक प्रभावी टूल का कार्य कर रही है। इसे दूर कर ग्रामीण विकास के लिए सरकार को प्रभावक नीति की घोषणा करना आवश्यक है।

निष्कर्ष – जनजाति उपयोजना क्षेत्र में जनसंख्या का जीवन वनों से जुडा होता है। इनके क्षेत्रों में भू–जोतो का आकार 2 हेक्टर से भी कम होता है। कभी–कभी हैक्टर से भी कम होता है। परिवहन की जटिलता, सिंचाई व पेयजल की कमी, अशिक्षा, कुपोषण सामाजिक कुरितियों, अन्तधविश्वास, आर्थिक शोषण, बेरोजगारी आदि समस्याओं से ग्रस्त है। आज भी इन लोगों को ऊपर उठाना भी एक धीमी प्रक्रिया है।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में 50 प्रतिशत से भी ज्यादा (73.17 प्रतिशत) जनसंख्या जनजाति के लोगों की है लेकिन इन क्षेत्रों में भी इनके लिए आरक्षण का 12 प्रतिशत है, जो प्रथम श्रेणी कॉलेज व्याख्याता व राज्य सेवा में टी.एस.पी. के लिए देय नही है। इनके लिए इस क्षेत्र 45 प्रतिशत अजजा व 5 प्रति अजा व 50 प्रतिशत आरक्षण अन्य जातियों के लिए प्रावधान है। अजजा की जनसंख्या अधिक होने पर भी इनका वास्तविक हक नही दिया जा रहा जो 12 प्रतिशत में से 5.5 प्रतिशत लाभ उपयोजना के लिए लाभ दिया जाना चाहिए। जिसकी यहाँ के बेरोजगार युवकों को रोजगार में अवसर मिले।

उपयोजना क्षेत्र में जिन खण्डों में 75 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासियों की पाई जाए वे जनजाति के विकास खण्ड घोषित किए जाए और वहा की भूमि पर आदिवासियों का अधिकार हो जाए और वे उन क्षेत्रों में उद्योग, व्यापार, सेवा के सारे अवसर प्राप्त करे।

उपयोजना में केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा प्राप्त आवटन योजना की राशि का प्रक्रिया व कागजों में उलजने से 50 प्रतिशत से अधिक राशि लेप्पस् हो जाती है जिससे इस क्षेत्र में समुचित उपयोग ना कर पाने से समस्याएँ रहती है।

आधारभुत संरचना, संसाधनों की अपर्याप्तता– विद्युत, प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग, परिवहन, सडक, शिक्षा व अन्य सरकारी कार्यालयों में रिक्त पदों की समस्या, पेयजल, स्वास्थ्य सुविधा आवश्यकता के अनुपात में कम। जल सिंचाई, बीमा, बैंक, माल गोदाम, संवहन आदि सुविधाओं की स्थिति संतोषप्रद नही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भल्ला, एल.आर., 'राजस्थान का भूगोल', कुलदीप पब्लिकेशन, हाउस, जयपुर, 2014
2. राजस्थान सरकार, 'अनुसूचित जनजाति के लिए कल्याणकारी योजनाऐं', टी.आर.आई, 2011–12
3. डॉ. वर्मा, सावलिया बिहारी, 'ग्रामीण गरीबी उन्मुलन' यूनिवरर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली 2011
4. सिह, शिवशंकर 'भारत में समन्वित ग्रामीण विकास एव नियोजन', नई दिल्ली 2008
5. शर्मा, रेखा 'ग्रामीण विकास एवं नियोजन' रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2012
6. आशुतोष ठाकुर, ट्राईबल डेवलपमेन्ट एण्ड ईट्स पेराडोक्स 2001
7. जनगणना सेन्सस, 2011
8. राजस्थान सरकार, बजट घोषणा मार्च 2014

****

उच्च शिक्षा में परिवर्तन की प्रासंगिकता मध्यप्रदेश के संदर्भ में विश्लेषण

डॉ. अख्तर बानो *

प्रस्तावना – शिक्षा व्यक्ति व राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास के लिए अत्यावश्यक है। शिक्षा सामाजिक बुराईयों को दूर करती है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है उच्च शिक्षा में समय समय पर परिवर्तन होते रहे है किन्तु सबसे बड़ा परिवर्तन 2008-09 से प्रारम्भ हुआ उच्च शिक्षा में सेमेस्टर प्रणाली लागू की गई। यही प्रणाली उच्च शिक्षा में नवीनता लाई और प्रदेश में इसके पक्ष विपक्ष में तर्क दिए जाने लगे है। अत: प्रस्तुत शोध पत्र में उच्च शिक्षा में परिवर्तन की प्रासंगिकता का विश्लेषण किया गया है।

मध्यप्रदेश का सामान्य परिचय – मध्यपद्रेश में कुल 50 जिले है वर्ष 1951 में राज्य में साक्षरता दर 13.16 प्रतिशत थी जो वर्ष 2011 में 7060 प्रतिशत हो गई। राज्य में सर्वाधिक साक्षरता वाला जिला जबलपुर है। यहाँ साक्षरता का प्रतिशत 82.5 है। सबसे कम साक्षरता दर 37.2 अलीराजपुर जिले में है।

उच्च शिक्षा में परिवर्तन – उच्च शिक्षा विश्व विद्यालयों महाविद्यालयों, प्रौद्योगिकी संस्थानों में दी जाती है। यह शिक्षा प्राय: ऐच्छिक होती है। स्वतंत्रता पूर्व तथा उसके पश्चात् महाविद्यालयों में वार्षिक पद्धति, लागू थी। स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर इस प्रणाली में प्राध्यापक वर्ष पर्यन्त अध्यापन कार्य करते थे तथा वर्ष में एक बार वार्षिक परीक्षा होती थी।

स्नातक स्तर पर पूरक परीक्षा का प्रावधान था किन्तु स्नातकोत्तर स्तर पर पूरक का प्रावधान नहीं था। विद्यार्थी नियमित तथा स्वाध्यायी दोनों रूप में ज्ञानार्जन करते रहे हैं। नियमित विद्यार्थियों को अध्यापन व्याख्यान, ब्लेक बोर्ड के माध्यम से ही होता था। यह शिक्षा तुलनात्मक रूप से गुणात्मक कम थी क्योंकि परीक्षा पद्धती भी वर्णानात्मक ही थी। यह शिक्षा पद्धती रोजगारोन्मुख भी कम थी विद्यार्थी को रोजगार पाने के लिए डिग्री अर्जित करने के पश्चात् अतिरिक्त रूप से तैयारी करना होती थी। यह शिक्षा पद्धति म.प्र. के महाविद्यालयो में वर्ष 2008 तक जारी रही । वर्ष 2008-09 में मध्यप्रदेश सरकार ने स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर सेमेस्टर प्रणाली लागू की गई। इसमें प्रत्येक कक्षा में दो सेमेस्टर रखे गए। प्रत्येक सेमेस्टर में एक सैद्धांतिक पेपर में 30 प्रतिशत अंको का सी.सी.ई (सतत व्यापक मूल्यांकन) अर्थात कुल चार सी.सी.ई. विभिन्न विधाओं के माध्यम से विद्यार्थी का सतत् मूल्यांकन करने हेतु रखे गए। शासन ने परियोजना कार्य 50 अंको का प्रत्येक कक्षा में अनिवार्य किया ताकि विद्यार्थी को कक्षा अध्ययन के साथ साथ रोजगार के संबंध में व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त हो सके और उसकी रूचि के अनुसार उसे रोजगार प्राप्त हो सके। शासन द्वारा सेमेस्टर पद्धति में समय समय पर न्यूनाधिक परिवर्तन विद्यार्थियों तथा प्रशासन की कठिनाईयो को देखते हुए किये। जैसे वर्ष 2013 से परियोजना कार्य डिग्री कोर्स के अंतिम वर्ष में कर दिया गया । वर्ष 2013 से एकल प्रश्न पत्र प्रणाली का प्रावधान कर सी.सी.ई. 15 प्रतिशत अंको का रख दिया गया है। सी.सी.ई. विभिन्न विधाओं के द्वारा करवाने का उद्देश्य एक तो विद्यार्थी का शिक्षक से सतत सम्पर्क तथा उसके व्यक्तित्व के विकास का अवसर प्रदान करना है। सी.सी.ई. के माध्यम से विद्यार्थी प्रश्न के उत्तर स्तरीय लिखने में सक्षम हो रहे है तथा इनके परीक्षा परिणाम के प्रतिशत में भी वृद्धि हो रही है।

परियोजना कार्य का उद्देश्य रोजगार चाहे वह शासकीय हो या अशासकीय के क्षेत्र में सोच विचार कर उस क्षेत्र से जुड़ना होता है। जैसे विद्यार्थी स्कूल ,पुलिस विभाग, शोध संस्थान, कालेज व्यापार आदि में रोजगार करना चाहता है तो उसके द्वारा लिए गए विकल्प से संबंधित संस्था में जाकर कार्य करना तथा अनुभव लेना होता है, ऐसा करने से विद्यार्थी रोजगार अर्जित करने में सक्षम होता है। मध्यपद्रेश के जिलों व तहसीलों के आंतरिक भागो में तथा आदिवासी क्षेत्रो में महाविद्यालय खोले जा रहे है तथा इनमें चिन्हित महाविद्यालय से विद्वान प्राध्यापको को समय समय पर संबंधित विषय पढ़ाने हेतु भेजा जा रहा है। इस प्रकिया से विद्यार्थियों को स्थाई प्राध्यापको से पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

मध्यप्रदेश शासन उच्च शिक्षा विभाग द्वारा समय समय पर दृष्टि पत्र गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012-13 की कार्य योजना पत्र, महाविद्यालयो में इंटरनेट के जरिये भेजे जा रहे है। इनका एक मात्र उद्देश्य परम्परागत शिक्षा में परिवर्तन कर शिक्षा को स्तरीय बनाना है

शासन ने एम्बेसडर प्राध्यापक योजना लागू की है जिसमें विषय विशेषज्ञ प्राध्यापक होते है जो जिले के महाविद्यालयों में जाकर अपने विषय से संबंधित शिक्षकों और विद्यार्थियो की कठिनाईयों को दूर करते है तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्र शिक्षा के गुणात्मक अंतर को कम करने में सहायक हैं।

- गुणवत्ता विस्तार वर्ष 2012-13 में शासन द्वारा दिशा निर्देश जारी किए गए, इसके तहत् महाविद्यालयों में गुणवत्ता प्रकोष्ठ बनाए गए जिनका कार्य गुणवत्ता संबंधी कार्यो की निगरानी रखना तथा रिपोर्ट बनाना है।
- सत्रारंभ में सेतुशून्य कक्षाएँ लगाना ताकि विद्यार्थियों को अपने विषय के साथ साथ दूसरे विषयो का भी ज्ञान हो तथा उनकी पढ़ने में रूचि बढ़े।
- शिक्षकको द्वारा पॉवर पाईंट प्रेजेन्टेशन तथा ओवहर हेड प्रोजेक्टर के माध्यम से भी पढाया जा रहा है तथा विद्यार्थी लाभान्वित हो रहे है
- महाविद्यालयों में भाषा सुधार हेतु कार्यशालाएँ आयोजित की जाती है तथा इंटरनेट पर भी इस प्रकार का प्रोग्राम विद्यार्थी पढ़कर सीखते है।
- विद्यार्थी का चारित्रिक विकास हो इस हेतु महाविद्यालयों में एनसीसी. तथा एन.एस.एस. इकाईयां चलती है। गांधाजी ने कहा था कि "जो शिक्षा विद्यार्थियो के चरित्र का निर्माण न कर सके, वह शिक्षा व्यर्थ हैं।"

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

उच्च शिक्षा में परिवर्तन से उत्पन्न समस्याएँ –

वर्तमान में महाविद्यालयों में निम्नलिखित समस्याऐं है

1. यद्यपि सरकार महाविद्यालयों को आधुनिक शैक्षणिक सुविधाएँ उपलब्ध करा रही है किन्तु ये सुविधाएँ छात्रों की संख्या के मान से कम है।
2. महाविद्यालयों में विद्यार्थी कक्षा में कम उपस्थित रहते है।
3. तहसील तथा कस्बा स्तर पर महाविद्यालयों में स्थाई शिक्षको की कमी है। इस कमी को पूरा करने के लिए संविदा नियुक्ति तो की जाती है किन्तु ये शिक्षक उतनी गुणवत्तापूर्वक शिक्षा नहीं दे पाते है जितनी स्थाई शिक्षक दे सकते है।
4. नये खोले गये महाविद्यालयों में अधोसंरचना की कमी होती है। प्राध्यापकों के रहने का कोई इंतजाम नहीं होता। प्राध्यापक महाविद्यालय में पूर्ण समय नहीं रूकते और शहर का रूख कर लेते है। इस प्रकार छात्र तथा प्राध्यापक के मध्य लगातार सम्पर्क नहीं रहता है और शिक्षा की गुणवत्ता पर असर पढ़ता है।

उच्च शिक्षा में परिवर्तन से आने वाले कठिनाईयों को दूर करने के उपाय निम्नलिखित है –

1. विषय को रूचिकर ढंग से पढ़ाया जाय। शैक्षणिक टूर ले जाए ताकि विद्यार्थी पढाई में अपने आप रूचि लें।
2. कक्षाओं में छात्रों की उपस्थिति बढाई जाय इस हेतु पालक शिक्षक मीटिंग प्रतिमाह रखी जाय।
3. सभी महाविद्यालयो में कम्प्यूटर की पढ़ाई अनिवार्य कर दी जाय और महाविद्यालय में कम्पयूटर सुविधा सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर दी जाय। महाविद्यालय की सभी कक्षाओं में पी.पी.टी. की सुविधा होना चाहिए।
4. सरकार नए महाविद्यालय खोलने के साथ ही प्राध्यापक के रहने के लिए क्वार्टर भी उपलब्ध कराए ताकि शिक्षक अधिक समय तक महाविद्यालय में उपलब्ध रहें।
5. सरकार सभी वर्ग के विद्यार्थियों को पुस्तके , केलक्यूलेटर , डिक्शनरी दे ताकि विद्यार्थी पढाई में अधिकाधिक रूचि ले और गुणात्मक शिक्षा का विस्तार हो और सभी वर्ग के गरीब बच्चे खासकर लड़कियॉ पढाई से वंचित न रहे।
6. प्रत्येक कक्षा में कैमरे लगे होना चाहिए जिससे शिक्षक और विद्यार्थी अपने कर्तव्य का निर्वाह भलीभांति करेगे।

निष्कर्ष – मध्यप्रदेश राज्य में महाविद्यालयीन शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए कई प्रकार के परिवर्तन कर विद्यार्थियों को योग्य बनाया जा रहा है। राज्य में महाविद्यालयों की संख्या बढाकर सुदूर अंचल के युवाओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अवसर दिए जा रहे है। इसके साथ ही अब कालेज चलो अभियान भी चलाए जा रहे है। वर्चुअल कक्षाएँ चयनित महाविद्यालय में चल रही है और विद्यार्थी गुणात्मक शिक्षा ग्रहण कर रहे है। शोध पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है यह सब सकारात्मक कार्य शिक्षा में परिवर्तन से सम्भव हो रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानोरिया , चतुर्भुज (2013): भूगोल, साहित्य भवन पब्लिकेशनस आगरा, पी 14,25
2. मध्यप्रदेश शासन के पत्र 2011-12, 12-13 दृष्टि पत्र

****

Historical Significance of English in Modern India

Dr. Hemlata Acharya *

Introduction - "No Reformation is possible without Renaissance"[1]

Renaissance began in Europe in the 18th Century. In India this awakening started after a century. During the rule of East Indian Company, Liberal Governor Genral Lord William Bantiqe has carried out ground work for Indian community and educational development. It was very important that to have of East India Company, Educational Development and to have participation of few higher class Indian families.[2]

But there was a big question on medium of education. How to teach Indians? On this question India was divided in two groups, one supported Sanskrit language Indian religion and philosophy and others were supporting English language, Western knowledge and science. Some English educated young Bengali boys, followers of Derojeo, they have started drinking Alcohol & they were taking non vegetarian food.[3]

But there was one Bengali youth who was a strong supporter of English at the same time, he was against arthodoxy. He strongly believed in Indian Religion & culture. He was a friend of Lord William Bentique, that youth was the founder of Modern India. We all know him as Raja Ram Mohan Roy.

Unhealthy influence on the minds of the people idolatry and polytheism helped to reinforce their position as suggested by Raja Ram Mohan Roy. Their monopoly of Scriptural knowledge and of ritual interpretation imparted a deceptive character to all religious systems. The faithful lived in submission, not only to God powerful and unseen.[4]
"Vindicate my own faith and that of our early forefathers."
Western thinker Thomas Pan thought is similar- "My mind is my own church."[5]

Condition of women was worst in classical language and Shastras. Women even went to the extent of offerings themselves to priests to satisfy their carnal pleasures.[6]
21st Century's woman is self-dependant. This much status of women. how come, we all know.

Another debilitating factor was caste. It sought to maintain a system of segregation, hierarchically ordained on the basis of ritual status. The rules and regulation of caste hampered social mobility. Fostered social divisions and sapped individual initiative. Above all was the humillition of untouchability which militated against human dignity.[7]
Before English education in India, lower castes of Indian society could not get education although they were in majority and they could contribute development of country.[8]

A bridged version of the Vedanta, it was the first in a series of translations from Sanskrit into English. The Vedanta with monotheistic ideas, was to become the most important body of texts for the religious reform movement in the nineteenth century to orthodox Hindus, the very act of translation of these writings. Whether in English or Bengali was sacrilege.[9]

Raja Ram Mohan Roy reform movement sought to create a social climate for modernization, in doing so, they referred to a golden past when no such malaise existed. The nineteenth century situation was the result of an accretionary process a distortion of a once ideal past. The reformers vision of the Future.[10]

Lord Mecallay was specialized in legislative, he wanted to make Indian with the help of English and science who will Indian by look but their way of thinking and style of living European like as English. That time East India Company could get clerks at a cheaper rate, this was the main aim.[11]
But because of this people who got education in English have also come across in various development reforms Revolution happening in European countries. This change has also initiated to bring throughout of Independence, Development and Modernised India.

References:-

1. Yashpal & Grover "*Adhunik Bharat Ka Itihas-Ek Navin Mulyankan*" - S. Chand & Co. New Delhi.Page 270
2. Bipin Chandra – "India's Struggle for Independence" – Penguen Books India- Page 840
3. Edited by Michael Gottlob – "Historical Thinking in South Asia"-A handbook of sources from Colonial Times to the present.- Oxford- Page No.110
4. Edited by Michael Gottlob – "Historical Thinking in South Asia"-A handbook of sources from Colonial Times to the present.- Oxford- Page No.110
5. Hemlata Acharya – "Thesis – Mahatma Jyotirao Govindrao Phule (Ek Aitihasik Vishleshan)"- Page-94 & 110
6. Binay Kumar Singh-Thesis-Bhagalpur University- Page-79
7. Edited by Michael Gottlob – "Historical Thinking in South Asia"-A handbook of sources from Colonial Times to the present.- Oxford- Page No.110
8. Hemlata Acharya – "Thesis – Mahatma Jyotirao Govindrao Phule (Ek Aitihasik Vishleshan)"- Page-94 & 110
9. Edited by Michael Gottlob – "Historical Thinking in South Asia"-A handbook of sources from Colonial Times to the present.- Oxford- Page No.110
10. Edited by Michael Gottlob – "Historical Thinking in South Asia"-A handbook of sources from Colonial Times to the present.- Oxford- Page No.110
11. Bipin Chandra – "India's Struggle for Independence" – Penguen Books India- Page 840

* **Head of Department (History) M.J.B Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA**

वर्तमान समय में नीति ग्रंथ की उपयोगिता

डॉ. मंगला ठाकुर *

प्रस्तावना – नीति, धर्म और चरित्र परस्पर सम्बद्ध है। नीतिशास्त्र 'णीञ'– नी घातु एवं 'क्तिन' प्रत्यय जोड़ने से निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है साथ ले चलना जो वृत्ति मानव को सद्मार्ग, सदाचार,सुशासन, सुसम्बद्ध, प्रेम, दया, करूणा, समानता,सम्मान एवं आत्म कल्याण की ओर ले जाती है, वहीं नीति है।

भारतीय नीतिग्रंथ आदिकाल से ही भारतीय जनमानस के लिये प्रकाशपुंज रहे हैं। हमारी प्राचीन गौरवमयी सांस्कृतिक विरासत के ये आधार स्तम्भ हैं। वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत, श्रीमद भागवत गीता, स्मृतिग्रंथ, पंचतंत्र की कथायें हितोपदेश कामन्दकीय नीतिसार आदि ग्रंथो की विस्तृत श्रृंखला हैं, जिसमें मानव जीवन को उच्च सरल, सात्विक एवं देवत्व प्राप्त करने के लिये व्यापक दिशा–निर्देश दिये गये हैं। विविध दृष्टान्तों को प्रस्तुत करते हुए सारगर्भित, सुन्दर, बोधगम्य उपदेश दिये गये हैं। कहीं दोहों में कहीं गद्यों में, कहीं श्लोकों में, कहीं छन्दों में एवं कहीं सुक्तियों में नैतिकता, मानवीय मूल्यों से युक्त शब्दावलियों का अकथ संसार है।

वर्तमान समय समूची मानव जाति के इतिहास में निर्णायक महत्व का हैं। चहुँ ओर– नैराश्य, भ्रष्ट्राचार, भ्रूण हत्या, हिंसा, घृणा, अशान्ति गलाकाट स्पर्धा, नारी उत्पीड़न, असत्य, बेईमानी, द्वेष जैसी कलुशित वृत्तियों का धनघोर अन्धेरा छाया हुआ है। हम उपभोक्तावादी संस्कृति के शिकार हो गये है। हमारी सारी समझ सही गलत जैसे भी हो पैसा कमाने एवं उसे खर्च करनें हेतू नित नवीन तरीकों को ढूढनें में एवं अपनाने में ही सारी अन्त: ऊर्जा नष्ट हो रही है। यह सत्य हैं कि हमने आज बहुत तरक्की की हैं, खासतौर पर विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्रों में किन्तु जीवन का सबसे अहम पहलू मानवीय संवेदनाओं एवं शान्ति उससे कोसों दूर चले गये हैं। कामयाबी की दौड़ में जो पीछे रह जाते है, वे अवसादग्रस्त हो जाते है तथा आत्महंता जैसे घातक कदम उठाने से भी नहीं चूकते। पारिवारिक विघटन, एकल परिवार बुजुर्गो की उपेक्षा बच्चों में असुरक्षा की भावना, बाजारवाद, नैतिक मूल्यों का पूर्णत: पतन, बेटियों एवं बहुओं के साथ भेदभाव एवं अत्याचार, इत्यादि समस्त विकृतियॉ समाज में व्याप्त हो चुकी हैं।

ऐसे नैराश्य के वातावरण में हमारी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर नीति ग्रंथों के रूप में जो मौजूद हैं, वे ही आशा की किरण प्रतीत होते हैं। भारत का ऐतिहासिक लक्ष्य रहा हैं कि मानवों के मध्य ऐक्य स्थापित करना वह इस धरा पर निवासरत विविध प्रजाति,धर्म, एवं विश्वासों के लोगों के मध्य उच्छेद करके नहीं, अपितु सामंजस्य, सहयोग, एकता के द्वारा स्थापित करना चाहता हैं।

जैसा की मनुस्मृति में भी कहॉ गया है–

'एतद्देश प्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मन:।
स्वं स्वचिरत्रं शिक्षकेन, पृथिव्यां सर्वमाना:।।'

'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना भारतीय संस्कृति ही दे सकती है। ऋग्वेद हमें सिखाता है–'प्रेमी ऋषि उस रहस्यमयी सत्ता को देखता है, जहॉ सम्पूर्ण जगत् एक ही गृह प्राप्त करने आता है।

मुण्डक उपनिषद के तृतीय अध्याय के प्रथम खण्ड में 'सत्यमेव जयते का उल्लेख है।

भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् 'राष्ट्रीय सूत्र' के रूप में स्थापित्य है, जिसमें सत्य के मार्ग पर चलने वाले की सदा ही विजय होती है, इस बात को विश्वास के साथ प्रस्तुत किया गया है, जिससे मानव सत्य के मार्ग पर चलने के लिये उद्धृत होता है। कुण्ठाग्रस्त मानवजन को दृढ़ संबल प्रदान करने हेतु कहा गया है–

'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योर्तिगमय, मृत्योंमामृतम गमय'

सत्य की महिमा वर्णन करते हुए रामायण के आयोध्या काण्ड में कहा गया है– ' सत्य ही एकाक्षर प्रणङ्गवरूप शब्द ब्रह्म है। सत्य में ही धर्म की प्रतिष्ठा है। सत्य ही अविनाशी वेद हैं और सत्य से ही पराक्रम प्राप्त होता है।'

सत्य, धर्म के पालन पर कहा गया है– 'सत्य धर्माभिरक्तानों नास्ति मृत्युकृतंभयम' –।।रामायण से।।

अथर्व वेद में लिखा गया है– 'समान हृदयता, समान मानसिकता अप्रतिकूलता का, मैं तुम लोगों के लिये सृजन करता हूँ : तुम एक दूसरे से उसी प्रकार प्रीति प्रकट करो जैसे गौ अपने नवजात वत्स से करती है।

ऋग्वेद की अन्तिम ऋचा में कहा गया हैं –

'मिलकर चलो! मिल–जुलकर बात करो : तुम्हारे मन एक समान जाने, तुम्हारे यत्न साथ–साथ हो, तुम्हारे हृदय एकमत हो : तुम्हारे मन संयुक्त हो, जिससे हम सब सुखी हो सकें।' – (10–191)[1]

महाभारत में कहा हैं– 'जब कोई शत्रु, तुम्हारे घर में प्रवेश करें तो उसे उचित आतिथ्य दिया जाना चाहिये। कोई वृक्ष ऐसे लोगों से भी अपनी छाया भी नहीं हटाता, जो उसे काटने के लिये आते हैं। परस्पर मेल–जोल, सदभावना का इससे बड़ा उदाहरण ढूंढना असंभव है।

'अतिथि देवो भव:' के सूत्र को और अधिक विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया गया है, जबकि आज भाग–दौड़ की जीवनचर्या में अतिथी के आने पर असहजता प्रकट करना आम हो गया है। एक समय था कि जब यह सोच थी कि– 'कब मेहमान आये और कब हम भोजन करें, लेकिन आजकल यह सोच आम हो गई हैं कि कब मेहमान/अतिथी जावें और भोजन करें।'

ये नीति ग्रंथ मानव को मानवता वादी होने का संदेश देते है। महाभारत में कहा गया हैं कि इस धरती पर मनुष्य से बढ़कर कोई भी नहीं हैं–

'गुह्यं ब्रह्म तदिदं वो ब्रावीमि'।
न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।।'

वर्तमान में धार्मिक वैमनस्यता पूरे विश्व में अपना ताण्डव कर रही है, इस

* प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

सम्बन्ध में नीतिशास्त्रों में निर्विवाद रूप से कहा गया हैं कि अनुभवातीत सत्ता, मानवात्मा में अन्तर्भूत हैं।

उपनिषद के कथन 'तत्वमसि' में ऐसी ईश्वरीय सर्वान्तरयामित्व का संकेत हैं।

महाभारत में कहा गया हैं कि – अम्तं चैव मृत्युश्च द्वयं देहे प्रतिष्ठितम्। मृत्युरापद्यते मोहात् सत्येननापद्यतेऽमृतम्।।

अमरता एवं मृत्यु दोनों मानव की देह में निहित है। मोह का अनुसरण करके वह मरण को प्राप्त करता है, सत्य का अनुसरण करके वह अमूत को, अमरत्व को प्राप्त करता है।

हितोपदेश में भी बहुत ही संदेश परक पंक्तियाँ कहीं गई हैं– 'भूख, निंद्रा, भय और काम, मनुष्य एवं पशु में समान हैं। मनुष्य को जो वस्तु पशु से अलग करती हैं वह हैं, उसका धर्म, पाप–पुण्य विवेक हैं।

याज्ञवल्क्य स्मृति में बताया गया है कि–

'कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्यासु सर्वदा।सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्य प्रचसते।।'

सभी कालों में सभी अवस्थाओं में तथा सभी स्थलों में मन, वचन और कर्म से मैथुनी भोगवृत्ति से पूर्णतया दूर रहने में सहायता करना ही ब्रह्मचर्यव्रत का लक्ष्य है। शास्त्रों में ब्रह्मचर्याश्रम को सबसे श्रेष्ठ बताते हुए विद्यार्जन का सबसे उपयुक्त समय बताया गया है।

श्रीमद् भागवत गीता भी मनुष्य को सभी विकारों से ऊपर उठकर मोक्ष या भगवत मिलन की उच्चावस्थाओं तक ले जाने का वचन देती है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि –

'जब मनुष्य निष्कपट, हितैषियों प्रिय मित्रों तटस्थों, मध्यस्थों, ईष्यालुओं, शत्रुओं तथा मित्रों, पुण्यात्माओं एवं पापियों को समभाव से देखता है, तो वह और भी उन्नत माना जाता है। ध्यानयोग – 6/9'

वर्तमान समय में बुजुर्ग वर्ग सर्वाधिक उपेक्षा का शिकार रहा है, और आज के इस कलयुगी समय में और अधिक उपेक्षा की जा रही हैं। आजकल बुजुर्ग दम्पत्तियों के लिये वृद्धाश्रम खुल रहे है। आज की नौजवान पीढ़ी में सेवा–सुश्रुवा , कर्तव्य परायणता, इत्यादि के भाव समाप्त होते जा रहें है। इस संदर्भ में रामायण में कहा गया है–

' न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा: वुद्धा: न मे ने न वदन्ति धर्मम्।
ना सौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति, न तत्सत्यं यच्छलेनानुविद्धम्।।'

उपनिषद में कहा गया है – 'माता गुरूतरा भूमे: पिता उच्चतर: च खात्।'

आज का युवा विभिन्न व्यसनों को अपनाकर अपने स्वास्थ्य के साथ निरंतर खिलवाड़ कर रहा हैं, योग, प्राणायाम, नियमित दिनचर्या, सात्विक भोजन से दूर हो रहे है – इस संदर्भ में सूर्य नमस्कार , योग–प्राणायाम इत्यादि का प्रचार प्रसार आवश्यक हो गया है। स्वास्थ्य जनित वातावरण का निर्माण कर हम इन्हें असमय वृद्ध होने या काल कवलित होने से बचा सकते है।

शास्त्रों में कहा गया हैं– व्यायामात् लभते स्वास्थ्यं दीर्घायुष्युं बलं सुखम्। आरोग्यम् परम भाग्य स्वास्थ्यं सर्वार्थसाधनम्।।

राष्ट्रवाद, राष्ट्रप्रेम की शिक्षा भी हमें ये ही नीति ग्रंथ देते है। तभी तो कहा गया हैं कि–

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।' अर्थात् माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है।

राजधर्म के बारे में – श्रीमद भागवद में कहा गया हैं कि – जिस राजा के राज्य में दुष्टों के उपद्रव से सारी प्रजा त्रस्त रहती हैं, उस मतवाले राजा कि कीर्ति आयु, ऐश्वर्य और परलोक नष्ट हो जाते है।

धनलिप्सा से त्रस्त मनुष्य के लिये कठोपनिषद–1/1/27,2 में बहुत महत्वपूर्ण संदेश दिया गया हैं कि मनुष्य धन से कभी भी तृप्ति नहीं पा सकता हैं–'न वित्तेन तर्पणियों मनुष्य:।'

भारतीय संस्कृति अपनी अकूत ज्ञान सम्पदा के लिये विश्व में बेजोड़ है। बृहदारण्य उपनिषद में लिखा हैं कि– [3]

असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योर्तिगमय: मृत्योंमामृतम् गमय का संदेश समूची मानव जाति के लिये हैं।

गरूड़ पुराण –4 एवं भविष्य पुराण– 5 में भी कहा गया हैं कि –

सर्वे भवन्तु सुखिन, सर्वे सन्तु निरामया:, मा भद्राणिपष्यन्तु मा कष्चिद दुखभाग भवेत् –

अर्थात् 'सभी का मंगल हो, सभी निरोगी रहे, सभी भद्र दर्शन करे, किसी को भी दु:ख का भाजन न बनना पड़े।

महिलाओं की शस्त्रीय स्थिति बहुत अच्छी थी पूर्व वैदिक काल में उन्हें पुरूषों के समकक्ष माना जाता था।

मनु स्मृति में भी कहा गया हैं कि– 'यत्र नार्यस्तु पूजते तत्र रमन्ते देवताम्। पंचतंत्र में मित्र सम्प्राप्ति के अन्तर्गत यहीं उपदेश दिया गया हैं कि– 'अतितृष्णा न कर्तव्या।'

इसके अतिरिक्त मित्रभेद काकोलूकीय, लब्ध प्रणाश और अपरिक्षित कारण में पाँच कथाओं का संग्रह है, जिनके द्वारा 'गुरूकुल में बाल्यावस्था में ही नैतिक शिक्षा देने का प्रावधान था। ये नीति ग्रन्थ निरन्तर कर्म करने की प्रेरणा देते है। इस संदर्भ में महाभारत के युद्ध के दौरान भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीतोपदेश में भी कर्म करने की शिक्षा देते हुए कहा है–

'कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेसु कदाचनम्.....।'

हे अर्जुन केवल कर्म करो, कर्म करना तुम्हारे बस में हैं, किन्तु इसका फल तुम्हारे नियंत्रण में नहीं है। अत: केवल निष्काम भाव से सदकर्म करो।

एतरेय ब्राह्मण का कथन है– 'बैठे हुए व्यक्ति का भाग्य बैठ जाता हैं, खड़े होने वाले का खड़ा रहता है, सुप्त अवस्था में रहने वाले का सोया रहता हैं तथा चलने वाले का भाग्य चलने लगता हैं, अत: तुम्हें चलते रहना चाहिए (निरंतर गतिशील रहना चाहिये)।

वर्तमान दौर लोगों के नैतिक पतन, संस्कार विहीनता एवं दुराचार का हैं– हमारा दुर्भाग्य हैं कि हमने अपने प्राचीन नीति शास्त्रों को विस्मृत कर, पतन की ओर अग्रसर हो रहे हैं, मनु स्मृति मे कहा गया हैं कि – 'सदाचरण से दीर्घायु, मनोवांछित संतान तथा अक्षय धन की प्राप्ति होती है।'

ऐसे उत्तम मार्ग को छोड़कर सम्पूर्ण मानव जाति विनाश की ओर जाने का आत्मघाती रास्ता अपना रही हैं निश्चित ही आज के अशान्त जीवन में श्रीमद भगवत गीता में –6 में नीति परक तथ्य कहा गया हैं– 'जो पुरूष कामनाओं का त्याग करके, स्पृहा रहित ममता रहित और अंहकार रहित होकर विचरता हैं, वहीं शान्ति को प्राप्त करता है। नि:सन्देह भारतीय नीतिशास्त्रों की उपयोगिता आज और अधिक प्रासंगिक है, क्योंकि यदि व्यक्ति समाज, देश संस्कृति एवं संस्कार को अक्षुण्ण रखना है, तो हमें नीतिग्रंथों की शरण में जाना ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ राधाकृष्णन– भारतीय संस्कृति कुछ विचार, पृ.59
2. कठोपनिषद् 1/1/27
3. वृहदारण्य उपनिषद् 1/1/28
4. गरूड़पुराण 2/35/51
5. भविष्यपुराण 3/2/35
6 श्रीमद् भगवत् गीता 2/7

पं. रमाबाई सरस्वती : महाराष्ट्र महिला सुधार आंदोलन में भूमिका

डॉ. राजेश सकवार *

प्रस्तावना – भारतीय इतिहास में अग्रणी एवं महिला जनजागरण की पुरोधा युग की प्रतिमूर्ति रमाबाई (1858-1922) एक देदीप्यमान नक्षत्र थी, जिन्होंने महिला सुधार आंदोलन में नींव के पत्थर की भांति कार्य किया। रमाबाई के क्रिया कलापों से नारी जागरण की प्रक्रिया प्रारंभ हो गई थी, जिसके परिणाम स्वरूप जागरूकता आई। महाराष्ट्र के महिला सुधार आंदोलन में रमाबाई की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

रमाबाई ने आर्य महिला समाज की स्थापना कर महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करने का प्रथम प्रयास किया। विधवाओं को मनुष्यों के समान जीने का अधिकार देने के लिए शारदा-सदन की स्थापना की।

रमाबाई ने दो संस्मरणीय कार्य किये जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता। एक Hunter Commision के सामने गवाही और दूसरी 'स्त्रीधर्म नीति पर पुस्तक।

इस किताब की खूब बिक्री हुई। मराठी में छिटपुट आलोचना के बावजूद किताब को लोगों ने सराहा। इसी बीच पं. रमाबाई के मन में इंग्लैड जाकर मेडिकल की पढ़ाई करने व स्त्रियों की शिक्षा के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा जानने का विचार आया। इंग्लैंड में सेंट मेरिज होम से दो सिस्टर मिलने आई और सेंट मेरीज होम ले गई।सेंट मेरीज होम में रहने के कुछ दिन बाद वहां की मदर सुपीरियर ने रमाबाई को फुलहम भेजा ताकि माहौल बदले। यह उन्हीं की एक शाखा थी और समाज में पतित कहलाने वाली स्त्रियों के लिए 'उद्धार गृह' था। 29 सितम्बर 1883 को मनोरमा के साथ रमाबाई ने ईसाई-धर्म स्वीकार किया।

'इन्दुप्रकाश' ने भी रमाबाई के उत्साह और कर्मनिष्ठता की बहुत प्रशंसा की – 'छ: वर्ष विदेश में रहकर और हिंदू धर्म बदलकर ईसाई बनकर लौटी इस महिला का कार्य के प्रति लोगों के मन में सराहना और आश्चर्य का भाव था।'

पवित्र भाषाओं के अध्येता, ऋग्वेद भाष्य के प्रकाशक पंडित मेक्समूलर ने पंडिता रमाबाई के कार्य के विषय में प्रशंसात्मक वचन कहते हुए लिखा है – 'रमाबाई को यदि एक भी बाल विधवा की सहायता करने का अवसर मिलता और यदि उनके पंख होते, तो अवश्य ही वे उस बाल विधवा के लिए उड़कर भारत पहुंच जाती। श्री मैक्समूलर की भविष्यवाणी सचमुच सत्य हुई है – रमाबाई ने आज विधवाओं की शिक्षा अध्ययन की नींव रख दी है। सदन का नाम शारदा सदन सदन रखा गया।

दिसम्बर 1889 को न्यूयार्क से प्रकाशित 'क्रिश्चियन विकली में शारदा सदन की प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत हुई। तिलक यह रिपोर्ट पढ़कर सावधान हो गये और केसरी ने सदन पर प्रहार तेज कर दिये केसरी ने लिखा कि सदन में विधवा शिक्षा की आड़ में धर्म परिवर्तन किया जा रहा है। विधवाओं को ईसाई धर्म के प्रति आकर्षित किया जा रहा है।

रमाबाई महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार दिलाने की पक्षधर थी। रमाबाई का मानना था कि नई राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना, आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा पद्धति और चिंतन शैलियों के प्रसार आदि के फलस्वरूप ही भारत में सामाजिक जागरूकता आयेगी।

19 वीं सदी के पुरूष शास्त्रों और पुराणों का हवाला देकर पतिव्रत धर्म की वकालात करते थे। रमाबाई ने उन शास्त्रों और पुराणों को ही चुनौती दी। रमाबाई ने अपनी पैनी आलोचनात्मक दृष्टि से 19 वीं सदी के भारतीय इतिहास के एक महत्वपूर्ण मुद्दे राष्ट्रवाद बनाम सुधारवाद के द्वंद्व को बेनकाव किया और ऐसा करने वाली वह पहली भारतीय स्त्री थी। प्राचीन ग्रंथों के 18000 श्लोक मुखोदगत एवं उसके व्याकरण का नैपुण्य देखकर कलकत्ता के सीनेट हाल में यहा के पंडितो नें रमाबाई को 'सरस्वती' उपाधि दि गई*। इसके पूर्व या इसके बाद में पंडिता नाम से कोई दुसरी* महिला विख्यात नहीं हुई।

पंडिता रमाबाई ने बहुत प्रयास कर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में महिला प्रतिनिधी प्राप्त किये।कांग्रेस के पांचवे अधिवेशन में 15 ठहराव प्रस्तावों में एक भी प्रस्ताव स्त्री दास्य विमोचन या किसी सामाजिक विषय पर नहीं था। रमाबाई ने उसी दिन होने वाली सोश्यल कांफ्रेस की सभा में सामाजिक विषय पर भाषण दिया। चौथे प्रस्ताव पर रमाबाई का भाषण हुआ। सोश्यल कान्फ्रेंस के रिपोर्ट में टाइम्स ने उनके भाषण का सारांश दिया था।

आज जिस विषय को सार्वजनिक वाद-विवाद में अग्र स्थान प्राप्त किया है। उस हिंदी भाषा विषयक प्रश्न का श्रेय सर्वप्रथम रमाबाई ने किया। कांग्रेस में महिलाओं को प्रतिनिधित्व का प्रथम प्रयास रमाबाई सोश्यल कांफ्रेंस में 4000 पुरूषों में खड़ें होकर केशवपन विरोधी प्रस्तुत प्रस्ताव को समर्थन करते हुऐं समाज को हिलाकर रखा।

पूर्ण के प्लेग को प्रकोप में जिस लेख ने ब्रिटिश संसद में भारतीय जनमत की आवाज उठाई वह ज्वलंत लेख पं. रमाबाई का था। इसी लेख से आपका मुम्बई के गर्वनर से विवाद हुआ। रमाबाई अपने लिखने बोलने में किसी की परवाह नहीं करती थी फिर वह व्यक्ति हो या संस्था या सरकार। बाई ने मुम्बई में अमेरिका संबंधी भाषण दिया उसका समाचार केवल केसरी के अलावा किसी अन्य अखबार ने नहीं दिया। बाई के भाषण में एक जगह उल्लेख है स्वेदशाभिमान कैसा हो इस विषय में भारत के स्कूल में कुछ भी नहीं पढ़ाया जाता। भारत की पुस्तकें भी शिक्षा देने योग्य नहीं। इधर की पुस्तक का मुख्य कार्य सरकार की भक्ति करों यह हैं। राज निष्ठ होना बुरा नहीं किंतु अपनी मां की भक्ति से मैं उसे महत्वपूर्ण नहीं मानती। अपनी मां को दुत्कार कर रानी की भक्ति करने को मैं विशेष नहीं मानती। बाई ने लगभग 100 वर्ष पूर्व हिन्दी राष्ट्र भाषा होना चाहियें यह मांग युनाईटेड स्टैटस की लोक स्थिति और प्रवास वृत्त में उठाई थी।

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) राजीव गांधी शासकीय महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

रमाबाई का एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्य उनके प्रयास से कांग्रेस में स्त्री प्रतिनिधियों का प्रवेश, रमाबाई मद्यपान निषेध महिला मंडल की सक्रिया सदस्य थी। आपने इस आंदोलन में अमेरिका में सहयोग दिया था। इसी कारण उनके प्रोत्साहन से यहां मद्य निषेधक महिला समाज स्थापित किया गया। कांग्रेस के 5 वें सत्र के रिपोर्ट में स्त्री प्रतिनिधियों के विषय में ऐसा लिखा हैं कि सर्व प्रथम हम इस सभा की शोभा बढ़ाने वाली 10 महिलाओं का उल्लेख करेंगे उनमें से एक पुरूषों ने सार्वजनिक सभा से निर्वाचित की, शेष का चुनाव विविध महिला संगठन, महिलाओं की क्रिश्चियन टेम्परेंस युनियन, बंगाल लेडिस ऐसोसिएशन तथा आर्य महिला समाज ने निर्वाचित की थी। युवा स्वदेशी महिलाओं को औद्योगिक प्रशिक्षण देने के लिये वुमनस टैक्निकल एज्युकेशन ऐसोसिएशन की स्थापना की जो परित्यक्तता गरीब विधवा अनाथ आश्रम की महिला, अन्य बेसहारा जो ईमानदार व्यवसाय के अभाव में बुरे मार्ग को जाती हैं, को नि:शुल्क प्रशिक्षण देती थी। लॉर्ड रिपन ने भारत आते ही 3 फरवरी 1982 को विलियम हंटर की अध्यक्षता में पहले भारतीय शिक्षा आयोग का गठन किया। इस समय पं. रमाबाई ने शिरगणनिति के आंकाड़ो का आधार लेकर जोरदार भाषण दिया। पंडिता रमाबाई इस अवसर पर वक्ता थी।

रमाबाई को अच्छी अंग्रेजी नहीं आती थी अत: उनकी गवाही मराठी में हुई, किंतु आपकी गवाही का सर विलियम हंटर पर इतना प्रभाव पड़ा कि आपने उस गवाही का अंग्रेजी में अनुवाद करवाकर छपवाया।

हंटर कमीशन के सामने स्त्री चिकित्सकों के बाबत उनके निवेदन ने उनकी साम्राज्ञी का ध्यान आकर्षित कर लिया और हिंदुस्तान में अप्रत्यक्ष तौर पर एक आंदोलन का जन्म हुआ जो कि अपने नवीनतम विकास के साथ द नेशनल एसोसिएशन फॉर सप्लाइंग फीमेल मेडिकल एड टू द वूमन ऑफ इण्डिया के रूप में पहचान बनायी। जिसका प्रचलित नाम 'डफरिन आंदोलन' है जो कि अपने विलक्षण अध्यक्ष के नाम से जाना जाता है जो भारत के वायसराय की पत्नी है।

1882 में रमाबाई ने अपनी पहली किताब द हाई कास्ट हिंदु वूमेन लिखी। इस पुस्तक को लोकप्रियता प्राप्त हुई।

पं. रमाबाई ने सर्वप्रथम जून 1882 में अपनी पहली किताब 'स्त्री धर्म नीति' लिखी। पति निधन के बाद पत्नी धर्म के बाबत कोई ग्रंथ मराठी में उपलब्ध नहीं था। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण 1882 में प्रकाशित हुआ। पुस्तक की लोकप्रियता को देखते हुए 1883 में द्वितीय संस्करण भी प्रकाशित किया गया।यह पुस्तक मराठी भाषा में लिखी गई थी और इसका अंग्रेजी शीर्षक था Morals for women किताब की खूब बिक्री हुई।

लोगों तक अपनी बात पहुंचाने के उद्देश्य से रमाबाई ने 'द हाई कास्ट हिंदू वुमेन' लिखी। यह किताब जून 1887 में छपी। इस किताब में हिन्दुस्तानी विधवाओं की समस्याओं को जगजाहिर किया गया ताकि लोग उनके बारे में जान सके। रमाबाई का विश्वास था कि हिन्दुस्तान में सामाजिक रीति-रिवाजों को जाति व्यवस्था और पितृसत्ता ने विकृत कर दिया ।इसी पुस्तक ने अमरीकन लोगों का ध्यान भारत की ओर आकर्षित किया। इस पुस्तक की अमरीका में काफी अच्छी बिक्री हुई और रमाबाई को काफी अच्छी आय प्राप्त हुई। इसी पुस्तक के कारण 13 दिसम्बर 1887 को अमरीका में 'रमाबाई एसोसिएशन' की स्थापना हुई। जिसने यह तय किया कि भारत में एक धर्म निरपेक्ष स्कूल खोला जाए। जिसे आगामी 10 वर्ष तक आर्थिक मदद दी जाए

लेखन के अतिरिक्त रमाबाई भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और इंडियन सोशल कांफ्रेंस में भी सक्रिय हुई। दिसम्बर 1889 में दोनों का वार्षिक सम्मेलन मुम्बई में हुआ। दिसम्बर 1889 के वार्षिक सम्मेलन मुम्बई के मंच से रमाबाई ने भारत की संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करने की मांग की। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लगभग 200 प्रतिनिधियों के सामने रमाबाई को बोलने का मौका मिला। 'वुमेंज क्रिश्चियन टेंपरेंस यूनियन और आर्य महिला समाज' का प्रतिनिधित्व रमाबाई कर रही थी। रमाबाई की हिन्दी को संपर्क भाषा का सुझाव एवं मांग करने का अधिवेशन में शामिल प्रतिनिधियों ने स्वागत किया।

भारतीयों के लिए किंडर गार्डेन शिक्षा पद्धति और अंधो के लिय ब्रेल लिपि से परिचय करवाने का श्रेय रमाबाई को जाता है। रोजगार मूलक प्रशिक्षण लड़कों और लड़कियों को देने की वकालात, राष्ट्र भाषा हिन्दी को बनाने की सर्वप्रथम सलाह, प्रथम भारतीय महिला जिसने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बम्बई अधिवेशन में महिला प्रतिनिधि के रूप में हिस्सा लिया, 1895 में पूना में फैले प्लेग रोग में सरकार द्वारा किये गये व्यवस्था से नाखुश होकर विरोध प्रकट करना, स्वदेशी आंदोलन में हिस्सा लेकर देश में उत्पादित खादी के वस्त्रों को सारे जीवन अंगीकर करना, भारत में प्रथम महिला गृह की स्थापना, महिलाओं के लिये मेडिकल शिक्षा की पहल करना, हंटर कमीशन के सामने भारतीय महिलाओं में शिक्षा जागृति और स्कूल खोलने की पहल करना आदी कार्यो का श्रेय रमाबाई को जाता है।

रमाबाई ने अपनी अमरीका यात्रा के दौरान ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। पं. रमाबाई को 5 अप्रैल 1922 की अंतिम विदाई दी गई।
सरोजनी नायडू ने कहॉ – ' हिन्दू संत मालीका में जिसका नाम रखा जाएगा ऐसी ईसाई महिला पं. रमाबाई थी।'

रविन्द्रनाथ टेगौर ने 1889 में पूना में रमाबाई का व्याख्यान सुनकर पं. रमाबाई की तुलना 'सफेद गुलाब' से की थी।

रमाबाई की जीवन गाथा उन्नसवीं सदी का उत्तरार्ध और बीसवीं सदी के पहले पचीस साल में समाई हुई है। रमाबाई की कार्यकुशलता, उनका कर्तव्य, अथक परिश्रम, अपूर्व लगन और तकदीर के बेदर्द आघात देखकर लगता है, अपनी चौसठ साल की उम्र में इस महज महिला ने पूरा भारतीय स्त्री जीवन मथ कर रख दिया है। आज हम धर्मातीत मानवता के सपने दोहराते हैं और आए दिन उसके नारे लगते है लेकिन आज से सौ-सवा सौ साल पहले रमाबाई ने अपनी कृतिशीलता से यह सपने सत्य में बदल दियें। 19 वीं सदी के पुरूष प्रधान महाराष्ट्रीयन रंगभूमि पर रमाबाई का, एक स्त्री का आगमन एक अनोखी बात थी। हजारों श्रृंखलाओं में वहद स्त्री समाज में यह विद्रोहिनी अपनी पूरी ताकत, हिम्मत, लगन और प्रखर बुद्धि वैभव से चमक उठी। पूरा बचपन कठिनाईयों और संघर्ष से व्यतीत हुआ। इसी संघर्ष की आग ने रमाबाई को कुंदन की तरह दमता दिया। जिसकी चमक ने बेसहारा स्त्रियों की अंधेरी जिंदगी में एक उजाला फैला दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. काऱ्हालो, डॉ. सिसिलिया - पं. रमाबाई, बंबई
2. ठाकरे, प्रबोधनकार - पं. रमाबाई सरस्वती
3. तिलक, दें.ना. - महाराष्ट्राचा तेजस्वीनी पं. रमाबाई ,बंबई
4. बटलर, क्लेमेन टीना - पं. रमाबाई सरस्वती
5. कोशाम्बी मीरा - इंटरसेक्शन सोशल कल्चरल ट्रेन्डस इन महाराष्ट्र
6. सेन गुप्ता पदमिनी - पं. रमाबाई सरस्वती हर लाईफ एण्ड वर्क दिल्ली
7. मेकनिकल निकोल - पं. रमाबाई सिलेक्टेड वर्कस, कलकत्ता

सन् 1857 का विद्रोह और बैजाबाई सिंधिया

डॉ. प्रमिला शेरे *

शोध सारांश – ग्वालियर के महाराजा दौलतराव सिंधिया की क्रांतिकारी महारानी बैजाबाई के बारे में कहा जाता है कि उसने अंग्रेज सरकार के विरुद्ध एक षडयंत्र रचा, जिसमें भारत के सभी प्रमुख राजा और राजकुमार शामिल थे। इसी षडयंत्र के बाद में सन् 1857 की क्रांति ने गदर का रुप धारण कर लिया। बैजाबाई वीरांगना होने के साथ-साथ एक कुशल राजनीतिज्ञ भी थी, अंग्रेज सरकार से तंग आकर उन्होंने विद्रोहियों को बढ़ावा दिया था। बैजाबाई सरजीराव घाटके की पुत्री थी। इनका विवाह मार्च 1798 ई. में दौलतराव सिंधिया के साथ हुआ था। अपनी युवावस्था में बैजाबाई बहुत दमदार थी। एक सिद्धहस्त घुड़सवार होने के साथ ही साथ युद्धकाल में प्रवीण भी थी, भाला बर्छी चलाने में काफी होशियार थी। 21 सितम्बर 1803 ई. में तो वह असाई के युध्द में अपने पति महाराज दौलतराव के साथ युध्द का संचालन कर रही थी। उस समय बैजाबाई की अवस्था अठारह वर्ष की थी। वह एक चतुर और योग्य महिला थी। बैजाबाई की योग्यता का महाराजा दौलतराव पर अधिक प्रभाव था।

शब्द कुंजी : बैजाबाई सिंधिया, उज्जैन, ग्वालियर, वजीर बेग

प्रस्तावना – 21 मार्च 1827 ई. को महाराजा दौलतराव सिंधिया का बिना उत्तराधिकारी छोड़े, स्वर्गवास हो गया। अत: बैजाबाई ने मुगतराव को गोद लिया जो जनकोजीराव के नाम से 27 जून 1827 ई. को गद्दी पर बैठा। उस समय जनकोजीराव की आयु 11 वर्ष की थी। अत: महारानी बैजाबाई ने बतौर रीजेन्ट के ग्वालियर रियासत का शासन भार संभाला। महारानी बैजाबाई एक चतुर और महत्वाकांक्षी महिला थी। फरवरी 1843 ई. में महाराजा जनकोजीराव का निधन हो गया उनके कोई पुत्र नहीं था, अब उनकी रानी ताराबाई ने जयाजीराव को गोद लिया, जो कि अल्पवयस्क थे। बैजाबाई ने रीजेन्ट बनने का प्रयास किया जब पॉलिटिकल अफसर को पता चला तो उसने तुरन्त ही बैजाबाई को ग्वालियर छोड़ने पर बाध्य कर दिया। अत: महारानी बैजाबाई उज्जैन चली गई। महाराजा जीवाजीराव का विवाह चिमना राजा के साथ हो जाने के बाद महारानी बैजाबाई की महाराजा के प्रति व्यवहार में नम्रता आई, महाराज स्वयं ही महारानी बैजाबाई से मिलने उज्जैन गये। सितम्बर में महारानी बैजाबाई उज्जैन में बीमार पड़ गई तो महाराजा ने ब्रिटिश सरकार की अनुमति से, महारानी को ग्वालियर आने का निमंत्रण दिया जो उन्होंने स्वीकार कर लिया। नवम्बर 1856 ई. में महारानी बैजाबाई अपनी पौत्रवधु चिमनाराजा से मिलने के लिए उज्जैन से ग्वालियर आई, परन्तु सन् 1857 की क्रान्ति हो जाने के कारण वे उज्जैन न जा सकी और ग्वालियर रुकी रही। जब महारानी बैजाबाई उज्जैन में रह रही थी तो उनका सम्पर्क वहाँ के सरसूबा बाबा आप्टे से था।

महारानी बैजाबाई का नाना पेशवा से पहले से संबंध बने हुये थे। अब तो महारानी बैजाबाई और भी मुखर हो उठी जनता से इनका संपर्क बढ़ता ही गया। सतारा राज्य को अंग्रेजी शासन ने हथिया लिया था। अत: सतारा राज्य की महारानी तो अंग्रेजी शासन की विरोधी थी ही और महारानी बैजाबाई भी उससे हमदर्दी रखती थी। ज्योंही सतारा के मजिस्ट्रेट को, बैजाबाई तथा सतारा के राज्य परिवार के बारे में पता चला कि दोनों मिलकर ब्रिटिश सरकार के खिलाफ षडयंत्र रच रहे है तो उसने बाम्बे सरकार को 7 जुलाई 1857 ई. को इससे अवगत कराया। बाम्बे सरकार के 29 जुलाई 1857 ई. के पत्र में बताया गया कि उसे विभिन्न सूत्रों से पता चला है कि बैजाबाई सक्रिय षडयंत्रकारी है, जो यहाँ (सतारा) की अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ काम कर रही है।

बैजाबाई सिंधिया और 1857 का विद्रोह – बैजाबाई सिंधिया ब्रिटिश सरकार के खिलाफ भी सतारा राज्य के साथ सक्रिय रुप से षडयंत्र रच रही है, जो कि रघुनाथ महादेव राव के कथन से स्पष्ट है। यह बात उसके अनुज कृष्णराव वांकडे ने अपने पत्र में रघुनाथ राव को बताई। वह बैजाबाई सिंधिया के दीवान खान्डेराव प्रभु के मकान में रहता था, उसने महादेव रघुनाथ वांकडे को ग्वालियर से 30 मई 1857 ई. को पत्र लिखा इस पत्र में उसने बताया कि 30 मई 1857 ई. को ग्वालियर में क्रांति का श्री गणेश हो गया है। पत्र में यह भी बताया गया कि बैजाबाई सिंधिया उज्जैन जाने वाली है, लेकिन महाराजा सिंधिया ने उनसे आग्रह किया कि वे अभी चार माह ग्वालियर में और ठहरे। इसके पूर्व ग्वालियर का पॉलीटिकल एजेंट अपने 11 सितम्बर 1857 ई. के पत्र में लिखता है कि बैजाबाई अभी भी ब्रिटिश सरकार के खिलाफ षडयंत्र कर रही है। यही नहीं बाम्बे प्रान्त सरकार के सचिव ने भी अपने 29 जुलाई 1857 ई. के पत्र में भारत सरकार को लिखा कि सभी प्रकार के सूत्रों से पता चला है कि बैजाबाई ब्रिटिश सरकार के खिलाफ सक्रिय रुप से एजेंट के रुप में काम कर रही है।

सीतामउ के वकील **वजीर बेग** ने भी अपने गुरुवार, 17 सितम्बर, 1857 ई. के पत्र क्रं-24 में मउ, इन्दौर के मध्य अंग्रेजों की गतिविधियाँ, शाहगढ़ तथा बानपुर राज्य (बुंदेलखंड) के शासकों की अंग्रेजों के आक्रमण का प्रतिरोध करने हेतु तैयारियाँ, होल्कर के संवाददाताओं से दिल्ली की राजनैतिक स्थिति की जानकारी प्राप्त होना, सिंधिया की सैनिक टुकडियों का शाहादत खां के साथ सम्मिलित होना तथा बैजाबाई की विद्रोहियों की सहायता करने विषय जानकारी दी गई है। ब्रिटिश सरकार समझ रही थी कि महाराजा जीवाजीराव का विवाह बैजाबाई की परपोती से हो गया है तो महारानी बैजाबाई अब ब्रिटिश सरकार के खिलाफ नहीं रहेगी। लेकिन उनका ऐसा सोचना गलत रहा। महारानी बैजाबाई का ब्रिटिश सरकार से विरोध बना ही रहा। जब 24 जून 1857 ई. को मुरार छावनी के बागी सिपाही महारानी बैजाबाई सिंधिया के पास पहुँचे तो महारानी ने दरबार में आकर उन्हें आश्वस्त किया कि वह उनके साथ दिल्ली चलने को तैयार है और वे (बागी सिपाही) जितना रुपया चाहे वह देगी।

जब महू-इन्दौर के क्रांतिकारियों को यह बात मालूम हुई तो वे भी महारानी बैजाबाई की सहानुभूति लूटने की गरज से महारानी के महल पर

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पहुँचे। लेकिन वे महारानी से मुलाकात करने में विफल रहे हालांकि उस समय महारानी अपने महल में ही थी। महारानी के दो सौ सुरक्षाकर्मी महारानी की नौकरी से विदा लेकर इन्दौर महू के क्रांतिकारियों से जा मिले। मुरार के बागी सिपाही तथा महू-इन्दौर के क्रांतिकारियों ने ग्वालियर से दिल्ली के लिये सितम्बर 1857 ई. के अंतिम सप्ताह में प्रस्थान किया। महारानी बैजाबाई सिंधिया ने 1857 ई. के दौरान दिल्ली की यात्रा की। प्रमुख क्रांतिकारियों के एजेंट एक कोने से दूसरे कोने में घूम रहे थे और बैजाबाई का भी यही उद्देश्य रहा।

तात्या टोपे का क्रांतिकारी दल ग्वालियर में पहली जून 1858 ई. को प्रविष्ट हुआ। सिंधिया की सेना तथा मुरार छावनी के कान्टिनजेन्ट सिपाहियों को हर्ष हुआ और वे तात्या टोपे के क्रांतिकारी दल से जा मिले महाराजा सिंधिया तथा उनका दीवान भागकर आगरा पहुँचे। जहाँ ब्रिटिश कमिश्नर के यहाँ पनाह ली। अब तो तात्या टोपे व राव साहेब का शासन शुरु हुआ। महाराज तथा दिनकर राव के परिवार को भी ग्वालियर छोड़ना पड़ा। महारानी बैजाबाई, महाराजा की रानी व अन्य कई लोग पलायन दल में थे। यह दल पनियार जा रहा था। सुरक्षा के लिए महारानी बैजाबाई के डेढ़ हजार आदमी साथ थे और मालवा का सर सूबा आप्टे भी था। जिस समय महारानी बैजाबाई पनियार में ठहरी हुई थी, तभी ग्वालियर से तात्या टोपे ने उनसे सहयोग मांगने की इच्छा प्रकट की, लेकिन बैजाबाई ने इस प्रार्थना को स्वीकार नहीं किया और यह कहकर टाल दिया कि ग्वालियर लौटने तथा महाराजा का संदेश आने पर वे विचार करेंगी। यह दल 8 जून को नरवर पहुँचा और किले में डेरा डाला।

वजीरबेग ने रविवार **6 जून 1858 ई.** के पत्र क्रं. 75 में बायजाबाई व चिमनाराजा के पनियार से नरवर प्रस्थान करने तथा सरसूबा मंदसौर को खर्च हेतु रुपया भेजने का आदेश दिया। इसी तरह पत्र क्रं. 76 मंगलवार जून 8 1858 ई. में वजीरबेग ने ग्वालियर की स्थानीय स्थिति की सूचना के साथ बायजाबाई के पनिहार में ही निवास करने की जानकारी दी।

ग्वालियर को सर ह्यूरोज ने 18 जून 1858 ई. को बागियों से मुक्त कराया तभी महाराजा आगरा से तथा महारानी आदि पनियार से वापस ग्वालियर लौटे। 1857 की क्रांति के समय उज्जैन भी काफी अशान्त रहा। उज्जैन में जब बैजाबाई रहती थी तब वह सरकार के खिलाफ षडयंत्र का प्रमुख केन्द्र था। इन्दौर में तो पहली जुलाई 1857 ई. को विद्रोह हो गया था जिसकी भनक महारानी बैजाबाई को पहले ही लग गई थी। अत: वहाँ विद्रोह शुरु होने के पूर्व ही इन्दौर खजाने से महारानी बैजाबाई के अधिकारियों ने अपनी राशि में से एक लाख रुपया निकाल लिया था। पॉलिटिकल एजेंट तो अपने दिनांक 13.8.1857 ई. के पत्र में बताता है कि महारानी बैजाबाई के एजेंट तो हर जगह संदेह की दृष्टि से देखे जाते थे। जहाँ देखो महारानी बैजाबाई के संबंध में बातें होती थी कि वह सक्रिय रुप से ब्रिटिश सरकार के खिलाफ पूरे मालवा प्रान्त में जनता को उकसा रही है। गदर के बाद ज्योंही ग्वालियर का माहौल कुछ शान्त हुआ तो महारानी बैजाबाई उज्जैन वापस लौट गई तथा उसी षडयंत्र में संलग्न हो गई। वहाँ उन्हें उज्जैन का ही गोविन्द शास्त्री के सहयोग से उनकी सक्रियता और बढ़ गई। उज्जैन में 1859-60 ई. की क्रांति का प्रमुख व्यक्ति गोविंद शास्त्री था।

निष्कर्ष - उज्जैन षडयंत्र का एक प्रमुख केन्द्र बन गया था। उज्जैन में महारानी बैजाबाई का ठिकाना था ही। उज्जैन में महारानी बैजाबाई के गार्ड के सिपाही रहते थे। उन्होंने भी वहाँ पर विद्रोह कर दिया। उज्जैन में बैजाबाई को उन्हीं दिनों पाण्डुरंग सदाशिव पेशवा (राव पेशवा) ने एक पत्र लिखा जो पकड़ा गया। अंग्रेजी सरकार को अब पुख्ता हो गया कि उज्जैन में जो विद्रोह हुआ है उसमें महारानी बैजाबाई सिंधिया का हाथ है। फरवरी 1860 ई. में एजेंट को पता चला कि अंग्रेजों के खिलाफ उज्जैन में षड़यंत्र रचा जा रहा है। एजेन्ट ने भारत सरकार को बताया कि राव साहेब कुछ समय उज्जैन में थे तथा षड़यंत्र को रचने में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। एजेन्ट यह भी कहता है कि यह सब बात उज्जैन के सरसूबा बाबा आप्टे तथा महारानी बैजाबाई के एजेन्टों को भी भलीभाँति मालूम थी, इस षडयंत्र का महत्वपूर्ण पहलू यह था कि होल्कर की सेना को, क्रान्तिकारी सेना में, शामिल करने का प्रयत्न किया जाय। एजेन्ट की सलाह पर महाराजा ने बाबा आप्टे को उज्जैन से हटा दिया तथा उज्जैन का प्रबंध भी महारानी बैजाबाई से छीन लिया।

ब्रिटिश सरकार ने महारानी बैजाबाई की षडयन्त्रकारी गतिविधियों की जाँच कराने हेतु मीर शहामत अली को नियुक्त किया। मीर शहामत अली ने अपनी जाँच रिपोर्ट में ब्रिटिश सरकार के एजेन्ट को लिखा कि महारानी बैजाबाई ने राव साहेब को उज्जैन में कई दिनों तक ठहराया तथा जो भी व्यक्ति इस षडयंत्र में पकड़े थे उन्हें इन्दौर भेज दिया गया तभी से ऐसी हरकतें तथा इन्दौर तथा उज्जैन में थम गई। महारानी बैजाबाई से उज्जैन नगर, जागीर तथा अचल संपत्ति लेकर महाराजा को सुर्पुद कर दी गई। जब एजेन्ट अक्टूबर 1860 ई. में ग्वालियर आया तो महारानी बैजाबाई ने उसे खूब झड़पा। महाराजा के अनुरोध पर एजेन्ट को प्रबंध वापस सौंपना पड़ा। इसी सिलसिले में महारानी बैजाबाई ने गवर्नर जनरल के एजेन्ट के नाम दि. 3 नवम्बर 1860 ई. को एक खरीता भेजा। इस खरीतें में महारानी बैजाबाई ने अनुरोध किया कि उज्जैन नगर तथा इसके परगने के गाँवों का प्रबंध उसे सौंपा जाय। महाराजा के बताये अनुसार इस प्रबंध को संभालते रहूँगी। मैं आगे यह भी वचन देती हूँ कि जो भी विद्रोही उज्जैन में पनाह लेंगे उन्हें पकड़ कर दंडित किया जावेगा। 27 जून 1863 ई. को बैजाबाई की मृत्यु हो गई। महारानी बैजाबाई जीवन पर्यंत अंग्रेजी सरकार के खिलाफ साजिश करती रही। इस प्रकार 1838 से 1863 ई. तक यानी पच्चीस वर्ष तक अंग्रेजी शासन के खिलाफ षडयंत्र रचती रही।

ठाकुर सूर्यकुमार ने अपनी कृति **'महारानी बायजाबाई सिंधिया'** (सन् 1910) में सन् 1857 के विद्रोह का उल्लेख किया है। इसमें बायजाबाई का काम सन् 1857 की क्रांति का समर्थक नहीं, विरोधी था, यद्यपि वह भी अंग्रेजों की सतायी हुई थी। राष्ट्रकवि **डॉ. मैथिलीशरण गुप्त** की सुप्रसिध्द रचना '**भारत भारती'** में सन् 1857 की ओर संकेत केवल रानी लक्ष्मीबाई के नामोल्लेख से ही नहीं हुआ साथ में बायजाबाई का भी इसमें उल्लेख है-

क्या कर नहीं सकती भला यदि शिक्षिता हो नारियाँ?
रणरंग, राज्य, सुधर्म रक्षा कर चुकी सुकुमारियाँ
लक्ष्मी, अहिल्या, बायजाबाई, भवानी, पद्मिनी
ऐसी अनेको देवियाँ है आज जा सकती गिनी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्रा जयप्रकाश, संपादक (2008)ब मध्यभारत में 1857 का विद्रोह, नई दिल्ली : रिसर्च इण्डिया प्रेस.
2. रघुवीरसिंह, संपादक (1896), मालवा के महान् विद्रोहकालीन अभिलेख, सीतामऊ : श्री नटनागर शोध संस्थान.
3. श्रीवास्तव भगवानदास (1998), 1857 की क्रान्तिकारी महारानी बैजाबाई सिंधिया, भोपाल : शब्दान्ति प्रकाशन
4. माहौर भगवानदास (1976), *1857 के स्वाधीनता संग्राम का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव,* अजमेर : कृष्णा ब्रदर्स.

सामाजिक सुधारों में अग्रणी महाराजा यशवंतराव होल्कर द्वितीय

डॉ. शिवा खण्डेलवाल *

शोध सारांश – 6 दिसम्बर 1908 को डोल ग्यारस के दिन जन्मे यशवंतरावजी को यद्यपि 18 वर्ष की आयु में सन् 1926 को राजसिंहासन प्राप्त हो गया था। तथापि उनकी अल्पवयस्कता के कारण सारे राज्याधिकारों का प्रयोग ब्रिटिश रेजिडेन्ट के आधीन रेजीडेन्ट कौंसिल करती थी। 9 मई 1930 को उन्हे सारे राज्याधिकार विधिवत प्राप्त हो गये थे।

प्रस्तावना – महाराजा तुकोरावजी होल्कर तृतीय के काल से ही इन्दौर को आधुनिक व आदर्श नगर बनाने का जो कार्य आरंभ किया गया था उनके पुत्र महाराजा यशवंत राव होल्कर द्वितीय का इसमें कोई कम योगदान नहीं हैं। इन्दौर का प्रसिद्ध एम.वाय. अस्पताल, वर्षों से सारे शहर की जनता की प्यास बुझाने में सहायक यशवंत सागर, होल्कर कॉलेज का यशवन्त हॉल आदि महाराजा यशवन्त राव की ही निर्मितियाँ है।

भारत वर्ष में यह काल समाज सुधार व राष्ट्रीयता का काल था। राष्ट्रीय जागृति के इस दौर में महाराजा ने वक्त की मांग के अनुरूप कई कानून बनाये व समाज सुधार के कार्य किये। इस समय ग्रामीण जीवन बिताने वाले जिले के पिछड़ी तथा आदिम जातियों में बहुत सी अनिष्टकर सामाजिक बुराईयां थी। इन बुराईयों को दूर करने के उद्देश्य से होल्कर शासन ने समय-समय पर सामाजिक विधियाँ पारित की। वर्तमान भारतीय संविधान में जिन सामाजिक सुधारों का प्रावधान है वे सामाजिक सुधार महाराजा यशवंत राव द्वारा पहले ही किये जा चुके थे। संविधान के नीतिनिर्देशक तत्वों में से कई निर्देशों के अनुरूप बहुत से कानून महाराजा द्वारा पहले ही बनाये जा चुके थे।[1]

राज्याधिकार प्राप्त हो जाने के पश्चात महाराजा ने सर्वप्रथम अपने किसानों का बकाया लगान माफ किया। जमींदारी के अलावा बचे हुए गाँवों में पटेल नियुक्त कर उन्हें 15 बीघा जमीन इनाम में दी। गाँवों में सहकारी संस्थाएं खोली ताकि किसानों को कम ब्याज पर कर्ज मिल सके।

समाजिक सुधार कानून –सन् 1927 में होल्कर राज्य द्वारा महाराजा ने समाज में व्याप्त कुरीतियों व कुप्रथाओं को हटाने में महती भूमिका अदा की। अनमेल विवाह को रोकने के लिये सन् 1927 में इन्दौर डिसम्पेरिटी मैरेज एक्ट घोषित किया गया, जिसके अन्तर्गत्त 50 वर्ष की आयु वाले पुरुष से नाबालिग एवं युवा कन्या का विवाह प्रतिबंधित कर अपराध घोषित किया गया। ऐसे विवाह में सहयोग देने वाले व हिस्सा लेने वाले भी अपराधी घोषित किये गये। सन् 1934 तथा 1940 मे इस विधान में कुछ और भी प्रगतिशील संशोधन किये गये।

महाराजा यशवंतराव प्रगतिशील विचारों के थे व जात-पात विरोधी थे उन्होंने अनेक रूढ़ियों व कुरीतियों का उन्मूलन किया था। वे अन्तर्जातीय विवाह के समर्थक थे उन्होंने स्वयं अपनी पुत्री उषाराजे का विवाह सतीश मल्होत्रा के साथ करवाकर समाज के समक्ष एक आदर्श उपस्थित किया था। दहेज रूपी दानव का मर्दन करने के लिए महाराजा की सरकार ने 1934 में इन्दौर विवाह व्यय नियंत्रक कानून को प्रभावशील किया। दहेज के खर्च की सीमा कानून द्वारा लगा दी गई। विवाह समारोह में अब 101 लोगों से ज्यादा लोगों को भोज देना दण्डनीय कर दिया गया। बारातियों की संख्या भी निश्चित कर दी गई। अधिक से अधिक 50 व्यक्ति इसमें भाग ले सकते थे। सन् 1928 में इन्दौर विवाह विच्छेद विधान होल्कर राज्य द्वारा बनाया गया। इस विधान के द्वारा विवाह विच्छेद की स्वीकृति तब मिलती थी जब पति का दूसरी महिला से विवाह हो गया हो और वह पत्नी से निष्ठुरता एवं निर्दयता पूर्वक व्यवहार करता हो अथवा बिना कारण ही पति द्वारा पत्नी का परित्याग कर दिया गया हो। परित्याग का समय पूरे 2 वर्ष या इससे अधिक मान्य किया गया।

बाल विवाह पर रोक लगाने के लिए होल्कर राज्य द्वारा यद्यपि 1918 मे ही बालविवाह प्रतिबंध विधान बनाया गया था। 1927 व 1933 में इसमें संशोधन भी किये गये। 1 जून 1933 के पश्चात् बाल विवाह करने वालों को शासकीय छात्रवृत्ति से वंचित कर दिया गया था और 1 जनवरी 1938 से ऐसे विद्यार्थियो की शिक्षा के लिए शैक्षणिक संस्थाओ में प्रवेश देना दण्डनीय घोषित किया गया।[2]

भारतीय नारी को पति की सम्पत्ति का हिस्सा प्रदान करने के लिए 18 दिसम्बर 1940 को हिन्दू नारी सम्पत्ति अधिकार विधान प्रभावषील हुआ। इसकी धारा 3 के अनुसार मृतक की बिना वसियत सम्पत्ति पर विधवा पत्नी या एक से ज्यादा पत्नी हो तो, सभी पत्नियों को लड़के के बराबर हिस्सा प्राप्त होने का अधिकार था।

इन्दौर मातृत्व हित संरक्षक विधान द्वारा गर्भवती श्रमिक महिलाओं के हितों के संरक्षण हेतु राज्य सरकार ने प्रसूति के समय चार सप्ताह की वैतनिक छुट्टी दिये जाने का आदेश उद्योग के मालिक या प्रबंधक को दिया। इस प्रकार को स्थिति में किसी भी महिला को सेवामुक्त नहीं किया जा सकता था।[3]

किसी व्यक्ति के मरणोपरांत किये जाने वाले उत्तरक्रिया के अंतर्गत नुक्ता देने की प्रथा उत्तराधिकारी के लिए सिरदर्द बन जाती थी, इस पर रोक लगाते हुए सन् 1931 में इन्दौर नुक्ता विधान बनाया गया। इस विधान द्वारा मृतकों का नुक्ता करने वालों पर रोक लगाई गई।

महाराजा की सरकार ने श्रमिकों की भलाई के लिए भी कई विधान बनाये। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप इन्दौर में भी कई कपड़ा मिलें तथा फैक्ट्रियाँ स्थापित हो चुकी थीं। अत: सन् 1928 में महाराजा की सरकार द्वारा कपड़ा मिल मालिकों को यह आदेश दिया गया कि वे मजदूरों के भवन निर्माण हेतु मिल द्वारा होने वाली आय में से 5 प्रतिशत रकम अलग रखना

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शुरू कर दे। इसके लिए स्वयं होल्कर शासन द्वारा 1930 में भूमि दे दी गई। हालांकि उस समय विश्वव्यापी मंदी के कारण व द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण यह कार्य पूरा नहीं हो पाया परन्तु आजादी के बाद इन्दौर शहर के श्रमिकों के लिए नन्दानगर व नेहरू नगर आदि में श्रमिकों के लिए आवास बनाये गये। सन् 1935 में श्रमिकों के लिए श्रमिक क्षतिपूर्ति विधान बनाया गया जिसके अन्तर्गत श्रमिकों के साथ होने वाली दुर्घटनाओं के समय जैसे अंगभंग या अन्य नुकसान होने पर उसकी क्षतिपूर्ति मालिक को करनी थी।[4]

हरिजनोद्धार के लिए किये गये कार्य – महाराजा यशवंतराव ने पिछड़े वर्ग तथा आदिवासियों के उत्थान संबंधी कार्यों पर विशेष ध्यान देने का प्रयत्न किया। 1 मार्च 1938 को हरिजनों के उत्थान के क्षेत्र में एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ जब महाराजा ने हरिजनों के सर्वांगीण कल्याण की घोषणा कर सारे अधिकार हरिजनों को दे दिये तथा सारी सामाजिक नियोग्यताएं हटाने की भी घोषणा कर दी। महाराजा ने घोषणा की –

'मंदिर प्रवेश कराने के बावत् जो घोषणा की गई है उसके हर पहलू पर खूब विचार कर लिया गया है और हम इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि कोई भी समय रियासत या देश अब लोगों की 'अछूत' बनाकर नहीं रह सकता है। मेरा कहना है कि इस अछूत रूपी धब्बे को समूल नष्ट करने में आप हमारा साथ दे। अखिल भारतीय महिला कांग्रेस अहमदाबाद द्वारा महाराजा को 11.08.1938 को इस घोषणा के लिये बधाई पत्र भेजा गया।[5]

महाराजा की इस घोषणा से हरिजन सेवक संघ के कार्यकर्ताओं ने हर्षित होकर जूलूस निकालकर राजवाड़ा स्थित गोपाल मंदिर में प्रवेश किया व देव दर्शन किये। महाराजा होल्कर की घोषणा दिवस 1 मार्च को हरिजन दिवस के रूप में मनाया गया। 1938 में हरिजन सप्ताह भी मनाया गया जिसमें पूरे सप्ताह मनाये जाने वाले कार्यक्रम बनाये जाते थे। इन कार्यक्रमों में खेल प्रतियोगिताएं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, खादी का प्रचार, प्रभात फेरी व मंदिर प्रवेश का आयोजन किया गया। हरिजन सप्ताह के अन्तर्गत सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य मंदिर प्रवेश था जिसमें महाराजा ने इन्दौर के 31 मंदिरों के द्वार हरिजनों के लिए घोषाणा द्वारा खोल दिये। इस अवसर पर मंदिरों की एक सूची भी प्रसारित की गई।[6] साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया कि हरिजन राज्य के सभी कुंओं, होटलों, उपहारगृह जैसे सार्वजनिक स्थानों तथा वाहनों का अबाध रूप से उपयोग कर सकते थे।

इन्दौर में हरिजन उत्थान के कार्य इन्दौर हरिजन सेवक संघ के द्वारा किये जाते थे जो 1935 से नगर में कार्य कर रहा था। संघ को प्रतिवर्ष 800 रूपये का सहायक अनुदान दिया जाता था।

होल्कर शासक ने हरिजन बालक–बालिकाओं को शिक्षण तक में छूट देने के आदेश के साथ ही उन्हें पुस्तकें, स्लेटें तथा लेखन–पठन सामग्री भी मुफ्त में वितरित करवायी तथा हरिजन उत्थान निधि से छात्रवृत्तियाँ प्रदान की गई।

नगर पालिका में कार्यरत हरिजनों की वेतन वृद्धि कर 800 रुपये से 1000 रुपये कर दी गई तथा उन्हें आकस्मिक अवकाश, चिकित्सा अवकाश आदि भी दिया जाने लगा। नगर पालिका के मेहतर कर्मचारियों का महंगाई भत्ता 1 से 4 प्रतिशत कर दिया गया।

सन् 1938 में महाराजा यशवंतराव ने हरिजन कल्याण के लिए 5000 रुपये मंजूर किये तथा हरिजन कल्याण कार्यक्रमों की देखरेख के लिए एक समिति भी बनाई। पलासिया, जूनी इन्दौर में मेहतर बस्तियों के निर्माण के लिए महाराजा ने 80,000 रुपये व 51,000 रुपये स्वीकृत किये। जिले के भूमिहीन हरिजन श्रमिकों को 1940 से 1946 के दौरान 35,196 एकड़ कृषिभूमि प्राप्त हुई।

सन् 1938 में महाराजा ने यह घोषणा की कि हरिजनों पर शासकीय सेवा में प्रविष्ट होने के लिये कोई प्रतिबंध नहीं होगा इसलिये अधिकाधिक हरिजनों को नौकरियां प्राप्त हुई।

महाराजा की सरकार ने सन् 1943 में रियासतभर में सरकारी कुएं हरिजनों के लिये खोल दिये। उन्होंने दो लाख रूपये रेवेन्यू मिनिस्टर साहब के अधिकार में कुएं खुदवाने के लिए दिये।[7]

1 मार्च 1942 को हरिजन दिवस के उपलक्ष्य में महाराजा यषवंतराव ने हरिजन सेवक संघ को एक शुभ संदेश भेजा जिसमें उन्होंने जिक्र किया कि आम लोगों के साथ हरिजन दिवस बनाने में मुझे बड़ी खुषी होती है। उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए होल्कर राज्य ने कुछ ठोस कार्य किये हैं और बहुत कुछ कार्य करने है। उन्होंने लोगों से भी अपील कि की वे इस महत्वपूर्ण कार्य को अपने हाथ में लें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हरिजन सेवक संघ जो 1933 से हरिजनोद्धार के कार्य में लगा हुआ था महाराजा यशवंतराव ने उसे समय–समय पर राजकीय घोषणाएं कर आर्थिक सहायता प्रदान की। उनके हरिजनोद्धार के कार्य नि:संदेह प्रशंसनीय है।

महाराजा द्वारा किये गये इन सामाजिक सुधारों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि महाराजा यशवंतराव द्वितीय समाजिक सुधारों में अग्रणी थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अहिल्या स्मारिका 1971, खसगी ट्रस्ट इन्दौर द्वारा प्रकाशित, पृ. 57
2. वही
3. डॉ. नगेन्द्र आजाद – इन्दौर दर्शन दिग्दर्शन, पृ. 69
4. इन्दौर गजेटियर, पृ. 48
5. मुकुट बिहारी वर्मा – हरिजन सेवक संघ का इतिहास, पृ. 118
6. वित सचिव के पत्र क्रं. 786/एफ/23.04.40 द्वारा मंदिर के द्वार हरिजनों के लिए खोले गये।
7. वार्षिक कार्य वितरण मध्य भारत हरिजन सेवक संघ इन्दौर, 1941 से 1942 तक
8. डॉ. शिवनारायण यादव – अपना इन्दौर पृ. 40

****

प्राचीन भारत के प्रमुख शिक्षा केन्द्र (तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला)

प्रो. शोभना व्यास *

शोध सारांश – मनुष्य का जीवन शिक्षा के बिना अधूरा है, मानव जीवन का उच्चतम ध्येय इहलोक की भौतिक उन्नति पूर्वक सृष्टि और की जीवन की गुत्थियों को सुलझाना और ज्ञान का प्रकाश फैलाना है, प्राचीन भारतीय मनीषियों ने यह तथ्य भलीभांति आत्मसात कर लिया था और इसीलिये सुदूर अतीत में भी भारत में शिक्षा की सुंदर व्यवस्था दिखाई देती है, प्राचीन काल में उपनयन संस्कार के तुरंत बाद बालकों को आचार्य के संरक्षण में रहते हुए, ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए, आचार्य कुल में रहते हुए शिक्षा प्राप्त करनी होती थी, उत्तर वैदिक काल में आचार्य कुलों में रहते हुए विद्यार्थी चारों वेद, इतिहास, पुराण, व्याकरण, पितृ विद्या, राशि विद्या (गणित), देव विद्या, निधि शास्त्र, तर्क शास्त्र, नीति शास्त्र, ब्रह्म विद्या, भूत विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या (ज्योतिष), सर्प विद्या और देवजन विद्या का ज्ञान प्राप्त करते थे। भारत में शिक्षा की एक प्रमुख विशेषता थी – सरल एवं उच्च विचार संग्रह तथा प्रदर्शन की प्रवृत्ति को त्याग कर निरंतर उच्च विचारों को आत्मसात करना। यह विशेषता आचार्य कुलों में भी परिलक्षित होती है और आगे चलकर स्थापित हुए शिक्षा के बड़े केन्द्रों – तक्षशिला, नालंदा, विक्रम शिला, वलभी आदि विश्वविद्यालयों में भी दिखाई देती है, जहाँ विद्यार्थी भिक्षुओं सा जीवन व्यतीत करते थे। वैदिक कालीन, उत्तर वैदिक कालीन गुरूकुलों में शिक्षण व्यवस्था नि:शुल्क थी और बौद्ध कालीन शिक्षा केन्द्रों में भी प्रवेश का मापदंड विद्यार्थी का सम्पन्न होना नहीं था। राजकुमारों, राजपुरोहितों और धनाढ्य वर्ग के विद्यार्थियों के साथ–साथ निर्धन एवं मेधावी विद्यार्थियों ने भी ज्ञानार्जन किया। कालांतर में शिक्षा के ये केन्द्र देश–विदेश के ज्ञान पिपासुओं के आकर्षण का केन्द्र बने। विद्यार्थियों ने यहाँ शिक्षा प्राप्त की और अपनी मेधा के बल पर ये यहाँ के आचार्य कुल में भी सम्मिलित हुए। ह्वेनसांग, रत्नाकर शांति, ज्ञानश्रीमित्र, अतीश इसके कुछ उदाहरण है।

गुरूकुल ही शिक्षा के सर्वप्रथम केन्द्र रहे हैं, किन्तु इनके अतिरिक्त भी अन्य स्थल कालक्रम में शिक्षा के केन्द्र बनते गये यथा राजधानियाँ, तीर्थस्थल, बौद्धविहार, अग्रहार ग्राम आदि भारत में जो विश्वविद्यालय हुए वहाँ अनेकों शताब्दियों तक सहस्त्रों विद्यार्थियों को निरंतर शिक्षा प्राप्त होती रही। ऐसे कतिपय विश्वविद्यालय अनेक सदियों तक छात्रों को शिक्षित करने के साथ–साथ भारतीय संस्कृति के पोषक भी रहे। प्राचीन भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखने, उसका विकास तथा प्रसार करने में इन सभी शिक्षा केन्द्रों ने बहुत बड़ी भूमिका का निर्वाह किया। विद्या के इन उच्च एवं श्रेष्ठ केन्द्रों में जितना विविध साहित्य रचा गया दुर्भाग्य से उसका बड़ा अंश नष्ट हो गया, किन्तु जो अंश शेष रह गया अथवा तिब्बत, चीन एवं नेपाल में जो कुछ सुरक्षित बचा रह गया, उससे भारत की श्रेष्ठ शिक्षा पद्धति, मौलिक चिंतन तथा बौद्धिक क्षमता का भलीभांति परिज्ञान हो जाता है।
प्रस्तुत शोध पत्र में शिक्षा के तीन प्रमुख केन्द्र तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला का विस्तृत वर्णन है।

प्रस्तावना – सभ्यता–संस्कृति के सम्यक् प्रसार और विकास के लिये तथा वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय प्रगति के लिये शिक्षा नितांत आवश्यक है। विद्या के बिना मनुष्य का व्यक्तित्व संकुचित और जीवन बोझिल हो जाता है। इसीलिये ज्ञान को मनुष्य का तीसरा नेत्र कहा गया है। विद्यार्जन से मनुष्य आत्मनिर्भर तो होता ही है, परिवार और समाज के निर्माण में अपना योगदान भी प्रदान करता है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मनुष्य की धार्मिक वृत्तियों का उत्थान, उसके चरित्र का उत्थान, उसके व्यक्तित्व का उत्थान, उसके सामाजिक कर्तव्यों का निष्पादन और उसके सामाजिक जीवन का उन्नयन। इसलिये प्राचीन काल से ही भारत में शिक्षा की सुंदर व्यवस्था दिखाई देती है। ज्ञान प्राप्ति और परिष्कृत व्यक्तित्व के लिये प्राचीन भारत में शिक्षा के अनेक केन्द्र थे, जिनमें सर्वाधिक प्राचीन और उल्लेखनीय था तक्षशिला विश्वविद्यालय, तत्पश्चात नालंदा, विक्रमशिला, वलभी प्रसिद्ध हुए। ये सभी केन्द्र मुख्यत: बौद्धधर्म की शिक्षा से संबंधित थे। हिन्दू शिक्षा अथवा वैदिक साहित्य की शिक्षा के प्रमुख केन्द्रों में थे – काशी, कश्मीर, धारा, कन्नौज, अनहिलपाटन तथा कांची। इन केन्द्रों से ज्ञानार्जन कर अपनी विद्वता से देश और विदेश के लोगों को आकर्षित करने वाले विद्वानों की एक लंबी श्रृंखला है, किन्तु अग्रिम पृष्ठों में विद्या के तीन प्रमुख, प्राचीन केन्द्र तक्षशिला, नालंदा और विक्रमशिला का वर्णन है।

तक्षशिला विश्व विद्यालय – यह भारत का प्राचीनतम विश्वविद्यालय है, वर्तमान पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) में जहाँ रावलपिंडी शहर बसा है, वहाँ से 18 मील दूर यह विश्व विद्यालय स्थित था। रामायण के अनुसार भरत ने गंधर्वों का संहार करके तक्षशिला नगरी बसाई और अपने पुत्र तक्ष को वहाँ नियुक्त किया। (वाल्मीकि रामायण – 7/01/11) महाभारत में भी इस नगरी का उल्लेख हैं, जनमेजय ने जिस सर्प यज्ञ का आयोजन किया था, वह इसी स्थल पर हुआ था, (महाभारत – 1/3/20) किंतु रामायण – महाभारत में तक्षशिला का उल्लेख शिक्षा केन्द्र के रुप में नहीं होता ईसा की सातवीं सदी पूर्व यह शिक्षा केन्द्र के रुप में विकसित और प्रसिद्ध हुआ और इसकी प्रसिद्धि ऐसी बढ़ी कि वाराणसी, राजगृह, मिथिला आदि नगरों से छात्र यहाँ शिक्षा ग्रहण करने आते थे।

आचार्य गण – अनेक विश्व प्रसिद्ध आचार्य यहाँ शिक्षा देने का कार्य करते थे। इन आचार्यो के साथ बारबार विश्व प्रसिद्ध विशेषण लगाना, इस बात का धोतक है कि उस समय तक्षशिला विश्व विद्यालय अपनी शिक्षा के स्तर के कारण अत्यधिक प्रसिद्ध था। इन विद्वानों की कीर्ति से आकृष्ट हो कर छात्र यहाँ आते थे। जातकों से ज्ञात होता है कि यहाँ के एक – एक आचार्य के निर्देशन में पाँच – पाँच सौ विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। यह शिक्षा केन्द्र वर्तमान काल के विश्वविद्यालयों के समान नहीं था। न तो यहाँ शिक्षकों का

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कोई केन्द्र संगठन था और न ही कोई केन्द्रीय प्रशासन व्यवस्था थी। इसमें कोई विशिष्ट पाठ्यक्रम भी नहीं था और न ही शिक्षा की कोई निश्चित अवधि थी। यहाँ उच्च शिक्षा का एक केन्द्र मात्र था जहां जगद् विख्यात दिसा पामोक्ख विद्वान रहते थे। प्रत्येक आचार्य अपना पाठ्यक्रम स्वयं निर्धारित करता था और तदनुकूल शिक्षा की अवधि भी। यहां वेदों, अठारह विद्याओं और विविध शिल्पों की शिक्षा सुलभ थी।

नालंदा विश्व विद्यालय – मगध में नालंदा महाविहार शिक्षा का बड़ा केन्द्र था। इसकी ख्याति महात्मा बुद्ध के समय से थी। नालंदा की ख्याति दूर – दूर तक फैल गई और देश विदेश के हजारों विद्यार्थी यहां विद्यार्जन के लिये आने लगे। अनेक चीनी विद्वानों ने यहां ज्ञानार्जन किया और वापस अपने देश लौटकर उन्होंने अपने जो वृत्तांत लिखे उनसे हमें नालंदा के भवनों, आचार्यों और शिक्षा पद्धति की जानकारी मिलती हैं।

प्रवेश प्रक्रिया – यहां प्रवेश के नियम बड़े कठोर थे प्रवेश के इच्छुक विद्यर्थियों को द्वार पंडित द्वारा ली जाने वाली अत्यंत कठिन परीक्षा उत्तीर्ण करना होती थी। जिसमें 10 में से 2 विद्यार्थी ही सफल हो पाते थे।

पुस्तकालय – इस महाविहार में धर्म यज्ञ नामक एक विशाल पुस्तकालय था, जिसकी तीन विशाल इमारते थी रत्नसागर, रत्नोदधि और रत्नरंजक रत्नोदधि भवन में नौ मंजिलें थी। और यहां धर्मग्रथों का संग्रह था अन्य दो इमारतें भी इस प्रकार विशाल और विस्तीर्ण थी। जहां जिज्ञासु और अध्ययन शील विद्यार्थियों की भीड़ हमेशा रहती थी यहां एक अध्यापक नौ या दस विद्यार्थियों को पढ़ाता था।

11 वीं सदी तक नालंदा विश्व विद्यालय भारत में शिक्षा का प्रमुख केन्द्र रहा इस समय विक्रमाशिला नामक एक अन्य विश्वविद्यालय की स्थापना हो गई थी जिसे पालवंशी शासकों का संरक्षण प्राप्त था। विक्रमाशिला के विकास के साथ नालंदा की कीर्ति कुछ धूमिल होने लगी और उसमें पतन की लक्षण दिखाई देने लगे। आगे चलकर जब मुहम्मद-बिन-बख्तियार खलजी ने विहार पर आक्रमण किया तब नालंदा के इस प्राचीन विश्वविद्यालय का अंतिम रूप से विनाश हो गया।

विक्रमाशिला विश्वविद्यालय – बिहार प्रांत के भागलपुर जिले में स्थित था विक्रमाशिला विश्वविद्यालय जिसकी स्थापना पालंवशी राजा धर्मपाल ने आठवीं शताब्दी में की थी धर्मपाल ने यहां अनेक बौद्ध मंदिरों और विहारों का निर्माण करवाया इस विश्वविद्यालय ने अपनी विशेषता के कारण शीर्ष ही अंतर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर ली थी। विक्रमशीला के प्रतिष्ठित प्राध्यापकों की एक लम्बी सूची है। इस विश्वविद्यालय का विशेष संबंध तिब्बत से था यहां पढ़ने वालों में तिब्बतियों की संख्या इतनी अधिक थी कि उनके लिये अलग से एक अतिथिशाला बनवाई गई थी।

नालंदा विश्वविद्यालय की तरह यहां भी द्वार पंडित होते थे जो प्रवेश के इच्छुक विद्यार्थियों के ज्ञान का प्रारंभिक परीक्षण करते थे इन द्वार पंडितों की संख्या 6 थी तिब्बती लेखक तारानाथा के अनुसार – विक्रमशिला के दक्षिणी द्वार का द्वार पंडित था प्रज्ञाकरमति, पूर्वी द्वार का दायित्व रत्नाकर शांति पर था, पश्चिमी द्वार बागीश्वर कीर्ति के जिम्मे था, उत्तरी द्वार पर नारोपंत नियुक्त थे, प्रथम केन्द्रीय द्वार पर रत्न व्रज और द्वितीय केन्द्रीय द्वार पर पंडित ज्ञान श्री मित्र की नियुक्ति थी द्वार पंडित पद पर बहुत ही उच्च कोटि के विद्वानों की नियुक्ति होती थी संभवत: इस विश्व विद्यालय के अंतर्गत 6 महाविद्यालय होंगे और प्रत्येक महाविद्यालय का एक पृथक द्वार पंडित होता होगा इन द्वार पंडितों की समिति द्वारा ही विश्व विद्यालय का संचालन होता था। और इनके प्रधान को महस्थविर कहते थे।

प्रत्येक महाविद्यालय में शिक्षकों की संख्या 108 होती थी। इस प्रकार कुल 648 शिक्षक यहां अध्यापन कार्य करते थे। यहां विद्यार्थियों की संख्या के संबंध में कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती किंतु यहां के सभाभवन में एक साथ 8000 विद्यार्थी बैठ सकते थे। अत : अनुमान है कि देश विदेश के हजारों विद्यार्थी यहां शिक्षा प्राप्त करते होंगे।

यह विश्वविद्यालय बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा का सबसे प्रमाणिक केन्द्र था। यहां मुख्य रुप से धर्म और दर्शन पर व्याख्यान होते थे। यहां के अनेक विद्वानों ने बौद्ध साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले ग्रंथों की रचना की। रक्षित, विरोचन, ज्ञानपाद, बुद्ध, जेतारी, रत्नाकर शांति, ज्ञानश्रीमित्र, रत्नवज्र, दीपंकर, अभयंकर आदि प्रमुख विद्वान थे।

यहां से शिक्षा प्राप्त अनेकों विद्यार्थियों ने अपनी विद्वता का परचम देश विदेश में फहराया, इनमें रत्नवज्र, रत्न कीर्ति, ज्ञानश्रीमित्र, रत्नाकर शांति और अतीश के नाम महत्वपूर्ण है। अतीश तो बौद्ध धर्म की पुन: स्थापना के लिये तिब्बत भी गये थे और उनके द्वारा स्थापित व्यवस्थाऐं, लामाओं की अधीनता में आज तक जीवित हैं। रत्नकीर्ति अतीश के गुरु थे और ज्ञानश्रीमित्र अतीश के उत्तराधिकारी थे। अतीश के तिब्बत चले जाने पर ज्ञानश्रीमित्र ही विक्रम शिला विश्व विद्यालय के प्रधानाचार्य बने।

बौद्ध धर्म के अतिरिक्त यहां पढाए जाने वाले अन्य विषयों में न्याय तत्वज्ञान, व्याकरण, वैदिक साहित्य, आदि थे इस दौर में तांत्रिक साधना बहुत महत्वपूर्ण हो गई थी तंत्रवाद को इस युग के धर्म का महत्वपूर्ण हिस्सा बनाने का श्रेय इस विश्वविद्यालय को ही जाता है। यहां पुस्तकालय भी था और आचार्य भी विद्यार्थियों की जिज्ञासा शांत करते थे। वास्तव में पूर्व मध्य युगीन भारत में इसके अलावा अन्य कोई शिक्षा केन्द्र इतना महत्वपूर्ण नहीं था। सभी शिक्षक और विद्यार्थी यहां के विहारों और आवासों में ही रहते थे। यहां के विद्यार्थियों की संख्या किसी भी रूप में नालंदा के विद्यार्थियों से कम नहीं थी। विश्वविद्यालय का समस्त व्यय धनाढ्य दान दाताओं के दान और भेट पर चलता था। आवास और भोजन का प्रबंध विश्व विद्यालय द्वारा किया जाता था। भिक्षु अध्यापक यहां के प्रबंध में अपना सहयोग देते थे।

पूर्व मध्य युग में मुस्लिम आक्रमणों के कारण भारत के अनेक शिक्षा केन्द्रों का विनाश हुआ जिनमें विक्रम शिला विश्व विद्यालय भी था। इस विश्व विद्यालय के चारों और बनी भव्य प्राचीर के कारण इसे दुर्ग समझ कर 1203 ई. में बख्तियार खिलजी ने यहां आक्रमण किया था। इस पूरे घटनाक्रम की जानकारी तबकात – ए – नासिरी से मिलती हैं। यहां के आधिकांश निवासी सिर मुडाए ब्राह्मण या बौद्ध भिक्षु थे जिन्हें मौत के घाट उतार दिया गया। महास्थविर शाक्य श्रीभद्र अपने कुछ साथियों के साथ प्राण बचा कर तिब्बत चले गये और वहीं रह गये। यहां के विशाल पुस्तकालय की बहुमूल्य पुस्तकें जला कर नष्ट कर दी गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय संस्कृति – डॉ प्रीतिप्रभा गोयल
2. भारतीय कला एवं संस्कृति – डॉ महेन्द्र कुमार मिश्रा
3. भारतीय संस्कृति का विकास – सत्य सेतु विद्यालंकार
4. भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का इतिहास – डॉ कालूराम शर्मा एवं डॉ. प्रकाश व्यास
5. धर्म संस्कृति एवं इतिहास – डॉ. शिवशंकर द्विवेदी
6. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास – रश्मि पाठक

मुगल मेवाड़ संघर्ष और राजपूत कूटनीति

डॉ. प्रेरणा ठाकुर *

शोध सारांश – वीरता और शौर्य के धनी मेवाड़ी राजपूतों ने मुगलों से संघर्ष के दौरान कुशल कूटनीतिज्ञता का भी परिचय दिया। राणा सांगा से लेकर राणा उदयसिंह, महाराणा प्रताप और राणा अमरसिंह तक पीढ़ी दर पीढ़ी उत्तरोत्तर कूटनीतिक चालों में वृद्धि होते हुए ही हम देखते हैं। किन्तु महान मुगलों के समक्ष कूटनीति के क्षेत्र में राजपूत एक कदम पीछे ही थे तथापि पराक्रम और देशभक्ति में तथा आज्ञाकारिता और अनुशासन में मेवाड़ की सेना अद्वितीय और बेजोड़ थी।

प्रस्तावना – राणा सांगा समकालीन उत्तर भारतीय शासकों में सर्वाधिक शक्तिशाली था किन्तु खानवा युद्ध में बाबर के समक्ष उसे हार का सामना करना पड़ा कूटनीतिज्ञता का अभाव, कमजोर गुप्तचर प्रणाली, अकुशल व्यूह रचना तथा बाबर का तोपखाना आदि के कारण शक्तिशाली योद्धा होने के बावजूद सांगा पराजित हुआ। राणा उदयसिंह ने एक व्यावहारिक नीति का पालन किया। उदयपुर जैसे सुरक्षित पहाड़ी क्षेत्र को राजधानी बनाया और मेवाड़ की धातु खदानों का भरपूर दोहन किया साथ ही मेवाड़ की आम जनता को भी सैन्य प्रशिक्षण प्रदान कर मातृभूमि की रक्षा हेतु बलिदान करने के लिये प्रेरित किया। यह उदयसिंह की कूटनीतिक श्रेष्ठता का ही उदाहरण है कि 1567 में अकबर के चित्तौड़ आक्रमण के समय राणा ने चित्तौड़ का किला छोड़ दिया।

महाराणा प्रताप जब सत्तासीन हुए तब मेवाड़ अनेक संकटों से घिरा हुआ था किंतु प्रताप ने अपनी कूटनीतिक बुद्धिमता का परिचय देते हुए छापामार युद्ध पद्धति, भीलों से मित्रता, पठानों का सहयोग प्राप्त करते हुए मेवाड़ का खोया हुआ भूभाग पुन: प्राप्त किया। इसी परम्परा को बनाये रखते हुए राणा प्रताप के पुत्र राणा अमरसिंह ने कूटनीतिज्ञता अपनाते हुए 1615 ई. में मुगल-मेवाड़ संधि की तथा मेवाड़ को नष्ट होने से बचा लिया। सदैव धर्म युद्ध के हिमायती रहे राजपूतों ने मुगलकाल में श्रेष्ठ कूटनीतिज्ञ होने का परिचय दिया।

राजपूत कूटनीति – वीरता एवं शौर्य में अद्वितीय राजपूत कूटनीति के क्षेत्र में मुगलों से एक कदम पीछे ही थे। वे कूटनीति तथा धर्मपालन के साथ संतुलन बनाकर चलना चाहते थे तथापि राजपूताना की पारम्परिक सैन्य व्यवस्था के तहत मेवाड़ के शासकों ने मेवाड़ की भौगोलिक स्थिति का पूर्ण उपयोग किया। मेवाड़ पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण यहाँ समय-समय पर दुर्ग निर्माण की परम्परा रही तथा बाद में यहाँ किसी न किसी रूप में छापामार पद्धति को ही युद्धनीति का अंग बनाया गया था।

राणा सांगा (1508-1524ई.) समकालीन शासकों में उत्तर भारत के सर्वाधिक शक्तिशाली शासक थे। उनकी शक्तिशाली सेना की विदेशी बाबर से हार ऊपरी तौर पर आश्चर्यजनक लगती है। राणा सांगा ने न तो अपने गुप्तचरों के माध्यम से बाबर की अनुशासित सेना के बारे में पता लगाया और न ही युद्ध क्षेत्र का चयन अपने तरीके से किया। सांगा ने अपने पूर्व शासकों द्वारा प्रतिपादित सफल पहाड़ी युद्ध नीति को त्याग कर अपने राज्य की सीमा से बाहर जाकर शत्रु से युद्ध करने का निर्णय किया। यही नहीं उसने युद्ध के पूर्व बयाना में डेढ़ माह का व्यर्थ ही समय गंवाया।

राणा की पराजय का कारण यही माना गया है, क्योंकि इससे बाबर को युद्ध की तैयारी का पर्याप्त अवसर मिल गया। इसके अतिरिक्त सांगा ने परम्परागत युद्ध पद्धति से ही युद्ध लड़ा उसके अस्त्र-शस्त्र भी परम्परागत थे जो आग उगलती तोपों के समक्ष बेकार सिद्ध हुए।

हम कह सकते हैं राणा उदयसिंह की सैन्यनीति में व्यावहारिकता थी जिसमें वर्तमान की कठोर आवश्यकता (जो कि चित्तौड़ के युद्ध 1567 ई. में उतरने को मना करती थी) तथा दीर्घकालीन नीति (जो मेवाड़ को शक्तिशाली बनाकर इसकी स्वतंत्रता के लिये राणा को चित्तौड़ का किला छोड़ने के लिये प्रेरित करती थी) के बीच समन्वय ओर संतुलन स्थापित करती थी। इस नीति के अनुसार ही उदयसिंह ने चित्तौड़ छोड़ पहाड़ों में अपना शिविर स्थापित किया तथा वह मेवाड़ के सारे सैन्य बल को संगठित कर सका था।

राणा उदयसिंह ने मेवाड़ की इस जन सेना का संगठन भी ठोस सामरिक सिद्धान्तों पर किया। अकबर जैसे महान योद्धा सम्राट ने मेवाड़ पर जब आक्रमण किया तो अपने सामने गाँव और जंगलों तक के लोगों को सआयुध पाया जो अपने देश धर्म व स्वतंत्रता की रक्षा के लिये सरकार के साथ प्रेम रूपी धागे से बंधे थे। इस कारण मेवाड़ की सेना जैसी आज्ञाकारिता, अनुशासन व सहयोग मुगल सेना में मिलना असंभव था।

ऐतिहासिक तथ्यान्वेषण की दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट है कि हल्दीघाटी युद्ध के पूर्व महाराणा प्रताप ने लंबे अर्से तक मेवाड़ को मुगल आक्रमण से सुरक्षित रखा जिससे पर्वतीय भाग में प्रशासनिक सुव्यवस्था कायम करने, मेवाड़ को दीर्घकालीन मुगल विरोधी संघर्ष हेतु सामरिक दृष्टि से तैयार करने तथा पर्वतीय भाग की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को युद्ध के आधार पर नियोजित करने की दृष्टि से उनको पर्याप्त समय मिला। इसका श्रेय 1572 से 1576 ई. के बीच महाराणा प्रताप द्वारा किये गये कूटनीतिक प्रयासों को जाता है। इन्हीं कूटनीतिक प्रयासों के कारण हल्दीघाटी युद्ध के बाद दीर्घकालीन मुगल विरोधी संघर्ष में प्रताप को सामरिक सफलता मिली।

अपने लक्ष्यों की पूर्ति के लिये प्रताप ने बड़ी चतुराई एवं सावधानी से प्रयास किया। यद्यपि कुछ इतिहासकार प्रताप को हठी, अदूरदर्शी तथा मेवाड़ के विध्वंस एवं पिछड़ेपन के लिये दोषी मानते हैं किन्तु वास्तव में सच्चाई यह नहीं है। मेवाड़ की स्वतंत्रता की रक्षा करने और साथ ही मेवाड़ को विध्वंस से बचाने के दोनों कार्य एक साथ करना नि:संदेह दु:साध्य कार्य था, किन्तु प्रताप ने यह कार्य कर दिखाया। यदि प्रताप अपने प्रयोजन में सफल न होता तो न मेवाड़ की रक्षा होती और न प्रताप को मेवाड़ पुनर्विजय में वह सफलता मिलती जो उसने सन् 1585-86 ई. में अवसर पाकर अपनी संचित सुरक्षित शक्ति के द्वारा एक साथ हासिल की।

प्रताप की कूटनीति की मुख्य बातें निम्नलिखित थीं –

* प्राध्यापक (इतिहास) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

1. मेवाड़ की रक्षा के लिये मुगल बादशाह के साथ किसी सम्मानजनक समझौते पर पहुँचने के लिये प्रयत्न करना।
2. अकबर के हठ के कारण यदि ऐसा समझौता संभव न हो तो उसका दोष अकबर पर रखना एवं राजस्थान में स्वतंत्रता एवं क्षात्र धर्म के रक्षक के रूप में मुगल विरोधी संघर्ष को संचालित करना।
3. संधिवार्ताओं द्वारा दीर्घकालीन संघर्ष एवं सुरक्षा की तैयारी की दृष्टि से अधिकाधिक समय तक युद्ध को टालना।
4. अपने व्यापक उद्धेश्यों एवं उच्च आदर्शो से पूर्ण संघर्ष के लिये समस्त मुगल विरोधी तत्वो, मुख्यत: उन राजपूत तत्वों को अपने साथ मिलाना जो अपने-अपने राज्यों में विद्रोह कर रहे थे।
5. आत्मरक्षा के लिये दीर्घकालीन संघर्ष को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिये सम्मानजनक संधि के लिये सदैव अपने द्वारा खुले रखना।

प्रताप ने अपने मुगल विरोधी संघर्ष को विदेशी दासता के विरूद्ध संघर्ष का स्वरूप प्रदान किया। उसने एक हद तक पठान-मुगल शत्रुता का लाभ उठाने का प्रयत्न भी किया। यहाँ तक कि मुगल सेवा को स्वीकार करने वाले शासकों एवं अधिकारियों पर भी प्रताप की नीतियों का प्रभाव पड़ा। प्रताप के प्रयत्न उसकी दूरदर्शिता, धैर्य और चतुराई के प्रमाण हैं। इन चार वर्षो में प्रताप ने जो सामरिक एवं कूटनीतिक तैयारियां की, उनके आधार पर वह आगामी दस वर्षो तक निरंतर लड़ता रह सका।

जिस भांति अकबर मेवाड़ तथा अन्य राजपूत राज्यों को छोड़कर आने वाले राजकुमारों, सरदारों तथा मंत्रियों आदि को पनाह देकर ऊँचे पद, मनसब प्रदान कर मुगल साम्राज्य के हित के लिये उपयोग करता था, उसी प्रकार प्रताप ने भी विभिन्न राज्यों के विद्रोही तत्वों को अपनी ओर मिला कर उपयोग करनेकी नीति अपनायी। बूँढी के शासक सुरजन हाड़ा द्वारा अकबर की अधीनता स्वीकार करने पर उसका पुत्र दूढा मेवाड़ आकर कई वर्षो तक प्रताप का सहयोगी बनकर मुगलों के विरूद्ध लड़ता रहा।

प्रताप ने मुगल अधीनता को स्वीकार कर लेने वाले राज्यों मुख्यत: मेवाड़ की सीमा से सटे राज्यों से अनावश्यक झगड़ा मोल नहीं लिया। उसके विपरीत उसने उनकी मजबूरियों को ध्यान में रखते हुए उनके साथ निरंतर संपर्क रख कर उनसे यथा संभव सहयोग पाने का प्रयास किया।

महाराणा प्रताप के इन कूटनीतिक प्रयत्नों के कारण प्रताप को राजपूतों से सर्वथा अलग करने और मेवाड़ को चारों ओर से घेर कर दबाने की नीति के अकबर के सभी प्रयास असफल रहे। प्रताप को न केवल राजस्थान अपितु मध्यप्रदेश, गुजरात आदि इलाकों से भी संपूर्ण सहानुभूति, नैतिक समर्थन एवं भौतिक सहायता मिलती रही। प्रताप की रणनीति की सफलता में उसकी कूटनीति ने बड़ी मदद की। वस्तुत: दोनों ही उसकी सुविचारित नीति और योजनाओं की अंग थी। महाराणा प्रताप के पुत्र राणा अमरसिंह ने भी प्रतापकालीन नीतियों का ही पालन किया उसने भी मुगल अभियान के समय आदिवासी भीलों के सहयोग को प्रताप के समान अमरसिंह ने भी जारी रखा। राणा अमरसिंह ने अपने पिता व पितामह की छापामार युद्ध नीति और अपने ही देश को उजाड़ने की सर्वक्षार नीति को भी अपनाये रखा। शाहजादा परवेज के अभियानों के दौरान रातीबाहा (रात के वक्त शाही फौजों पर हमला) द्वारा बादशाही फौज का बहुत नुकसान हुआ।

राणा अमरसिंह द्वारा जहाँगीर से की गई 1615 ई. की मेवाड़-मुगल संधि को भी अमरसिंह की कूटनीति का एक अंग माना जा सकता हैं यद्यपि अमरसिंह पर मेवाड़ को झुकाने, मुगलों के आगे घुटने टेकने जैसे आरोप लगाये जाते हैं किन्तु यह सत्य नहीं है। जो नीति अमरसिंह ने अपनायी वही उस समय की आवश्यकता थी। वास्तव में यह स्वाभिमान को बचाये रखते हुए आत्मरक्षा के लिये किया गया प्रयास था। मेवाड़ के प्रमुख सरदारों ने विचार-विमर्ष कर कुँवर कर्णसिंह के पास उपस्थित होकर कहा था कि यदि मुगलों से संघर्ष जारी रखा गया तो मेवाड़ नष्ट हो जावेगा क्योंकि खाने को अन्न और पहनने को कपड़ा नहीं है और न ही युद्ध का सामान है। एक-एक घराने की चार-चार पुश्तें मारी जा चुकी हैं, किसी के बाल-बच्चे मूसलमानों के हाथ पड़ जाते हैं तो दास-गुलाम बनाये जाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मेवाड़ की सेना, सरदारों तथा आम जनता के धैर्य तथा कष्ट सहने की सीमा पार हो चुकी थी। मेवाड़ के उत्तरी पर्वतीय प्रदेश पर शाही सेना का पूरा अधिकार हो गया था। मेवाड़ी सेना के थाने व चौकियां पहले ही महावत खाँ, अब्दुल्ला खाँ, राज बसु तथा अजीज खाँ कोका ने बरबाद कर दिया था। अत: राणा अमरसिंह द्वारा संधि के लिये तैयार होना उचित व समयानुकूल था क्योंकि संधि में राणा के उपस्थित होने पर बल नहीं दिया गया था और संधि से मेवाड़ को बहुत कुछ प्राप्त हुआ था सबसे बड़ी उपलब्धि थी मेवाड़ नष्ट होने से बच गया था। 1615 ई. में हुए इस सम्मानजनक समझौते से जो कि महाराणा अमरसिंह और जहाँगीर के मध्यम हुआ जिससे एक शांति के युग की शुरूआत हुई।

मेवाड़ के राणा राजसिंह ने जब मुगल सेना को उत्तराधिकार युद्ध में उलझे हुए देखा तो उसने मेवाड़ के खोये हुए क्षेत्रों को पुन: प्राप्त किया और मौके का लाभ उठाया, साथ ही बादशाही थानों को लूटा। मांडलगढ़, बनेड़ा, शाहपुरा, जहाजपुर, सांवर, फूलिया, केकड़ी, मालपुरे जैसे स्थानों को लूटने से उसे बड़ी समृद्धि मिली। राजसिंह ने बुद्धिमत्तापूर्वक मुगलों के विरोधी राठौड़ दुर्गादास व कुँवर अजीतसिंह का साथ दिया तथा किशनगढ़ की राजकुमारी चारूमति से विवाह कर औरंगजेब के शत्रुओं को अपना मित्र बनाकर शक्ति बढ़ायी। मेवाड़ क्षेत्र में औरंगजेब द्वारा हिन्दू मंदिरों को तोड़ने और मूर्तियों को नष्ट करने का बदला गुजरात क्षेत्र में धावे, लूट तथा मस्जिदों को तोड़ कर लिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि राजपूतकाल व सल्तनतकाल तक सिर्फ धर्म युद्ध के हिमायती रहे राजपूतों ने मुगलकाल में श्रेष्ठ कूटनीतिज्ञ होने का परिचय दिया। समयानुकूल व्यावहारिक नीति अपनाकर वे शत्रु को मित्र बनाकर संगठित करने, फूट डालने, सर्वक्षार व छापामार, रातीबाहा जैसी रक्षात्मक नीतियों के पालन के साथ धर्म व स्वाभिमान के मार्ग पर भी चलते रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मज्झयिका-शोध पत्रिका-महाराणा प्रताप अंक-14 (भाटी हुकुमसिंह) प्रताप शोध संस्थान, उदयपुर
2. बीठू सूजा -छंद रउ जैतसी-सं. (मूलचंद प्राणेश, भारतीय विद्या मंदिर-शोध प्रतिष्ठान बीकानेर-1991)
3. दासश्यामल - वीरविनोद-भाग-1, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1986
4. ओझा गौरीशंकर - उदयपुर राज्य का इतिहास-प्रथम व द्वितीय खंड-राजस्थानी ग्रंथागार-जोधपुर-1999
9. Saxena R.K. The Army of The Rajputs – Saraj Prakashan, Udaipur-1989
10. Tod James – Annales and Antiquities of Rajputana – Shyam Prakashan Jaipur, 1988

****

वास्तु परम्परा एवं मंदिर

डॉ. कैलाश राय *

शोध सारांश – भारत मंदिरो का देश कहा जाता है। भारत वर्ष में अतिप्राचीन काल से ही धार्मिक भावना से प्रेरित होकर मंदिर निर्माण करने की परम्परा प्रचलित रही है। प्राचीन काल में मंदिर धार्मिक भावना का ही स्वरूप नहीं थे, वरन सामाजिक जीवन के केन्द्र बिन्दु थे। मंदिर भारतीय संस्कृति के साकार रूप माने गये है।

प्रस्तावना – समूचे भारत देश में विभिन्न देवी-देवताओं के मंदिर आज भी पाये जाते है। उत्तर भारत में मंदिरो की संख्या कम है,क्योकि यहां नदियो की बाढ़ से तथा आक्रमणकारियों द्वारा किए गए विनाश से प्राय मंदिर नष्ट हो गए। दक्षिण भारत में अब भी मंदिरो की संख्या अधिक है। सच कहा जाए तो दक्षिण भारत में ही मंदिर वास्तु का सर्वाधिक विकसित स्वरूप दिखाई पड़ता है।

भारत में मंदिर निर्माण की परम्परा का प्रारूप बौध्द स्तूपो और चैत्यों में पाया जा सकता है। गुप्त काल में इन्हीं से प्रभावित होकर हिन्दू मंदिरों का विकास हुआ था। गुप्तकाल की यह मंदिर निर्माण-परम्परा भारत में वर्तमान समय तक बराबर चलती रही है।

भारत के हिन्दु मंदिर साधारण भवन नहीं थे। गुप्तकाल में भारतीय मनीषियों ने मंदिर को देव प्रसाद अथवा देवायतन के रूप में अभिकल्पित किया था। मंदिर तत्कालिन जीवन के केन्द्र-बिन्दु थे। वे भारतीय संस्कृति के साकार स्वरूप माने गए थे। इसलिये भारतीय हिन्दु मंदिरों को समझने के लिए भारतीय विचार जान लेना अति आवश्यक है।

मंदिर की प्रतीकात्मकता – वस्तुत: मंदिर की संकल्पना भवन के रूप में न होकर वास्तु पुरूष अथवा देवता के रूप में की गई है। इसलिये मंदिर के विभिन्न अंग पुरूष-अंगो के समान कल्पित किए गए है, जैसे-चरण की (अधिष्ठान या चबूतरा), पाद जंघा, कटि, वक्ष, स्कन्ध, ग्रीवा, ललाट, मुख,नासिका, शिखा (शिखर) आदि (1) जिस प्रकार जीवात्मा के बिना निष्प्राण होता है, उसी प्रकार देवता (देवमूर्ति) की प्राण-प्रतिष्ठा ही मंदिर को देवालय समझा जाता है।

मंदिर को राजराज भी कहा गया है। इसलिये राजा के समान आसन, पादपीठ, छत्र, राजगृह (गर्भगृह), परकोटे तथा राज-वंदना (देवोपासना) की परंपरा मंदिरों से जुड़ गई है।

मंदिर की परिक्रमा ब्रह्माण्ड की परिक्रमा के तुल्य मानी गई है, तभी अष्ट दि पाल, देव, दंनुज,मनुष्य,किन्नर, गंधर्व, पशुपती तथा नाना प्रकार के जीव-जन्तु मंदिर की दीवारों पर विराजते है। मंदिरो के पखों पर लगी गंगा-यमुना की मूर्तियॉ मंदिर में पवित्र होकर प्रवेश करने का प्रतीक है। चौड़े आधार के ऊपर नुकीला सूक्ष्म शिखर संभवत: जगत की स्थूलता से ज्ञान की सूक्ष्मता की ओर जाने का संकेत है। इस प्रकार हिन्दु मंदिर एक जीवंत और अनंत देवीय भावना का प्रतीक है।

मंदिर वास्तु का विकास – हिंदु मंदिर की वास्तु योजना तत्कालीन सामाजिक जीवन की एक महान घटना थी, जिससे संपूर्ण जनमानस प्रेरित और प्रभावित था। मंदिर केवल पूजा गृह ही नहीं, सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन के केन्द्र बन गए थे। इन मंदिरो के चारो और गांव और पुर बस गये थे और मंदिर ही उनकी सभी गतिविधियों के केन्द्र थे। इस प्रकार भारतीय मंदिर वास्तु सामाजिक जीवन की धुरी थे।

भारतीय वास्तुकला के उद्भट विद्धान पर्सी ब्राउन ने इस युग में मंदिर के रूप में वास्तुकला के विकास के लिये कई तत्वों का महत्त्व स्वीकार किया है। इनमें मुख्यत: समूचे देश का एक सशक्त साम्राज्य के रूप में संगठन एवं विद्धान तथा सहिष्णु राजाओं द्वारा प्रदत्त संरक्षण और सहायता प्राप्त थे। जिनके फलस्वरूप जनमानस में आत्मविश्वास और तद्जनित क्रियाशीलता का विकास हुआ परिणामस्वरूप सनातन हिन्दु धर्म की पुनर्प्रतिष्ठा हुई और एक से बढ़कर एक हिन्दु मंदिरो का निर्माण सभव हुआ है।

डॉ.वासुदेवशरण अग्रवाल ने भारत में मंदिर-वास्तु के उद्भव और विकास पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है। उनके अनुसार भारत में मंदिरो का विकास कई चरणों में हुआ था। प्रारंभ में खुले स्थान में प्राय: वृक्ष के नीचे केवल एक चत्वर या चबूतरा ही पूजा स्थल हुआ करता था जहां मंत्र अथवा पुष्प, जल, मिष्ठान, धूप-दीप आदि से देव पूजा की जाती थी। पृथ्वी माता, यक्षों अथवा नागों के मंदिर प्रारंभ में रहे होंगे। यक्ष सदन का उल्लेख ऋग्वेद में पाया गया है।

विकास के द्वितीय चरण में उस चबूतरे को एक वेदिका से घेर दिया गया था। यह वेदिका प्रारंभ में बास और लकड़ी से तथा बाद में पत्थर से बनाई गई थी। चत्वर तथा वेदिका वाले ऐसे मंदिरो की पहचान हम नागरी की नारायण-वाटिका (विष्णु मंदिर) से कर सकते है। जिसमें पूजा शिला प्रकार था। इस नारायण-वाटिका का निर्माण तृतीय शती ईपू.में हो चुका था। संभवत: इसी से प्रेरणा लेकर कालांतर में बौध्द तथा जैन स्तूपों में वेदिका का प्रयोग किया गया था।

आगे चलकर इष्ट देवों की प्रतिमाओ का अंकन प्रारंभ हो गया। बुद्ध-बौधिसत्व, जैन तीर्थकर तथा शिव-विष्णु, वासुदेव की प्रतिमाओं की अर्चना के निमित्त गड़ा जाने लगा। इन प्रतिमाओं को वर्षा तथा धूप से सुरक्षित रखने के लिये इनके ऊपर छत्र लगाना, प्रारंभ हुआ। प्रारंभ में छत्र गोल और चौकोर दोनों होते थे। इन्हे मांगलिक चिन्हों से तथा बादलों से अंलकृत किया जाता था। स्तम्भो पर टीके छत्रों के इस मण्डप-स्वरूप ने ही गर्भगृह को जन्म दिया और स्तम्भो का स्थान दिवारों ने ले लिया। इस प्रकार चबूतरे पर एक कक्ष के रूप में मंदिर का स्वरूप प्रकट हुआ जिसके भीतर देव-प्रतिमा की प्रतिष्ठा

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.) भारत

थी। यह मंदिर विकास का तृतीय चरण कहा जा सकता हैं। इस चरण का प्रतिनिधित्व करने वाला चतुर्थ शताब्दी में सॉची में बना गुप्त मंदिर सं.17 है। यह मंदिर सादी दिवारों का एक चौकोर कक्ष है। (गर्भगृह) जिसके समक्ष स्तभों पर टिका एक बरामदा है। इसकी छत समतल है।

इसके बाद गुप्तकाल में (चतुर्थ से छटी शताब्दी ई.तक) मंदिर के विभिन्न अंगों का विस्तार और विकास हुआ।

मंदिर के मुख्य अंग-

1. **जगती या अधिष्ठान-** जगती वह चबूतरा था जिसके ऊपर मंदिर का निर्माण किया जाता था। यही मंदिर का भाग होता था। मंदिर पर जाने के लिये जगती में सोपान (सीढ़ियां) बनाई जाती थी। जैन तथा बौध्द स्तूपो की वेदिका के स्थान पर जगती को ही विकसित किया गया था।

2. **गर्भगृह -** गर्भगृह मंदिर का मुख्य कक्ष था जिसमें देव-प्रतिमा की स्थापना की जाती थी। यह गर्भगृह प्राय: चौकोर होते थे। प्रारंभ में गर्भगृह की दीवारे भीतर और बाहर दोनों और सादी होती थी , किन्तु कालांतर में भीतर-बाहर ताको में विभिन्न देवी-देवताओं की प्रतिमाएं रखी जाने लगी और बाहरी दिवारों पर नाना प्रकार के अलंकरण भी किए जाने लगे। इनमें देवी-देवताओ के अतिरिक्त किन्नर-गन्धर्व, अप्सराएं, मांगलिक मिथुन, पशु-पक्षी और लता गुल्म आदि मुख्य अलंकरण थे। आगे चलकर बाहर की दिवारों में कई-कई मोड दिए जाने लगे और मंदिर का बाहरी रूप कई कोणवाला होता गया। कई-कई मोड़ की दिवारो वाले गर्भगृह अथवा शिखर को उन मोड़ो की संख्या के आधार पर त्रिरथ, पंचरथ एवं सप्तरथ कहा जाता था। (5)

3. **प्रवेश द्वार -** प्रारंभ में प्रवेश द्वार साधारण होता था। इसके दोनों पखों में गंगा और यमुना की मूर्तियां स्थापित रहती थी। गंगा और यमुना भारत की पवित्र नदियां है। मंदिर में प्रवेश के पहले स्नान द्वारा पवित्र होने की भावना ही इन मूर्तियों से प्रकट होती है। आगे चलकर ये प्रवेश द्वार अत्यन्त भव्य बनने लगे थे। इनमें कई द्वार शाखाए बनाई जाने लगी थी। पद्म और शंख मांगलिक चिन्हो को प्रवेश द्वार पर बनाए जाने का उल्लेख कालिदास ने मेघदूत में किया है। द्वरोपान्ते लिखितव प्रषे शंखपद्यो च दृष्टवा। (2)

4. **मण्डप-** प्रांरभ में गर्भगृह के सामने एक छोटा सा स्तम्भयुक्त मण्डप होता था जो प्राय: तीन और से खुला रहता था। आगे चलकर यह बरामदा गर्भगृह के चारों और भी बनाया जाने लगा संभवत: इसका मुख्य कारण मंदिर की प्रदक्षिणा को सुगम और सुविधाजनक बनाने के लिये किया गया होगा और फिर गर्भगृह के आगे विशाल मंडप बनाए जाने लगे जो सभा कक्ष के रूप में प्रयोग किये जाते थे। पूजा के समय भक्तगण उस मण्डप में एकत्र होते थे (6)

5. **शिखर-** गर्भगृह की दिवारों का ऊपरी भाग स्कन्ध कहलाता था। गर्भगृह का अभ्यांतर तो छत से बंद हो जाता था, किन्तु बाहर गर्भगृह की दिवारों के कोणों के अनुरूप शिखर बनाया जाने लगा। यह शिखर पहले छोटा बनता था, परन्तु फिर अधिक ऊँचा होता गया प्राय: दो शिखर होते थे-एक गर्भगृह के ऊपर अधिक ऊँचा और दूसरा मण्डप के ऊपर से कम ऊँचा वाला गर्भगृह के ऊपर शिखर शीर्ष पर जाकर आमलक, कलश और पताकायुक्त छत्र से अलंकृत किया जाता था। वास्तु कलश के मूर्धन्य विद्धान कृष्णदेव की मान्यता है कि चौड़े, आधार और नुकीले शिखर वाले मंदिर जगत की स्थूलता और ज्ञान की सूक्ष्मता के सम्मिलित स्वरूप है यह शिखर हमें सांसारिकता से ऊपर उठने का उपदेश देता है। (3)

कुछ विद्धानों का अनुमान है कि शिखर की कल्पना मनुष्य की पर्वतों की चौटियों, सघन वृक्षों और समाधिस्थ ऋषि-मुनियों की आकृतियों से प्राप्त होती है। कन्दराओं में रहने वाले प्रारंभिक मानव ने पर्वत की गगनचुंबी चोटियों को ही ईश्वर का निवास स्थान समझा था। आगे चलकर जब मनुष्य पर्वत की कन्दराओं को छोडकर मैदानो में आया तो देवी सत्ता का आकार उसे उन सघन वृक्षों की शिखराकार ऊँचाई दिखाई दिया जिसके स्वादिष्ट फल उसके आहार बने और जिसकी शीतल छाया में उसने तपती धूप में शरण पाई (4)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.वासुदेव शरण अग्रवाल- भारत सावित्री।
2. महाकवि कालिदास-मेघदूत
3. श्री नीलकण्ठ शास्त्री। एहिस्ट्री आफ साउथ इंण्डिया
4. श्री सुमानकर-ऊन का शिल्प वैभव
5. श्री मनोहर निगम-नवगृह मंदिर खरगोन।
6. महेश्वर के महत्वपूर्ण शिलालेख स्मारिका अंक। डॉ.शिवनारायण यादव

****

हिन्दी साहित्य के आलोक "चन्द्रगुप्त" ऐतिहासिक उपन्यास जैन सम्राट चन्द्रगुप्त के विशेष संदर्भ में

डॉ. गणेश लाल जैन *

प्रस्तावना – साहित्य के दर्पण में समाज प्रतिबिम्बित होता है। प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिम्ब होता है। स्पष्ट है कि जनता की चित्तवृत्तियों के परिवर्तन होने से साहित्य में भी परिवर्तन होता है। साहित्य में उस देश व समय की समसमायिक घटनाओं सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक सांस्कृतिक विचार धाराओं का समावेश होता है।

साहित्य शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है जिसमें पहला शब्द समाज तथा दूसरा शब्द हित अर्थात वह साहित्य जिसमें समाज का हित होता है। उसे साहित्य कहा जाता है। साहित्य में तत्कालीन परिस्थितियों एवं घटनाओं का वर्णन किया जाता है।

इतिहास में चन्द्रगुप्त – 'चन्द्रगुप्त मौर्य की गणना भारत के महानतम शासकों में की जाती है। चन्द्रगुप्त मौर्य प्रथम भारतीय राजा था जिसने देश के एक विशाल भूखण्ड पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। उसके साम्राज्य की सीमा उत्तर–पश्चिम में ईरान की सीमाओं से मिली हुई थी। वह पहला भारतीय सम्राट था जिसने उत्तरी भारत को राजनैतिक दृष्टि से एकबद्ध करने के बाद, विंध्यपर्वतमालाओं के पार दक्षिणी भारत में भी अपने राज्य का विस्तार किया और इस प्रकार उत्तर और दक्षिण भारत को एक सार्वभौम शासक की छत्रछाया में लाने का श्रेय प्राप्त किया। उसने भारत को यूनानी आधिपत्य से मुक्त कराया। भारत के इतिहास में चन्द्रगुप्त ने अपने छोटे से शासनकाल में इतनी अधिक सफलता प्राप्त की।'[1]

चन्द्रगुप्त मौर्य के इतिहास को जानने के स्रोत – 'चन्द्रगुप्त मौर्य के इतिहास के सम्बन्ध में विलियम जोन्स ने खोज की थी। यूनानी लेखकों द्वारा सम्बोधित 'सैंड्रोकोट्टस' तथा 'एड्रोकोट्टस' भारतीय शासक चन्द्रगुप्त मौर्य ही है। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य और सिकन्दर महान समकालीन थे।'[2]

'यूनानी शासक सेल्यूकस का राजदूत मेगास्थनीज चन्द्रगुप्त के काल में भारत आया और उसके द्वारा रचित पुस्तक इण्डिका में चन्द्रगुप्त मौर्य और उसके काल से सम्बन्धित कई विषयों की जानकारी प्राप्त होती है। यूनानी लेखक स्ट्रेथो, डियोडेरस, टिलनी, एरियन, ब्लूटार्क और जस्टिन की कृतियों से चन्द्रगुप्त के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। यूनानी स्रोत के अतिरिक्त ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन साहित्यो में चन्द्रगुप्त के जीवन व तत्कालिक समय की जानकारी मिलती है। ब्राह्मण स्रोतों में पुराण, कौटिल्य का अर्थशास्त्र तथा क्षेमेन्द्र की वृहत्कथा मंजरी, बौद्धग्रन्थों में दीपवंश महावंश, महावंश टीका तथा महाबोधिवंश, जैन साहित्य में भद्रबाहु का कल्पसूत्र तथा हेमचन्द्र का परिशिष्ट पर्वत चन्द्रगुप्त मौर्य के इतिहास पर प्रकाश डालते है। पुरातात्विक स्रोतों में अशोक के अभिलेख सर्वाधिक महत्वपूर्ण साक्ष्य है जो शिलाओं और स्तंभों पर उत्कीर्ण मिलते है'[3] जिससे चन्द्रगुप्त के इतिहास के बारें में जानकारी मिलती है।

वंश परिचय – चन्द्रगुप्त के वंश के संबंध में 7 पुराणों तथा संस्कृत साहित्य के आधार पर कुछ विद्वानों ने उसे निम्न शुद्र–कुलोत्पन्न घोषित किया है। 'ढुढिराज' जैसे ब्राम्हण–परम्परा के टीकाकार और विष्णु पुराण के भाश्यकार रत्नगर्भा ने चन्द्रगुप्त को मुरा नाम की स्त्री का पुत्र बतलाया है और मुरा को शूद्र राजा नन्दराज की पत्नि होना लिखा है। मुद्राराक्षस और बृहत्कथा और दो अन्य प्राचीन ब्राम्हण ग्रन्थों में भी मौर्या का नन्दवंश से सम्बन्ध बताया गया है। जस्टिन ने चन्द्रगुप्त का उल्लेख साधारण कुलोत्पन्न व्यक्ति के रुप में किया है। इससे यह ज्ञात होता है कि चन्द्रगुप्त किसी राज–घराने में उत्पन्न नहीं हुआ था। मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्त के लिए प्रयुक्त 'वृषक' और 'कुलीन' सम्बोधनों के आधार पर भी उसे शूद्र और नीच कुल का होना अनुमानित किया गया है। महावंश टीका में चन्द्रगुप्त को मौर्य नगर का राजवंश का राजकुमार बताया है। महाबोधिवेश में यह भी कहा गया है कि चन्द्रगुप्त का जन्म क्षत्रियों के मोरिय नामक वंश में हुआ था। जैन ग्रन्थ परिशिष्टपर्वन् के अनुसार चन्द्रगुप्त मयूर पोषकों के सरदार की लड़की का लड़का था।

उपर्युक्त साक्ष्यों के अवलोकन से स्पष्ट है कि चन्द्रगुप्त का जन्म साधारण कुलीन वंश में हुआ था।

चन्द्रगुप्त का इतिहास – 'महावंश टीका के अनुसार चन्द्रगुप्त का जन्म मोरिय नामक क्षत्रिय जाति में हुआ था, जिनका शाक्यों के साथ सम्बन्ध था। चन्द्रगुप्त माता के गर्भ में ही था कि एक शक्तिशाली राजा ने मोर्य नगर पर चढ़ाई की और मोरिय राजा को मार डाला। गर्भवती मौर्य रानी अपने भाईयों के साथ पाटलिपुत्र जाकर रहने लगी। वहीं उसने चन्द्रगुप्त को जन्म दिया। सुरक्षा की दृष्टि से इस अनाथ बालक को उसके मामाओं ने एक गोशाला में छोड़ दिया, जहाँ एक ग्वाले ने उसका पालन–पोषण किया और जब वह बड़ा हुआ तो एक शिकारी के हाथ बेच दिया। एक दिन चन्द्रगुप्त गांव के अन्य बालकों के साथ राजक्रीड़ा कर रहा था स्वयं राजा बनकर और अन्य बालकों को अपने अधिकारी नियुक्त कर व अपराधियों को दण्ड देने का कार्य कर रहा था। चाणक्य ने जब चन्द्रगुप्त को देखा तो वह उसे 1000 कार्षापण देकर उसे खरीद लिया।'[5] चाणक्य ने उसे राजनैतिक व सैनिक कुशलता में प्रशिक्षित किया। क्योंकि वह नंद वंश को नष्ट करना चाहता था।

'चाणक्य चन्द्रगुप्त की सहायता से नंद वंश के समूल नष्ट करने में व्यस्त थे, भारत के उत्तरी–पश्चिमी प्रांत पर सिकन्दर का अधिपत्य था। चन्द्रगुप्त बड़ा महत्वकांक्षी था। लेखक ब्लूटार्क के अनुसार चन्द्रगुप्त सिकन्दर महान से मिला था। चन्द्रगुप्त ने सिकन्दर को नंद साम्राज्य पर आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया था। परन्तु वह न हो सका। इसके विपरीत चन्द्रगुप्त

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

ने धृष्टापूर्ण व्यवहार से खिन्न होकर सिकन्दर ने उसकी हत्या के लिए आदेश दिया। परन्तु चन्द्रगुप्त ने वहां से भाग कर अपनी जान बचाई। फिर उसने यूनानी सेना का संगठन व युद्ध प्रणाली का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आगे चलकर चन्द्रगुप्त ने इस ज्ञान का उन्हीं के विरुद्ध उपयोग किया। उसने सभी यूनानी क्षत्रियों का अन्त कर दिया। पंजाब व उत्तरी पश्चिमी भारत पर ही विजय प्राप्त की थी। सिकन्दर जब अपने देश को लौट रहा था उसे यूनानी क्षत्रप फिलिप की हत्या का दुखद सन्देश सुनना पड़ा। मार्ग में ही सिकन्दर की असामयिक मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके सेनापतियों में साम्राज्य विभाजन हेतु युद्ध छिड़ गया। चन्द्रगुप्त के सेनापतित्व में भारतीयों ने यूनानियों से युद्ध किया। उसने यूनानी क्षत्रपों का अंत कर अपने को सम्राट घोषित किया।

मगध में नन्द वंश का शासक धनानन्द राज्य कर रहा था उसका आधिपत्य एक विशाल भू-खण्ड पर फैला हुआ था। इक्ष्वाकु, पांचाल, काशी, कलिंग अश्मक मिथिला शूरसेन, कुरु, हैहक और वीतिहोत्र जातियाँ उसके साम्राज्य में सम्मलित थी। इस विशाल साम्राज्य के पतन के तीन कारण थे - (1) नन्दो का शुद्र जाति का होना। (2) नन्दो द्वारा जनता पर अनेक कर लगाना। (3) नन्दो का निर्दयी और अत्याचारी होना। धनानन्द जनता में अप्रिय था। जनता उससे छुटकारा पाने के लिए उत्सुक थी चन्द्रगुप्त को सैनिक तत्वों की अपेक्षा नैतिक तत्व से कहीं अधिक सहायता मिली। नन्द राजा और चन्द्रगुप्त के बीच भीषण युद्ध हुआ जिसमें असंख्य सैनिक मारे गये थे। चन्द्रगुप्त इस युद्ध में विजयी रहा और नन्द राजा की राजधानी पाटलिपुत्र पर उसका अधिकार हो गया।

सैल्यूकस ने भारत की सीमा कोट पार किया उसे संगठित व सुशिक्षित मौर्य सेना से युद्ध करना पड़ा। इसमें सैल्यूकस पराजित हुआ और उसने चन्द्रगुप्त के साथ संधि करनी पड़ी। इसमें पूर्वी प्रदेश भारतीय नरेश को देने पड़े। दोनों की मित्रता को सुदृढ़ बनाने हेतु वैवाहित सम्बन्ध स्थापित किये। सैल्यूकस ने अपनी पुत्री का विवाह चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ कर दिया।

पाटलिपुत्र के राजा चन्द्रगुप्त राज्य शासन का भार अपने बेटे को सौंप कर जैन मुनि भद्रबाहु का शिष्य बन गया। वे मैसूर राज्य श्रवण बेलगोला स्थान पर ठहरे। भद्रबाहु की वहॉ मृत्यु के बाद भी चन्द्रगुप्त मुनि वहॉ तपस्वी का जीवन व्यतीत करता रहा और अन्त में वही एक जैन साधु की भाँति अन्न जल छोड़कर कैवल्य को प्राप्त हुआ।

नवीनतम (उपन्यास) जैन सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के आलोक में चन्द्रगुप्त का चित्रांकन - जैन मुनि 'श्री प्रणम्यसागर' कृत नवीनतम ऐतिहासिक उपन्यास 'जैन सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य' सन् 2013 में भारतीय ज्ञानपीठ नईदिल्ली से प्रकाशित हुआ है । इस उपन्यास में जैन मुनि श्री प्रणम्यसागर ने जैन पुरातत्व, शिलालेख, पाषाण-फलक, विविध इतिहास ग्रंथों एवं जैन शास्त्रों-पुराणों के आधार पर प्रसिद्ध सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के विविध पक्षों का रोचक वर्णन किया है । इस कथानक में चन्द्रगुप्त के साथ-साथ चाणक्य का जीवन-दर्शन भी समाहित है । चाणक्य के अभ्युदय तथा चाणक्य द्वारा एक महान सम्राट की खोज इस उपन्यास की दो प्रमुख घटनाएं तो है ही, अंतिम श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु के सम्पर्क में आकर सम्राट के हृदय परिवर्तन और मुक्ति के पथ पर चल पड़ने की रोचक कथा को लेखक ने उपन्यास का विषय बनाया है ।

इस उपन्यास की विशिष्टता है कि इसमें मुनिश्री ने चाणक्य के माध्यम से ही चन्द्रगुप्त का चरित्र-चित्रण किया है । 'चाणक्य को जब चन्द्रगुप्त की याद आती, उसने चन्द्रगुप्त को नौ वर्षो की उम्र में देखा। वह होनहार बालक जो राजा के गुणों से अलंकृत था। राजा बनने की उत्कृष्ठा उसके मस्तिष्क में बचपन से ही थी। ग्राम भैंस, चराने वाले इस साधारण से ग्रामीण बालक ने अपनी प्रतिभा से 'राजकीलम' नामक एक खेल का अविष्कार किया। इस खेल में वह राजा बनता था स्वयं उच्चतम सिंहासन पर बैठता था। राज्यसभा लगाता था। मन्त्री, अध्यक्ष, कार्यवाहकों की नियुक्ति स्वयं करता था। पहली बार इन ऑखों ने उसे ऐसी राज्यसभा का संचालन करते हुए देखा था। गॉव के बच्चों के बीच बैठा वह अत्यन्त साहसी राजपुत्र सा शोभित होता था। उसके चेहरे के अलौकिक तेज को देखकर मुझे उसकी उच्च कुलीनता का पता लग गया था। बाद में पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि इस बालक चन्द्रगुप्त का जन्म मोरिय नामक क्षत्रिय जाति में हुआ था। चन्द्रगुप्त का पिता इस मोरिय जाति का मुखिया था । यह जाति धीरे धीरे अपनी जन्मभूमि छोड़कर अन्यत्र प्रदेश पर एक झगड़े में मारा गया। पिता की मृत्यु उपरान्त परिवार अनाथ हो गया। अबला विधवा मॉ अपने भाई के घर पाटलिपुत्र चली गयी यहीं पर चन्द्रगुप्त का जन्म हुआ। कुछ दिन उपरान्त माँ की मृत्यु भी हो गई तो उसके मामाओं ने इसे एक गोशाला में छोड़ दिया। एक गड़रिये को वह बालक मिल गया। उसने पुत्र की तरह उसका लालन-पालन किया। जब वह बड़ा हो गया तो एक शिकारी को उसके बेच दिया। उस शिकारी ने उस पुत्र को गाय-भैंस चराने वाले को बेंच दिया उन्हीं दिनों वह गॉव के लड़को के साथ राज सत्ता का खेल खेला करता था एक हजार कार्षापण देकर उसे खरीदा था उसे तक्षशिला विद्यापीठ में पढ़ाया। उसे सभी विधाओं एवं कलाओं में पारंगत कर दिया।'[7] वह सैनिक कला में भी निपूर्ण हो गया।

'चन्द्रगुप्त में सैन्य संगठन की एक अद्भुद क्षमता थी। सम्राट सिकन्दर ने पंजाब के स्थानों पर आक्रमण किया। देशभक्ति की भावना से उस समय के छोटे-छोटे गणतांत्रिक राजाओं ने उससे खूब संघर्ष किया, लेकिन सफल नहीं हुए। उसी समय चन्द्रगुप्त ने चाणक्य की रणनीति से शिक्षा लेकर इन राज्यों की अपनी एक सेना बनायी। चन्द्रगुप्त के नेतृत्व में सेनानी जवान सिकन्दर के आक्रमण से प्रतिरोध की शक्ति बढ़ाने लगे। सिकन्दर ने चन्द्रगुप्त नाम सुना तो उसे मरवा डालने का प्रयास किया। सिकन्दर को चन्द्रगुप्त की धृष्टता पर उस समय क्रोध आया, जब चन्द्रगुप्त अपनी सेना लेकर सिकन्दर से युद्ध करने की योजना बना रहा था। सिकन्दर ने चन्द्रगुप्त को मारने की आज्ञा दे दी। चन्द्रगुप्त अपनी जान बचाकर वहॉ से भाग निकला।'[8]

'सिकन्दर ने अपने विजय स्थानों को सुरक्षित करने के लिए उन्हें यूनानी क्षत्रपों में विभाजित कर दिया था। सिन्धु नदी के पूर्वी और पश्चिमी क्षेत्रों में यूनानी भारत की नींव डाली। पश्चिमी क्षेत्र की प्रशासन व्यवस्था तीन यूनानी क्षत्रपों को सौंप दी और पूर्वी क्षेत्र की प्रशासन व्यवस्था भारतीय क्षत्रपों को सौंप दी।

सिन्धु नदी के पश्चिम का भाग 'निकानोर' यूनानी क्षेत्र के हाथों में था। सिकन्दर से बदला लेने के लिए चन्द्रगुप्त उत्तेजित था। उसे मरवा डालने के लिए सिकन्दर ने जो प्रयास किया उसके प्रतिरोध की ज्वाला चन्द्रगुप्त के हृदय में जल रही थी। आखिरकार चन्द्रगुप्त ने 'निकोनार' को मारने की योजना बनायी। चन्द्रगुप्त ने भारतीय शासकों को भड़काया और देश द्रोहियों से निपटने की आग उनके अन्दर सुलगा दी। नतीजा यह हुआ कि 'निकोनार' मारा गया।

कुछ समय बाद चन्द्रगुप्त ने एक और यूनानी प्रशासक 'फिलिपय की हत्या करवा दी। फिलिप बहुत प्रभावशाली और अनुभवी यूनानी शासक था। फिलिप की मौत के बाद यूनानी सेना घबराने लगी। इधर सिकन्दर था कि आगे बढ़ता ही जा रहा था।'[9]

'यूनानी अब 'सैंड्रोकोट्स' अर्थात चन्द्रगुप्त के नाम से भयभीत होने लगे। सिकन्दर भारत के मध्यवर्ती क्षेत्र की ओर आगे बढ़ रहा था। पीछे वह जहॉ जहॉ पर यूनानी क्षत्रपों को नियुक्त करके गया था, उसमें से मुख्य क्षत्रपों की मृत्यु हो चुकी थी। बचे हुए यूनानी सैनिक अपने देश को लौटने के लिए तैयार होने लगे। सिकन्दर के साथ रहने वाली सेना युद्ध करते-करते थक चुकी थी। जब उन्हें 'निकोनार' और 'फिलिपय' जैसे मुख्य क्षत्रपों की मृत्यु का समाचार ज्ञात हुआ तो उनका मनोबल और टूट गया। अन्ततः सिकन्दर को वापस लौटना पड़ा। वापस लौटते ही रास्ते में उसकी मृत्यु हो गयी। उसके विश्व-विजय का सपना अधूरा ही रह गया।

सिकन्दर की सहसा मृत्यु के बाद चन्द्रगुप्त को राहत मिली। अब उसने अपना लक्ष्य बदल लिया। जिस नन्द राजा का अन्त करने का संकल्प लेकर चला था, अब उसके सामने पुनः वही लक्ष्य था जो चाणक्य को साथ लेकर पूरा करना था।'[10]

'चाणक्य ने चन्द्रगुप्त के सैन्याधिकार और कुशल यौद्धा के समक्ष घनानन्द को हटाने के वैसे ही प्रयास किये जैसे श्रीकृष्ण ने अर्जुन की सहायता करके दुर्योधन को हराया। चन्द्रगुप्त के युद्ध दाक्षिण्य और शस्त्रविद्या की प्रवीणता से घनानन्द की सेना घबराने लगी ।'[11] अन्ततः चन्द्रगुप्त ने घनानन्द को हराकर पाटलिपुत्र पर अधिकार जमा लिया।

'पाटलिपुत्र का सम्राट चन्द्रगुप्त बनेगा' यह उद्घोषणा हुई और राजसिंहासन पर राज्याभिषेक कराने के बाद चाणक्य का जीवन में एक अपूर्व शान्ति और ऑखों में अतीव उल्लास दिखाई दे रहा था। एक कुशल शासक के गुणों में चन्द्रगुप्त को पारंगत करके चाणक्य स्वयं एक प्रवीण पाण्डित्य को धारण करने वाले पाटलिपुत्र के राजमंत्री के रुप में प्रतिष्ठित हो गये।'[12]

इस तरह चन्द्रगुप्त के अन्दर कर्मठता, कुशल सेनापतित्व, राजनयिक उच्च आदर्शो का पालन, चरित्र पराण्यता, न्यायप्रियता, साहस, कृतज्ञता, गुण-पूज्यता, उन्नत-मानसिकता, सजगता, कठोरता, सहजता का एकाभास और योग्य प्रबन्धक के समस्त गुणों का भंडार प्रकट होने लगा।

गुरू भद्रबाहु से दीक्षा पश्चात् चन्द्रगुप्त का चित्रांकन 'अब हम लोग पास में एक पहाड़ी स्थान के लिए गमन करेंगे। श्रवणबेलगोल की सुरम्य पर्वतों पर बनी गुफाओं में मेरी सल्लेखना की पूर्णता होगी। वहॉ धर्मध्यानपूर्वक आराधना करने में आप और हम दोनों को सुविधा होगी। मुनि चन्द्रगुप्त ने गुरु के साथ विहार किया और कुछ ही दिनों में श्रवणबेलगोल पर्वत पर पहुँच गये। वहीं पर एक गुफा में मुनि चन्द्रगुप्त ने गुरुदेव की निरन्तर सेवा साधना करते हुए कायक्लेश तप को दोनों मुनिराजों ने सहन किया। आत्मध्यान में निश्चल गुरु ने द्रव्य-श्रुत को भाव-श्रुत में परिणत किया। वह निश्चय से श्रुतकेवली बन गए और आत्म धर्म में स्थिति से आत्मस्वभाव में ही पूर्णतः स्थित हो गए। शरीर निश्चेष्ट हो गया और रत्नत्रय से सहित हो आत्मा ने स्वर्ग लोक के लिए गमन कर दिया।

गुरु के वियोग में चन्द्रगुप्त मुनि नितान्त अकेले रह गये। गुरु के रत्नत्रय पवित्र कलेवर को उन्होनें एक शिलातल पर स्थापित कर दिया। इधर गुफा में आकर उन्हीं चरणों का निरन्तर ध्यान करके वही स्थित रहें।'[13]

'इधर मुनि चन्द्रगुप्त गुरु चरणों का हृदय में ध्यान करते हुए सम्पूर्ण आस्रवों का संपट करके आत्मसाधना में लवलीन थे। उनके चित्त में संसार, भोग शरीर की स्पष्टता की कोई भी लहर उत्पन्न नहीं होती थी। वह गुरु के समाधि स्थल पर पहुँचकर चतुर्विध आराधना को भाव सहित भाते रहते थे। णमोकार मन्त्र के सद्ध्यान में दत्तचित्त रहने वाले मुनिराज ने उसी श्रवणबेलगोल पर्वत की गुफा में गुरु की तरह निस्पृहवृत्ति से चैतन्य चमत्कृत आत्मा को देह से पृथक करने के लिए सल्लेखनामरण धारण किया। विशिष्ट कायक्लेश तप से निदान रहित होकर सम्यक्त्व की विशुद्धि को बढ़ाया। सतत अप्रमत्त भाव से मन को निर्भ्रन्ति बनाए रखा और आयुकर्म की प्रत्येक कणिका को रत्नत्रय से कर्म निर्जरा का साधन बनाकर सार्थक किया। श्रवणबेलगोल के कटवप्र पर्वत से इस पार्थिव देह का त्याग कर विशुद्ध परिणामों से समाधिमरण अंगीकार करके चन्द्रगुप्त मृत्युंजयी बन गये। सम्राट चन्द्रगुप्त मुनि की समाधि के उपरान्त इस पर्वत का नाम 'चन्द्रगिरी' पर्वत पड़ गया।

इसी 'कटवप्र' पर्वत पर भद्रबाहु ऋषिराज ने अपने जीवन के अन्तिम साधना काल को व्यतीत किया। इसके साथ ही अनेक ऋषिराज इस भूमि से सल्लेखना की पवित्र आराधना को साधते रहे इसलिए इस पर्वत का नाम 'ऋषिगिरी' भी है। गुरु भक्ति के अनुपम उदाहरण मुनि चन्द्रगुप्त जयवन्त है। निर्दोष श्रामण्य को धारण करने वाले मोक्षाभिलाषी मुनि चन्द्रगुप्त सदैव श्रमणों के लिए प्रेरणास्पद हो।'[14]

'मौर्य साम्राज्य के श्रेष्ट शासक आत्मानुशासक मुनि चन्द्रगुप्त इतिहास में सदैव 'प्रणम्य' हो।'[15]

निष्कर्षत - चन्द्रगुप्त मौर्य का साम्राज्य हिन्दुकुश पर्वत मालाओं से बंगाल तक और हिमालय से मैसूर राज्य तक फैला हुआ था। चन्द्रगुप्त राजनैतिक और सैनिक सफलताऍ काफी महत्व की है। वह एक ऐसे साम्राज्य का निर्माता था, वह युद्ध में जितना स्फूर्तिवान था शान्ति के काल में वह उतना ही कर्मठ था। वह एक कुशल सेना नायक था। वह अपनी जनता के सुख व समृद्धि के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता था। अपने जीवन के अंतिम दिनों में श्रवण बेलगोल के कटवप्र पर्वत से इस पार्थिव देह का त्याग कर विशुद्ध परिणामों से समाधिमरण अंगीकार करके चन्द्रगुप्त मृत्युंजयी बन गये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिवकुमार गुप्त कृत प्राचीन भारत का इतिहास पृ 183
2. शिवकुमार गुप्त कृत प्राचीन भारत का इतिहास पृ 183
3. शिवकुमार गुप्त कृत प्राचीन भारत का इतिहास पृ 184
4. शिवकुमार गुप्त कृत प्राचीन भारत का इतिहास पृ 188
5. शिवकुमार गुप्त कृत प्राचीन भारत का इतिहास पृ 188
6. डॉ. रामप्रसाद मिश्र कृत प्रसाद का आलोचनात्मक सर्वेक्षण में चन्द्रगुप्त
7. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 54
8. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 54
9. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 58
10. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 59
11. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 60
12. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 69
13. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 112
14. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 115
15. मुनि प्रणम्यसागर कृत जैन सम्राट चन्द्रगुप्त (उपन्यास) 2013 पृ 115

****

वासदत्ता : सामाजिक एवं सांस्कृतिक सरोकार

डॉ. इला द्विवेदी *

शोध सारांश – साहित्य की सर्जन समाज के बीच से ही होती है। साहित्यकार समाज का एक हिस्सा होता है। समाज में घटित होने वाली घटनाओं और स्थितियों से वह स्वयं को विलग नहीं रख पाता। मनुष्य होने के नाते वह उनसे प्रभावित होता है। यही कारण है कि उसकी लेखनी उन सभी बिन्दुओं का स्पर्श करती हैं जो उसके चारों ओर वातावरण में होते हैं।

प्रस्तावना – साहित्य देशकाल की सीमा से परे होता है। यही नहीं उसके प्रभाव को भी सीमित नहीं किया जा सकता। इस सन्दर्भ में उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द जी का भी कथन अतिमहत्वपूर्ण है – 'साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे विचलित रहना असम्भव हो जाता है और उसकी विशाल आत्मा अपने देशबन्धुओं के कष्ट से विकल हो उठती है, इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है। पर उसके रूदन में भी व्यापकता होती है।'[1]

यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि साहित्यकार समाज से प्रभावित होता है, परन्तु यह तथ्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं कि उसके द्वारा सृजित साहित्य भी समाज को उतनी ही तीव्रता से प्रभावित करता है। वास्तव में साहित्य और समाज का सम्बन्ध बहुत गहरा होता है। दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं और दोनों ही एक दूसरे के लिए महत्वपूर्ण घटक हैं। साहित्य का क्षेत्र इतना व्यापक होता है कि वह विश्व के किसी भी हिस्से को समान रूप से प्रभावित करता है। इस सन्दर्भ में डॉ0 शिव कुमार मिश्र जी का कथन अवलोकनीय है जिसमें वे लिखते हैं – सच पूछा जाये तो कविता का कोई देश नहीं होता। वह बुनियादी तौर पर सार्वदेशिक और सार्वभौमिक होती है। आदमी धरती के किसी भी हिस्से में जन्म ले अनुभव संवेदनों का एक अंतर्वर्ती तार जिस तरह समूची मनुष्यता को एक सूत्र में बांधे हुए हैं, कविता भी किसी भी भूखण्ड में जन्मी हो, आदमी के अपने अनुभव संवेदन ही उसमें अभिव्यक्त होते हैं, और इसी नाते वह दूसरे भू–भाग के लोगों को भी समान रूप से आन्दोलित करती है।'[2]

उपर्युक्त सन्दर्भ में राष्ट्रकवि पं. सोहनलाल द्विवेदी जी की महान कृति 'वासवदत्ता' की कविताओं का उल्लेख करना यहाँ समीचीन होगा जिनमें समाज को गहन रूप से प्रभावित करने, उसकी दिशा बदलने, उच्च मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करने और भारतीय संस्कृति को विश्व परिदृश्य में उच्चासन पर आरूढ़ करने की अद्भुत क्षमता है।

कालजयी कृति 'वासवदत्ता' द्विवेदी जी की सात–आठ लम्बी–लम्बी कविताओं का संग्रह है। एक–एक कविता समाजोत्थान और भारतीय संस्कृति के मूल्यों की पुरजोर वकालत करती है और यह सन्देश देती है कि हम अपनी संस्कृति का अनुशरण करके अपने समाज और राष्ट्र को बहुत ऊँचा उठा सकते हैं। 'वासवदत्ता' में 'वासवदत्ता', 'उर्वशी', 'कुणाल', 'सरदार चूड़ावत' 'कर्ण और कुन्ती', 'भिक्षा–प्राप्ति', 'एक बूंद' तथा 'महाभिनिष्क्रमण' इत्यादि कवितायें संग्रहीत है।

सर्वप्रथम उल्लेखनीय कविता है– 'सरदार चूंड़ावत'। सरदार चूंड़ावत का हाल ही में विवाह होता है। नई रानी से उनका मिलन तक नहीं हो पाता, कि राणा सरकार का युद्ध के लिए बुलावा आ जाता है कि सारी सेनाओं को लेकर शत्रुदल पर टूट पड़ो। सरदार चूड़ावत नई रानी के मोहपाश में बंधे होने के कारण उस तत्परता से युद्ध के लिए कूच नहीं कर पाते जिस तत्परता से उन्हें ऐसा करना चाहिए था। नई रानी क्षत्राणी थी। पति की यह स्थिति देखकर वह निर्णय करती हैं कि पति का मोह भंग करना अनिवार्य है। फलस्वरूप अपना सिर काटकर थाल में रखवाकर चूड़ावत के पास भिजवा देती हैं। देखकर चूड़ावत की आँखे फटी रह जाती हैं। उन्हें अपना कर्तव्यबोध होता है और वह तत्काल अपने कर्तव्य पथ पर आरूढ़ हो जाते हैं। देशहित में अपने प्राण तक निछावर कर देते हैं। इस कविता का एक महत्वपूर्ण अंश अवलोकनीय हैं –

'एक बार, दो बार, तीन बार आया चर,
बार–बार उसी सन्देश को दुहराया जब
रानी ने सोचा– सरदार वीर,
के उर है न धीर,
उनके मन कुसुम बीच/छिपा है सन्देह कीट,
काट रहा क्रम–क्रम से/उनकी देशभक्ति को,
उनकी राज्यभक्ति को/उनकी आत्म शक्ति को
बोली बहुरानी, थी आखिर क्षत्राणी,
देती हूँ उत्तर, उपहार कुछ और भी
जाके सरदार से कहो कि 'बनो सिरमौर,
सतीव्रत पालती हूँ इधर मैं यहां अभी
तुम भी वीरवृती बनो/अडिग महारथी बनो
इतना कह –
हल्दी का चढ़ा था रंग, जिन पाणिपल्लव में सुरंग
उन्हीं असल हाथों से लेकर तलवार तीक्ष्ण
(मिली जो विदाई में)
रानी ने/उस क्षत्राणी ने,
निज शिर को किया छिन्न/धड़ से उसे किया भिन्न
दिया उसे हाथ में, अनुचर के साथ में

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

सो गई परिणय की इस सुहागरात में
सो गई मिलन के विरह प्रभात में
पहुँचा उधर पदचर, लिए रक्त स्रवित शिर
पूछा सभीत, 'उत्तर क्या भेजा है?
उत्तर में– शीश निज सहेजा है।'
वीर सरदार चूढ़ावत छिन्न सिर हेर
समझ गये सभी/न की पल भर कहीं देर,
रूद्र के समान, शीश कंठ से भाला कर
जाता जिस ओर प्रलय घटा बन छाता उधर
पाट–पात भूमि, लक्ष–लक्ष नरमुण्डों से
कोटि मुण्डमाल रणचंडी के चरणों में
अर्पित,समर्पित कर बना वह अजेय/नित्यगेय।'[3]

इसी प्रकार 'कुणाल' कविता में सम्राट अशोक की, अपने पुत्र की उम्र की ही युवा पत्नी तिष्यरक्षिता द्वारा जब कुणाल से प्रणय निवेदन किया जाता है और कुणाल द्वारा यह कहकर उसे ठुकरा दिया जाता है कि माँ, मैं तो आपका पुत्र हूँ, भले ही आप मेरी विमाता हैं – राजमहिषी तिष्यरक्षिता क्रोध और अपमान से तिलमिला उठती है। षड़यंत्र रचती हैं और युवराज को युद्ध के लिए भिजवा देती हैं, लेकिन शत्रु को पराजित कर युवराज और भी यशस्वी होकर लौटते हैं। रानी पुन: एक कूट नीतिक चाल चलती हैं। सम्राट से कहती हैं कि यदि आप मुझसे प्रेम करते हैं तो एक दिन के लिए राज्य शासन मेरे हाथ में दे दें। सम्राट कहते हैं, बस! इतनी सी बात। और एक दिन के लिए शासन की बागडोर रानी के हाथ में दे देते है। रानी कुणाल और उसकी पत्नी को कुचक्र रचकर देश से बाहर कर देती हैं। एक दिन सम्राट को रानी की इस कुचाल का पता पड़ जाता है और उनके क्रोध का पारावार नहीं रहता। वे जल्लादों को आज्ञा देते हैं कि इसी वक्त साम्राज्ञी तिष्यरक्षिता का शिर धड़ से अलग कर दिया जाये। तभी कुणाल शीघ्रता से आगे आते हैं और पिता से विमाता के लिए क्षमा की याचना करते हैं। रानी पश्चाताप से सिर तक नहीं उठा पाती। अपनी गलती के लिए क्षमा माँगती हैं। इस कविता का एक महत्वपूर्ण अंश द्रष्टव्य है–

'बढ़े जल्लाद ज्यों ही/बढ़े कुणाल भी त्यों ही,
पड़े पदमूल सम्राट के अधीन हो
नयनों में नीर भर/बोले दृढ़ स्वर से
'पिता। रोक दो, रोक दो
जननी है मेरी, मेरे सम्मुख यह असम्भव है।
छिन्न करो मेरा सिर पहले, फिर जननी का
भिक्षा दो इतनी आज, भिक्षुक इस पुत्र को
कौन टाल सकता था, वाक्य से अकाट्य रहे।
आई तिष्यरक्षिता, रक्षिता हो पुत्र चरण,
जिसने मरण को कर कंठहार
जननी को दिया अभय का आभरण
ऐसा उमड़ा उर शोक/टिक सके नहीं अशोक
स्वर्ण मुकुट माणिक–मणि–जटिल खोल
शीश पर धर प्रिय कुणाल के
उसी दिन/उसी क्षण/चले गये वन ओर,
पथ, जिसका है न छोर।'[4]

इसी पुस्तक की एक अन्य कविता है– 'भिक्षा–प्राप्ति'। इसमें गैरिक परिधान पहने हुए एक महाभिक्षु, अकाल पीड़ितों, भूखे–प्यासे, नग्नजन के त्राण हेतु भिक्षा माँगने निकलते हैं। वे समाज के बड़े–बड़े औहदों पर विराजमान एक–एक व्यक्ति के पास सहायता और दान के लिए जाते हैं पर पद, प्रतिष्ठा ओर धन से सम्पन्न हर व्यक्ति उन्हें अपने यहाँ से खाली हाथ लौटा देता है यह कहकर कि उनके पास इसके लिए समय नहीं है। महाभिक्षु अत्यन्त दुखी होते हैं। निराश हो जाते हैं। तभी एक दीन–हीन, अति मलिन, नितान्त अकिंचन एक भिक्षुणी उनके समीप आती है और कहती है कि मैं आपको दुखी जनों के लिए दान दूँगी। उस अकिंचन कि यह भावना देख महाभिक्षु भाव गद्गद हो जाते हैं और आश्चर्यचकित हो समाज की इस विचित्रता को बहुत गहराई से अनुभव करते हैं। कि जिनके पास सब कुछ है उनके पास भावना नहीं और जिसके पास भावना है उसके पास कुछ नहीं। इस कविता का एक अंश दर्शनीय है और समाज की इस विडम्बना के प्रति सोचने के लिए विवश करता है–

'दूँगी मैं तुम्हें दान/करूँगी मै क्षुधित प्राण।
महाभिक्षु पुलकित, चकित अति विस्मित
बोले 'हैं कहां दान?
मात: तुम स्वयं हो कहां यों धनवान?
भिक्षुकी/सगर्व बोली,
'महाभिक्षु1 दूँगी मैं तुम्हें दान/मैं हूँ महा धनवान।
मेरा धन भरा है वहाँ/महानृप, महासेठ, महावणिक है जहाँ,
लाती हूँ छीन यहाँ
महाभिक्षु! मेरे ही धनधान्य
लूअ–लूट करके इन लुटेरों ने/खड़े किये प्रसाद, उच्च भवन,
ध्वजा, कलश, तोरण और बंदीगान।
निर्धनता ही धन मेरा
उसी से करूँगी मैं क्षुधित जन त्राण।
महाभिक्षु थे प्रशान्त/करूण कान्त।
बोले तुम आओ साथ
मिल गई भिक्षा मुझे, मेरे हुए चार हाथ।'[5]

इसी प्रकार एक अन्य महत्वपूर्ण कविता है – 'एक बूँद'। एक व्यक्ति का एकाकी प्रयास कैसे अन्य व्यक्तियों को भी इतना प्रेरित कर देता है कि सभी मिलकर अपनी धरती, अपना देश और अपने समाज को खुशहाल बनाने का संकल्प ले लेते हैं और परसेवा के लिए तत्पर हो जाते हैं– यह बताना इस कविता का उद्देश्य है।

अकाल पड़ जाता है। बरसात न होने से सूखी धरती पर एक अंकुर भी नहीं फूटता। कृषक परेशान, आमजन परेशान। आकाश में विराजमान एक बूंद से धरती और धरतीवासियों, कृषकों का यह दुख नहीं देखा जाता। वह अकेली ही बरसने का संकल्प लेती है। उसके साथ की बूँदे आगा–पीछा समझाकर उसे रोकती हैं। उसे समझाती है कि तुम्हारे अस्तित्व तक का कहीं पता नहीं पड़ेगा, तुम कहां विलीन हो जाओगी?

पर परोपकार की भावना से लबालब भरी वह 'एक बूंद' नहीं रूकती और धरती पर बरसने के लिए अपने आपको मुक्त छोड़ देती है। उसकी इस भावना को देखकर अन्य बूँदे भी बरसने के लिए तैयार हो जाती हैं। बस फिर धरती, किसान और आमजन खुशी से झूम उठते हैं। वर्णन हृदयस्पर्शी है–

'इतना कह/चुप सी रह/बूँद वह टूट पड़ी,
अंबर से छूट पड़ी,
पड़ी एक संतप्त कृषक के कपोल पर
खिल सी पड़ी कली मुरझी गरीब की

सकल बूँदे बनी विकल/लगीं झरने सी झर-झर
जलद-खण्ड फूट पड़ा वर्षा के मेघ सा
झर-झार-झरा नीर/पावस आया गंभीर
हरे हुए खेत खलिहान/उगे वहां अन्न धान,
पशुओं ने तृण पाया/निर्धन ने धन पाया,
शिशुओं ने दूध पाया/जननी ने वत्स पाया,
कृषकों के सदन भरे/तरू तृण सब हुए हरे,
बूँद जो अकेली चली/जीती थी अभी भली,
आई जब बूँदे और/बनी वह न मृत्यु कौर,
सिरमौर बनी अपने विक्रम से, बल से,
एक भावना से / जो न देख सकती कहीं दुख
चाहे उसे देखना पड़े, क्यों न मृत्यु मुख।
बूंदे उसे ले गई गोद में संभाल कर।
इन्द्रधनुष आसन पर, स्वर्ग सिंहासन पर,
उसका किया वंदन, अभिनन्दन और चन्दन चढ़ाया अपने उर मधु का
प्रेम के पराग का / हर्ष अनुराग का
वर्षा खड़ी देखती, प्रसन्न अति मन ही मन
बोली- धन्य एक बूँद/तुमसे धन्य मेरा जीवन।'[6]

इस प्रकार देखा जाये तो साहित्य समाज की व्यथाओं से ही उपजता है। समाज के लिए प्रेरक बनता है। भटकते हुए समाज को समुचित दिशा प्रदान करता है। पं. सोहन लाल द्विवेदी जी द्वारा रचित 'वासवदत्ता' कृति की प्रत्येक कविता समाज को यही दृष्टि प्रदान करती है। सरदार चूड़ावत कविता में नवविवाहिता रानी का महान त्याग हो, या 'कुणाल' कविता में विमाता तिष्यरक्षिता के षड़यन्त्रों और महापापों को कुणाल द्वारा क्षमादान दिया जाना हो या 'भिक्षा प्राप्ति' कविता में समाज के बड़े-बड़े ठेकेदारों की नीयत खोलती भावनायें हों और उन पर एक भिक्षुणी की दानशीलता की महिमा का बखान हो या फिर एक बूंद कविता में 'एक बूंद' की पर दुखकातरता से प्रेरित हो आत्म त्याग की कथा हो सभी सामाजिक सरोकारों से पूर्णतया संपृक्त हैं। भारतीय संस्कृति के जीवन मूल्य त्याग, क्षमा, पर दुख कातरता, दानशीलता और लोकमंगल की भावना से भरी द्विवेदी जी की कवितायें, वर्तमान समय में न केवल भारत राष्ट्र अपितु विश्वस्तर की समस्याओं के समाधान करने में भी पूर्णतया समर्थ है। वास्तव में द्विवेदी जी जैसे साहित्यकार की साहित्य साधना का लक्ष्य ही यही है। 'वासवदत्ता' कृति की भूमिका में वे लिखते हैं- 'महात्मा टालस्टाय ने साहित्य और कला का जो उद्देश्य बताया है, उसे रवीन्द्र बाबू ने 'प्राचीन साहित्य' में उद्धृत किया है। उसका आशय बहुत कुछ इस प्रकार है जो कला क्रूर को दयालु, कृपण को उदार, भीरू को वीर, दानव को मानव और मानव को देवता बना सके, वही सफल है। एक वाक्य में - उदात्व भावों को, सद्विवेक, सद्विचार और सद्भावना को जगाना काव्यादर्श है। जो कला कविता हममें अच्छे संस्कारों को जागृत न कर सके, समझना चाहिए वह अपने आदर्श से च्युत् है। मैं समझता हूँ इस सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते।'[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रेमचन्द, पत्रिका हंस , 1932, पृ0 सं0 40
2. शिव कुमार मिश्र, आधुनिक कविता और युग सन्दर्भ, पृ0सं0 11
3. पं0 सोहनलाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 77-78
4. पं0 सोहनलाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 95-96
5. पं0 सोहन लाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 97-98
6. पं0 सोहन लाल द्विवेदी, वासवदत्ता, पृ0सं0 88
7. पं0 सोहन लाल द्विवेदी, वासवदत्ता, भूमिका।

****

उत्तर मध्य काल (रीतिकाल) के प्रमुख जैन प्रबन्धक काव्य (एक संक्षिप्त अध्ययन)

डॉ. लता जैन *

शोध सारांश – हिन्दी साहित्य रचना के दो सौ वर्ष स. 1700–1900 तक समय रीतिकाल के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य का इतिहास में हिन्दी साहित्य के मध्यकाल को दो भागों में विभाजित किया है। एक पूर्व मध्यकाल और दूसरा उत्तरकाल। उत्तर मध्यकाल को 'रीतिकाल', 'श्रृंगारकाल', 'अलंकृतकाल', 'कलाकाल', तथा 'मुक्तक काव्य काल' के नाम से जाना गया। इन नामों से यह ज्ञात है कि इस युग में प्रबंधकाव्यों की रचना तो हुई नहीं और जो भी प्रंबंध काव्य रचे गये उनकी संख्या बहुत कम थी।

प्रस्तावना – रीतिकाल में ऐतिहासिक, पौराणिक, प्रेमाख्यानक एवं नीति परक आदि अनेक प्रकार के लगभग तीन–चार सौ प्रबंधकाव्यों की रचना हुई। उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण भी है किन्तु यह मुक्तक का युग था, अत: प्रबंध काव्य अधिक लोकप्रिय न हो सके। मुक्तक काव्यों की अधिक चर्चा हुई है। यहाँ हम केवल जैन कवियों द्वारा रचित प्रबंधकाव्यों पर विचार करना चाहते है। जैन कवि की प्रबंधकाव्य परम्परा अपभ्रंश काल से ही निरंतर चलती रही। 35 कवियों ने शीर्षस्थ पुरूषों के चरित्रों को आधार बनाकर, किसी व्रत या पर्व की महत्ता प्रदर्शित करने के निमित्त प्रबंध काव्यों की रचना की। इनमें से कुछ प्रबंध काव्य हिन्दुओं में प्रचलित कथानकों के आधार पर भी लिखे गये जिनको जैन धर्मानुसार परिवर्तित कर दिया गया।

इन जैन कथा प्रबंधक काव्यों की रोचकता, काव्यगुण, एवं संघटन की प्रशंसा कई कवियों और आचार्यो ने की है। इनमें छन्दों का चुनाव सुव्यवस्थित ढ़ंग से किया गया है। भाषा, सरल, प्रांजल और परिभाजित है। रीतिकाल के अन्तर्गत आनेवाले प्रमुख जैन प्रबंधक काव्यों का अध्ययन इस प्रकार है–

पद्मिनी चरित्र – इस काल में सर्वप्रथम जैन प्रबंधकाव्य 'पद्मिनी चरित्र' की रचना संवत् 1707 में हुई। इस काव्य के सृजन करने वाले श्री लब्धोदय नामक कवि है। जिन्होंने मेवाड़ के महाराणा जगत सिंह से आज्ञा लेकर रचना की। इस काव्य की भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है। इसके कथानक में कवि ने लगभग सभी रसों का बड़ी सफलता पूर्वक वर्णन किया है।

सीता चरित्र – संवत् 1723 में कवि रामचन्द्र ने 'सीता चरित' नामक ग्रन्थ की रचना की। इसका कथानक वाल्मीकि रामायण तथा दूसरे अन्य सभी रामकाव्यों से भिन्न है। इस रचना के अनुसार सीता का जन्म राजा जनक की पत्नी विदेहा के गर्भ से हुआ है। नारद के श्राप से सीता का ही जुड़वा भाई उस पर मोहित हो गया, किन्तु अन्त में धनुमंजन के बाद राम के साथ ही विवाह हुआ। इस रचना के अनुसार रावण का वध लक्ष्मण के द्वारा किया गया है। इसमें लक्ष्मण के भी अनेक विवाहो का विवरण प्राप्त होता है। सीता का निर्वासन एक सेनापति द्वारा कराया गया है। काव्य में सरस प्रवाह, शैली मधुर, प्रेरक प्रसंग और कल्पना–वैभव का प्रंशसनीय चित्रण है।

लघुसीता सतु – संवत् 1731 में 'लघुसीता सतु' नामक ग्रन्थ की रचना कवि भगवती दास ने की है। यह अपने आप में उत्कृष्ट रचना होते हुए भी खंड काव्य की कोटि में आता है। इस काव्य में कवि ने सीता के सतीत्व का चित्रण किया है। इसमें रावण तथा मन्दोदरी के अन्तर्द्वन्द्व का बड़ा की मार्मिक एवं हृदय विदारक वर्णन किया गया है।

उत्तरपुराण – संवत् 1750 में महाकवि देवदत्त जैन ने 'उत्तर पुराण' की रचना की। इस ग्रन्थ में अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ, पद्म प्रभु, चन्द्र प्रभु, पार्श्वनाथ, और महावीर स्वामी इन आठ तीर्थकरों के चरित्र का विस्तृत वर्णन है। यह ग्रन्थ दोहा चौपाईयों में लिखा गया है। इसकी कविता प्रसाद तथा माधुर्य गुण सम्पन्न है। भाषा परिष्कृत और परिमार्जित है। पांडव पुराण : संवत् 1754 में कवि तुलसीदास ने अपनी विदुषी माता के आग्रह से पांडव–पुराण का सृजन किया। इस ग्रंथ को देखने और अध्ययन से आभास होता है कि कवि, प्रतिभावान और सर्वगुण सम्पन्न थे। लेकिन कवि की काव्य रचना मध्यम कोटि की है। यत्र–तत्र काव्य में उत्कृष्टता भी मिलती है। इस ग्रन्थ की भाषा सरल एवं प्रवाहयुक्त है।

पद्मिनी चौपाई – संवत् 1760 में हेमरत्न सूरि नामक कवि ने 'पद्मिनी चौपाई' नामक ग्रंथ काव्य की रचना की है यह एक सरस, मधुर और मनोहर खंडकाव्य है। इस काव्य की भाषा राजस्थानी है। इसमें कवि ने अधिकांश दोहा, चौपाई, छप्पय, तथा सवैया आदि छंदों का प्रयोग किया है।

गुणमाल चरित्र – संवत् 1761 में 'गुणमाल चरित्र' नामक ग्रन्थ की रचना हुई। इसके लेखक प्रेमचन्द जी है। इस रचना के अन्तर्गत कवि ने गोरखपुर के राजकुमार गजसिंह तथा एक सुकन्या गुणमाल के प्रेम–विवाह का चित्रण किया है। इसमें गुणमाल का पावन चरित्र पतिव्रत का आदर्श तथा नरीत्व का गौरव है। गजसिंह का चरित्र भी कठोर दृढ़ताशील और सौन्दर्य का स्वरुप उपस्थित करता है। इसमें महाकाव्य के समान जीवन की विभिन्न दशाओं का चित्रण किया गया है। कवि ने इससे वन, नदी, सन्ध्या, उषा आदि का चित्रण किया है। जहाँ तक रसों के प्रयोग का प्रश्न है तो इसमें वीर, वीभत्स एवं शांत

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रसों का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

पार्श्व पुराण – संवत् 1789 में कवि मधूर दास ने 'पार्श्वपुराण' की रचना की। यह सर्वोत्कृष्ट काव्य है। इसमें कवि ने स्वतंत्र कल्पना शक्ति का परिचय दिया है। प्रसिद्ध तीर्थकर पार्श्वनाथजी के आठ पूर्व मठों का अद्‌भुत वर्णन किया है। कथानक सरल और सुलझा हुआ है। नायक पार्श्वनाथ को जीवन की अनेक परिस्थितियों में डालकर उनका मार्मिक चित्रण करके कवि ने अपनी भावुकता का परिचय दिया है। इस संबंध में श्री नेमिचंद्र शास्त्री ने लिखा है कि 'जीवन का इतना सर्वांगीण और स्वस्थ विवेचन विरले महाकाव्यों में ही मिलेगा।' इस काव्य का प्रथम रस तो शांत और हृदय स्पर्शी वर्णन मिलता है। इस काव्य में कवि ने साहित्यिक बृज भाषा का प्रयोग किया है। शैली अलंकृत और परिमार्जित है। कथोपकथन, पात्र, चरित्रचित्रण वस्तु वर्णन, भाव व्यंजना आदि सभी दृष्टि से यह काव्य उत्तम कोटि का है।

वर्द्धमान चरित्र – संवत् 1825 में नवलराय खंडेलवाल ने वर्द्धमान चरित्र नामक महाकाव्य की रचना की है। इस ग्रन्थ में अन्तिम जैन तीर्थंकर भगवान महावीर का चरित्र सौलह अध्याय में वर्णित है। इसमें भगवान महावीर के पूर्व भवों में उनके जन्म, बाल्यकाल तथा जीवन का अद्‌भुत वर्णन किया है। इस ग्रन्थ में भगवान महावीर के शौर्य एवं तेज का चित्रण है। इस काव्य की भाषा बृज है, बृज के अलावा खड़ी बोली और बुन्देली का मिश्रण हुआ है। अलंकारों में उपमा, रुपक, उत्प्रेक्षा, अतिश्योक्ति तथा अन्योक्ति का प्रयोग हुआ है। अध्ययन की दृष्टि से संरचना बड़ी सरस, मधुर एवं मनोरम है।

नेमिचन्द्रिका – संवत् 1897 में कवि मनरंग लाल ने 'नेमिचन्द्रिका' नामक खंडकाव्य का सृजन किया है। इस खंडकाव्य में द्वारावती के राजकुमार नेमिकुमार का अपने ही विवाह के समय भोजन के लिए मारे जाने वाले पशुओं की करुण-चीत्कार को सुनकर विरक्त होने की घटना का अत्यन्त मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। राजुल एक आदर्श भारतीय सती हैं जो आत्मा से पति का वरण करके उसी के साथ तपस्विनी बन जाती हैं। इसमें वात्सल्य, करुण और वियोग श्रंगार का सुन्दर चित्रण हुआ है। इसकी भाषा कन्नौजी प्रभावित खड़ी बोली है।

इसके अतिरिक्त कुछ और जैन प्रबंध काव्यों की रचना हुई है। जिनका विवरण निम्नानुसार है – 1. जम्बू चरित्र : संवत् 1720 में, 2. प्रीतंकर चरित्र : संवत् 1721 में, 3. श्रेणिक चरित्र : संवत् 1724 में, 4. विक्रम चरित्र : 1724 में ही, 5. सुर सुन्दर प्रंबध : संवत् 1736 में, 6. जिनदन्त चरित्र : संवत् 1738 में, 7. श्रीपाल रासो : संवत् 1738 में, 8. विक्रम विलास : संवत् 1731 में, 9. श्रीपाल चरित्र : संवत् 1740 में, 10. श्रीपाल रास : संवत् 1740 में, 11. चोपी मुति चरित्र : संवत् 1740 में, 12. भक्तामर चरित्र : संवत् 1741 में, 13. कलियुग चरित्र : संवत् 1757 में, 14. नागकुमार चरित्र : संवत् 1810 में, जम्वुस्वामी चरित्र : संवत् 1824 15. चारुदत्त चरित्र : संवत् 1813 में, 16. श्रेणिक चरित्र : संवत् 1820 में, 17. वरांग-चरित्र : संवत् 1827 में, 18, भविष्यद दत्तचरित्र : संवत् 1831 में, 19. सीता चरित्र : संवत् 1830-1852 में, 20. श्रीपाल चौपाई : संवत् 1843 में, 21. प्रद्युम्न चरित्र : संवत् 1843 में, 22. चन्द्रपुराण : संवत् 1758 में, 23. हरिवंश पुराण : संवत् 1780 में, 24. पार्श्वपुराण : संवत् 1789 में, 25. नेमिनाथ पुराण : संवत् 1800 में, 26. विमलनाथ पुराण : संवत् 1818 में, 27. शांतिपुराण : संवत् 1844 में, 28. श्रीमुनिसुव्रत पुराण : संवत् 1845 में, 29. वर्द्धमान पुराण : संवत् 1961 में, 30. नेमिचन्द पुराण : कवि वख्तावर मल्ल ने, 31. जैन रामायण : कवि अगितदास ने।

इन ग्रन्थों के अतिरिक्त जैन कवियों ने व्रतों और पर्वो का महत्व प्रदर्शित करने तथा जैन धर्म संबंधी नैतिक आदर्शो को प्रतिष्ठित् करने के लिए अनेक काव्यों की रचना की। रीतिकाल का समय लगभग दो सौ वर्षो का है। इस समय भारत का राजनैतिक इतिहास परम उत्कर्ष को प्राप्त-मुगल साम्राज्य की अवनति के आरम्भ और फिर क्रमश: उसके पूर्ण विनाश का लेखा-जोखा है। कहने का तात्पर्य है कि श्रृंगारकाल की रचनाओं में हमें मुगलिया शान-शौकत की झलक भी मिलती है, और रुग्ण मनो भावों का परिचय भी। इस युग में जबकि हिन्दी में श्रृंगार की धारा अश्लीलता के पंक से कलुषित हो रही थी। ऐसे में जैन कवियों ने सुन्दर प्रबंध काव्यों की रचना करके माँ भारती के शीश को गौरवान्वित किया।

जैन प्रबंध काव्यों का कलापक्ष – जैन कवियों की रचना का प्रमुख उद्देश्य वैराग्य-एवं अध्यात्म की भावना का निरुपण करना था। अत: उनके काव्य में शान्त रस प्रधान है। इन काव्यों की रचना सामूहारिक सरल भाषा में हुई। कुछ जैन कवि गुजरात प्रदेश में विहार करते थे अत: उनकी भाषा पर गुजराती

का प्रभाव दिखाई पड़ता है। जैन कवियों की पद शैली बड़ी मार्मिक है। उनकी शैली संत कवियों की शैली है। ये कवि गृहस्थ होते हुई भी वैराग्य एवं आत्मानुभाव में इतने लीन थे कि उनके पदों में उनके अन्तर्तम की पुकार अभिव्यक्त हुई है। इनकी वर्णन शैली में शब्दाडम्बर एवं पांडित्य प्रदर्शन का अभाव है। इन्होंने अंलकारों को सहज रुप से प्रयुक्त किया है।

निष्कर्ष – वास्तव में हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीति युग के अर्न्तगत श्रृंगार काव्य की एक पुष्ट परम्परा का विकास हुआ। सिद्ध साहित्य तथा जैन साहित्य में भी श्रृंगार भावनाओं का निरुपण है। यह समय ऐतिहासिक दृष्टि से सांस्कृतिक समृद्धि का युग था। इसीलिये अनुकूल परिस्थितियों में इसका सम्यक रुप में विकास हुआ।

इस युग में राज्याश्रित कवियों ने अपने आश्रयदाताओं से मान सम्मान पाकर उनकी प्रशस्ति करते हुये जो काव्य लिखा वह मात्र चारण साहित्य नहीं है। संस्कृत साहित्य में प्रचलित रस सम्प्रदाय, अंलकार सम्प्रदाय, ध्वनि सम्प्रदाय, रीति सम्प्रदाय तथा वक्रोक्ति सम्प्रदाय को आधार बनाकर हिन्दी रीति शास्त्र का निर्माण हुआ। जैन प्रबंध काव्य सर्वाधिक साहित्यिक और मनोहर है। खेद यह है कि रीतिकाल के जैन प्रबंध काव्यों का विश्वविद्यालय स्तर पर पठन–पाठन प्रारम्भ नहीं हो सका है फिर भी कवियों ने शास्त्र निरुपण करने के साथ साथ 'अपनी मौलिक काव्य प्रतिभा का भी परिचय दिया है जिससे इस काव्य प्रवृति को समृद्धि मिली।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. इन्द्रपाल सिंह
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. कृष्ण देव शर्मा,
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. जयकिशन प्रसाद,
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ नगेन्द्र,
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य राम चन्द्र शुक्ल,
6. साहित्य के चरण – डॉ. लक्ष्मी नारायण दुबे,
7. दीक्षा गुरु – डॉ. ओम प्रकाश एवं डॉ. गणेश मिश्र,
8. हिन्दी साहित्य के सौ साल – डॉ. ब्रज किशोर मिश्र
9. संस्कार सागर – इंदौर से प्रकाशित जैन पत्रिका

****

महादेवी : पुनरीक्षण के आलोक में

डॉ. कला जोशी *

शोध सारांश – छायावाद के रहस्यवादी आवरण में महादेवी की कविताओं की जितनी भी समीक्षाएं अब तक पढ़ने में आई हैं, मुझे लगता है उनमें उनकी कविताओं का पूर्ण सत्य उदघाटित नहीं हो पाया है। महादेवी की कविता, जिसे अज्ञात लोक की पर्तों में कुछ खोजते पाया गया, उसे ज्ञात लोक के समीक्षकों ने रहस्य कहकर उन्हें रहस्यवादी बना दिया। चूंकि उसमें अलौकिक की तलाश है तो उसे आध्यात्म से जोड़कर आध्यात्मिक रहस्यवादी कविता की कोटि में समाहित कर दिया। महादेवी की कविताएं जो उनक प्रौढ़ चिंतन को प्रतिध्वनित करती हैं वे छायावाद से बहुत आगे की कविताएं है बंधी–बंधाई लीक को त्यागकर वे मानस की चेतना को वैचारिक द्वन्द्व के लिए प्रेरित करती हैं। इन कविताओं की छायावाद अथवा रहस्यवाद के परिप्रेक्ष्य में समीक्षा नहीं की जा सकती।

प्रस्तावना – महादेवी की कविताओं को आलोचना के जिन मानदण्डों के आधार पर परखा गया है, ये मानदण्ड उनकी कविताओ के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर पाए हैं। महादेवी की कविता आध्यात्मिक रहस्यवाद के परिदृश्य में अलौकिक कल्पना के हिंडोले में अमूर्त से संवाद है, कहकर आलोचकों ने अपने धर्म का निर्वाह कर दिया प्राध्यापकिय आलोचना ने तो 'आँसू और वेदना' की कवयित्री कहकर उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' बना दिया। इस तरह आँसू का काव्य बनाकर महादेवी की कविता 'स्वत्व की पीड़ा' में आबद्ध होकर रह गई। इसी संकीर्ण सोच ने महादेवी के लिए जिस मीरा का मुहावरा गढ़ दिया उसे कभी विस्तार देने या तोड़ने की कोशिश भी नहीं की। वास्तव में बंधी–बंधाई लीक को तोड़ने का न तो उसमें साहस है न ही महादेवी की कविताओं की चुनौती को स्वीकार करने की शक्ति है। इस आलोचना ने एक तैयार फरमे के आधार पर कविता या गद्य को परखा है जिसमें कोई भी जोखिम को उठाये बिना, किसी भी कृति को फिट किया जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि सिक्के के एक ही पहलू पर ध्यान दिया गया है दूसरा प्राय: अनदेखा ही रहा। इस अनदेखे पहलू को देखने का यह लघु प्रयास है।

महादेवी को केवल छायावादी कवयित्री कहना सरासर उनके प्रति अन्याय है। उनकी पीड़ा और विरह को व्यक्तित्व कहना भी उचित नहीं है उनकी पीड़ा समस्त विस्तार करती है। वह करूणा का वह मानदण्ड स्थापित करती है। जहां अवसाद नहीं है। वह अपराजेय योद्धा अनंत को लांघ लेना चाही है।

छायावाद के रहस्यवादी आवरण में महादेवी की कविताओं की जितनी भी समीक्षाएं अब तक पढ़ने में आई हैं, मुझे लगता है उनमें उनकी कविताओं का पूर्ण सत्य उद्घाटित नहीं हो पाया है। महादेवी की कविता, जिसे अज्ञात लोक की पर्तों में कुछ खोजते पाया गया, उसे ज्ञात लोक के समीक्षकों ने रहस्य कहकर उन्हें रहस्यवादी बना दिया। चूंकि उसमें अलौकिक की तलाश है तो उसे आध्यात्म से जोड़कर आध्यात्मिक रहस्यवादी कविता की कोटि में समाहित कर दिया। महादेवी की कविताएं जो उनके प्रौढ़ चिंतन को प्रतिध्वनित करती हैं वे छायावाद से बहुत आगे की कविताएं है बंधी–बंधाई लीक को त्यागकर वे मानस की चेतना को वैचारिक द्वन्द्व के लिए प्रेरित करती हैं। इन कविताओं की छायावाद अथवा रहस्यवाद के परिप्रेक्ष्य में समीक्षा नहीं की जा सकती।

महादेवी की कविताओं को आलोचना के जिन मानदण्डों के आधार पर परखा गया है, ये मानदण्ड उनकी कविताओ के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर पाए हैं। महादेवी की कविता आध्यात्मिक रहस्यवाद के परिदृश्य में अलौकिक कल्पना के हिंडोले में अमूर्त से संवाद है, कहकर आलोचकों ने अपने धर्म का निर्वाह कर दिया प्राध्यापकीय आलोचना ने तो 'आँसू और वेदना' की कवयित्री कहकर उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' बना दिया। इस तरह आँसू का काव्य बनाकर महादेवी की कविता 'स्वत्व की पीड़ा' में आबद्ध होकर रह गई। इसी संकीर्ण सोच ने महादेवी के लिए जिस मीरा का मुहावरा गढ़ दिया उसे कभी विस्तार देने या तोड़ने की कोशिश भी नहीं की। वास्तव में बंधी–बंधाई लीक को तोड़ने का न तो उसमें साहस है न ही महादेवी की कविताओं की चुनौती को स्वीकार करने की शक्ति है। इस आलोचना ने एक तैयार फरमे के आधार पर कविता या गद्य को परखा है जिसमें कोई भी जोखिम को उठाये बिना, किसी भी कृति को फिट किया जा सकता है।

मीरा की व्यक्तिगत पीड़ा को महादेवी की वेदना से जोड़ना या तुलना करना, उनके जीवन व्यापी विद्रोह से आँखें मूंदना है। मीरा की करूणा व वेदना सीमित एवं व्यक्तिपरक है मीरा केवल कृष्ण को पाना चाहती है उसका विद्रोह आत्मिक सुख के लिए हैं जबकि महादेवी अपनी करूणा के विस्तार से विश्व को भर देना चाहती हैं ताकि विश्व अवसाद से, वेदना से मुक्ति पा सके।

ऐसा तेरा लोक, वेदना नहीं
नहीं जिसमें अवसाद। (परिक्रमा, महोदवी पृष्ठ 15)

महादेवी की कविता जहाँ उनके कोमलतम, करूणामयी रूप को उजागर करती है वहीं दीपशिखा, अग्निरेखा की कविताएं उनके विद्रोही रूप से साक्षात्कार करवाती हैं। उनकी कविता छायावादी की कारा को तोड़कर उन्मुक्त आकाष में विचरण करने के लिए आतुर है –

अब असल बंदी युगों का
ले उड़ेगा शिथिल कारा। (संधिनी, महोदवी पृष्ठ 15)

इस पंक्तियों को क्या छायावादी कहा जा सकता है? क्या ये रहस्यवाद का अतिक्रमण नहीं करती? क्या ये प्रगतिवादी कदम नहीं हो सकते? समाज के प्रति उनकी चिन्ता, उनकी रागात्मकता को भी प्रखर बौद्धिकता से संवलित कर सामाजिक न्याय की पक्षधर बना देती है –

कर व्यथाएं, सुख कथाएं
तोड़ सीमा की प्रथाएं
प्रात के अभिषेक को हर दृग सजा आ (महादेवी साहित्य समग्र 1 पृ. 347)

इसका मतलब यह नहीं कि वे प्रगतिशील या साम्यवादी कवयित्री हैं। इन कविताओं को जानने के लिए उनकी जीवन के प्रति आस्था को जानना होगा जो अंधेरे में से उजाला, रात में से दिन और प्रलय में से सृष्टि का संधान करती है। महादेवी ने विश्व वेदना में अपनी वेदना को इस प्रकार मिला लिया है कि वह समुद्र में जल बिन्दु सी समा जाती है। इससे उपजी करूणा उनकी कविता का बीज है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जीवन का यह उत्तरोत्तर विकास, 'दीपशिखा' के विश्वास की धरोहर है। 'पथ न भूले एक पग भी, घर न खोये, लघु विहग भी' इसलिए प्रकाश आवश्यक है। इसके लिए कर्मयोग की साधना आवश्यक है आत्मविश्वास से बढ़े कदम किसी बन्धन को स्वीकार नहीं करते –

अन्य होंगें चरण हारे
और हैं जो लौटते, दे शूल को संकल्प सारे

महादेवी ने जीवन एवं जगत के जिन प्रतीकों को अपनी कविता में उठाया है उन्हें व्यापक मानवीय विराटता देकर सार्वजनीन कर दिया है। चाहे वह दीपक, बरसात, फल पर्वत, प्रलय, झंझावत और आग ही क्यों न हो। जीवन की सततता की आकांक्षी महादेवी अंतर की आग से जागरण को दिशा देती हैं –

आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी
है तुझे अंगार शय्या पर मृदुल कलिया बिछाना
जाग तुझको दूर जाना (महादेवी गंगाप्रसाद पांडे राजपाल एंड संस पृ. 91)

अंगार शय्या को भी कोमल बनाने की शक्ति ममत्व में ही निहित हैं। ममत्व जगाने वाले इस भाव को समत्व भाव कहा गया है। इसी की संज्ञा महाभाव' है। महादेवी की कविता में यही महाभाव बसता है। कविता का विस्तार मनुष्यता का विस्तार हैं।

महादेवी जी अपनी विराट संवेदनशीलता के उन्मेश मे लोक कल्याण की भावना को व्यक्तिगत मोक्ष से कई गुना महत्व देती है। वे विश्व से विशाद, क्लेश और ताप को दूर करके उल्लास, आनंद और शीतलता की रचना में आत्मिक शंति पाने को उत्सुक है –

इस मरण के पर्व को मैं आज दीवाली बना लूं
अंगुलियों की ओट में सुकुमार सब सपने बचा लूं
सब बुझे दीपक जला लूं (परिक्रमा पृ. 64)

जो ज्वार को ही 'तरणी' (नौका) बनाने का जोखिम उठाना चाहती हैं। प्रलय को पार करने की चुनौती देती है।

ज्वार को तरणी बना मैं, इस प्रलय का पार पालूं। (परिक्रमा पृ. 65)

महादेवी का यह रूप जो 'अस्तित्व' की लड़ाई में प्रलय से टक्कर लेने को तत्पर है, किसने जानने का प्रयास किया है ? अपने विवाह को अस्वीकृत करने वाली महादेवी का तत्कालीन समय का यह भीषण विद्रोह था। संसार का कोई भी प्रलोभन या भय उन्हें पथ से विमुख नहीं कर सका –

घिरती रहे रात
न पथ रूंधती ये गहनतम षिलायें
न गति रोक पाती पिघल मिल दिशायें
चकी मुक्त मैं ज्यों मलय की मधुर बात! (महादेवी साहित्य समग्र 1 पृ.)

कठोरतम चट्टानें भी उनका मार्ग कैसे रोके ? दिशाएं मिलकर भी उनके निश्चय को दिगा नहीं सकती। वैवाहिक जीवन अस्वीकार करने के मूल में भारतीय नारी की युगों-युगों से चली आ रही दयनीय दशा ही रही होगी जिसका उल्लेख उन्होंने अपने सामाजिक निबंधों में बारम्बार किया है। पुरूष निरपेक्ष नारी व्यक्तित्व की स्थापना का उनका जीवन व्यापी उद्देश्य भी इस प्रवृत्ति में सक्रिय रहा हो तो कुछ आश्चर्य नहीं। इस संदर्भ में उनका यह कथन महत्वपूर्ण है – 'मेरे जीवन ने वही ग्रहण किया जो उसके अनुकूल था। कविता सबसे बड़ा परिग्रह है क्योंकि यह विश्व मात्र के प्रति स्नेह की स्वीकृति है।' (दीपशिखा महादेवी भूमिका)

सही में महादेवी ने जीवन और रचनाकर्म में साहस के साथ पदार्पण किया है। उनकी गद्य रचनाएं इस संदर्भ में सीधा-सीधा संवाद करती है। यदि इरादे बुलन्द हो तो प्रलय को भी विस्मित किया जा सकता है। जो चिनगारियों का मेला लगाने का जोखिम उठा सकता है वही हाट में मोतियों को भी लुटा सकता है। ऐसी कहानी को आंसुओं में डुबा देने का षड़यंत्र उसको काल से खारिज नहीं कर सकता –

दूसरी होगी कहानी
शून्य में जिसके मिटे स्वर, धूल में खोई निशानी
आज जिस पर प्रलय विस्मित, मैं लगाती चल रही नित
मोतियों की हाट औ, चिनगारियों का एक मेला (परिक्रमा महादेवी, पृ. 24)

जिजीविषा से भरपूर; मोतियों और चिनगारियों को एक साथ गति देने की विरोधाभासी प्रवृत्ति, का यह चित्रात्मक बिम्ब हृदय और बुद्धि को झकझोर देता हैं। प्रल' शब्द उनकी कविताओं में विद्रोह का सबसे बड़ा कारक बनकर आया है इसको छकाने, इससे लड़ने इसका सामना करने की शक्ति का यह उन्मेष ही था कि 'गा रहे आंधी-प्रलय, तेरे लिए ही आज मंगल' और फिर 'भय की क्या बात हैं जब आ रहे यदि प्रलय झंझावात' क्योंकि 'क्षितिज कारा तोड़कर अब गा उठी उन्मत्त आंधी'। छायावादी कवयित्री की तो यह दृष्टि होनी ही नहीं चाहिए। क्योंकि प्रश्नाकुलमन राही को प्रेरणा कैसे दे सकता है अथवा कारा तोड़कर, नूतन परिवेश में ढलने की बात कैसे सोच सकता है ?'

क्षितिज कारा तोड़कर अब ..... नूतन में आज ढलो,
आज आंधी के साथ चलो' (महादेवी साहित्य समग्र 1 पृ. 379)

आंधी के साथ चलना चुनौतियों को स्वीकार करना है यह तो सभी काल में, सभी दृष्टिकोणों से, सभी वादों का अतिक्रमण कर कविता को बहुत दूर तक ले जाती है। हर युग में तरूणाई को इसे स्वीकार करना ही होगा क्योंकि,

'जिसमें जन्म नहीं मुस्काया, हुई पुरातन वह तरूणाई'
(महादेवी साहित्य समग्र 1 पृ. 392)

हिमालयी व्यक्तित्व की धनी महादेवी मानवीय जीवन की सफलता और उसकी सर्जनात्मक का परम विकास इन पंक्तियों में उद्घाटित करती है –

लघु हृदय तुम्हारा अमर छन्द
स्पन्दन में स्वर लहरी अमन्द
निज सांस तुम्हारी रचना का
लगती अखण्ड विस्तार मुझे।

वास्तव में आध्यात्मिक आलोक की सार्थकता यही है कि वह विश्व के लिए करूणा, सहानुभूति ही नहीं, समानुभूति तथा स्नेह का संदेश दे सके, क्योंकि उच्च से उच्च आदर्श भी जीवन के यथार्थ से समन्वित होकर ही प्रतिष्ठा पाता है। इसमे महादेवी सफल रही है।

'क्षण-क्षण का जीवन जान चली
मिटने को कर निर्माण चली' (परिक्रमा पृ. 50)

इन पंक्तियों का अपराजेय आत्मदान महादेवीजी की निजी विशेषता है। वस्तुत: **'मैथिली की अग्नि परीक्षा, बुद्ध का गृह त्याग** और **महादेवी का विद्रोह** सत्य को सुंदर और सुंदर को शिव बनाने की उर्ध्वगामी सीढ़ियाँ हैं, जिनके द्वारा रागद्वेष से मुक्त होकर मनुष्य जीवन के उच्चतम शिखर पर चढ़ सकता है। 'गंगा प्रसाद पांडेय का यह कथन महादेवी का सुन्दरतम, श्रेष्ठतम आकलन है। निराला की **'चेतना-स्फूर्ति की देवी'**, मैथिलीशरण गुप्त की **'साहित्य शारदा'**, को आज का समीक्षा लोक कितना भी विस्मृति के पटल में डालना चाहे किन्तु महादेवी, सदा महादेवी रहेगी, हिमालय सी गहन, गंभीर, शुभ्र और विराट! उनके शब्दों को आंसू कभी गला नहीं सकेंगे, उन्हीं के शब्दों में उन्हें और उनके बहाने 'नारीत्व' को प्रणाम –

मुझे बांधने आते हो लघु सीमा में चुपचाप
कर पाओगे भिन्न कभी क्या ज्वाला से उत्ताप (परिक्रमा, महोदवी पृ. 58)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. परिक्रमा, महोदवी पृष्ठ 15 /24
2. संधिनी, महोदवी पृष्ठ 15
3. महादेवी साहित्य समग्र 1 पृ. 347 /379 / 392
4. महादेवी गंगाप्रसाद पांडे राजपाल एंड संस पृ. 91
5. परिक्रमा पृ. 50 / 64 – 65
6. परिक्रमा, महोदवी पृष्ठ 58

इतिहास और उपन्यास का अंत: संबंध

डॉ. प्रमोद उपाध्याय *

शोध सारांश – इतिहास और कथा जो प्राचीन काल में लगभग एक ही थे, कालांतर में पाश्चात्य (वैज्ञानिक ?) सोच ने इसका पृथक्कीकरण किया, जिसे 'इतिहास दर्शन' ने पुन: निकट गया। ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास और कथा की इस पुरातत्व समीपता की नूतन समन्वयात्मक अभिव्यक्ति हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में जीवन सत्य कल्पनाश्रित होकर उद्घाटित होता है जबकि इतिहास में कल्पना, होते हुए भी तथ्यसार्थित और नियंत्रित रहती है। कई विद्धान ऐतिहासिक उपन्यासों को इतिहास का घोर शत्रु मानते हैं, क्योंकि दोनों की सीमाएँ अलग–अलग हैं। वस्तुत: इतिहास अतीत का यथार्थ है और उपन्यास इसी यथार्थ को ग्रहण कर कथा गढ़ता है, अत: उपन्यास इतिहास के मूल्य का रक्षण करता है। विविध घटनाओं के पूर्वापर संबंधों को एक सूत्र में स्थापित कर एक परिकल्पित तथा धारावाहिक बनाने की प्रक्रिया में इतिहास उपन्यास की निकटता पाता है, तो कल्पनाशीलता उपन्यासकार को इतिहास में प्रविष्ट करा देती है, अत: दोनों का एक दूजे के क्षेत्र में प्रवेश स्वाभाविक है। फिर भी दोनों के मार्ग, मर्यादाओं और दिशाओं में अन्तर तो है। जहाँ इतिहास, तथ्य के समुचित क्रम को नहीं भुला सकता वहीं उपन्यास मानवीय सत्य के सरस, प्रभावी चित्रण में तथ्यों की उपेक्षा भी कर सकता है, तथापि उसका, कृति की दृष्टि से महत्व कम नहीं होता। इतिहास में बाह्य घटनाएँ प्रमुख हैं, पात्र विश्लेषण गौण। उपन्यास इसकी तुलना में व्यक्तिपरक है। बाह्य चित्रण केवल पृष्ठभूमि और प्रभाव के लिए है। उपन्यासकार की पूर्ण सृष्टा रूप में सम्पूर्ण उदारता सहित रचित कृति अयथार्थ होते हुए भी यथार्थ लगती है, जबकि इतिहासकार आधारभूत तथ्यों, प्रमाणों के होते हुए भी पूर्ण स्वाभाविक और सत्य नहीं लग पाता। उपन्यास में नाम और तिथियों की न्यूनाधिक सत्यता के अतिरिक्त सब सत्य है और इतिहास में नाम और तिथियों के अतिरिक्त लगभग सब असत्य। इतिहास कलाकार नहीं कुशल कारीगर है, उपन्यासकार कलाकार है। दोनों की रचना प्रक्रिया भिन्न होने से उन्हें एक दूसरे की छूट नहीं है। वस्तुत: इतिहास और उपन्यास दोनों ही सत्यान्वेशी हैं। एक सत्य को अतीत की घटनाओं में खोजता है, दूसरा उसे मानव प्रकृति में। इतिहास को अतीत तक सीमित रहना ही है, जबकि उपन्यास को अतीत के बहाने वर्तमान और भविष्य की पड़ताल की भी स्वतंत्रता है। इसीलिये वहाँ मौलिकता के दर्शन सुलभ हैं।

प्रस्तावना – प्राचीन वाङ्मय में इतिहास और कथा में कोई ऐसा मौलिक भेद नहीं था जिसकी सीमा–रेखा निर्धारित की जा सके। कौटिल्य ने स्पष्ट कहा है कि पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र सब इतिहास है।[1] 'इतिहास' और 'कथा' के इस मिश्रित रूप के कारण ही कतिपय पाश्चात्य विद्धानों एवं इतिहासकारों का कथन है कि प्राचीन भारतीयों ने अपने अतीत का इतिहास नहीं लिखा, उनमें ऐतिहासिक विवेक था ही नहीं।[2] 'इतिहास' और 'कथा' में यह भेद निश्चित रूप से विज्ञान युग का स्वाभाविक परिणाम है और लगभग दो शताब्दियों पूर्व की घटना है। आधुनिक विज्ञान ने जैसे हमारे ज्ञान, सोचने–समझने की प्रणालियों एवं कार्य की विविध दशाओं को प्रभावित किया है वैसे ही इतिहास और कथा को भी। इसके पूर्व दोनों अधिक समीप थे और कुछ शताब्दियों के अन्तरपट को चीर कर देखें तो वे प्राय: अभिन्न दिखाई देंगे।

विविध घटनाओं का पूर्वापर संबंध स्थापित करते हुए उन्हें एक सूत्र में परिकल्पित तथा धारावाहिक बनाने की प्रक्रिया इतिहासकार के लिये आवश्यक है। यह विज्ञान के क्षेत्र की वस्तु न होकर साहित्य के क्षेत्र की वस्तु है। यह प्रक्रिया कल्पना द्धारा संचालित होकर ही क्रियाशील होती है और इतिहास को साहित्य की सीमा तक खींच लाती है। यही पर इतिहासकार भी उपन्यासकार के निकट आ जाता है और कल्पनाशील होने के नाते उपन्यासकार इतिहास के क्षेत्र में प्रवेश करने का अधिकार पा जाता है, अत: इतिहास के क्षेत्र में उपन्यास का प्रवेश अनुचित नहीं कहा जा सकता।

इतिहास, सत्य का अन्वेषण करते हुए भी प्रकृति से तथ्योन्मुख एवं तथ्यापेक्षी होता है। उसका आग्रह तथ्य पर अधिक रहता है और उसके लिए वह सब प्रकार के प्रमाणों (प्रामाणिक ग्रंथो, शिलालेखों, ताम्रपट्टों, मुद्राओं, प्राचीन पत्रों आदि) का संग्रह करता है, इसके विपरीत उपन्यास मानवीय सत्य की सरस उपलब्धि और स्थापना में तथ्यों की उपेक्षा भी कर सकता है। तथ्य उसके लिए बंधन नहीं बनते, उपकरण अवश्य हो सकते हैं। नवीन तथ्यों के ज्ञात होने से कालान्तर में इतिहास असत्य हो सकता है, किन्तु उपन्यास, यदि वह वास्तव में शक्तिशाली एवं प्राणवान रचना बन सका है तो कला की दृष्टि से कभी भी महत्वहीन एवं असत्य नहीं बन सकता, भले ही ऐतिहासिक तथ्यों में कुछ अन्तर आ जाये।

उपन्यास और इतिहास में एक अन्य मूलभूत अन्तर यह है कि जहाँ इतिहास का सम्बन्ध राष्ट्र के उत्थान–पतन से विशेष रूप से रहता है वहाँ उपन्यास व्यक्ति परक होता है। इतिहास के लिए बाह्य घटनाओं का महत्व अधिक होता है ओर उसी के आलोक में वह पात्रों का विश्लेषण करता है। उपन्यास और इतिहास में विभेद दर्शाते हुए फ्रेंच आलोचक एलेन ने लिखा है कि उपन्यास में कथा उतनी काल्पनिक नहीं होती जितनी प्रणाली, जिसके द्धारा विचार कार्य में परिणत होते हैं। इतिहास मानवीय चेतना की आन्तरिक एकता के लिए प्रतिश्रुत नहीं होता। उपन्यास केन्द्रीभूत मानवीय सम्वेदना का ही अनेकमुखी परिविस्तार होता है। उसके (उपन्यास के) विविध पात्र रचयिता की कल्पना एवं संवेदना के एक ही स्रोत से अनुप्राणित होते हैं।

इतिहास मूलत: वास्तविक घटनाओं की साक्षी पर आधारित रहता है, जबकि उपन्यास जीवन की प्रत्यक्ष घटनाओं पर आधारित रहता है। उपन्यास भी वास्तविक घटनाओं की साक्षी पर आधारित होता है, किन्तु तब उसमें कुछ अन्य तत्वों का भी समावेष आवश्यक रूप से हो जाता है।

उपन्यासकार द्रष्टा एवं स्रष्टा दोनों होता है। जहाँ इतिहासकार विवरण प्रस्तुत करता है वहाँ उपन्यासकार स्थिति की अनुभूति करता है।

* प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

व्यक्तियों तथा घटनाओं को चित्रित करते समय उपन्यासकार का स्रष्टा रूप सामने आता है और उसके सृजन के आयाम में उसका सम्पूर्ण लेखन-कौशल उसकी सहायता करता है उसके भीतर एक उदात्त कल्पना भी जाग्रत हो जाती है और इन सबके सम्मिलित प्रभाव से वह एक ऐसी कलाकृति को रूप देने में समर्थ होता है जो वास्तविक जगत में न होते हुए भी सम्भावित लगती है। इसके विपरीत, इतिहासपूर्ण आधारभूत तथ्यों एवं प्रमाणों के होते हुए भी पूर्णरूपेण स्वाभाविक एवं सत्य नहीं प्रतीत होता। इस बात को लक्ष्यकर ही सम्भवत: किसी कौशल भाषी व्यक्ति ने कहा है कि उपन्यास में सब कुछ सत्य होता है-केवल नाम और तिथियाँ सत्य नहीं होती ओर इतिहास में नाम और तिथियों के अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं होता है।[3]

इतिहास सम्बन्धी प्राप्त प्रामाणिक सामग्री में प्रवेशकर जब कोई इतिहासकार किसी युग विशेष का चित्र प्रस्तुत करने लगता है तब केवल वैज्ञानिक विधि से ही उसका कार्य सम्पादित नहीं होता, उसमें एक सूत्रता ले आने के लिये वह कल्पना का आश्रय लेने को विवष हो जाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान, जो इतिहास का आधार है, अपने आपमें कठोर, नीरस और निर्जीव होता है। उसे सरस, आकर्षक एवं सजीव बनाने के लिये इतिहासकार को कलाकार के प्रमुख साधन कल्पना का प्रयोग करना पड़ता है। किन्तु इस प्रयास में वह मूलत: इतिहासकार ही रहता है, कलाकार नहीं। कलाकार तो वह है जो शैली और विषय में भेद नहीं करता। कलाकार के मन में आनेवाली कलाकृति की अवधारणा आरम्भ से ही भाव और भाषा, विषय और शैली, कथ्य और कथन को एकाकार किये रहती है।[4] किन्तु इतिहासकार की प्रणाली इससे भिन्न होती है। पहले वह अनुसंधान एवं विश्लेषण से प्राप्त परिणामों द्वारा युग विशेष का चित्र अपने मन में बैठा लेता है और तब उसे रोचक, सजीव एवं प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत करने के लिए अनुरूप भाषा एवं शैली का आश्रय ग्रहण करता है। फलस्वरूप उसके सामने कला गौण और कथ्य प्रमुख हो जाता है और गौण कला, कला नहीं, साहित्यिक कारीगरी है। अत: इतिहासकार को हम कलाकार नहीं, साहित्यिक शिल्पी कह सकते है।[5] प्रश्न हो सकता है कि इतिहासकार अपनी कला को गौण क्यों होने देता है। क्यों नहीं वह भी अपनी कला को कवि अथवा उपन्यासकार अथवा अन्य कलाकार की भाँति प्रमुख बना देता है? इस प्रश्न का उत्तर दोनों की रचना-प्रक्रिया के उपकरणों को दृष्टि में रखकर अधिक सरलता से दिया जा सकता है। कवि अथवा उपन्यासकार की अभिरुचि घटना विशेष में न होकर मानव मात्र के सम्पूर्ण इतिहास, उसकी समग्र नियति में होती है। इसलिए वह एक घटना के आलोक में अनन्त घटनाओं के रहस्यों को देखता है, एक मनुष्य की नियति द्वारा सभी मनुष्यों की नियति पर विचार करता है। किन्तु इतिहासकार की अभिरुचि घटना विशेष तक ही सीमित रहती है, और व्यक्ति विशेष के आचरणों से बंधी रहती है। एक युग के भीतर से सभी युगों की झलक प्राप्त करने का काम, एक घटना के माध्यम से मनुष्य की सम्पूर्ण नियति तक जाने[6] की क्रिया ऐसी है जिसमें तथ्य कम और कल्पना बहुत अधिक सहायता करती है। इसलिए कल्पना कवि अथवा उपन्यासकार की सबसे बड़ी सृजन-शक्ति है, इतिहासकार उसका प्रयोग अनिवार्य परिस्थितियों में एक सीमित क्षेत्र में ही कर सकता है। उपन्यासकार या कवि के लिए कल्पना एक ऐसी टार्च है जिसक सहारे वह मानव मन एवं मस्तिष्क के गुह्य से गुह्य स्थानों को देख सकता है, वहाँ इतिहास की प्राकृतिक रोशनी का पहुँचना असंभव है।

वस्तुत: इतिहासकार एवं उपन्यासकार दोनों ही सत्य के अन्वेषक होते हैं किन्तु जहाँ इतिहासकार सत्य को केवल अतीत की घटनाओं के आलोक में खोजता है वहाँ उपन्यासकार उसे मानव प्रकृति के आलोक से ढूंढता है। उपन्यासकार का सत्य अनुभवदत्त सत्य है और वह विश्वक्रम के सिद्धान्त का संकेत है, जबकि इतिहासकार अतीत के ही संदर्भ में सत्य का अन्वेषण करते हुए मानव जगत् के क्रम से मौलिक सिद्धान्तो की खोज करता हैं।[7] इतिहासकार की दृष्टि केवल अतीत की ओर रहती है, उपन्यासकार की तरह वह न तो वर्तमान के भीतर झांक सकता है और न भविष्य की और संकेत कर सकता है। उपन्यासकार जब अतीत की और दृष्टि डालता है तो वह इतिहास की सामग्री से केवल अतीत का चित्र खड़ा करके ही संतोष नहीं करता। वह वर्तमान के सपनों एवं समस्याओं को भी प्रकारान्तर से घुला-मिला देता है और भविष्य के लिए उसे संदेशवाहक भी बना देता है। इसी को लक्ष्यकर बाबू गुलाब राय ने लिखा है कि 'उपन्यासकार केवल संजय की ही दिव्य दृष्टि नहीं रखता जो केवल 'किंकुर्वन्ति' का ही उत्तर दे सके वरन् वह 'किंविचारयन्ति' का भी उत्तर देता है। इसलिए इसकी कथा बाहर और भीतर दोनों और से पूर्ण रहती है। वह सच्चे कवि की भाँति रवि की गति से भी परे असूर्यस्पर्शी मानस लोक निवासिनी वृत्तियों और कोतूहल को पूर्ण कर देता है।[8] इस दृष्टि से उपन्यास में मौलिकता का अत्यधिक विस्तार पाया जाता है, जबकि इतिहास में मौलिकता के लिए कोई स्थान नहीं। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि इतिहास की प्रक्रिया बौद्धिक व्यवस्थाश्रित होती है जबकि उपन्यास की प्रक्रिया अन्तश्चेतनात्मक होती है। जहाँ इतिहासकार मौन है, वहाँ भी उपन्यासकार मुखर होता है। जिसके मनोजगत् तक इतिहास की गति असंभव है, वहाँ कल्पना एवं मानवीय संवेदना के सहारे उपन्यासकार की पहुँच है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं धर्मशास्त्रमर्थशास्त्रं चेतीतिहास:। अर्थशास्त्र, 1।15।14।
2. (A) History is the one weak point in Indian literature. It is in fact non existent. The total lack of history sense is so characteristic that the whole course of Sanskrit literature is darkened by the shadow of this defects, suffering as it does from an entire absence of chronology- Mac-donell: Sanskrit Literature, page 10.
   (B) Ancient India bequeathed to us no historical work - Pargitor: Ancient Indian Historical Tradition page 2.
   (C) साहित्य शीर्षक : डॉ. ताराचंद, डॉ. सावित्री सिन्हा द्वारा सम्पादित 'अनुसन्धान की प्रक्रिया' का यइतिहास और लेख' पृ. 154, 155
3. डॉ. देवीशंकर अवस्थी : आलोचना और आलोचना, पृ. 50
4. डॉ. जगदीश गुप्त : आलोचना का उपन्यास विशेषांक (अक्टूबर, 54) पृ. 178
5. वही पृ. 178
6. W.H. Hudson: An introduction to the study of literature, page 166.
7. श्री रामधारीसिंह दिनकर : महाकाव्य में सत्य और कल्पना, योगी, अक्टूबर 60
8. डॉ. देवराज उपाध्याय साहित्य और साहित्यकार, पृ. 158
9. श्री रामधारीसिंह दिनकर : महाकाव्य में सत्य और कल्पना, योगी, अक्टूबर 60
10. डॉ. विश्वेश्वरप्रसाद : अनुसंधान का स्वरूप (सं डॉ. सावित्री सिन्हा) में संकलित लेख 'ऐतिहासिक खोज की रूपरेखा', पृ. 3
11. डॉ. गुलाबराय : उपन्यास का शरीर विज्ञान, साहित्य संदेश का उपन्यास विशेषांक अक्टूबर-नवम्बर, 1940

विद्यानिवास मिश्र के ललित निबन्धों में सांस्कृतिक चिंतन

डॉ. इला द्विवेदी *

शोध सारांश – साहित्य में कला और संस्कृति, चाहे किसी भी रूप में चित्रित हो, आत्मोत्थान की ओर ले जाती है। वह साहित्य के प्रयोजनों को और भी तीव्रता के साथ, पर लालित्यपूर्ण अभिव्यक्ति के साथ सिद्ध करने में सहायक होती है। यही कारण है कि साहित्य में कला और संस्कृति की न सिर्फ उपस्थिति अनिवार्य है अपितु उस पर चिंतन भी उतना ही आवश्यक है।

प्रस्तावना – श्री विद्यानिवास मिश्र संस्कृत और हिन्दी साहित्य के ऐसे प्रकाण्ड विद्वान हैं जिन्होंने अपने ललित निबन्धों में जीवन के सभी गूढ़तम् पक्षों–तत्वों पर लालित्यपूर्ण ढंग से लेखनी चलाई है। संस्कृति मिश्र जी के जीवन में चन्दन की सुरभि की भाँति रची–बसी है। संस्कृति से विलग वे अपने अस्तित्व की कल्पना ही नहीं कर सकते और इसके लिए उन्हें अनेक बार तथाकथित प्रगतिवादियों के आक्षेप भी सुनने पडे हैं, किन्तु संस्कृति पक्ष से लगाव होने के कारण यदि कोई उन्हें गँवार भी कहता है तो वे इसे खुशी से ग्रहण कर सकते हैं। यही कारण है कि उनके द्वारा रचे गये निबन्ध साहित्य का एक बहुत बड़ा भाग संस्कृति की उज्जवल मणियों से अलंकृत है।

मिश्र जी के जीवन पर भारतीय संस्कृति का बहुत गहरा प्रभाव होने के कारण उन्होंने निबन्धों में संस्कृति और लोक संस्कृति को न केवल वर्ण्यविषय बनाया है अपितु उन्हें इस विधा के अन्तर्गत वृहत् स्थान भी दिया है। संस्कृति का अर्थ है सुसंस्कृत करना। संस्कृति हमें संस्कार देती है। हमारे व्यक्तित्व का परिष्कार करती है। हमें आचार–विचार और परम्पराओं से अवगत कराती है। इसीलिए हमारे जीवन के साथ–साथ साहित्य में उसका स्थान अति महत्वपूर्ण है।

प्रत्येक देश की अपनी अलग संस्कृति होती है। संस्कृति ही उसकी पहचान होती है। भारतीय संस्कृति सभी संस्कृतियों में श्रेष्ठ है। दुर्भाग्य से अपनी संस्कृति के प्रति आज वैराग्य भाव परिलक्षित हो रहा है। युवा पीढ़ी पश्चिम की संस्कृति की ओर उन्मुख है। संस्कृति की रक्षा की आज नितान्त आवश्यकता है। मिश्र जी संस्कृति के प्रति इस उपेक्षा भाव से पीड़ित है। यही कारण कि अपने निबन्ध साहित्य में वे इस विषय पर गहन विवेचन प्रस्तुत करते हैं।

मिश्र जी की स्पष्ट धारणा है कि अपनी संस्कृति की श्रेष्ठता की अनुभूति हम तब करते हैं जब कोई दूसरा हमें उसका स्मरण कराता है। हम स्वयं कभी उसकी महत्ता को समझने का प्रयास नहीं करते। बिना जाने समझे ही हम या तो उसकी डींग हाँकते हैं या उसे अनुपादेय सिद्ध करते हैं। उसके मर्म को समझने का कष्ट नहीं करते।

आज जो संस्कृति का उत्तराधिकारी होने का दावा करते हैं उनमें धैर्य और साहस पूरी तरह से समाप्त हो गया है। अधिक से अधिक अर्जित करो। पर क्या अर्जित कर रहे हैं? वह कैसा है? उसका क्या उपयोग होगा, यह वह नहीं सोच पाते।

वास्तव में भारतीय संस्कृति कर्म प्रधान है। वह कर्म का सन्देश देती है। आज की कर्महीनता की स्थिति में इसकी महत्ता को समझने की नितान्त आवश्यकता है। ऐतिहासिक, पौराणिक सन्दर्भों के माध्यम से मिश्र जी इसी तथ्य को काव्यात्मकता के साथ इस प्रकार व्यक्त करते हैं – 'इस देश की संस्कृति सीता है जो धरती से जनक के हल से पैदा हुई, इस देश की संस्कृति गोविन्द है जिनकी अलकें गाँवों की धूलि से सनी रहती थीं। इस देश की संस्कृति गंगा है जिन्हें भागीरथ ने अपने परिश्रम से पहाड़ खोदकर निकाला था। इस देश की संस्कृति गौरी हैं, जिन्होंने अपने प्रियतम को सौन्दर्य से नहीं अपने तप से प्राप्त किया था और इस देश की संस्कृति इस देश के वासी असंख्य ग्रामीण बंधु और वनवासी हैं जो अपनी असंख्य बाधाओं को राम के धनु से तोड़ने का विश्वास रखते हैं।'[1]

पश्चिम की संस्कृति में रंगे हुए व्यक्ति जो कि अल्पशिक्षित होने पर अपने को पश्चिमी सभ्यता में लिप्त कर लेते हैं। उनके आचार विचार और शिष्टाचार को देखकर मिश्र जी अत्यन्त दुख का अनुभव करते हैं और उनकी लेखनी यह कहने के लिए विवश हो जाती है – 'हिन्दुस्तान विलायत हो गया होता, सूट–बूट से नहीं अन्तर्मन में, तब शायद यह दर्द न होता। दर्द होता है इसलिए कि हिन्दुस्तान विलायत बन नहीं पायेगा। इसकी गंगा जमुनी माटी इसे विलायत बनने नहीं देगी। इतना सारा औद्योगीकरण, इतना सारा उधार खाये गेहूँ का जीवन रस, इतनी सारी वैज्ञानिक पाठय–पुस्तकें इतने सारे दूतावासों की अलसाई मदभीनी रौशनी और इतने सारे प्रसाधनों की गंध होते हुए भी हिन्दुस्तान विलायत नहीं हो पायेगा।'[2]

देश में व्याप्त हिंसा का वातावरण उसे तेजी से कमजोर कर रहा है और आज के मनुष्य की बदलती हुई भयानक मानसिकता को उजागर कर रहा है। अहिंसा परमोधर्म: का सन्देश देने वाली हमारी भारतीय संस्कृति हमें प्रेरित करती है कि हम इस ओर ने केवल गहराई से विचार करें अपितु इसका त्वरित निदान भी करे। सदैव से हमारी संस्कृति दया करो का दान देती आई है। इस सम्बन्ध में स्वनामधन्य रामशरण दास जी का वक्तव्य मिश्र जी के विचारों को पुष्टता प्रदान कर रहा है। उनके शब्दों में– 'हिन्दू संस्कृति चींटी से हाथी तक सबको खिलाती है। इसीलिए सर्वश्रेष्ठ है।'[3]

भारतीय संस्कृति अध्यात्मवादी है। भारतीय चिन्तन आध्यात्मिक है। धर्म से अनुप्राणित होता है हमारे जीवन का प्रत्येक कार्य। प्रत्येक संस्कार आध्यात्मिक रंग से रंगा होता है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति प्रत्येक धर्म और कर्म का बोध कराती है। आज शिक्षित वर्ग धार्मिकता की धज्जियां उड़ाने में तल्लीन है जबकि सामान्य वर्ग की हर श्वाँस में वह गहराई से व्याप्त है। अपठित मालिन भगवान का स्मरण करते हुए गली–गली से बधुआ बेचती

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

है, चर्मकार राम-नाम जपते हुए चमड़े का काम करता है, लुहार लोहे की वस्तु बनाता है, नाई हजामत बनाता है, कुम्हार बर्तन बनाता है जबकि अपने को पढ़ा लिखा कहने वाले महाशय कुतर्क-कीर्तन में समय नष्ट करके धर्म का खण्डन करते हैं। शास्त्रों से तरह-तरह की शंकायें करते हैं। येनकेन प्रकारेण संस्कृति का कहीं कोई रूप उद्भासित होता भी है तो मात्र प्रदर्शन हेतु। प्रगतिशील कहलाने वाला वर्ग विदेशी परम्पराओं से पूर्णतया परिचालित है जो अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं की हर कीमत पर भर्त्सना करना ही बड़े साहस का कार्य समझता है। मिश्र जी इन स्थितियों से व्यथित होते हैं और इन पर तीखे व्यंग्य करना नहीं भूलते। वे लिखते हैं- 'प्रगति के व्याख्याता अपना अपराध परम्परा के ऊपर लादकर पापमुक्त होना चाहते हैं, पर वे यह भूल जाते हैं कि इस पाप से भी बड़ी गठरी उनके सिर पर विदेशी परम्परा के भूत के रूप में बराबर सवार है और उनकी प्रत्येक क्रिया उस भूत में संचालित है।'[4] संस्कृति के प्रमुख बिन्दु अध्यात्म का परम लक्ष्य है- आत्मा का उत्थान। यह विविध रूपों में भारतीय मन से जुड़ा हुआ है। हिन्दू मन देवी-देवताओं को केवल आराध्य ही नहीं मानता वरन् वह उनकी उपासना में इतना डूब जाता है कि उन्हें अपने साथ ही देखने लगता है और अपने से देखने की यह क्रिया वह इसलिए अनुभव कर पाता है क्योंकि पूजन में, धर्म में, कर्म में उसकी अगाध निष्ठा है। इस विचार को मिश्र जी ने अपनी निबन्धात्मक कृति गाँव का मन में इस प्रकार रूपायित किया है - 'हिन्दू देवी-देवता केवल आराध्य ही नहीं आराधक भी हैं। मानस पाठ होगा तो हनुमान जी चुपचाप एक गोलियाई गमछी पर बैठ जायेंगे। अन्धे सूरदास का डण्डा हाथ में लेकर कृष्ण आँख मिचौनी का खेल रचने लगेंगे। विवाह के गीत में श्रीराम बनरा बन जायेंगे और अपनी माँ-बहन के लिए सौ-सौ गालियाँ सुनकर मुस्कराते रहेंगे। शंकर गौरा पार्वती के साथ कभी फगुआ खेलने निकलेंगे, कभी माघ मेले के रास्ते में भिखमंगा बनकर बैठ जायेंगे, कि कोई माघ नहान का पुण्य एक चुटकी देता जाये।'[5]

हमारी संस्कृति जिस आस्था, सहजता और सरलता का भावबोध हमें प्रदान करती है उसका स्थान अनास्था और कुटिलता ने ले लिया है फलस्वरूप जीवन से सुख-शान्ति का तिरोभाव हो गया है। ग्रामीण जन भाव-विभोर होकर देवी-देवता के गीत गाते है, उनमें निमग्न हो जाते है। धर्म से इतर किसी भी कार्य को करने से वह डरते है क्योंकि धर्म सभी को सच्ची राह पर चलना सिखाता है। मिश्र जी के शब्दों मे-'' गाँव का आदमी जिस भाव से देवी के गीत गाता है वह अधिक सच्चा है। वह गीत गाते समय अनुभव करना चाहता है कि वह गाँव की भाषा जिसमें वह गीत गाया जा रहा है अपने में साक्षात देवी है। चैत में नये फूले नीम की टहनी गन्ध की देवी है। अगरूधूप देवी है। दीप का आलोक देवी है, और हड़के और नगाड़े का आरोही स्वर देवी है। इस देवी के आगे वह छोटी बड़ी हरेक स्वर की आकांक्षा रखता है, पर आकांक्षा जिस व्यक्तित्व में उठती है, वह व्यक्तित्व छोटा नहीं होता।''[6]

भारतीय संस्कृति, अध्यात्म, साहित्य, कलायें इन सभी में भावना का प्राधान्य है। भावना ही हमें एक दूसरे से जोड़ती है और उच्चादर्श की ओर कदम बढ़ाने की प्रेरण देती है। बिना भावना के न हम परिवार से जुड सकते है, न ग्राम से, न नगर से, न राज्य से, न राष्ट्र से और न विश्व से। विश्व बन्धुत्व की भावना से जुड़ने के लिए भावनात्मकता का विस्तार करना होगा। इस सन्दर्भ में मिश्र जी का विचार अवलोकनीय है - 'जब हम भारत के भावनात्मक इतिहास को उसके समूचेपन में देखने का प्रयत्न करते हैं तो लगता है कि इस पागलपन को हटा दें तो वह इतिहास बिल्कुल खाली हो जाता है। श्रीमद् भागवत, गीत गोविन्द, आलवार प्रबन्ध, मीरा पदावली, नरसी मेहता के भजन, विद्यापति, चण्डीदास, सूर के पद, रसखान के सवैये, धनान्द के कवित्त और नजीर के कन्हैया का बालपन निकाल लिया जाये तो साहित्य में क्या बचेगा? श्री कृष्ण लीला को निकाल लिया जाये तो चित्रकला में क्या होगा? कन्हैया के बेदर्दीपन को निकाल लिया जाये तो संगीत में क्या बचेगा? निर्ममता का पाठ पढ़ाने वाली भगवतगीता को निकाल लिया जाये तो दर्शन मैं क्या बचेगा?'' [7]

इस प्रकार हम देखते है कि मिश्र जी ने अपनी निबन्धात्मक कृतियों में संस्कृति और उसके विविध पक्षों पर विशदता से विचार अभिव्यक्त किये हैं। वर्ण्यविषय की दृष्टि से संस्कृतिउनके साहित्य का अविभाज्य अंग बनकर सामने आई है जिस पर पुन: पुन: मौलिक चिन्तन करने के लिए उनकी उत्कंठा कभी समाप्त नही होती।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, तुम चन्दन हम पानी, पृ0सं0-12
2. वसन्त आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं, पृ0सं0-144
3. श्री रामशरण दास, पत्रिका-'गोधन' सम्पादक विश्वम्भर प्रसाद शर्मा, स्मृति अंक, दिसम्बर 1989, पृ0सं0-68
4. डॉ. विद्याानिवास मिश्र, वसन्त आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं, पृ0सं0-16
5. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, गाँव का मन, पृ0सं0-59
6. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, अंगद की नियति पृ0सं0-15
7. डॉ. विद्यानिवास मिश्र, अंगद की नियति, पृ0सं0-35

****

मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' में नारी पात्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. सुनिता यादव *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोधपत्र मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन ' में नारी पात्रों का विश्लेषणात्मक अध्ययन पर आधारित है, हिन्दी गद्य रचना के इतिहास में नारी की दीन–हीन शोषित उत्पीड़ित दशा को आधुनिक सहित्यकारो ने अभिव्यक्त किया है वही हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कथाकार मोहन–राकेश ने अपने नाटकों में सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं से जूझती हुई नारी के मनोविश्लेषण अन्तर्द्वन्दों के चित्रण की चुनौती स्वीकार कर उसके विविध रूपों को उद्घाटित किया है। उन्होंने गहन मानवीय ट्रेजेडी को नाटकीय स्थितियों में रचनात्मक ढंग से प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने नाटय साहित्य में नारी विषयक नवीन दृष्टिकोण, नारी की पीडा, अन्तर्द्वन्द एवं व्यक्तित्व केा उभारा है, बल्कि ये कहा जाये तो अतिश्योक्ति नहीं होगी कि नया आयाम देकर एक अनूठा मोड दिया है, उनके नाटको में गहन ट्रेजिडी ओर संघर्षो का समाहार है। प्रस्तुत शोधपत्र में राकेश जी द्वारा रेखांकित नारी की अस्थिरता, प्रवृत्ति और निवृत्ती का द्वन्द्व, बौद्धिकता आदि को शोधपत्र में अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

प्रस्तावना – नारी विधाता की रचना की उच्चतम परिकल्पना का साकार रूप है, समाज में नारी और पुरूष दोनों का अस्तित्व समान है, किन्तु सच कहा जाय तो सृष्टि के मूल में नारी का ही अस्तित्व है, किन्तु सदियों से भारतीय समाज पुरूष प्रधान रहा है, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सदियों से नारी को दूसरा स्थान ही मिलता आया है। नारी की अस्थिरता, प्रवृत्ति और निवृत्ती का द्वन्द्व बौद्धिकता एवं नारी के मनोवैज्ञानिक पहलुओं को राकेश जी ने अपने नाटकों में बहुत बारीकी से रेखांकित किया है।

हिन्दी नाटक के क्षितिज पर मोहन राकेश का उदय उस समय हुआ जब स्वाधीनता के पश्चात् पचास के दशक में सांस्कृतिक पुनर्जागरण का ज्वर देश में जीवन के हर क्षेत्र को स्पन्दित कर रहा था। उनके नाटको में न सिर्फ तेवर और स्तर ही बदला, बल्कि हिन्दी रंगमंच की दिशा को भी प्रभावित किया। 1958 में संगीत नाटक अकादमी द्वारा मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' को सर्वश्रेष्ठ नाटक का पुरस्कार मिला। उसके बाद से हिन्दी नाटक लगातार आगे बढ़ता रहा और सारी सीमाओं के बावजूद उसने क्रमश: हिन्दी के सृजनात्मक साहित्य के क्षेत्र में और देश के नाटक साहित्य में सार्थक स्थान हासिल किया। नाटककार के रूप में मोहन राकेश ने बहुत ख्याति अर्जित की, वैसे तो मोहन राकेश ने सभी विधाओं पर कार्य किया पर सबसे अधिक सफलता उन्हें नाटको के क्षेत्र में मिली, 'आषाढ का एक दिन' उनकी सर्वोत्तम रचना कहीं जाती है, यह नाटक महाकवि कालिदास को लेकर रचा गया है। नाटक में केवल प्रेमगॉथा ही नहीं है, बल्कि रचना और राजनीति का प्रश्न भी है। नाटक में मल्लिका प्रमुख स्थान पाती है, कवि कालिदास कश्मीर के शासक के रूप में सफल नहीं होता और मल्लिका के पास लौट आता है, परन्तु मल्लिका भी उसे नहीं मिल पाती है।

मोहन राकेश ने मध्यमवर्ग को अपनी रचनाओं के लिये चुना। राकेश का सबसे प्रिय विषय है, नारी–पुरूष के सम्बन्धों की व्याख्या 'आज के मध्यमवर्गीय पुरूष का पक्ष भी है जिसके कारण नारी–पुरूष के अहं की सीधी टकराहट होती है, राकेश के नाटको में नारी पुरूष संबंधों की भी एक विचित्र स्थिति हैं, हाँ ओर ना के बीच की, न साथ–साथ रह पाते है, न अलग–अलग।'[1] नारी पुरूष संघर्ष में जो अहं की भूमिका है, उसे राकेश ने बार–बार रेखांकित किया है। राकेश की नारियों पर विचार करते हुए हमारी दृष्टि उन पात्रो पर कम जाती है, जिनके पास प्रश्न उच्च मध्यवर्ग से भिन्न है, राकेश की नारियाँ इकहरी नारियॉ नहीं है, वे संश्लिष्ट चरित्र है, कई बार जटिल भी, अपने से लड़ती झगड़ती।

मोहन राकेश की नारियों का संसार यथार्थ ओर रोमांटिकता का मिलाजुला संसार है, कभी द्वन्द्व है और कभी संमजस्य का प्रयत्न 'असल में रोमान्टिकता राकेश का निजी अनुभव हो सकता है और यथार्थ समय का साक्षात्कार रोमांटिकता और साक्षात्कार दोनों की मिली–जुली भूमि पर उन्होंने अपनी नारियों को प्रस्तुत किया है। राकेश के सामने टूटते भावुक रिश्तो का यथार्थ है। हम चाहे भी तो अधिक दिन कल्पना में नहीं जी सकते, यथार्थ बार–बार चोट करता है।'[2] ऐसा लगता है, कि राकेश जैसा संवेदनशील नाट्ककार नारी के मूलभूत प्रश्नो पर भी विचार कर सकता है। लेकिन उसके निष्कर्षात्मक समापन तक नहीं पहुॅच पाता।क्योंकि लेखन से प्रश्न के साथ उत्तर की आशा वैसे भी नहींकी जानी चाहिए इसलिए 'आषाढ़ का एक दिन' जैसे सशक्त और महत्वपूर्ण नाटक में भी प्रश्न अनुत्तरित है, प्रेम ओर विवाह का प्रश्न, राकेश की नारियों का अपना अलग व्यक्तित्व है, वे अपनी अलग पहचान बनाती है, राकेश के पास भी एक नारी दृष्टि है, तभी तो वे मल्लिका जैसी नारियों का चरित्र रच सके। जो अन्त: संघर्ष से गुजरते हुए भी संवदेनशील है। 'आषाढ़ के एक दिन' में निम्न नारी पात्र है जिसमें मल्लिका, अम्बिका, रंगिणी संगिणी प्रियगुमंजरी आदि।

आषाढ़ का एक दिन में नारीपात्र – 'आषाढ़ का एक दिन' के नारी पात्र है: अम्बिका (ग्राम की एक वृद्धा मल्लिका की मॉ) मल्लिका(कवि कालिदास की प्रिया, कविप्रिया) रंगिणी–संगणि दो शोधार्थिनी,प्रियंगुमंजरी (राजकन्या और कवि पत्नि)। कालिदास और प्रियगुंमजरी ऐतिहासिक पात्र हैं। शेष कवि कल्पित। नारी पात्रों में सबसे प्रमुख है मल्लिका, पर अम्बिका और प्रियंगुमंजरी का चरित्र भी संवादो के माध्यम से उभरा है। ऐसा प्रतीत होता है कि राकेश ने अपनी क्षमता का सर्वाधिक उपयोग मल्लिका के चरित्रांकन में किया हैं। मल्लिका है– रोमांटिक नारी और दूसरी और उसकी मॉ है। अम्बिका यथार्थ में जीने वाली नारी है, और प्रियंगुमंजरी जो राजनीतिक एवं जनप्रतिनिधि है, जिसके लिए राजनीतिक महत्वकाक्षांए सर्वोपरि हैं। इस प्रकार मोहन राकेश नारी के तीन रुप हमारे सामने रखते है, जो सशक्त हैं जबकि दो शोधछात्राऍ रंगिनी एवं संगिनी समकालीन शोध की दुर्गति पर एक टिप्पणी है, जहां तक चेतना का संबंध है, राकेश ने मल्लिका को अधिक रागात्मकता दी है।

मल्लिका – मल्लिका यद्यपि कल्पित पात्र है, किन्तु वह सम्पूर्ण नाटक के भाव सूत्रो की केन्द्र बिन्दु है, कालिदास की प्रेमिका मल्लिका का ही उसके सम्पूर्ण

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, इछावर, जिला – सीहोर (म.प्र.) भारत

काव्य सृजन की प्रेरणा है, वह कालिदास की तरह ही अस्थिर तथा गृहस्थ होकर संयन्त स्वाभिमानी तथा आत्मविश्वासी है, वह नाटक की नायिका है, ओर आत्मोत्सर्गशील भावनाओं की प्रतिमूर्ति है, उसकी हिरणी सी चंचल ऑखो को देखकर प्रियांशु को भी ईर्ष्या होने लगती है। मातुल के शब्दो में 'वह सारे प्रदेश में सबसे सुशील सबसे विनीत ओर भोली लड़की है।'[3] मल्लिका भाव जगत में विचरने वाली भोली भाली ग्राम बाला है, वह कालिदास की प्रेयसी ही नहींकाव्य सृजन की मूल प्रेरणा है, उसकी आस्था का स्थिर ओर विस्तारित रूप ही कालिदास के प्रति उसका दिव्य समर्पण है, कालिदास उसके लिए व्यक्ति नहीं भावना है और उसने भावना में भावना का वरण किया है, जीवन की स्थूल आवश्यकता ही उसके लिए सब कुछ नही, वह उसकी शुभ चिन्तक रहें वह प्रतिमा के विकास विस्तार की इच्छुक है और इसी पर वह अपने प्रेम को भी समर्पित कर देती है, उसका मत है, – 'उन्हें इस सम्मान का तिरस्कार नहींकरना चाहिए, यह सम्मान उनके व्यक्तित्व का है, पर उज्जैनियी जाकर कालिदास मल्लिका को भुला देता है तथा विरागनाओं के प्रेम में डूब जाता है, मल्लिका को उसकी अवेहलना भी स्वीकृत है।'[4] अत: वह कहती है– 'मैं टूट कर भी अनुभव करती रही हूँ कि तुम बन रहें हो क्योकि मैं अपने को अपने में न देखकर तुम में देखती थी।'[5] वह कालिदास के जीवन से दूर रही पर वह कालिदास को कभी भुला नहींसकी वह उसके जीवन का केन्द्र बिन्दु बना रहा है, मल्लिका इस नाटक की नायिका है, जो कोमल स्वाभिमानी भावुक सहृदयी तथा आत्मसमर्पण से युक्त है, वह कालिदास की प्रेरणा थी, उसके चरित्र का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण राकेश के नाट्य साहित्य की अनूठी देन है।

अम्बिका – इसी नाटक में अम्बिका यथार्थ की भूमि पर जीने वाली नारी है, जिसे जीवन के कटु अनुभवो दैन्य स्थितियो तथा आवश्यकताओं ने कठोर तथा हृदयहीन बना दिया है, वह लगभग भावशून्य हो चुकी है, लेखक ने अम्बिका के रूप में एक ऐसे पात्र की सर्जना की है, जो अपने कटु जीवन अनुभूतियों के प्रकाश में यथार्थ में जीती जागती प्रेरणा है,

प्रियंगुमंजरी – प्रियगुमंजरी कालिदास की परिणिता है, उसके प्रेम में अधिकार भावना है, जो उसके अभिजात्य वर्गीय गारिमा के अनुकूल है, राकेश जी ने जहां मल्लिका के प्रेम में उदारता तथा बलिदान की भावना दिखाने का प्रयास किया है, वही प्रियंगु का प्रेम एकाधिकार तथा कठोर यथार्थवादी भूमि पर पला है, यह बताने का प्रयास किया है, वस्तुत राकेश जी के अनुसार मल्लिका तथा प्रियंगु दो शक्तियॉ हैं, मल्लिका दूर रहकर भी कलिदास का निर्माण करती है, उसके उत्थान के लिए अपने जीवन की सुविधाओं को स्वाहा कर देती है, दूसरी ओर प्रियंगु जो उसे काव्य से खींचकर राजनीति में स्थापित करना चाहती है, 'आषाढ का एक दिन नाटक में राकेश जी ने नारी पात्रो का जो मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है, वह अद्धितीय है, राकेश के नाटको की नारियॉ अनाम–अपरिभाषित नारी पुरूष संबन्धो का नया अध्याय जोड़ती है,

राकेश के नारी पात्रो में गहराई है, राकेश के सम्पूर्ण नाटको में यह तथ्य प्रमाणित होता है, कि नारी चरित्र लिखते वक्त उनकी दृष्टि भारतीय समाज पर रही तभी तो वह नारिया समर्पण की भावना से उद्वेलित है। 'आषाढ का एक दिन' की नायिका मल्लिका पूरी भावुकता से अपने कवि प्रेमी कालिदास को स्वीकारती है, अन्तिम समय तक उसके प्रति रागभाव बना रहता है, पर परिस्थितियाँ मल्लिका को कवि मातुल से जोड़ देती है, ओर एक बच्ची का भी जन्म होता है, पर यथार्थ तो नारी मन की पीड़ा ही है, जिसे मल्लिका त्याग ओर आदर्श स्थापित करती है, मल्लिका का चरित्र भारतीय नारी को चरितार्थ करता है, जो निस्वार्थ त्याग ओर तपस्या की मूर्ति है।

राकेश के नारी पात्र कभी मध्यमवर्गीय चरित्र का प्रतिनिधित्व करते है, तो कभी यथार्थ के हर वर्ग से किन्तु मुख्यत: मध्यवर्ग से ही सरोकार रखते है, जो विषम परिस्थितियों के होते हुए भी साकार हो उठते है, 'आषाढ का एक दिन' में वह कह उठती है,– 'आप बहुत उदार है, परन्तु हमें असुविधा नहींहोगी।'[6] भारतीय नारी मॉ, पत्नि, बेटी, होने का कर्तव्य पूरा करती है, ओर हर रूप में सार्थक होती है, राकेश के नारी पात्र में भी हर नारी ने अपने अधिरूप को चरितार्थ किया है, 'आषाढ का एक दिन' में अम्बिका एक मॉ है, वह जानती है, कि मॉ का जीवन भावना नहींकर्म है, वह कहती है, तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना ओर आत्म प्रवंचना है, यही नारी के यथार्थ रूप है, जिन्हें राकेश के नाटको में चरितार्थ किया है,। जहाँ भारतीय नारी एक दूसरे की सुन्दरता से ईर्ष्या भाव रखती है, पर राकेश के नारी पात्र यथार्थ से परिचित है, प्रियंगु मंजरी कालिदास की परिणिता है, वह कालिदास से प्रेम करती है, अपना अधिकार चाहती है, किन्तु यह भी जानती है, कि कालिदास के मन में मल्लिका है, फिर भी मल्लिका से मिलने पर कहती है– 'सचमुच तुम वैसी सुन्दर हो जैसी मैंने कल्पना की थी, सचमुच तुम बहुत सुन्दर हो जानती हो अपरिचित होते हुए भी तुम मुझे अपरिचित नहीं लग रही हो।'[8]

मोहन राकेश ने नारी चरित्रों के निर्माण में अपनी संलग्नता का परिचय दिया और उसमें अपने निजी अनुभवों का भी प्रयोग किया विशेषता: नारी–पुरूष सम्बन्धों में पुरूष की प्रतिक्रियाओं और नारी मन के अन्तर्द्वन्द्वों का, पर इतना कह देना पर्याप्त नहींहैं। उन्होंने अपने अनुभव को वैयक्तिक स्तर पर उपयोग करके सन्तोष नहीं किया, अपनी नारियों को समय की सापेक्षता में रखकर प्रस्तुत किया।जीवन में आयी नारियॉ भी यदि रचना में आयी तो वे केवल राकेश की व्यक्तिगत नारियॉ नहींरह जाती। वे सामाजिक परिवेश का हिस्सा बनकर प्रस्तुत होती हैं। यही राकेश की कलात्मकता है, राकेश अपनी निजता से नारी चरित्रो को लेकर चलते हैं, वहा उनकी संवेदना ईमानदारी के साथ मौजूद है, इसीलिए वे उन्हें रूप रंग आकार कुल मिलाकर एक व्यक्तित्व दे सके।

राकेश अपने नारी पात्रों को जिस मानसिक द्वंद्व से गुजारते है, वह कला के स्तर पर है, अपनी नारियों के चरित्र बनाते हुए मोहन राकेश सबसे अधिक ध्यान उनकी आन्तरिकता पर देते है, और यहाँ वे अपने समानधर्मी कथाकारो राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर आदि से अलग हो जाते है, क्योकि उनके अंदर एक नाटककार भी मौजूद है, जिसने मध्यवर्गी स्थितियों, कामकाजी महिलाएँ या फिर पराश्रित बडें कुटुम्ब के दबाव, सामाजिक परिस्थितियों आदि से घिरी नारी में रूचि है, नारी के अन्तर्मन को उद्घाटित करने में है, वास्तव में राकेश के पात्र इतने सूक्ष्म स्तर पर चलाये जाते है कि कई बार उनकी वास्तविक पहचान का काम कठिन हो जाता है, हम यह नहीं जान पाते कि अब नाटक का अन्त होने वाला है और राकेश की नायिका चाहती क्या है। नाटको में नारियॉ क्यों प्रश्नों को अनुत्तरित छोड जाती है। यही है राकेश की कलात्मकता।

मोहन राकेश ने संशलिष्ट जटिल नारियों की सृष्टि की, वे सीधी इकहरे व्यक्तिवाली नारियाँ नहीं है। उनमें पात्र के भीतर पात्र है, ओर वृत के भीतर वृत। समीक्षकों ने इसे रेखांकित किया है, कि मोहन राकेश अपने संलिष्ट नारी पात्रो को यथार्थ ओर रोमांटिकता की सम्मिलित भूमि पर खड़ा करते है, उनकी नारियों का अपना अहं भी है, इसीलिए पुरूषों से उनकी टकराहट भी होती है। नारी पुरूष संबंध लड़खड़ातें है, तो स्वंय त्याग की मूर्ति बन कालिदास जैसे को यथोचित स्थान दिलाने वाली मल्लिका वैसी नारी थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृक्तित्व– डॉ.रमेश कुमार जाधव पृ.78,79
2. मोहन राकेश के सम्पूर्ण नाटक नेमी चन्द्र जैन पृ. – 134
3. मोहन राकेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व– डॉ.रमेश कुमार जाधव पृ.142
4. मोहन राकेश में सम्पूर्ण नाटक पृ.5–२
5. आषढ़ का एक दिन–मोहन राकेश पृ.42

6. वही पृ.209 7. वही पृ.111 8. वही पृ.204

वर्तमान परिवेश में हिन्दी भाषा की अस्मिता - महत्व एवं मूल्यांकन

डॉ. जयश्री भटनागर *

शोध सारांश – प्रदेश के लोकप्रिय एवं यशस्वी मुख्यमंत्री माननीय श्री शिवराजसिंह जी चौहान द्वारा लोक सेवाओं के गारंटी अधिनियम 2010 पारित कर नागरिकों के अधिकारों को सशक्त बनाकर अभिनव कार्य किया हैं। आमजन को याचनाभाव से मुक्त कर सशक्त बना दिया हैं एवं लोक सेवा में कोताही

शब्द कुंजी – लोक सेवा, अधिसूचित, हितग्राहियों, पदाभिहित, शास्ति ।

प्रस्तावना – भारत में महापुरूषों ने एक मत से हिन्दी को भारत की अभिव्यक्ति का समर्थ एवं प्रभावी माध्यम स्वीकार किया हैं। यही कारण हैं कि हिन्दी राष्ट्र भाषा के रूप में तथा भाषा, साहित्यिक भाषा, संचार की भाषा तथा पत्रकारिता एवं मीडिया की भाषा के रूप में न केवल स्वीकार्य हुई बल्कि इसकी लोकप्रियता में भी आशातीत वृद्धि हुई हैं।

ऐसा कहा जाता हैं कि कोई भी व्यक्ति अपनी मौलिक चिंतन प्रक्रिया को अपनी मातृभाषा में ही सोचने एवं विचारने से आरम्भ करता हैं। अन्य विदेशी भाषाओं की स्वीकृति एवं उनके अपनाने का माध्यम भी मातृभाषा ही बनती है। इस कारण निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि एक विस्तृत क्षेत्र में ज्ञानार्जन, संचार एंव सम्पर्क का सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम हिन्दी हैं।

विश्व की भाषाओं में से सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषाओं में हिन्दी का स्थान माना गया हैं। यह उपलब्धि हिन्दी के साथ अनायास ही नहीं जुड़ गयी हैं बल्कि युगयुगान्तर में हुए विकास, शास्त्रीय भाषाओं का उत्तराधिकार तथा सैकड़ों प्रकार की बोलियों ने इसमें अपना योगदान दिया हैं। इसी का परिणाम है कि हिन्दी न केवल ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में अध्ययन अध्यापन की उच्चतम उपलब्धियों को आत्मसात कर सकी हैं , वरन आधुनिक अनुसंधान, तकनीक एवं विकास की गति के साथ अपना तालमेल भी स्थापित कर सकी हैं।

हिन्दी शब्द की व्युत्पति संस्कृत के सिन्धु शब्द से मानी जाती हैं।सिन्धु शब्द का प्रयोग सिन्धु नदी के लिये होता आया हैं।इरानी लोगों ने इसे हिन्दु नाम से पुकारा और इस प्रकार हिन्द शब्द भारत के पर्याय का अर्थ व्यंजित करने वाला शब्द बन गया हैं। इस प्रकार यह निर्विवाद है कि हिन्दी एक विशिष्ट एवं विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र की भाषा हैं। यह भारत की समन्वित संस्कृति एवं बोल-चाल की भाषा हैं।

आधुनिक समय में हिन्दी भाषा केवल साहित्य की ही भाषा नहीं मानी जाती हैं बल्कि भारतीय संस्कृति राष्ट्रीय दृष्टिकोण, परस्पर सद्भाव, सामाजिक नैतिकता तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करने वाली एवं उन्हें अभिव्यक्ति देने वाली भाषा भी मानी जाती हैं।

आधुनिक युग सूचना क्रान्ति का युग हैं। जनसंचार के माध्यमों ने ग्लोबल विलेज की परिकल्पना को साकाररूप प्रदान करने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई हैं। जनसंचार माध्यमों में भाषा का बहुत अधिक महत्व हैं। अंग्रेजी भाषा ने आधुनिक युग में एक प्रकार से विश्व भाषा का स्वरूप ग्रहण कर लिया हैं। ऐसी स्थिति में हिन्दी के लिये राष्ट्रभाषा राजभाषा एवं बोलचाल की भाषा के रूप में अपने अस्तित्व को आधुनिक संन्दर्भो में प्रस्थापित करने एवं अपनी उपयोगिता को सभी क्षेत्रों में बढाने की दिशा में अनेक चुनौतियॉ एवं समस्याऍ खडी हो गई हैं।

यद्यपि यह सत्य है कि वर्तमान में भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के व्यावसायीकरण तथा संचार क्रांति का बहुत अधिक विस्तार हुआ हैं। किन्तु इसके साथ ही भारत में पश्चिमी सभ्यता की अंधी दौड शुरू हो गई है। महात्मागांधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान ही इसका पुरजोर विरोध किया था।

भारत में पश्चिम के अन्धानुकरण ने हिन्दी भाषा की दशा और दिशा पर बहुत विपरीत प्रभाव डाला हैं। अंग्रेजी के अनेक शब्द सामान्य बोलचाल में भी उपयोग में आने लगे है। नवीन दृष्टिकोण से इसे गौरव का विषय माना जाता है किन्तु हिन्दी भाषा की मौलिकता और उसकी आस्मिता की दृष्टि से यह घातक है। इसी का दुष्परिमाण शिक्षा एवं रोजगार हेतु भारत से पलायन के रूप में सामने आया है। अंग्रेजी के अनेक शब्द हिन्दी भाषा भाषियों की विवशता बन गये है तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनेक बार इनसे बड़ी कठिनाईयाँ भी उत्पन्न हो जाती है। खिचड़ी भाषा की कठिनाईयों ने ही आज भारत में नई पीढ़ी के लिये अंग्रेजी को शिक्षा एवं रोजगार की भाषा बना दिया है। इसका एक अन्य पक्ष यह है कि भारतीय विद्यार्थी विश्व के अनेक राष्ट्रों में विभिन्न क्षेत्रों में बहुत अधिक योगदान दे रहे है लेकिन भारतीय प्रतिभा में मौलिक अन्वेषण की प्रवृति एवं उसकी क्षमता का गम्भीर क्षरण (कमी) हुआ है।

भारत भाषावाद एवं क्षेत्रियता की राजनीति में भी हिन्दी के विकास में गम्भीर अवरोध खडे किये है। हिन्दी भाषा का किसी भी भाषा से विरोध नहीं है। लेकिन भाषावाद की राजनीति में भारत में भाषाई विकास को अवरूद्ध करने में कोई कसर नहीं छोडी है। इनके अतिरिक्त जातिवाद एवं धार्मिक संकीर्णता का दलदल भारत की एकता और अखण्डता को छिन्नभिन्न करना चाहता है। भारत की एकता और अखण्डता का प्रश्न सीधे-सीधे एवं अप्रत्यक्ष रूप से भी हिन्दी भाषा से जुडा हुआ है।

वर्तमान में समाचारपत्र, रेडियों, दूरदर्शन, जनसंचार के बहुत ही सशक्त माध्यम माने जाते है। बोलचाल की भाषा के विकास में इनका बहुत बडा योगदान है। लेकिन यह खेद का विषय है कि इन माध्यमों में हिन्दी शब्दों की उपेक्षा कर अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। विज्ञापनों मे भी हिन्दी के साथ अंग्रेजी शब्दों का इस प्रकार से प्रयोग किया जाता है कि हिन्दी के वाक्य अंग्रेजी शब्द के मोहताज बन जाते है।

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

इस प्रकार वर्तमान परिवेश में हिन्दी भाषा की अस्मिता के लिये अनेक चुनौतियॉ खड़ी हो गई है। इनका निवारण करना आज के समय की सबसे बडी आवश्यकता है।

1. भारत में मौलिक चिंतन एवं नवीन अन्वेषण की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने के लिये स्वभाषा का विकास अत्यन्त आवश्यक है। इसके महत्व को स्वीकार करके ही इस दिशा में आगे बडा जा सकता है। यदि मौलिकता को प्रोत्साहित किया जाता है। और उसे पर्याप्त महत्व दिया जाता है तो स्वत: ही स्वभाषा के विकास का मार्ग प्रशस्त होगा। अनुकरण को बढावा देने से ही अंग्रेजी का वर्चस्व बडा है तथा स्वभाषाऐ हतोत्साहित हुई है। यद्यपि अनुकरण सीखने की प्रक्रिया का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है किन्तु मौलिक चिन्तन ही विकास की प्रक्रिया को आगे बढाता है।

जापान, इसराइल, चीन आदि राष्ट्रों ने अपनी भाषा का विकास करके बहुत बड़ी उपलब्धिया हासिल की है। यह उदाहरण भारत सहित अन्य राष्ट्रों के लिये भी विचारणीय है।

2. विज्ञान एंव प्रौद्योगिकी अपनी भाषा होती है तथा इनका विकास की अपनी भाषा होती है तथा उनका विकास भी अपने ढंग से होता है। इस क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क आधारभूमि सामग्री जुटाने का कार्य करते है। किन्तु मौलिक चिन्तन एवं मौलिकता की अभिव्यक्ति के लिये मातृभाषा ही सर्वाधिक प्रभावी माध्यम है। इसकी किसी भी स्तर पर उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये।

3. भारत में संकीर्ण राजनीतिक दृष्टिकोण के कारण अनेक समस्याएँ खडी होती रहती है तथा राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिये भी अनेक संकट खडे हो जाते है। भारत की समन्विक संस्कृति हमारी अमूल्य धरोहर है इसे नष्ट भ्रष्ट करने का किसी को भी अधिकार नहीं है। इस दिशा में राष्ट्रीय दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी भाषा निर्विवाद रूप से बहुत बडा योगदान दे सकती है।

4. संचार के माध्यमों में भाषा के साथ खिलवाड नहीं किया जाना चाहिये। जनसंचार के माध्यमों की भाषा साहित्यिक न होकर सामान्य बोलचाल की भाषा होती है। यह आश्यक रूप से सरल, सुगम और सुबोध होती है। लोग इसे आसानी से व्यवहार में लाते है एवं सीखने के लिये ही लालायित रहते है। हिन्दी भाषा ने ही जनसंचार के माध्यमों को आम आदमी तक पहुँचाया है तथा उनकी लोकप्रियता को आशातीत ऊचाईयाँ प्रदान की है। यदि यह सत्य है तो इन माध्यमों के द्वारा हिन्दी भाषा और उसके शब्दों को किसी भी स्थिति में विकृत नहीं किया जाना चाहिए। हिन्दी में सभी भाषाओं के शब्द लिये जा सकते है किन्तु इसका परिणाम हिन्दी भाषा की दुर्बलता या उसकी विकृति के रूप में सामने नहीं आना चाहिए।

वर्तमान परिवेश में यदि हिन्दी भाषा के प्रचलन एवं उसके विकास के लिये अनेक चुनौतियाँ खड़ी हुई है तो इस क्षेत्र में अनेक संभवानाएँ भी प्रकाष में आई है। आज हिन्दी के प्रति नई पीढ़ी की उदासीनता को दूर करने की आवश्यकता है। इस दिशा में अधिक से अधिक विचार किया जाना चाहिये। इसी से नई पीढ़ी में भारतीय संस्कारों के प्रति उदासीनता को दूर किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आधुनिक भाषा विज्ञान - डॉ. राममणि शर्मा
2. राजभाषा हिन्दी - डॉ. मलिक मोहम्मद
3. भाषा चिन्तन - डॉ. भोलानाथ तिवारी
4. हिन्दी का निखार और परिष्कार - डॉ. शिवप्रासद शुक्ल
5. प्रयोजनमूलक हिन्दी रचना एवं अनुप्रयोग - डॉ. रामप्रसाद, डॉ. दिनेश गुप्त

****

निराला की प्रासंगिकता – एक अनुशीलन

डॉ. रशीदा खान*

प्रस्तावना – बड़े शौक से सुन रहा था ज़माना
तुम्हीं सो गए दास्तां कहते–कहते ।

निराला जैसा साहित्यकार अपने व्यक्तित्व और प्रतिभा का धनी था। वे तो जन्म से ही सरस्वती पुत्र थे । आज जब उनकी प्रासंगिकता की बात चली तो लगा कि 'निराला' कब प्रासंगिक नहीं थे। जो साहित्य के हर क्षेत्र में अपनी छवि बनाए हुए हैं। जिन्हें वादों के दायरे में भी नहीं बाँधा जा सकता। निराला छायावाद के उन्नायक थे और छायावाद को शिखर पर पहुँचाने का कार्य भी उन्हीं का था। एक साथ पाँच–पाँच युगों में समानान्तर यात्रा करने वाले कवि के रूप में थे निराला। उन्होंने प्रगतिवाद का भी नेतृत्व किया तथा 'नये पत्ते' की कविताएँ प्रयोगवाद का प्रारंभ हैं । आप जीवन पर्यन्त दीन दुखियों के दुखों को नष्ट करने के लिये अपने जीवन का अमृत उन पर सींचते रहे । आ. नन्द दुलारे वाजपेई ने कहा भी था 'वह लोकजीवन से सम्बद्ध महनीय है।''

निराला को महिशादल के जीवन से अहम, बैसवाड़े से अदम्य पौरूष, बंगाल की भूमि से विद्रोही भावना मिली थी। जगत और जीवन पर सचेत रहने वाले 'निराला' बचपन से ही विद्रोही स्वभाव के थे और अन्त तक बने रहे । वे आजीवन सामाजिक रूढ़ियों, धार्मिक अंधविश्वासों, सांस्कृतिक जागरण तथा वैचारिक क्रांति के लिये संघर्ष करते रहे।

निराला की साहित्य प्रतिभा अनूठी थी, बहुमुखी थी। उन्होंने कहानी, रेखाचित्र और उपन्यास लिखने में भी उतनी ही सफलता प्राप्त की जितनी कविता लिखने में। निराला की हर कविता में अनूठापन है। चाहे वह 'राम की शक्ति पूजा' हो या 'तुलसीदास', 'बादल राग' हो या 'जागो फिर एक बार', 'सरोज स्मृति' हो या 'जुही की कली', 'विधवा' हो या 'तोड़ती पत्थर' उनकी हर कविता के विविध चित्र पाठक को भावविभोर किये बिना नहीं रहते । निराला के गद्य में प्रकृति चित्रण भी सुन्दर बन पड़ा है –

सखि बसंत आया।
भरा हर्ष वन के मन, नवोत्कर्ष छाया।

'जुही की कली' में संयोग श्रृंगार है। बादल राग में जागृति का संदेश है। कहीं–कहीं निराला गहन दार्शनिक घाटियों से उतर कर तुम (परमात्मा) और मैं (आत्मा) में संबंध भी स्थापित करते हैं। निराला केवल छायावादी कवि ही नहीं अपितु उनके काव्य में प्रयोगवादी भाव भी दिखाई देते हैं –

भेद खुल जाए वह सूरत हमारे दिल में है
देश को मिल जाए वह पूँजी तुम्हारे मिल हैं।

यही नहीं उन्होंने व्यंग्य के रूप में – धार्मिक, सामाजिक विषय आर्थिक स्थितियों, मार्क्सवाद, ढोंगी नेताओं, स्वार्थी और अवसरवादी लोगों, सरकारी अफसरों तथा सामंती सभ्यता पर करारा व्यंग्य किया है। अपनी साहित्यिक प्रतिभा के रूप में वे मौलिक रहे । जयशंकर प्रसाद ने उनकी साहित्यिक मौलिकता पर कहा है 'वे नख से शिख तक मौलिक हैं। वे किसी से हूबहू नहीं मिलते। उनका निराला नाम बिल्कुल सार्थक है। मेरे विचार में –

ग़रीबों का मसीहा था निराला
सारे जग से निराला था 'निराला'
खूबियाँ क्या कहें उसकी
सारे जग से आला था निराला।'

महाप्राण मानव निराला के हृदय से पीड़ित मानवता के स्वर निकलते हैं, जिस तरह धरती से बीज का जुड़ाव होता है तथा नारी का ममता से ठीक उसी तरह निराला आम आदमी से प्रेम करने वाले, उसके दर्द को समझने वाले थे। ग़रीबों व निम्न श्रेणी के लोगों की भावना भी निराला के प्रति कुछ इस तरह रही होगी –

मेरे क़रीब से गुज़र कर
मेरी दास्तां कह गया कोई।
मेरे साथ–साथ बैठकर
मेरे दर्द ले गया कोई।

औरों के लिये जीने वाला यह शख्स अपने लिये परेशान न था। उसके मन में धनहींन, अपाहिज़ और जरूरतमंद जन समाज के प्रति करूणा थी।

हिन्दू समाज के ठेकेदार और उच्च जाति के विरोध के बावजूद निराला 'कुल्ली भाट' के घार जाते, उसके हाथ का भोजन व जल ग्रहण करते। उनकी दृष्टि में कुल्ली भाट का हृदय परिवर्तन होकर वह एक अच्छा आदमी बन गया था। निराला को 'कुल्ली भाट' में मनुष्यत्व के दर्शन होते हैं, उन्हें लगा 'एक साधारण आदमी असाधारण हो गया है।' एक जगह निराला ने कुल्ली की महत्ता को प्रदर्शित करते हुए कहा है – 'हृदय से ऊपर मैं बहुत अच्छा हूँ।' 'कुल्ली' के अंतिम समय में निराला को बार–बार आभास होता रहा कि 'कुल्ली' उन्हें बुला रहा है। जैसे पारलौकिक स्नेह मौन निमंत्रण दे रहा था । उसके एकादशाह क्रिया में भी वे सम्मिलित होते हैं। 'बिल्लेसुर बकरिहा' को सुकरात से भी बड़े दार्शनिक के रूप में बताया है । इनके पास शब्द नहीं है लेकिन दृष्टांत अद्भुत हैं।

चतुरी चमार को व्यवहार ज्ञान है। मजबूत जूते बनाने वाला यह चमार दुखी इसलिये है क्योंकि ज़मींदार दो जोड़ी जूते साल के बनवाता है क्यों ? यह है शोषण जिस पर निराला ने प्रहार किया है। निराला की दृष्टि में ये छोटे लोग पढ़े लिखे लोगों से अधिक समझदार तथा होशियार हैं। चतुरी चमार चतुर्वेदी आदि से कहीं अधिक संत साहित्य का मर्मज्ञ है। कबीर के निर्गुण पदों का ज्ञाता है। कबीर की 'उलटबासियों' का भी उसे ज्ञान है। निराला की दृष्टि में सभी समान थे। ऊँच–नीच की भावना उनके मन में न थी। एक जगह उन्होंने कहा है – 'समय–समय पर लोध, पासी, धोबी और चमारों का ब्रह्म

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भोज भी चलता रहता था। इस तरह मेरा महान साधरण जनों का अड्डा बल्कि 'हाऊस ऑफ कॉमन्स' हो गया।'' यह थे 'निराला' जहाँ उनके समीप सब निम्न वर्ग के लोग मौजूद हैं।

'राजा साहब को ठेंगा दिखाया' में व्यंग्य भी है और एक परिवार का कारूणिक चित्र भी। ऐसी व्यवस्था जहाँ बीस माह से व्यक्ति को वेतन न मिले तब वह परिवार का भरण पोषण कैसे करे। सांकेतिक मूक भाषा में बड़ा सुंदर चित्र अंकित किया गया है। किन्तु उसका गलत अर्थ लगा कर राजा ने इसे अपना अपमान समझा तथा कुछ दिनों बाद विश्वम्भर को एक आज्ञा पत्र मिला – 'अब तुम्हारी नौकरी की सरकार को आवश्यकता नहीं रही।''

यह थे निराला जो अपने साहित्य में ऐसे पात्रो का चयन करते हैं जो वास्तव में समाज में उपेक्षित हैं। उनके मन में जातिगत भेदभाव नहीं था मात्र मानवता थी। यही मानवता मनुष्य को ऊँचा उठाती है। इसीलिये निराला मर कर भी अमर हैं –

सूर्य तो ढल गया, ज्योति की प्रखर बाक़ी है
काव्य के सिन्धु में वाणी की सहर बाक़ी है।
क्या हुआ रोशनी को ढक लिया अंधेरे ने
दीप तो बुझ गया, किरणों का सफ़र बाक़ी है।

वास्तव में सच्चा साहित्य वही है जो समाज और राष्ट्र को साथ रखकर लिखा जाए। साहित्यकार वह कहे जो सबको अपनी बात लगे।

आज के आधुनिक साहित्य को भी जब हम देखते हैं तो कहीं न कहीं 'निराला' का प्रभाव हमें दिखाई देता है। सच तो यह है कि निराला आज भी प्रासंगिक है। अनेक कवियों के लिये वे आज भी प्रेरणा का स्त्रोत बने हुए हैं।

अन्त में मैं तो यही कहूँगी कि ग़रीबों का मसीहा, अनूठी प्रतिभा एवं व्यक्तित्व का धनी यह कवि संसार से अवश्य चला गया किन्तु उसका साहित्य उसे इस जगत में सदैव जीवित रखेगा।

बसंत का अग्रदूत बन आये थे निराला
अंधकार में प्रकाश पुंज बन आये थे निराला
इस जग में हो न सकेगी भरपाई
साहित्य को नया आयाम देने आये थे निराला।

'होगी जय, होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन' जैसी सशक्त रचना का यह प्रणेता साहित्य जगत में सदा अजर अमर रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. निबंध रत्नाकर – महाप्राण निराला, पृ. 203
2. आधुनिक निबंध, पृ. 130 लेखक – राम
3. हिन्दी साहित्य – युग और प्रवृत्तियाँ

****

स्त्री-विमर्श

डॉ. शबनम खान *

प्रस्तावना – सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतना ने ही स्त्री-विमर्श को जन्म दिया है। स्त्री विमर्श और कुछ नहीं आत्म चेतना, आत्म सम्मान, आत्म गौरव, समता और समानाधिकार की पहल का दूसरा नाम है। स्त्री को अपने अस्तित्व बोध ने ही विमर्श की प्रेरणा दी है। आत्म समर्पण और पुरुष की एकाधिकार शाही के माहौल से स्त्री को बाहर लाने का श्रेय स्त्री-विमर्श को ही है।

स्त्री विमर्श और कुछ नहीं अपनी 'अस्मिता' की पहचान, 'स्व' की चिंता, 'अस्तित्व बोध' और अधिकार को जताने और बताने का विचार चिंतन है। स्त्री विमर्श स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की संकल्पना है। फिर भी बींसवी सदी के अंतिम दो दशक में इस विचारधारा को पनपने के लिए उपयुक्त परिवेश मिला है।

वर्तमान स्त्री के बारे में लेखिका प्रभा खेतान की मान्यता है कि 'आज स्त्री ने सदियों की खामोशी तोड़ी है। उसकी नियति में बदलाव है। उसके व्यक्तित्व जीवन का उद्देश्य, दर्शन, उसका मन-मिजाज सभी तो बदल रहा है। स्त्री से भीख माँगने की नहीं, वरन् प्रतिशोध करने की अपेक्षा रखते हुए प्रभा खेतान लिखती है कि 'झूठे प्रलाप से, आरक्षण की भीख माँगने से कुछ होने जाने वाला नहीं। स्त्री को तो प्रतिशोध की भाषा सीखनी होगी।'

स्त्री विमर्श – स्त्री-विमर्श एक समकालीन विचार चिंतन है। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में स्त्री-विमर्श की अपूर्व पहल नजर आती है। स्त्री जीवन हिन्दी के आरंभिक उपन्यासों का भी केन्द्रीय विषय रहा है। चाहे 'भाग्यवती' हो, 'देवरानी जेठानी की कहानी' हो या 'चन्द्रकांता', 'सेवा सदन' अथवा 'निर्मला' हो। सभी में नारी केन्द्रीय विषय रही है। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में अमृतलाल नागर का 'नाच्यौ बहुत गोपाल', शिवप्रसाद सिंह का 'शैलूष', सुरेन्द्र वर्मा का 'मुझे चाँद चाहिए', मृदला गर्ग का 'कठगुलाब', प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता, चित्रा मुद्गल का 'आवां' तथा मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' आदि उपन्यासों में स्त्री विमर्श की पहल दिखाई देती है।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' की निर्गुनियाँ के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि नारी चाहे सवर्ण हो या दलित अपमान और शोषण उसे दोनों ही स्थितियों में सहना पड़ता है। लेकिन अब वह मूक न रहकर मुखर होने लगी है। आज की स्त्री अपनी जिन्दगी की सार्थकता बच्चे पैदा करने में नहीं मानती। खानदान के नाम पर अपने परिवार की चार दिवारों के भीतर स्वयं के अस्तित्व को कैद कर देना भी अब उसे मंजूर नहीं। 'शैलूष उपन्यास की नायिका सावित्री ने इन्हीं विचारों को स्पष्ट किया है। अब आत्मचेतना और अस्तित्व बोध के कारण स्त्रियों में भी चेतना दिखाई देती है। पुरुष अगर पत्नी का त्याग कर दूसरी स्त्री से शादी कर सकता है तो मैं क्यों ना करुं, यह विचार भी उसमें बढ़ता जा रहा है। 'आपका बंटी' की शकुन इसका प्रमाण है। शकुन और अजय के अलग होने के बाद वकील चाचा द्वारा शकुन को पता चलता है कि अजय दूसरी शादी कर रहा है, तब शकुन की प्रतिक्रिया है-'अजय को उसे दिखा ही देना है कि वह अगर एक नई जिंदगी की शुरुआत कर सकता है तो वह भी कर सकती है। आत्मनिर्भरता की हिमायत स्त्री-विमर्श का एक अभिन्न अंग है। स्त्री का जितना शोषण आत्मनिर्भरता के अभाव में हुआ है। उतना आत्मनिर्भर होने से दिखाई नहीं देता। स्त्री की सारी आजादी उसके आत्मनिर्भर होने पर निर्भर करती है। 'मुझे चाँद चाहिए' कि वर्षा वशिष्ठ इसकी विचार की कायल है। अपने भाई द्वारा दी गई विवाह करने की सलाह को वह इसलिए ठुकराती है कि उसे अपने पांव पर खड़े होना है। आर्थिक दृष्टि से स्वयं पूर्ण बनना चाहती है। अपात्र जीवन साथी को ढोना उसे अमान्य है। अत: अपने भाई को कहती है-'आयु के जिस मोड़ पर मैं खड़ी हूँ, उसमें शादी मुझे उतने महत्व की नहीं लगती, जितना अपने पाँव पर खड़े होना लगता है।' 'कुपात्र के साथ बँधने से अकेले रहना अच्छा है।' वर्षा के इस कथन में स्त्री-विमर्श का केन्द्रीय भाव व्यक्त होता है। 'मुझे चाँद चाहिए' कि वर्षा ने अपने जीवन में कला को ही अंतिम ध्येय माना है। इसलिए उसके जीवन में विवाह का कोई महत्व नहीं दिखाई देता। जब वर्धन परिवार का रिश्ता वर्षा के लिए आता है, तब वह अनेक कारणों से मन-ही-मन उस रिश्ते को इंकार करती है।

'मुझे चाँद चाहिए' की वर्षा ने अपने जीवन में कला को अंतिम ध्येय माना है। वह विवाह को महत्व नहीं देती और जब कुँआरी होते हुए भी माँ बनने का फैसला लेती है तब परिवार का विरोध करने पर कहती है कि 'आपसे मदद मांगी किसने है ? ..... मैं जैसी दीन-हीन पैदा हुई थी, मेंरा बच्चा वैसे पैदा नहीं होगा। वह अपनी माँ के घर में मुँह में चाँदी के चम्मच के साथ पैदा होगा।' इस प्रकार आज की आत्मनिर्भर स्त्री कुँआरी होते हुए भी बच्चे को न केवल जन्म देना चाहती है, बल्कि उसकी उचित परवरिश का भी वह प्रबंध करती है। आधुनिक काल में पढ़ी-लिखी नारी को भी रसोई कौशल में परिपूर्ण बनाया जाता है और इसी में उसकी आधुनिकता देखी जाती है। इसलिए उसे होम साइंस विषय पढ़ाया जाता है। 'कठगुलाब' की असीमा अपनी सहेली को होम साइंस विषय पड़ने पर समझाती है कि 'बेवकूफ है मुझे देख, मैंने अपनी नौकरी की पहले चार महीनों की तनख्वाह कराटे सीखने में खर्च की है। मर्दों की दुनियां में रहने के लिए होमसांइस नहीं, कराटे की जरुरत है।' असीमा का यह कथन नारी को वर्तमानकालीन युग के अनुरुप स्वयं को ढालने के लिए सावधान करता है। पहले की तरह घुट-घुटकर मरना और आंसू बहाते रहना आज की स्त्री को पसंद नहीं आता 'छिन्नमस्ता उपन्यास की प्रिया इसका सशक्त उदाहरण है। समाज में स्थित स्त्री और पुरुष के लिए दोहरे मापदण्ड उसे पसंद नहीं। स्त्री की निष्क्रियता पर उसे गुस्सा आता है। आज समाज में ऐसी भी नारियां दिखाई दे रही है। जो किसी न्यायग्रस्त नारी का साथ देने में पीछे नहीं हटती। चित्रा-मुद्गल के 'आवा' की विमला बेन इसकी सशक्त मिसाल है। मुस्लिम युवक से प्रेमकर विवाह किए बिना माँ बनी

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हुई सुनंदा के कारण जब हिन्दू-मुस्लिम विवाद खड़ा होता है और सुनंदा की हत्या होती है तब सुनंदा की अंतिम यात्रा में सहभागी होकर विमला बेन न केवल उसकी अर्थी को कंधा देती है, बल्कि पाटील नामक एक पुरुष के 'यह कृत्य शास्त्र सम्मत नहीं है' इस कथन का भी खण्डन करती है। शास्त्र की दुहाई देने वाले पाटील की आपत्ति की विमला बेन इन शब्दों में धज्जियाँ उड़ाती है - 'कूपमण्डूक पुरुषों से अब हमें सीखना होगा कि स्त्रियों के लिए क्या शास्त्र सम्मत है और क्या नहीं ? निर्दोष स्त्री की नृशंस हत्या करना शास्त्र सम्मत है पाटील। नहीं तो पूछो अपने हृदय से कि क्यों किसी ने उसके प्राण ले लिए ? मैं कंधा किसी औरत की मय्यत को नहीं दे रही, बल्कि उस स्त्री-चेतना को दे रही हूँ, जिसका गला घोंटने की कोशिश हत्या के बहाने हुई है। मैं हर जाति, धर्म, वर्ण की स्त्रियों का आह्वान करती हूँ कि वे सब शमशान चले और बारी-बारी से सुनंदा की मय्यत को कंधा दे।' यह नारी चेतना का प्रतीक है। हमारे समाज में पिता की चिता को मुखाग्नि देने का कार्य पुरुष का अधिकार माना गया है। स्त्री-विमर्श के प्रभावस्वरुप आजकल यह अधिकार पुत्रियाँ भी जता रही है। चित्रा-मुद्गल के 'आवा' उपन्यास की नमिता इसका प्रमाण है। इसमें बेटी और बेटे को लेकर चली आई मान्यताओं का पर्दाफाश किया है जो नारी विमर्श का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

निष्कर्ष - निष्कर्ष रुप में हम यह कह सकते है कि समकालीन हिन्दी उपन्यासों में नारी विमर्श की चर्चा पर्याप्त रुप में मिलती है। स्त्री विमर्श स्त्री की अस्मिता का, आत्मचेतना का, अन्याय के विरोध का, अस्तित्व बोध का और उसकी अत्याचार के विरोध में खड़े रहने की लड़ाकू वृत्ति का न केवल परिचय देता है, अपितु इस चिंतन को बल भी प्रदान करता है। आने वाली पीढ़ी की नारियों में चेतना जागृति के लिए यह निश्चित ही प्रेरणादायी सिद्ध होगा। इसमें संदेह नहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अमृतलाल नागर-'नाच्यौ बहुत गोपाल
2. शिवप्रसाद सिंह -'शैलूष'
3. सुरेन्द्र वर्मा -'मुझे चाँद चाहिए'
4. मृदुला गर्ग - 'कठगुलाब'
5. मैत्रेयी पुष्पा - 'चाक'
6. प्रभा खेतान - 'छिन्नमस्ता'
7. चित्रा मुद्गल - 'आवा'

****

ज़मीन का कवि : नागार्जुन (वैद्यनाथ मिश्र)

डॉ. पारसमणि गुप्ता *

प्रस्तावना – नागार्जुन की काव्य साधना ज़मीन से जुड़ी जनकल्याण की साधना है। वे जनकल्याण के लिए संघर्षरत रहे हैं। वे इस धरती के एक अनुठे एवं सबसे भिन्न ज़मीनी कवि है, जिनका संपूर्ण साहित्य जनता के लिए समर्पित है। उन्होंने एक साधारण आदमी के जीवन के उस पक्ष से हमें अवगत कराया, जिसे स्वयं ने अभावों एवं कष्टों के साथ जिया।

कवि की कविताओं का मुख्य स्वर सदैव जीवन सुख समृद्धि एवं शांति कामना है। अपने संपूर्ण जीवन में नागार्जुनजी ने एक जनकवि की भूमिका का निर्वाह किया है। नागार्जुन एक ऐसा व्यक्तित्व है जो समुद्र की सीप के अंदर बंद रहकर भी अपनी चमक का आभास देता है।

नागार्जुनजी की काव्य साधना हमेंशा से आलोचनाओं से घिरी रही है। इनकी साहित्य समीक्षा पर समय-समय पर चिन्तन मनन अध्ययन होता रहा है।

कवि **नागार्जुन** बेखौफ, निडर, मन से रचनाएँ लिखते रहे हैं। अद्‌भूत व्यक्तित्व और चमत्कृत काव्य इनकी अपनी विशेषाएँ हैं। ज़मीन से जुड़े रहना जनमन की बात कहना, इनकी कविताओं का मुख्य धेय रहा है।

राजेन्द्र मिश्र के शब्दों में-'कोमल भावनाओं वाले संवेदशील, अतिभावुक, हृदयधर्मी जनकवि है।' जब वे स्वयं कहते है-'जनता मुझसे पूछ रही है। मैं क्या बतलाऊँ, मैं बिना हकलाये कहूँगा-मैं एक जनकवि हूँ।'

नागार्जुन सच्चे अर्थो में जनसाधारण के सुख-दु:ख के गायक हैं। स्वयं **नागार्जुन** के शब्दों में-

'जनकवि हूँ, मैं साफ कहूँगा, क्यों हकलाऊँ? और फिर जनकवि हूँ।
मैं क्यों बाँटू, मैं भूक तुम्हारी। '
श्रमिकों पर क्यों चलने दूँ, बंदूक तुम्हारी?

नागार्जुन मानव मात्र के कवि है। मानव मात्र की संवेदना के धरातल पर उनकी चिंता उन्हें जन-कवि होने का बोध कराती है। वे मानव मात्र की व्याकुल, चिंता से पीड़ित हैं। वे तरल आवेगों वाले महान कवि हैं।

नागार्जुन कहते है-'प्रति हिंसा ही स्थायी भाव है, मेंरे कवि का।' नागार्जुन की मूल शक्ति प्रतिहिंसा ही है, क्योंकि यह प्रतिहिंसा जितनी उनकी है, उन से ज्यादा उस जनता की है जिसके वह प्रतिनिधि है। वे संकल्प करते है कि-'जन-जन में जो ऊर्जा भर दें, मैं उद्गाता हूँ, उस रवि का।'

नागार्जुन जैसे निर्भय रचानाकार ने मानव कल्याण से भरपूर जितनी कविताएँ लिखी है, उतनी शायद ही किसी अन्य कवि ने लिखी हो। इसलिए उन्हें स्वतंत्र भारत के जनकवि, प्रतिनिधि कवि के रूप में सम्मान मिलना स्वाभाविक है।

नागार्जुन के व्यंग्य प्रहार से न तो गाँधीजी बच सके, न नेहरू, न इंदिरा गाँधी।

' चाँदी के बापू,
गजदन्त के तथागत,
चंदन के विनोबा,
ताम्बे के लेनिन'
' इन्दुजी, इन्दुजी,
क्या हुआ आपको?
सत्ता की मस्ती में, भूल गई बाप को।
क्या हुआ आपको।'

नागार्जुन का यह वर्ग भेद केवल महान पुरूषों के प्रति हो, ऐसा नहीं है। नागार्जुन में यह भेद मनुष्य और मनुष्य में भेद करने के बाद ही एक तीव्र जीवन दृष्टि के रूप में जन्मा है। इसी भेद के चलते मानव मात्र के जीवन मूल्यों में विरोध वैमष्य उत्पन्न होता है। ऊँच-नीच, जाँत-पाँत की सामंती भेदभाव इसी जमीन पर पनपते है एवं सारा समाज इसकी चपेट में आ जाता है। भारतीय राजनीति पर गाँधीवादी विचारधारा अत्यन्त लम्बे समय तक छायी रही किन्तु कुछ भ्रष्ट नेताओं ने इसका मखौल बना दिया। वे सारे प्रतीक जो त्याग और श्रृद्धा के ये व्यक्तित्वहीन पुतलों में बदलते गये। इस राजनीतिक पतन ने भारतीय जन को स्वतंत्रता का छद्म झेलने पर मजबूर किया। मुक्ति संग्राम में किए उत्सर्ग और क्रांतिकारी परम्परा के नतीजे सामान्य जन-साधारण के विरोध में चले गए। यहाँ नागार्जुन का दु:ख जनता का दु:ख है। उनकी जन आन्दोलन के दौरान झेली गई यातनाएँ फलप्रदायी सिद्ध नहीं हुई।

' घर बाहर भर गया तम्हारा,
रत्तीभर भी हुआ नहीं उपकार हमारा
व्यर्थ हुई साधना लाभ कुछ काम न आया
कुछ ही लोगों ने स्वतंत्रता का फल पाया।'

इसी तारतम्य में नागार्जुन की यह कविता एक मिसाल है-

'अंदर प्रीतिभोज के टेबुल, बाहर घिरी कनाते,
धन पिशाच मुस्कराते है, धुल के करते बातें
रसगुल्ले पर कैनेडी है, बर्फी पर ख्रुश्चेव
चाउ पर है, बरफमलाई, नेहरू पर सेव
चाट रहे हैं, कुछ प्राणी बाहर जूठन के दोने, चहक रहे है,
अन्दर ये लक्ष्मी के पुत्र सलौने
कला गुलाम हुई इनके, कविता पानी भरती है
सौ-सौ की मेंहनत इनकी मुस्कानों पर मरती है।'

नागार्जुन की भावुकता और उल्लास के तरंगित प्रसंग जहाँ समाज की प्रत्येक पीड़ा को माँ की तरह गोद ले लेते है। वहाँ व्यापक सामाजिक सहानुभूति का वातावरण भी रचते है।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

नागार्जुन का सचेत और अचेत भावबोध जनता के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। स्वभावत: जनता के जीवन को कष्टभय और कलहपूर्ण बनाने वाले प्रत्येक वस्तु नागार्जुन की घृणा का पात्र है।

नागार्जुन की सामाजिक चेतना उनके द्धारा भोगे गये यथार्थ की उपज है।

भारतीय समाज का दुर्भाग्य यह है कि यहाँ धर्म के नाम पर शोषण किया जाता है। 'धन कुबेरों' का तामझाम पर्व-त्यौहारों के अवसर पर शोषण का कोई न कोई नया तरीका ईजाद करता है। नकली रावण का वध करवाकर जमींदार स्वयं राक्षस राज का संचालन करता है। खेतीहर किसानों, मजदूरों से चंदे के नाम पैसा खींचता हैं। **नागार्जुन** इस कविता में धर्म और सामाजिक प्रगति के अन्तर्विरोध की ओर संकेत करते है। 'आज विजयादशमी है' शीर्षक कविता में नागार्जुन सामाजिक पीड़ा के उस यथार्थ को उभारने का प्रयास करते है, जिसे स्वयं ने भी भोगा है। एक साधारण परिवार में जन्में नागार्जुन ने स्वयं इस कटु जीवन की यातना एवं बुराईयो को अत्यंत नजदीक से देखा है। जीवन के अनुभव व कष्टों को स्वयं भोगा है। उनसे संघर्ष भी किया हैं। एक कठोर पिता के संरक्षण में जीवित रहकर स्वयं को एक सशक्त रचनाकार के रूप में जीवंत बनाया है। अपनी कलम के बल पर उन्होंने अपने आपको सशक्त कवि साबित किया है। उनकी कविता 'अकाल और उसके बाद' सामाजिक अन्तर्वस्तु और रचनात्मक सौन्दर्य का अप्रितम उदाहरण है।

'कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुतिया, सोई उसके पास,
कई दिनों तक लगी भीत पर, छिपकलियों की गश्त,
दाने आए घर के अन्दर कई दिनों के बाद,
धुँआ उठा आँगन के ऊपर कई दिनों के बाद,
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद,
कौए ने खुजलाई, पौखे कई दिनों के बाद,
अकाल और उसके बाद।'

यह रचना सुख और दु:खमय जीवन की गति को प्रकट करती हैं। यदि दु:ख है, तो भविष्य सुखमय भी होगा। इसलिए नागार्जुन आशावान् भी है-

'मशीनों पर और श्रम पर, उपज के सब साधनों पर
सर्वहारा स्वयं अपना करेगा, अधिकार स्थापित
टूटकर वह आंत जो थी मिटा देगा, धरा की प्यास
करेगा आरम्भ अपना स्वयं ही इतिहास।'

नागार्जुन इस कल्याण कामना के लिए एकता एवं आक्रोश को महत्व देते हैं। समाज एक असंगठित एवं एक अनोखे स्वरूप वाली ईकाई है। जहाँ मानव जीवन की परिस्थितियाँ एवं भिन्नताएँ, वर्ग संघर्ष के अतिरिक्त जाति और संप्रदाय संषर्घ में भी प्रतिबिम्बित होती है। समाज में नयी सभ्यता एवं सुख शांति लाने के लिए स्वयं मानव को ही सचेत होना चाहिए, तभी समाज में नयी क्रांति आ पाएगी।

'कलाधर या रचयिता होना पर्याप्त नहीं है।
पक्षधर की भूमिका धारण करो,
विजयिनी जनवाहिनी का पक्षधर होना पड़ेगा,
अगर तुम निर्माण करना चाहते हो,
शीर्ण संस्कृति को अगर सप्राण करना चाहते हो।'

शोध संदर्भ सूची :-

1. दशकारम्भ-नामवरसिंह का लेख
2. नागार्जुन की कविता-अजय तिवारी
3. नागार्जुन का रचना संसार-विजय बहादुरसिंह
4. हिन्दी कविता में व्यंग्य-शेरजंग गर्ग
5. परिवर्तन और विकास के सांस्कृतिक आयाम-पूनमचंद जोशी
6. संपर्क नागार्जुन विशेषांक-अजय तिवारी काह लेख
7. कविता के नये प्रतिमान-नामवरसिंह
8. नागार्जुन का काव्य-डॉ. चन्द्रहारूसिंह
9. नागार्जुन जीवन और साहित्य-प्रकाशचंद्र भट्ट
10. प्रभाकर श्रेत्रिय का लेख-सम्पर्क विशेषांक

****

बाल साहित्य : संभावनाऐं और भविष्य

डॉ. शबनम खान *

प्रस्तावना – बाल साहित्य का प्रकाशन पिछले चार दशकों में प्रचुर मात्रा में हुआ है। सरकारी प्रतिष्ठानों के साथ-साथ निजी प्रकाशकों ने भी बाल साहित्य की विविध विधाओं में अनेक पुस्तकें प्रकाशित की है। बाल साहित्य की समस्याओं और विकास के उपायों पर पिछले वर्षों में अनेक कार्यक्रम हुए है, जिनसे पता चलता है कि कोई न कोई कमी है, जो बाल साहित्य के विकास में बाधक बनी हुई है।

किसी भी बालक के मानसिक और चारित्रिक विकास को जो तत्व प्रभावित करते है, उनमें बच्चों का अपना सामाजिक और पारिवारिक परिवेश, माता-पिता की विचारधारा और स्कूल के वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, किन्तु इन सबसे अधिक पैना और गहरा प्रभाव वह साहित्य छोड़ता है, जिसे वे अपना समझकर पढ़ते है, जो उनकी रुचि के अनुकूल होता है, जिससे वे तादात्म्य स्थापित करते है और जिनमें वे अपने मन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति पाते है। वस्तुत: वही साहित्य 'बाल साहित्य' कहलाता है।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली के ग्रंथ 'मातृभाषा हिन्दी शिक्षण' के अनुसार-'बाल साहित्य बाल्यावस्था की शारीरिक, मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर लिखा गया साहित्य है।'[1]

बाल साहित्य की प्रगति एवं विकास में नेशनल बुक ट्रस्ट और साहित्य अकादमी की भूमिका सराहनीय है। साहित्य अकादमी ने भारतीय बाल साहित्य की श्रेष्ठ रचनाओं का प्रकाशन किया है, जिनमें डॉ. जयंत नारलीकर की 'अंतरिक्ष में विस्फोट', जिसमें एक सशक्त विज्ञान फंतासी है, उपेन्द्रराय चौधरी की 'बुलबुल की किताब', जसबीर भुल्लर की 'जंगल टापू', अनंत देसाई की 'बिल्ली हाउस बोट पर' आदि भारतीय बाल साहित्य को समृद्ध बनाने के साथ ही उसे अंतर्राष्ट्रीय मंच पर स्थान दिलाने में सक्षम है।

जनसंचार माध्यमों के विकास से बच्चों के ज्ञान स्तर में वृद्धि हुई है। पढ़ाई और ज्ञानार्जन का साधन कम्प्यूटर बनता जा रहा है। लेकिन जनसंचार माध्यमों की तुलना में बच्चों की पुस्तक का महत्व इसलिए भी ज्यादा है, क्योंकि टी.वी. और कम्प्यूटर से ज्ञान प्राप्त करने की वह जरुरत पूरी नहीं हो सकती, जो पुस्तकों द्वारा ही संभव है। बच्चों की समस्याओं को हल करने, उनके मानसिक और चारित्रिक विकास के साथ-साथ उन्हें स्वस्थ मनोरंजन देने का काम सफलतापूर्वक बाल साहित्य ही कर सकता है।

क्या आज का बाल साहित्य बच्चों के विकास में सही भूमिका निभाता है? क्या आज का बाल साहित्य बच्चों को एक प्रजातांत्रिक, धर्म, जाति तथा वर्ग-निरपेक्ष राज्य के नागरिक बनने के लिए प्रेरणा देने में सक्षम है ? इस संदर्भ में यह बात नि:संदेह विचारणीय है कि आज के बच्चों के लिए ऐसी कहानियों या गीतों की क्या उपयोगिता है, जो उनमें ऐसे विचार जगाये, जिनका आज कोई मूल्य नहीं है। भूतप्रेत और परियों की कहानियों से उत्पन्न होने वाले अंधविश्वास और खोखले कल्पना जगत की आज क्या उपयोगिता है ? फिर भी ऐसी कहानियाँ लिखी, सुनाई और दिखाई जा रही है। ऐसी कहानियों से बच्चों के दिमाग से न तो भूत का डर निकलता है और न ही परीलोक की खोखली कल्पना ! इतना ही नहीं सामंतवादी प्रवृत्तियों की गुलामी करने की उन्हें आज भी जाने-अनजाने प्रेरणा दी जाती है। राजा-रानी, सेठ-साहूकारों की कहानियों के माध्यम से हमारे यहां सामंतवादी शक्तियों के प्रति गुलामी कर्तव्य भावना के रुप में मिलती आई है।

किन्तु अनेक ऐसी रचनाएँ भी आ रही है, जिनमें बच्चों को सही दिशा देने के प्रयास हो रहे है, उनमें नए जीवन मूल्यों से जुड़ने की चाह भी है और पुराने तथ्यों को नये संदर्भ में रखने का प्रयास भी। निरंकार देव सेवक कृत 'चिड़िया गाती तेरा राग' एक ऐसी ही कृति है, जिसमें एक ओर बाल मन की कल्पनाओं को गीतात्मक अभिव्यक्ति दी गई है तो दूसरी ओर 'मेरा मुन्ना कभी बनेगा एक बड़ा इंजीनियर' जैसी अभिव्यक्ति भी है-और यह भी कि 'मेरा मुन्ना बने किसान' देश के औद्योगिक और तकनीकी विकास के लिए यदि इंजीनियरों की जरुरत है तो दूसरी ओर खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ाने के लिए किसान भी चाहिए। इसलिए इस भावना का पोषण भी आवश्यक है कि 'नहीं' नौकरी कोई अच्छी, 'यही एक मेरा अरमान, 'मेरा मुन्ना बने किसान'।[2]

'बच्चों में साहस, रोमांच और कौतूहल के भाव जगाने में भी बाल साहित्य को सक्षम होना ही चाहिए। हमारा इतिहास, हमारे वीर नि:संदेह प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। उनकी जीवनकथाएँ सदा आलौकित करती रही है। आल्हा-ऊदल पृथ्वीराज चौहान, महाराणा प्रताप, अज़ीमुल्ला खां, लक्ष्मीबाई आदि इतिहास के पात्र अवश्य है, किन्तु इन्होंने इस देश की एकता, स्वतंत्रता और अखण्डता के लिये अपने प्राणों की आहुति दी है। इनकी कहानियां 'कहानियां बलिदान की' (लेखक अक्षयकुमार जैन) की पुस्तक में मिलती है। दूसरी ओर महात्मा गाँधी जैसे महापुरुष की कहानियां बड़ी रोचक और सरल भाषा-षैली में प्रस्तुत की गई है।[3]

साहस और रोमांच से भरपूर ऐसी कथाएँ जो यथार्थ से जुड़ी हो, बच्चों के विकास में विशेष सहायक होती है, ऐसी रचनाएँ एक ओर उन्हें वास्तविक दुनियां और सत्य से परिचित कराती है तो दूसरी ओर उन्हें अपनी समस्याओं के समाधान खोजने के अवसर भी देती है।

भविष्य – 'आज हम इलेक्ट्रॉनिक और प्रौद्योगिकी क्रांति के दौर से गुजर रहे है। हमारे बच्चे दूरदर्शन, कम्प्यूटर और संचार माध्यमों से प्रभावित हो रहे है। यदि कोई चाहे भी, तो इस आँधी से बच्चों को अलग नहीं कर सकते। भविष्य में बाल साहित्य केवल किताबों तक सीमित नहीं रहेगा। कम्प्यूटर का युग आया है तो उससे संबंधित अनेक पुस्तकें बाजार में आ गई हैं, प्रोग्रामर सॉफ्टवेयर भी। ऐसी दुकानें कुछ बड़े नगरों में है, जहाँ मात्र यहीं पुस्तकें मिलती है। इसके साथ ही किताबें टेप पर, डिस्क पर उपलब्ध होने लगी है

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

और भविष्य में तो यह संभावना है कि बालक का स्कूली बस्ता आराम से उसकी जेब में आ जावेगा। यानी भविष्य में टॉफी, चॉकलेट जैसी किताबें होंगी। बालक पर बस्ते का बोझ बढ़ने की शिकायत भी नहीं रहेगी और भविष्य में उसे बस्ता लाने की जरुरत भी नहीं होगी। बालक की किताबों की लायब्रेरी उसकी जेब में ही रहेगी, लेकिन इससे बाल साहित्य को खतरा नहीं है। उसके सामने नई चुनौतियाँ अवश्य है, आज के मुकाबले में बाल साहित्य कहीं अधिक रंग-बिरंगा, आकर्षक तथा मनोरंजक होगा। हर घर में बालक का निजी पुस्तकालय होगा। यह एक फैशन माना जायेगा।''[4]

बाल पत्रिकाओं और पुस्तकों में नई चुनौतियों के अनुरुप परिवर्तन होंगे-विषयगत, शैलीगत और प्रस्तुतीकरण तीनों क्षेत्रों में। नई चुनौतियों के सामने तीसरी श्रेणी का घटिया साहित्य टिक नहीं पायेगा। कम से कम 21वीं सदी के बारे में कहा जा सकता है कि बाल साहित्य की प्रगति और विकास का आशातीत होना, इस बात का प्रतीक है कि 21वीं सदी बालक की सदी है और इसमें पूरी मानवता का ध्यान बालक की ओर लगा रहेगा। उससे जुड़ी सभी समस्याओं पर अनुसंधान होगा और बालक के संबंध में नये-नये आयाम जुड़ते चले जाएंगे। अभी हमने बालक को पूरी तरह समझा कहाँ है ? आज अपेक्षाकृत अधिक तनाव में जीने वाला बालक कल्पना प्रधान साहित्य को अधिक पसंद करेगा। वास्तविक जीवन में होने वाले भद्दे दृश्यों को वह साहित्य में देखने से परहेज करेगा। मनोरंजन प्रदान करने वाला साहित्य निश्चित रुप से बच्चों को मानसिक सुकून प्रदान करेगा। उपदेश या परंपरागत मूल्य परोसने वाला या दूसरे शब्दों में आदर्श रुप में ढ़ालने वाले मूल्यों पर जोर देने वाला साहित्य बच्चों में अधिक लोकप्रिय न होकर, मनोरंजन पक्ष पर जोर देने वाला साहित्य अधिक रहेगा। कई प्रमुख प्रकाशकों ने अपनी वेबसाइट उपलब्ध कराई है। कई पब्लिशिंग कंपनी द्वारा प्रकाशित बच्चों की पुस्तकों की जानकारी इंटरनेट पर उपलब्ध है। राष्ट्रीय अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) बाल साहित्य की राष्ट्रीय प्रतियोगिता कराती है। विविध प्रदेशों की अकादमी या साहित्य संस्थान मिलकर बाल साहित्य पर कार्यक्रम आयोजित करते है।

'21वीं सदी बालक की सदी है और इस सदी में बालक से जुड़े सभी पहलुओं पर शोध और अध्ययन होगा तथा मनुष्य के चिंतन में बालक केन्द्र पर रहेगा। ऐसी स्थिति में बाल साहित्य का ही नहीं, वरन् बच्चों के लिए कार्य करने वाले विभिन्न क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं एवं संस्थाओं का भी महत्व बढ़ेगा और उन्हें अधिक मान-सम्मान भी मिलेगा। बालक और बाल मन को समझने के भरपूर प्रयास होंगे। बालक मिनी ब्रह्मांड है। मानवता को आगे बढ़ाना है तो यह उसी के सहारे होगा।''[5]

बाल साहित्य के सागर तट पर पूर्व के बाल साहित्यकारों ने जिस दीपगृह का निर्माण किया हैं, वह वर्षों तक आगामी बालक साहित्यकारों तथा बाल पत्रिकाओं से जुड़े लोगों को राह दिखाता रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मातृभाषा हिन्दी शिक्षण - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।
2. बाल साहित्य मेरा चिंतन - डॉ. देवसरे
3. बाल साहित्य मेरा चिंतन - डॉ. देवसरे
4. बाल साहित्य के युग निर्माता - जयप्रकाश भारती
5. बाल साहित्य के युग निर्माता - जयप्रकाश भारती

****

बाल साहित्य : कल आज और कल

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

शोध सारांश – बच्चों को संस्कारित कर उनमें मानवता का भाव करने के लिए बाल साहित्य ही एक सार्थ माध्यम है, जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होते हुए आज भी विविध रूप में अवतरित हो अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है।

प्रस्तावना – छोटी उम्र के बच्चों को ध्यान में रखकर लिखा गया साहित्य ही 'बाल साहित्य' कहलाता है जिसका आधार 'पंचतंत्र' है। नन्हें-मुन्नों की मासूमियत को ज्यों का त्यों रखकर फूलों, पेड़-पौधों, पर्वतों की सैर कराने वाला सर्वश्रेष्ठ माध्यम बाल कहानियां ही है। बचपन में पढ़ी आदर्श कहानियां हमारें अचेतन मन में सुरक्षित रहती है और समय व परिस्थितियों के आधार पर हमें प्रेरित करती है। संसार कितना सुंदर है तथा दोस्ती और प्यार का विश्वास कितना अटूट है ऐसी कई संस्कारित रहस्य रोमांच से भरी कहानियों के माध्यम से हमारे मन में रखी बसती है। बाल साहित्य की उपयोगिता के लिए किसी विषेष संदर्भ की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि बाल साहित्य याने आत्म-निरीक्षण के साथ-साथ बच्चों में साहस, सुदृढ़ता और कल्पना संसार को सुरक्षित रखना है फूलों जैसा कोमल व निर्मल मन बाल साहित्य के सानिध्य में सुरक्षित है क्योंकि संस्कार, समर्पण और सत् मानस बाल साहित्य का आधार है। बच्चों की मित नूतन बदलती दुनिया को यह और भी अधिक रंगीन बनाता है।

कल.....माने वह समय जब नाना-नानी, दादा-दादी की कहानियों के माध्यम से बाल साहित्य धरोहर के रूप में हस्तांतरित होती थी। बच्चों के मनोरंजन के साथ-साथ नैतिकता और मानवता के रंग में रंगी यह साहित्य मौलिक रूप से कुछ न कुछ नया अपने साथ लेकर बदलता रहता था। बहुत पहले पंडित विष्णु शर्मा की कहानियां 'पंचतंत्र' की कहानियों के रूप में संस्कृत भाषा में 'हितोपदेश' के नाम से साहित्य में लिखित रूप में आई। धीरे-धीरे बाल साहित्य विविध रूप से विकसित होने लगा, ईसप की कहानियां ला-फोलेन डेनियल डेफो, सिंदबाद आलिप्न-लेला, ग्रिल की परिकथाओं की खजाना एंडरसन की परिकथा बाल साहित्य की धरोहर बन गयी। ऐसा अनुमान है कि 1873 में न्यायर्क में अंग्रेजी में प्रकाषित 'सेंट निकोलस' पहली बाल पत्रिका है, जिसकी संपादक श्रीमती मेरी मेट्स डाज थी, इसी समय हिन्दी में 'बाल दर्पण' का प्रकाशन हुआ। हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं के सूत्रधार भारतेंदू हरिचन्द्र ने बाल साहित्य को भी नयी दिशा दी। 1850 से 1900 के मध्य मं. बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, श्रीनिवास दास ने बाल साहित्य को विकसित किया। 1 नवम्बर 1874 में 'बाल बोधनी' का प्रकाशन हुआ। 1901 से 1947 के मध्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने भी बाल साहित्य को विकसित करने के प्रयास किये। इस समय प्रकाशित बाल पत्रिकाओं में देशभक्ति की छाप थी। रामनरेश त्रिपाठी, श्रीधर पाठक जैसे महान साहित्यकारों ने बाल साहित्य, बालमनोरंजन, शिशु, बालक खिलौना, चमचम, वानर जैसी बाल पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ पर अफसोस ये पत्रिकाए लंबे समय तक प्रकाशित नहीं हो पायी।

1947 के बाद बाल साहित्य ने करवट ली। देश की राजनीति, आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियों ने बाल साहित्य को भी प्रभावित किया। मनोरंजन और प्रेरणादायी साहित्य के साथ-साथ शिक्षा का भी पृष्ठ इसमें जोड़ा गया। नेहरूजी के मार्गदर्शन में बाल साहित्य दिन-दूनी रात चौगुनी तरक्की करने लगा। यथार्थ वैज्ञानिक सोच ने जादू टोने वाले साहित्य को बहुत पीछे छोड़ दिया। बालहंस, हंसती दुनिया, चंपक, चंदन, चन्दामामा नन्हें सम्राट पराग मेला जैसी कई पत्रिकाएं बहुत लोकप्रिय हुई। प्रतिष्ठा समाचारपत्रों में ..... कोना बाल साहित्य को भी दिया जाने लगा। ऐसी सतत् विकसित होता साहित्य 1990 के बाद सृजनात्मक साहित्य में अवतरित हुआ। नेशनल बुक ट्रस्ट, बाल साहित्य सृजन पीठ, भारतीय बाल कल्याण संस्था, बाल साहित्य संस्थान जैसी प्रतिष्ठित संस्थायें विभिन्न राज्यों में बाल साहित्य की जीवंतता और ऐतिहासिकता को सुरक्षित रखने में सतत् प्रयासरत है। सूचनात्मक एवं व्यावसायिक बाल साहितय अब प्रचलित है। चकमक इन्द्रधनुष, देवपुत्र, अपराई, चिरैया जैसी पत्रिकाओं ने प्राचीन बाल साहित्य को नया रूप दिया है।

आज के बाल साहित्य का फलक बहुत विस्तृत है। नेट, म-पत्रिका, दूरदर्शन के माध्यम से हर घर के दरवाजे पर दस्तक देता बाल साहित्य विविध अवतारों में अवतरित है। ब्लॉगों में लिखा गया बाल साहित्य जितना विस्तृत है उतना ही गहरा भी है। गूगल द्वारा फ्री स्पेस उपलब्ध कराने के बाद से 'बाल साहित' ने छोटे परदे पर क्रांति ला दी है। 'बालमन' पहला ब्लॉग है जिसने बाल साहित्य के रूप में इंटरनेट पर पहली दस्तक दी है। बालमन, फूल बगिया, नानी की चिट्ठिया जैसे 3 से 4 हजार ब्लॉग प्रतिदिन लिखे जा रहे है। आडियों, विडियों, इंटरनेट एवं डिजिटल पुस्तकें विकसित तकनीकी युग में बाल साहित्य को मजबूत बना रही है। विक्रम बेताल, पंचतंत्र एक, दो, तीन, चार, दादा-दादी की कहानियां जैसे अच्छे कार्यक्रम बाल साहित्य का ही आधार है। A www.akhlesh.com, Arvindguptas Toys Book Gallary, www.amazon.com जैसी कई महत्वपूर्ण वेबसाईट ई-पुस्तकों के माध्यम से यथार्थ एवं विज्ञान संबंधी बाल साहित्य बच्चों तक पहुंचाए जा रही है।

बाल साहित्य का सफर बड़ा लंबा है जिसका न आदि है न अंत पर विस्तृत विभिन्न रूपों के आधार पर एवं युक्तप्रश्न है कि बच्चों तक बाल साहित्य क्या पहुंच पा रहा है। क्योंकि सामाजिक परिप्रेक्ष्य में बच्चे बाल साहित्य से दूर होते आ रहे है। ट्यूशन संस्कृति के बढ़ते खौफनाक दावानल ने सबको निगल लिया है। आज के बच्चों के पास न समय है न वातावरण है न साधन है। दूसरी महत्वपूर्ण कमी यह भी है कि आज के बाल साहित्य में

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

रसात्मकता का अभाव है। इलेक्ट्रॉनिक मिडिया और बाजारीकरण ने बाल साहित्य को बेनूर कर दिया है। कार्टून फिल्मों का दिवाना बाल मन कलुशित हो रहा है, बच्चे समय से पहले ही बड़े हो गये है। परिवार की आपकी टूटती संवेदनाओं ने बच्चों के सपनो की दुनिया छीन ली है। सुपर हीरो, डोरेमान, छोटा भीम जैसे पात्र उन्हें अच्छे लगने लगे है, बाजार का विनाशकारी खेल सीधे-सीधे बचपन में हस्तक्षेप है। आज के युवा में आक्रोश है, विद्रोह है, हिंसक प्रवृत्ति है, जिसका कारण है 'बाल साहित्य' से परे समाज की उन दिवारों में वे बढ़े हुए है, जहां न परियां है, न फूल है, न कविताएं है, न कहानियां है, न माँ की लोरियां है, न दादी की कहानियां है। परिवार की सबसे छोटी इकाई अब माता पिता की सबसे बड़ी जिम्मेदारी के बीच दरकते रिश्तों की दरार को बाल साहित्य से ही भरा जा सकता है। आज नई सोच के तहत् आवश्यक है कि उपलब्ध विशाल बाल साहित्य के भण्डार को बालकों तक पहुंचाया जाये। दुनिया के लिये परिवार एक बाजार है और बच्चे साधन है जिन्हें माध्यम बनाकर हर वस्तु आसानी से बेची जा सकती है विख्यात साहित्यकार पंकज द्विवेदी का कहना है।'

'असल में हमारे यहां किताबें वह भी हिन्दी में बच्चों के लिए उपभोक्ता की वस्तु नहीं पनपायी, इसलिए वे सर्च सुलभ नहीं है.....और शायद इसलिए माता पिता अपने बच्चों को खिलाने पिलाने के लिए 20 कि. मी. दुर तक ले जाते है पर किताब पढ़ने के लिए अनुपलब्धता का रोना रोते है।'

जब से दादी-नानी की कहानियों का संसार खत्म हुआ है लगता है बच्चों का मानसिक विकास थम सा गया है। मशीनी जिंदगी ने उनकी मानसिक स्पेस को जंग लगा दिया है, उनकी सहज व सरल क्षमताए खो सी गयी है। नेट, मोबाईल कार्टून चैनल ने बाल मन को विचित्र परन्तु डरावने सांचे में ढालने के प्रयास शुरू कर दिये है। ऐसा सुरक्षा के मामले में केवल बाल साहित्य ही दुनिया के नव निर्माण के स्वप्नों को साकार कर सकता है। 1957 में श्री के. शंकर पिल्लई ने चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट के तहत 30 हजार से अधिक पुस्तकें उपलब्ध कराई थी, फलस्वरूप बाल साहित्य की समाज में पचान बनी। परन्तु टी.व्ही के सशक्त प्रचार ने बच्चों से ज्यादा बच्चों की त्वचा की चमक को महत्व दिया। पंडित नेहरूजी से लेकर आज तक के आधुनिक शिक्षा शास्त्री की बाल साहित्य की अनिवार्यता के स्वीकार करते है, परन्तु पिछले 20-25 साल से बाल साहित्य शक्तिशाली प्रतिस्पर्धाओं से सहम गया है। आधुनिक अंतरिक्ष यान कार्टून चेनल के सहारे साहित्य को विकसित नहीं किया जा सकता। एक नई दृष्टि, एक नई सोच का होना अनिवार्य है। बाल साहित्य के कुशल पार्क की श्री ओमप्रकाश कश्यप इस स्थिति के लिए वर्तमान प्रकाशित बाल साहित्य को ही जिम्मेदार मानते है कि हम 150 वर्षो के लंबे दौर में बाल साहित्य को नये सिरे से परिभाषित नहीं कर पाये। 21वीं सदी में सुपर हीरो की फंटासी दुनिया से बच्चों को बाहर लाना होगा। उनकी सहज सरल क्षमताओं को पहचानना होगा। संस्कारों को सुव्यवस्थित तरीके से विरासत में देने के लिए चरित्र संकट की समस्या के निवारण के लिये और अच्छे तथा सुंदर समाज के निर्माण के लिये बाल साहित्य ही सर्वश्रेष्ठ विकल्प है।

हमारी कालजयी कहानियों को सुरक्षित करना होगा ताकि आने वाली पीढ़िया इस सांस्कृतिक साहित्य धरोहर से वंचित न रह जाये। बाल साहित्य की रचनात्मक महत्वपूर्ण भूमिका को हम जानते है अत: राष्ट्र के निर्माण में इसके योगदान को स्वीकारते हुए उसकी अस्मिता को सुरक्षित रखना होगा।

यह सर्वविदित है कि बाल साहित्य के क्षेत्र में आवाज उठी है। कतिपय श्रेष्ठ बाल साहित्यकार सर्वश्रेष्ठ रचनायें भी रच रहे है। यह तय है कि आवाज उठी है तो दूर तक जायेगी और बाल साहित्य की आवश्यकता अवधारणा और सृजन एवं संभावनाओं से रचनाओं की उपस्थिति दर्ज होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाल साहित्य की विकीपिडिया
2. अहा जिंदगी - नवम्बर 2013
3. www.ebooklibs.com
4. Balduniya.blogspot.com
5. एक पाती भारत के बच्चों के नाम - पं. नेहरूजी
6. www.shodh.net
7. मधुमती का बाल साहित्य विशेषांक।
8. कियेटिव कोना - डॉ. हेमंत कुमार।
9. जन संदेश टाईम्स - 13 नवम्बर 2011
10. www.gadyakosb.org

****

आधुनिक नाटकों में सामाजिक चेतना (मूल्यांकनपरक विश्लेषण)

डॉ. आशा अग्रवाल *

शोध सारांश – मानव जीवन और समाज में व्याप्त विसंगतियों, गलत परम्पराओं, कुरूपताओं आदि का सामना करने की शक्ति का उद्धीप्त रूप ही सामाजिक चेतना है। जिसका निर्माण सामाजिक परिस्थितियों और परिस्थितियों के प्रति सक्रिय जागरूकता से होता है।

आधुनिक युग में व्यक्ति अपनी परिस्थितियों से ऊबकर उसके विरूद्ध आक्रोश प्रकट करता है। यह आक्रोश व्यक्ति में नई चेतना के प्रेरणा स्त्रोत है। समसामयिक नाटक, सामाजिक समस्याओं का विश्लेषण कर एक नई चेतना और जागरूकता का परिचय देते है। आधुनिक नाटकों में वर्तमान भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था के प्रति क्रांति की भावना, आर्थिक क्षेत्र में औद्योगीकरण तथा वर्गीय भावना से उत्पन्न पूँजीवाद व समाजवाद का संघर्ष, विषमता, निर्धनता, बेकारी आदि समस्याओं का विस्तृत विवेचन किया गया है। सामाजिक क्षेत्र में सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे परिवार, विवाह, पति–पत्नी के संबंधों, प्रेम, नारी के विविध रूप, युवा पीढ़ी, व्यक्ति संघर्ष आदि से संबंधित विविध परिवर्तनों तथा व्यावहारिक मूल्यों का निरूपण हुआ है। नैतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में बदलते जीवन मूल्यों, शिक्षा के क्षेत्र में मूल्य घटन की विभिन्न परिस्थितियों, आर्थिक क्षेत्र में धर्म के बदलते स्वरूप, नास्तिकता, अंधविश्वासों, जाति–पाति, छुआ–छुत आदि समस्याओं का विवेचन आधुनिक नाटकों में है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा बौद्धिकता से उत्पन्न व्यक्ति की विभिन्न मानसिक वृत्तियों को भी नाटककारों ने खुलकर चित्रित किया है। वास्तव में यह आधुनिक युग में व्यक्ति में जागृति सामाजिक चेतना का परिचायक है। आज के अधिकांश नाटक मनोरंजन की अपेक्षा जीवन की गंभीर समस्याओं को प्रस्तुत करने तथा उसके हल सुझाने के लिए लिखे गये है। अत: हम सकते है कि स्वतंत्रता के पश्चात लिखे गये नाटकों में समाज को खंडित एवं विघटित करने वाले विभिन्न तत्वों एवं अनाचारों को प्रस्तुत कर उसके विरोध में जनता के मन में नई चेतना को अंकुरित करने का प्रयास हुआ है।

प्रस्तावना – सामाजिक चेतना – 'सामाजिक' शब्द समष्टिगत है और चेतना शब्द का संबंध मनुष्य के मन से है। चेतना का सामान्य अर्थ आंतरिक ज्ञान अथवा जागरुकता है। जब कोई नूतन विचारधारा समाज में प्रविष्ट होकर निश्चित लक्ष्य की ओर अग्रसर होती है, तब एक सामाजिक विचारधारा जागृत होती है। इसी जागृति को सामाजिक चेतना कहाँ जाता है। मानव जीवन और समाज में व्याप्त विसंगतियों, गलत परंपराओं, कुरुपताओं आदि का सामना करने की शक्ति का उद्धीप्त रुप ही सामाजिक चेतना है, जिसका निर्माण सामाजिक परिस्थितियों और परिस्थितियों के प्रति सक्रिय जागरुकता से होता है। सामाजिक परिप्रेक्ष्य में चेतना का महत्व असंदिग्ध है। युगानुरुप सामाजिक चेतना परिवर्तित होती रहती है।

स्वाधीनता पूर्व और स्वाधीनता के पश्चात की सामाजिक चेतना– दोनों में बड़ा अंतर है। स्वतंत्रता के पहले जनता का एक मात्र लक्ष्य स्वतंत्रता प्राप्त करना था। अत: तत्कालीन नाटकों में इसी सामाजिक चेतना को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। स्वातन्त्र्योत्तर युग में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन में जो परिवर्तन हुये, उसमें एक नूतन चेतना समाविष्ट थी, जिसकी सशक्त अभिव्यक्ति स्वातन्त्र्योत्तर नाटकों में देखने को मिलती है।

स्वतंत्रता पश्चात् उत्पन्न समस्याएँ – नवोदित राष्ट्र को शीघ्र ही अनेक आंतरिक और ब्राह्य समस्याओं से जूझना पड़ा। इनमें शरणार्थियों की समस्या, देशी रियासतों का विलय, स्वार्थपरक भ्रष्ट राजनीति, आर्थिक विषमता, सामाजिक बिखराव और अनिश्चितता, पारिवारिक विघटन, वैवाहिक जीवन की समस्याएँ, जातिवाद, व्यक्तिवाद और विघटन आदि प्रमुख है। इस प्रकार स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की सामाजिक चेतना को अनवरत् संघर्षों, युद्धों, कसौटियों, परीक्षणों और प्रयोगों के असंख्य दोरों से गुजरना पड़ा। परिणामस्वरुप सामाजिक परिवर्तन के अनेक रुप और आयाम सामने आए।

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी नाटककार – स्वतंत्रता प्राप्ति की अद्भुत घटना, परिवर्तित परिवेश, नवीन रंगदृष्टि एवं रंगमंच के विकास ने नाटककारों को समाज और जीवन से जुड़े नाटक लिखने को प्रेरित किया। नाटककारों ने पूर्णरुप से यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया। परिणामस्वरुप तत्कालीन परिवेश से जुड़ा हुआ मानसिक तनाव व मानवीय दुर्बलताओं से ग्रस्त साधारण वर्ग का व्यक्ति नायक के पद पर प्रतिष्ठित हुआ। वृंदावनलाल वर्मा, उदयशंकर भट्ट, डॉ. रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अरक, हरिकृष्ण प्रेमी आदि ऐसे उल्लेखलीय नाटककार है, जिन्होंने स्वतंत्रता पूर्व व स्वतंत्रता पश्चात् भी नाट्य रचनाएँ लिखी, स्वातन्त्र्योत्तर नाटककारों में लक्ष्मीनारायण लाल जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश, अमृतराय, मन्नु भंडारी, लक्ष्मीकांत वर्मा, दयाप्रकाश सिन्हा, शंकर शेष आदि नाम विशेष उल्लेखनीय है।

इनके नाटक जीवन की वास्तविकताओं से जुड़े हुए प्रयोगवादी एवं मनोवैज्ञानिक नाटक है, जिनमें आधुनिक मानव के विसंगत जीवन व मन में निहित विभिन्न मनोग्रंथियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।

नाटकों में अभिव्यक्त सामाजिक परिवर्तनों का स्वरुप – सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख कारण पूँजीवादी औद्योगिक सभ्यता का विकास है। देश में सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक चेतना के समानांतर व्यक्तिवादी चेतना का भी विकास हुआ। आधुनिक नाटककारों ने नाटक को समसामयिक संदर्भों से जोड़कर, विषम सामाजिक परिस्थितियों से परिचित कराते हुये एक नई सामाजिक चेतना को जाग्रत कराने का प्रयास किया।

चिन्तन के क्षेत्र में मार्क्सवाद तथा फ्रायडवाद के प्रचार के कारण विभिन्न मनोवैज्ञानिक चिन्तनधाराओं का समकालीन हिन्दी नाटकों पर प्रभाव पड़ा और नाटककारों ने नवीन चेतना के अनुरुप व्यक्ति व समाज की आंतरिक वृत्तियों का उद्घाटन किया। इस प्रकार उन्होंने व्यक्ति, परिवार, विवाह, समाज

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आदि की वृत्तियों का उद्घाटन करते हुए विभिन्न समस्याओं का विश्लेषण कर यथार्थवादी सामाजिक नाटक लिखे।

- **वर्तमान स्वार्थन्ध राजनीति के प्रति विद्रोह** – का स्वर समकालीन नाटकों में दिखाई देता है। नाटककारों ने राजनीतिक समस्याओं जैसे – दलबदल, भ्रष्टाचार, पदलोलुपता, छल, षड़यंत्र आदि का गंभीरता से विश्लेषण कर जनता का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट किया। इस दृष्टि से सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का 'बकरी' नाटक और ज्ञानदेव अग्निहोत्री का 'शतुरमुर्ग' नाटक विशेष उल्लेखनीय है।
- **समकालीन नाटकों में आर्थिक पक्ष के अंतर्गत** – औद्योगिकरण से प्रभावित परिस्थितियों, सामंत वर्ग का शोषण, पूँजीपति वर्ग के अत्याचार, अर्थ लोलुपता, आर्थिक पराधीनता, वैयक्तिक विघटन, नैतिक पतन आदि का चित्रण हुआ है और उनके विरुद्ध जन चेतना को अंकुरित करने का प्रयास भी दिखाई देता है। इसकी सशक्त व सफल अभिव्यक्ति जगदीशचन्द्र माथुर के 'कोणार्क', मोहन राकेश के 'पैर तले जमीन', आधे अधूरे, डॉ. लाल के 'मिस्टर अभिमन्यु' और 'रक्त कमल', भगवती चरण वर्मा के 'रुपया तुम्हे खा गया', लक्ष्मीकांत वर्मा के 'रोशनी एक नदी है' में हुई है।
- **पारिवारिक जीवन के संदर्भ में** – नाटककारों ने आधुनिक काल के पारिवारिक जीवन को प्रस्तुत किया है। जहाँ एक ओर संयुक्त परिवार खण्डों में विभाजित हो रहा है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक संबंधों का गाढ़ापन भी पिघल रहा है। परिवार के सदस्य नदी के द्वीपों की तरह अलग-अलग होकर अपना-अपना अस्तित्व बनाने में लगे है। रेवतीसरन शर्मा के 'चिराग की लौ' में परिवार का विघटन पति-पत्नी के आपसी तनाव के कारण हुआ है तो मोहन राकेश के नाटक 'आधे-अधूरेय में आर्थिक तनाव इसका प्रमुख कारण है। व्यक्ति स्वातन्त्र्य और व्यक्ति स्वार्थ ने भी पारिवारिक मूल्यों को विघटित किया है। शांति मेहरोत्रा का 'ठहरा हुआ पानी' तथा रमेश बक्षी का 'तीसरा हाथी' इस समस्या के ज्वंलत उदाहरण है।
- **विवाह और वैवाहिक जीवन में घटित परिवर्तनों को** भी समकालीन नाटककारों ने अपने नाटककारों ने अपने नाटक का विषय बनाया है –
- **विवाह की समस्याओं** में दहेज का स्थान सर्वप्रथम है। आधुनिक नाटककारों ने दहेज के कारण उत्पन्न विडम्बनात्मक स्थिति को समाज के सामने प्रस्तुत कर पूर्णरुप से दहेज प्रथा का उन्मूलन करने का प्रयास किया। लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक 'गंगामाटी' की सीता 'रातरानी' की कुंतल अश्क के 'बड़े खिलाड़ी' की सुजला आदि नारी पात्र दहेज प्रथा से त्रस्त नारी वर्ग का सशक्त प्रतीक है।
- **विवाह संबंधी मान्यताएँ** भी बदल गई है। अधिकांश नाटकों में विवाह को बंधन मानने वाली युवा पीढ़ी का चित्रण हुआ है। रमेश बक्षी के नाटक 'देवयानी' की नायिका देवयानी के अनुसार – 'विवाह स्त्री और पुरुष को एक साथ बिस्तर पर सोने का सर्टिफिकेट मात्र है।' मोहन राकेश के 'आषाढ़ का एक दिन' में मल्लिका भी यथार्थ प्रेम के सामने विवाह को निरर्थक मानती है। विष्णु प्रभाकर के 'युगे युगे क्रांति' का अनिरुद्ध विवाह को एक सामाजिक परंपरा मानकर उससे बचने का प्रयत्न करता है। आज वैवाहिक संबंधों में धर्म, कुल, जाति या सौन्दर्य की अपेक्षा दो आत्माओ के मिलन को प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है। वर्तमान युग की युवापीढ़ी विवाह को अनिवार्य नहीं मानती है।
- **आज पति-पत्नी के परंपरागत संबंधों में भी सूक्ष्म व जटिल परिवर्तन** आया है। इस परिवर्तन का मुख्य कारण अर्थतत्व और सहवर्तीकारक मनोवैज्ञानिक ग्रंथियाँ तथा सामाजिक विषमताएँ है। डॉ. लाल के नाटक 'कर्फ्यू' में सही रास्ता ढूढ़ने में असमर्थ पति-पत्नी का चित्रण है। नारी की आर्थिक निर्भरता ने पति के एकछत्र स्वामित्व पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। इससे उत्पन्न विडम्बनात्मक दाम्पत्य जीवन का चित्रण 'आधे-अधूरे' नाटक में हुआ है। लाल का 'मादा कैक्टस', शांति मेहरोत्रा का 'ठहरा हुआ पानी', मृदुला गर्ग का 'एक और अजनबी' आदि नाटकों में दाम्पत्य जीवन की विषम परिस्थितियों का चित्रण हुआ है।

इस प्रकार आधुनिक युग में पति-पत्नी के बीच आपसी स्नेह और विश्वास के स्थान पर संदेह और संघर्ष ही ज्यादा दिखाई देता है। वे एक-दूसरे को समझने में प्राय: असफल सिद्ध हुये है।

- आज विवाह तथा स्त्री-पुरुष संबंधों के साथ ही **प्रेम संबंधों में भी पर्याप्त परिवर्तन** आया है। इसका कारण बौद्धिकता की प्रधानता है। उपेन्द्रनाथ अश्क के 'भँवर' नाटक में प्रतिभा और प्रोफेसर के आपसी प्रेम संबंधों का आधार बौद्धिकता है। आधुनिक युग में युवा वर्ग शादी और प्रेम अलग-अलग व्यक्तियों से करता है। शांति मेहरोत्रा का 'ठहरा हुआ पानी', गिरिराज किशोर का 'नरमेघ', लाल का 'मादा कैक्टस', विष्णु प्रभाकर का 'युगे-युगे क्रांति' नाटक इसके ज्वलंत उदाहरण है। यहाँ नाटककारों ने प्रेम के पीछे अंधों की तरह भागने वालों और अंत में निराश एवं निरालम्ब बनने वाले युवा वर्ग का मार्मिक चित्रण करते हुये उन्हें सचेत करने का प्रयास किया है। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभावस्वरुप भारतीय युवकों में भी प्रेम के साथ-साथ सेक्स का अटूट संबंध परिलक्षित होता है। नारी स्वतंत्रता ने इसे और अधिक प्रश्रय दिया है। अश्क के 'भँवर', राजेन्द्रकुमार के 'अपनी कमाई', लाल के 'अब्दुला दीवाना' आदि नाटकों में प्रेम और सेक्स के आधिक्य का विशद् विवेचन हुआ है।
- तत्कालीन नाटककारों ने आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर **नारी की नई चेतना** को भी अभिव्यक्त किया है। 'समर्पण' नाटक के नाटककार ने नारी को दुनिया के सभी कार्यों में आगे बढ़ाने की आवश्यकता पर बल दिया है। जयप्रकाश सिन्हा के 'सादर आपका' रेवतीसरन शर्मा के 'चिराग की लौ' में आत्मसम्मान को बनाये रखने वाली आधुनिक नारी का चित्रण हुआ है।

आज की नारी उच्च शिक्षा से उत्पन्न बौद्धिकता की दीप्ति को पाकर न केवल आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में प्रगति कर रही है, वरन् वे अपने 'स्वत्व' को भी पहचानने लगी है और अपने स्वत्व को स्वेच्छा से जीने के लिये प्रयत्नशील है। इस प्रकार अपने अस्तित्व के प्रति सचेत आज की नारी सारी सामाजिक परंपराओं, मान्यताओं और रुढ़ मूल्यों को चुनौती दे रही है।

- स्वातन्त्र्योत्तर युग **युवा पीढ़ी की नवीन चेतना** का प्रतीक है। वे परंपरागत मूल्यों, आचारों और विश्वासों को तोड़कर नए मूल्यों को स्थापित करना चाहती है। मान्यताओं के इस परिवर्तित दौर में न पुरानी पीढ़ी नई पीढ़ी को समझने का प्रयत्न करती है और न ही नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के लोगों को। परिणामस्वरुप संघर्ष की स्थिति निर्मित हो जाती है। रमेश बक्षी का 'तीसरा हाथी', शांति मेहरोत्रा का 'ठहरा हुआ पानी', अमृतराय का 'चिन्दियों की एक झालर' में समस्या की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है।

आधुनिक युग में नौकरी की तलाश में संघर्षरत नई पीढ़ी की निराशाओं व विवशताओं को पहचानकर नाटकों द्वारा अभिव्यक्त करने में समकालीन नाटककार सफल हुये है। मुद्राराक्षस के 'मरजीवा' नाटक में ऐसी ही करुणापूर्ण कहानी को प्रस्तुत किया गया है। युवाओं की नैतिक मान्यताओं में आए परिवर्तनों तथा नैतिक पतन का समग्र चित्रण भी हरिकृष्ण प्रेमी के 'ममता' व रेवतीसरन शर्मा के 'दीपशिखा' नाटकों में देखने को मिलता है।

- समसामयिक नाटकों में **व्यक्ति मन के अंतरसंघर्षों** को भी प्रमुख स्थान दिया गया है। लक्ष्मीनारायण लाल के 'मिस्टर अभिमन्यु' नाटक में

मानव के चारों ओर व्याप्त विडम्बनात्मक परिस्थितियों का चित्रण हुआ है। चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के 'न्याय की रात', दया प्रकाश सिन्हा के 'कथा एक कंस की' और मोहन राकेश के प्राय: सभी नाटकों में आधुनिक मानव का आंतरिक संघर्ष दिखाई देता है।

आज विज्ञान के क्षेत्र में आशातीत उन्नति हुई है। व्यक्ति की रुचि भी विज्ञान की ओर बढ़ रही है। लोगों के मन में धर्म तथा ईश्वर के प्रति विश्वास घटता जा रहा है। नाटककारों ने भारतीय संस्कृति की प्रतिष्ठा स्थापित कर मानव के विश्वास को आध्यात्मिकता की ओर मोड़ने का प्रयास किया है। यह प्रयास जगदीशचन्द्र माथुर के 'पहला राजा', मणि मधुकर के 'रस गंधर्व', रामकुमार वर्मा के 'पृथ्वी का स्वर्ग', रेवतीसरन शर्मा के 'न धर्म न ईमान' आदि नाट्य रचनाओं में उभरकर सामने आया है।

- वर्तमान दूषित राजनीति और अर्थनीति ने **शिक्षा के क्षेत्र** को भी प्रभावित किया है। शिक्षा के क्षेत्र में फैली कुरीतियों-भ्रष्टाचार, रिश्वत, सिफारिश, व्यक्तिगत स्वार्थ आदि का समग्र चित्रण सामयिक नाटकों में मिलता है। वर्तमान युग में नौकरी के लिये योग्यता मापदण्ड नहीं रहा है। आज नौकरी पाने के लिये सिफारिश और भारी धन की आवश्यकता है, जिसका चित्रण शंकर शेष के 'बंधन अपने-अपनेय, मन्नु भंडारी के 'बिना दीवारों के घर', चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के 'न्याय की रात', ब्रजमोहन शाह के 'त्रिशंकु' आदि नाटकों में हुआ है।
- आज मानव बौद्धिकता तथा विज्ञान के विकास के साथ-साथ **अधिकाधिक विघटित एवं कुण्ठित दिखाई** पड़ता है। आज का मानव जीवन आधुनिकीकरण और मशीनी सभ्यता के प्रभावस्वरुप कृत्रिम व भावशून्य हो गया है। सहानुभूति, सहिष्णुता और मानवीयता जैसे आचरण का स्थान उत्तेजना, तनाव, स्वार्थ व अकेलेपन ने ले लिया है। 'आषाढ़ का एक दिन' नाटक का पात्र 'कालिदास', 'लहरों के राजहंस' का नन्द 'ममता' का रजनीकान्त और लता तथा आधे-अधूरे के सभी पात्र इसके सशक्त उदाहरण है। इस प्रकार समकालीन नाटकों मे घोर व्यक्तिवादी चेतना भी अभिव्यक्त दिखाई देती है। नाटकों के पात्र देश, समाज, संस्कृति, परंपरा और इतिहास को नकारता हुआ, उससे अपने आपको अलगाता हुआ भारतीयता से कुण्ठित, पाश्चात्य वैज्ञानिक, औद्योगिक, सांस्कृतिक, वैचारिक उपलब्धियों से अपने आपको अधिकाधिक जुड़ा हुआ दिखलाने का प्रयत्न करते है।

अंत में हम कह सकते है कि स्वातन्त्र्योत्तर नाटककारों ने अपने नाटकों के माध्यम से सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का सफल प्रयास किया है। व्यक्ति के व्यक्तित्व की पहचान और उसका पुरातन के प्रति विद्रोह नाटक के मुख्य स्वर है। जो निश्चित रुप से नए संदर्भो की तलाश कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य सामाजिक चेतना - डॉ. रत्नाकर पाण्डेय
2. समकालीन नाट्य साहित्य और मोहन राकेश के नाटक - सुषमा अग्रवाल।
3. आधुनिक साहित्य : विविध परिदृश्य - सुन्दरलाल कुथूरिया
4. हिन्दी नाटक पुनर्मूल्यांकन - डॉ. सत्येन्दू तनेजा
5. आधुनिक हिन्दी नाटक और नाटककार - डॉ. रामकुमार वर्मा
6. आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन - के.के. मिश्र
7. हिन्दी नाटक : उद्‌भव और विकास - दशरथ ओझा
8. बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक - ओमप्रकाश सारस्वत
9. मोहन राकेश - आधे-अधूरे
10. शांति मेहरोत्रा ठहरा हुआ पानी

****

झाबुआई लोक संस्कृति का यथार्थ

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम *

शोध सारांश – आदिवासी संस्कृति हमारी प्राचीन संस्कृति है, पर यह लिखित तो है नहीं हमेशा से इसके द्वारा वाचिक परम्परा का ही निर्वहन किया गया है, परन्तु वर्तमान में साहित्यकारों द्वारा जो आदिवासी संस्कृति को संजोकर लिपिबद्ध करने का कार्य किया जा रहा है, वह निश्चित ही इस भीषण आधुनिकता में अपनी ऋचाओं, लालित्य, परम्पराओं और सामाजिक स्थितियों को उजागर करने वाली उपमा को बचाने का कार्य है। यह संस्कृति अतुलनीय है जो शुद्ध रूप में अत्यंत ही भावनात्मक रूप में दृष्टिगत होती है। इस आपाधापी के समय में भी आदिवासी संस्कृति हमें प्रकृति के रहस्यात्मक दृश्यों के अद्भुत लोक में झांकने के लिए प्रेरित करती है, जो मनुष्य अपने जीवन में प्रकृति की उपादेयता को स्थान नहीं देता वह भी यदि आदिवासी संस्कृति की गेयात्मकता, चित्रमयता, सहजता, सुलभता एवं सौन्दर्यमयता को देखे तो उसे अत्यंत ही मनोहारी दृश्य उद्घाटित होंगे। इन दृश्यों का प्रत्यक्षीकरण डॉ. कला जोशी ने अपनी पुस्तक 'आदिवासी लोक संस्कृति' में किया है। झाबुआ की आदिवासी लोक संस्कृति को औत्सुक्य से, अलंकारों से और सौन्दर्य से अनावृत्त किया है, निश्चय ही पुस्तक को पढ़कर सच्चाई और द्वेष रूपी अंधकार का नाश होगा और यह पुस्तक अंधकार को दूर करके तेज के साथ आगमन करेगी। उषा हो या निशा सभी में एक नई चेतना का संचार होगा।

प्रस्तावना – डॉ. कला जोशी की अपनी पुस्तक 'आदिवासी लोक संस्कृति' में झाबुआ के आदिवासियों की सभ्यता, संस्कृति, संस्कार और परम्परा के साथ नवचेतना का मूल है, इसी परिवेश में वे अपना उत्थान करते हुए नजर आते हैं, अतीत की अचूक पहचान रखने वाले आदिवासियों में नवीन के प्रति आदर का भाव भी पूरी पुस्तक में परिलक्षित हुआ हैं। पुस्तक का प्रथम अध्याय लोक संस्कृति की अवधारणा – इस बात का प्रमाण है कि वर्तमान में आदिवासी, परम्परा को आप्त करते हुए उससे मुक्त भी रहते हैं, यह उनके लिए अत्यंत कठिन है पर वे भलीभाँति समझते हैं कि परम्परा के भीतर कैसे आधुनिक बने रहें। परम्परा, आधुनिकता और संस्कृति के समन्वय रूप में आदिवासियों का योगदान एक नया स्पर्श दे रहा है।

पुस्तक का द्वितीय अध्याय झाबुआ की लोकसंस्कृति पाठकों के लिए बहुत ही उपयोगी और बौद्धिक विमर्श से भरपूर है। यह वैसा ही है जैसे – सौन्दर्य और उपयोगिता के बीच यदि चुनाव करना है तो ज्यादातर लोग उपयोगिता को ही चुनेंगे। इस अध्याय को पठन करते हुए प्राप्त आनंद को मैं कुछ इस अंदाज में समझाना चाहूँगी कि हमारे प्राचीन आचार्यों ने भले ही साहित्य को कलाओं से पृथक कर दिया हो, पर है यह कला वैसी ही जैसे नृत्य करना, चित्र बनाना, बाँसुरी बजाना या तनी हुई रस्सी पर चलना।

लेखिका द्वारा आदिवासी लोकसंस्कृति की गवेषणा का प्रयास तीन सत्र ज्ञान, कर्म और सौन्दर्य को भलिभाँति ध्यान में रखकर किया गया है, इन तीनों में कोई बैर नहीं है इसे दुहराया जा सकता है, इसमें कहीं परिक्षेत्रीय अध्ययन है, तो कहीं पौराणिक और भाषा वैज्ञानिक अध्ययन तो यत्र–तत्र सर्वत्र है, कहीं पर संस्कृति ग्रहण का प्रभाव है, तो कहीं अपनी मूल बोली खो चुके उन आदिवासियों की चिंता और उनकी उत्पत्ति से संबंधित मिथकों की अत्यंत ही सहज मनोरंजक ढंग से प्रस्तुतीकरण।

जीवन एक ठोस घटना है, यह धरातलीय वातावरण में ही होती है, जिसकी अपनी खूबसूरती है, कुरूपनाएँ है और कल्पनाओं का भी सरोबार है। लेखिका ने अपने अगले अध्याय में 'झाबुआ के आदिवासियों में लोक संस्कार' में भीलों, भिलालों पर अपना पारम्परिक और उसमें समय दर समय हुए परिवर्तनों का भी उल्लेख किया है। आधुनिकता के प्रभाव में आकर उनके संस्कार, विहार और आचार लगातार कमजोर, लचर, सतही, असंवादी और अविश्वसनीय होते जा रहे हैं। यहाँ पर लेखिका लिखती हैं कि 'आदिवासी जन धर्म के संबंध में दोहरी–तिहरी जिंदगी को एक साथ ही जीते है।' यहाँ पर एक सभ्य समाज और सभी धर्म के ठेकेदार उनके साथ छलिया की भूमिका में हैं।

इस अध्याय में भीलों और भिलालों के लोक संस्कार की अनेक छवियाँ हैं, यह संस्कार अपने स्वभाव, स्वतंत्रता, रहन–सहन, सोच–विचार, संबंधों और कलाओं की खूंटी हैं। जिसमें संबंधों की गरमाहट, स्थायित्व, पारिवारिक मूल्य–मान्यताएँ, पद्धतियाँ, रीति–रिवाज और रागात्मकता आपस में बनी हुई है। इसी माध्यम से यह सामूहिक होते रहते हैं, 'हरीकरण की छाया पड़ने के बावजूद भी रस्म निभाने के लिए उसे अपने पैतृक ग्रामों में आना होता है। वे हर संस्कार के लिए अपने समाज और गांव से जुड़े होते हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक और इसी बीच होने वाली अनेकानेक संस्कारगत घटनाएँ इनके जीवन का भी अनिवार्य अंग हैं।

चतुर्थ अध्याय में लेखिका ने विषय की स्थिति को और अधिक स्पष्ट करने के लिए कुछ प्रसंग और स्मृतियाँ चुनी है, वे उस समाज के अनेक अर्थों को खोलते–खोलते उनकी आत्मा की आवाज तक पहुँची हैं और एक नई मूर्ति का रूप विन्यास कर पाई हैं। डॉ. कला जोशी बहु अधीत लेखिका हैं, इसलिए उनका अध्ययन भी गहरा है, विभिन्न क्षेत्रों का है, गहरे पानी पेठ है।

परम्परा और आधुनिकता को साथ लेकर चलता विषय जो गतिमान है, पंचम अध्याय 'झाबुआ के आदिवासियों के लोकसाहित्य की वाचिक परम्परा' यह 'वाचिक' शब्द ही शायद अंत तक जीवित रहेगा। यह शब्द निरंतर समृति सम्पन्न और वृहत्तर प्रश्नों की ओर इंगित करता हैं।

लेखिका ने पारम्परिक भारतीय विवेक को दृष्टिगत रखते हुए अपनी वाचिक परम्परा के सृजन को अपनी शर्तों पर समझ कर उसे तमाम अटकलों के बावजूद एक सौन्दर्यमयी दृष्टि प्रदान की है। वाचिक परम्परा तो हमारे पूर्वजों द्वारा की गई वह अभिव्यक्ति है, जो भले ही किसी व्यक्ति द्वारा पहले

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कभी कही गई हो भले ही उसके कोई प्रमाण उपस्थित न हों परन्तु वह वाचिकता निरंतर हस्तांतरित हुई है और आज जिसे सामान्य समूह अपना मानता है। इस वाचिक परम्परा में बहुविध रंग, व्यवहार है और यह सदियों से चली आ रही चुप्पी को शब्द प्रदान करने का बहुत अच्छा माध्यम है।

इतने तेजी से बदलते वक्त की परेशान और हताश कर देने वाली सच्चाई लेखिका ने इस अध्याय 'आदिवासी लोक संस्कृति पर शहरी संस्कृति' का प्रभाव में बताई है। यहाँ इस अध्याय में यह बात उल्लेखनीय है कि लेखिका ने स्वयं लिखा है कि जितने आदिवासी ईसाई धार्मवलंबी हैं वे सब पढ़-लिखकर शिक्षित हैं, नौकरियाँ कर रहे हैं, उच्च पद पर आसीन हैं, यानि वे ईसाई मिशनरी श्रद्धा भाव से उनकी सेवा कर रहे है पर उनकी तुलना में हमारे हिन्दू आंदोलन फीके पड़ रहे हैं। मानवीय मूल्य इतने खोखले हो गए है कि वहाँ का पानी भी पीने लायक नहीं हैं। पानी में फ्लोराईड और आर्सेनिक तत्व अधिक होने से आदिवासियों के अंगों में गलने की बीमारी पाई जाती है और उस बीमारी का इलाज भी मिशनरीज द्वारा किया जाता है। यह तीखी सच्चाई है कि जो उन्हें व्याधियों से मुक्ति दिलाएगा वहीं उनका मसीहा कहलाएगा। हमारे सभ्य समाज में भी तो यही होता हैं। यह अध्याय इस अर्थ में विशिष्ट है कि हमें जातीय टकराहटों से बाहर निकलकर अपनी मानसिकता जो कि परम्परागत है, सच में उस भोली-भाली संस्कृति का सम्मान करना होगा।

पुस्तक का यह अंतिम अध्याय 'आदिवासी लोक संस्कृति और सामाजिक समरसता' लेखकीय प्रत्याख्यान के साथ शुरू होता है जो 'लोक' क्या है इसका समग्र, वास्तविक अर्थ बतलाता है। इस अध्याय में आदिवासियों के जोखिम भरे जीवन के प्रति कई सवाल उठाए गए हैं, हमारी लोकसंस्कृति सिर्फ विवाह गीत, मृत्यु गीत, जन्म गीत, संस्कार, प्रेम गीत, प्रकृति गीत, मुहावरे, लोकोक्ति, भाषा, बोली, उनके संस्कारों पर शोध करने में ही नहीं हैं वरन् उनके प्रति हो रहे शोषण की भी पड़ताल हैं। संक्रमण के इस दौर में लोक संस्कृति को लेकर अटल पूर्वाग्रह है। हमें पता है कि संस्कृति विघटन की ओर न चली जाए, यदि जाती है तो उनके कारणों का ज्ञान भी हमें है, वह क्या परिस्थितियाँ होंगी जिसमें संक्रमण का कीड़ा पूरी फसल को नष्ट करेगा, पर प्रश्न है कि हम अपनी संस्कृति को लेकर भी अवसरवादी है, गंभीर नहीं, जिम्मेदार नहीं, विचारशील नहीं। हमारी आलोचना सहज, सुविचारित, सम्प्रेषणीय हैं, पर अज्ञानवश आने वाले हितलाभ के गुण को हम छोड़ नहीं पाते। हम अनर्थ ही नहीं, अपने होकर अपनों के प्रति बेईमानी कर रहे हैं। हम समाज और उसकी समरसता को अपनी लापरवाही या अज्ञानवश टपक पड़ने वाले स्वार्थ भाव के कारण दु:खद स्थिति को उत्पन्न करने की ओर प्रेरित हो चुके हैं। अब इस आदिवासी संस्कृति को झूठ, छल और शोषण नहीं बल्कि उजले समाज की स्वीकार्यता सहिष्णुता और आदर का भाव चाहिए। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और मानसिक निर्माण चाहिए।

आदिवासी लोक संस्कृति, लोकसाहित्य की दुनिया पर केन्द्रित है लेखिका की अपनी दुनिया भी यही है। नित-नूतन देखकर उसे लिपिबद्ध कर उसमें प्रश्न बिखेर देती हैं और भयावह होती जीवन स्थितियों और निरंकुश होती सभ्यताओं पर प्राय: वक्रोक्तियों द्वारा इतिश्री करती हैं। यहाँ परिवेश की अन्यायपूर्ण व्यवस्थाओं, विसंगतियों और जीवन में निहित पाखंडों पर भी उन्होंने वैचारिक आधार पर विचारशील होना आवश्यक माना है, क्योंकि सम्पूर्ण आदिवासी समाज अपने मूल्यों पर भरोसा करने वाले हैं, वे अपनी बौद्धिक क्षमता के अनुसार सकारात्मक संभावनाओं के साथ आगे बढ़ते हैं और इस संबंध में अवरोध उत्पन्न करने वाली स्थितियों, प्रवृत्तियों, शक्तियों और दुरभि संधियों में वैमनस्य न करते हुए समन्वय के आधार पर मूल्यों और ग्रामीण सामाजिक एवम् धार्मिक - हिन्दू, ईसाई और स्वयं के पर्व मनाते चले जाते हैं। उनके लिए शासन और समाज की एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है कि वे दो पाये के बीच में पिसते चले जा रहे हैं। आदिवासी संस्कृति एक राजनीतिक व्यवस्था और शासन पद्धति नहीं हैं, वह एक ऐसी मानसिकता हे जो सहिष्णुता की संस्कृति, दूसरों का सम्मान, दूसरों के अंतरों को स्वीकार, विचारों की अनेकता का आदर और गीत-संगीत, तीज-त्यौहारों से भरपूर हैं। संस्कृति की ये सभी विशेषताएँ हमारे अंतरमन स्वभाव में निहित हैं, हमें अपनी स्वतंत्रता के साथ-साथ लोकसंस्कृति के हितों का भी ध्यान रखना चाहिए। लोकसंस्कृति की गरिमा और उसके हर पक्ष की रक्षा का प्रयत्न करते हुए ही व्यक्ति को सामाजिक और मानवीय बनाने में सफल हुआ जा सकता हैं। यह सच है कि आजकल लोकसंस्कृति संकट में हैं क्योंकि नैतिक मूल्यों में भारीं गिरावट देखने में आ रही हैं। गीत' जो ईश्वर तक पहुँचने का एकमात्र साधन है, वह अब 'पॉप गीत' में अभिशप्त होते जा रहे हैं। समझ और संवेदना मानव अस्तित्व की बुनियादी विशेषता है, इसे हमें बहुत जतन से बनाए रखना हैं। हमें अपनी संस्कृति को अनावश्यक घुसपैठ से बचाना हैं तो गहरे पूर्वाग्रहों से मुक्त होना होगा। समाज के किसी अंग को मरणांतर झूठ नहीं बोला जा सकता। लोकसाहित्य समाज के समक्ष एक जलती हुई मशाल की भाँति हैं यदि वह बुझी तो घनघोर अंधेरा छा जाएगा। सवाल महत्वपूर्ण है, कड़वी सच्चाई हैं, संकट का अस्तित्व चहुँओर हैं, हमें इस दिशा में अपने तत्परतापूर्ण संवाद करते रहना होगा यही लेखिका का उद्देश्य रहा होगा इसलिए उन्होंने लोकलुभाव झूठी बहार को छोड़कर कुछ नए स्थापन की चेष्टा की। इस पुस्तक में झाबुआ के आदिवासियों के समग्र जीवन का अनुशीलन हुआ है और मजबूत लोकसाहित्य की दूरस्थ अभिप्रेरणा प्राप्त हुई है एवं युवा पीढ़ी के समक्ष गंभीर विचार छोड़ा गया है, जिसने सभी उजले पक्षों की कलई भी खोली है। जैसे-जैसे आप इस पुस्तक को पढ़ते चलेंगे फर्क धीरे-धीरे आपको दृष्टिगत होगा। यह सिर्फ आदिवासी संस्कृति की आदर्श स्थिति का गुणगान नहीं हैं बल्कि उसे सही स्थिति और समय में देखने, समझने का एक रचनात्मक प्रयास भी साबित है।

संदर्भ सूची :-

1. आदिवासी अस्मिता और विकास - प्रो. हीरालाल शुक्ल
2. आदिवासी विकास - डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा
3. आदिवासी भारत - योगेश अटल
4. मानव और संस्कृति - एस.सी. दुबे
5. जनजातीय जीवन और संस्कृति - श्रीचंद्र जैन
6. भारत की जनजातियाँ - शिवकुमार शर्मा
7. म.प्र. की जनजातियाँ - शिवकुमार शर्मा

****

पत्रकारिता और प्रिंट मीडिया

डॉ. बिन्दू परस्ते *

शोध सारांश – प्रिंट मीडिया का मनुष्य से सीधा सरोकार है, था और रहेगा पत्र-पत्रिका तो कोई भी निकाल सकता है और आम लोगों को जागृत कर सकता है। प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की अपेक्षा अपना उच्च स्थान रखता है। क्योंकि इससे दो रुपये के खर्च में गरीब आदमी भी देश-विदेश को घटनाओं और जानकारी से अवगत हो सकता है। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अपने विचार पहुँचा सकता है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सूचनाप्रद है जबकि प्रिंट मीडिया विचार प्रधान टिप्पणी, विश्लेषण, लेख, स्तंभ, प्रिंट मीडिया की विशेषताएँ है। ये सभी विषय विशेषज्ञों द्धारा लिखा जाता है। एक लक्ष्य को आधार बनाकर यह लिखा जाता है। संपादक तथा संपादकीय टीम अपने शब्दों के द्धारा प्रकाशन ग्रह की सामान्य नीतियों को पाठकों तक ले जाती है। प्रिंट मीडिया पाठकों पर नहीं थोपता बल्कि पाठक को अपनी बात रखने की अवसर देता है।

मीडिया का काम केवल धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक बुराईयों के खिलाफ आंदोलन छेड़ना नहीं बल्कि पाठकों, दर्शकों और श्रोताओं के बीच संवाद शुरू करना भी है और बिखरे हुए को एकत्र करना भी है। समाज को सही दिशा में ले जाना ही मीडिया का लक्ष्य होना चाहिए।

प्रस्तावना – प्रिंट मीडिया का मनुष्य से सीधा सरोकार है, था और रहेगा पत्र-पत्रिका तो कोई भी निकाल सकता है और आम लोगों को जागृत कर सकता है। पर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया आम आदमी का खेल न होकर पूँजीपतियों के हाथ का खिलौना है। प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की अपेक्षा अपना उच्च स्थान रखता है, क्योंकि इससे दो रुपये के खर्च में गरीब आदमी भी देश-विदेश को घटनाओं और जानकारी से अवगत हो सकता है। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक अपने विचार पहुँचा सकता है।

प्रिंट लोकतंत्र का चौथा स्तंभ और प्रहरी है। प्रिंट मीडिया की भूमिका स्वतंत्र, निष्पक्ष एवं निर्भीक होनी चाहिए। सरकार पर दबाव प्रिंट मीडिया से ही पड़ता है। मीडिया की समाज में सुखद वातावरण बनाने की जिम्मेदारी है। समाज को भड़काऊ विज्ञापन नुकसान पहुँचाते हैं परन्तु जीवन की जरुरी सूचनाएँ मनुष्य को विज्ञापन से ही प्राप्त होती हैं। ये ही मनुष्य को विकसित करने को प्रेरित करते हैं। कुल मिलाकर स्वस्थ तरीके के विज्ञापन होने चाहिए। प्रिन्ट मीडिया साक्षरता पर आधारित ज्ञान और सूचनाओं के व्यापक प्रसार का सबसे पहला माध्यम है जिसे जनतंत्र का चौथा स्तंभ भी कहा जाता है। पत्रकारिता को संवारने का काम नई-नई तकनीकों से हो रहा है। मीडिया का कोई भी कर्मी वह चाहे जिस पद में हो उसे पैसा चाहिए। जहाँ घन आया वहाँ व्यवसायिकता आड़े आ जाती हैं। पत्रकारिता भी इसी वजह से मिशन् की जगह व्यवसाय हो गई है।

मीडिया विशेषज्ञ सुधीश पचौरी का मत है कि पत्रकारिता की अवधारणा को जो वर्तमान पत्रकारिता में पत्रकारों के इन स्तरों के बीच लगातार बदल रही है उसे समझना जरुरी है क्लासीकल पत्रकारिता के लिए पत्रकारिता मिशन भी मजबूरी के मारे साहित्यकार के लिए पत्रकारिता मिशन थी। आज की पत्रकारिता व्यवसायिकता का रुप धारण कर रही है पत्रकारिता क्लासीकल मिशनरी रुप को आज चुनौती नई पत्रकारिता दे रहा है। इसका सबसे मुख्य कारण है। पत्रकारिता राजनीति के समीप और आम जनता से दूर होती जा रही है। आज का पत्रकार अपने कुंठित विचारों के कारण विचारों को फैलाना नहीं चाहता। आज के मीडिया कर्मी बिना पढ़े सच को झूठ और झूठ को सच सिद्ध करने की कोशिश करते है। इसी कारण वह मनगढ़त बातें लिखता नहीं गढ़ता है। पहले वह आपस में लड़ते हैं और यह लड़ाई पाठकों तक पहुँच जाती है। यही वे कारण है कि पत्रकारिता आम जनता के खिलाफ नजर आती है।

ईसाई मिशन के तहत सन् 1818 ई. में प्रकाशित 'दिग्दर्शन' मासिक पत्र जो श्रीराम पुर से प्रकाशित है उसे भारत में प्रिंट मीडिया का उद्भव माना जाता है।

30, मई 1826 को युगल किशोर के समापन में कलकत्ता के फ्लू हूरोला से हिन्दी का पहला साप्ताहिक पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' प्रकाशित हुआ। मनु ठाकुर ही इसके मुद्रक और स्वामी थे। 1818 में प्रकाशित 'दिग्दर्शन' को हिन्दी का पहला पत्र डॉ. महादेव संघ ने माना है। डॉ. वेद प्रताप वैदिक, जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, डॉ. जे. एस. आनंद जैसे कई विद्धानो ने लंदन जाकर हिन्दी दिग्दर्शन के विषय में जानना चाहा पर 'उदन्त मार्तण्ड' जैसी ठोस पुष्टि नहीं हो सकी। इन मतों से 'उदन्ड मार्तण्ड' की हिन्दी का प्रथम समाचार मानना उचित होगा। उदन्ड का अभिप्राय समाचार से तथा मार्तण्ड का सूर्य से हैं। लोगों का मानना है कि अपने विचारों को आम जनता तक सूर्य की किरणों की भाँति फैलाकर क्रांति की पृष्ठभूमि तैयार की है लेकिन ये किरणें दलितों से कोसो दूर रही।

हिन्दी में निर्भीक देशभक्त पत्रकार कला का आदर्श भारतेन्दु ने 'कबि वचन सुधा' के माध्यम से लोगों के सामने रखा। भारतेन्दु ने न्याय, और सत्य का पक्ष लिया। उन्होंने रुढ़िवादियों, राजभक्तों और चाटुकारों की परवाह नहीं की। भारतेन्दु ने नई सुधरी हुई हिन्दी का उदय इसी समय से माना। उन्होंने 'कालचक्र' नाम की अपनी पुस्तक में नोट किया हैं कि सन् 1873 में हिन्दी नई चाल से ढली।

'हिन्दी प्रदीप' 1 सितम्बर 1877 को प. बालकृष्ण भट्ट के संपादकत्व में प्रकाशित हुआ।

सन् 1885 में 'दैनिक हिन्दोस्थान' नाम समाचार-पत्र पं. मदन मोहन मालवीय के संपादन में निकला। इसमें प्रताप नारायण मिश्र बाल मुकुन्द गुप्त, गोपाल राम गहमरी, अमृत लाल चक्रवर्ती, बाबू शशिभूषण चटर्जी, लालबहादुर बी.ए. जैसे वरिष्ठ पत्रकारों का सहयोग इस पत्र को मिला।
डॉ. कैलाश नारद के संपादन में 'भारत भ्रांता' का प्रकाशन रीवा से 15 जनवरी 1887 को निकला। 'सार सुधा निधि' का प्रकाशन पं. दुर्गाप्रसाद एवं गोविन्द नारायण और पं. सदानंद की देखरेख में 13 अप्रैल 1879 को हुआ। दुर्गा प्रसाद मिश्र ने तीसरा पत्र 'उचित वक्ता' का आरम्भ 7 अगस्त 1820 को किया। लोगों में शक्ति और स्कूर्ति का संचार पैदा किया दुर्गाप्रसाद मिश्र की पत्रकारिता ने।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

डॉ. रामविलास शर्मा ने सम्पूर्ण परिस्थिति का मूल्यांकन करते हुए लिखा है कि 'सशक्त, निरंकुश तथा प्रचंड विदेशी शासन के समक्ष थे – प्रथम सरल मार्ग नतमस्तक होकर शासन की हाँ में हाँ मिलाना था और दूसरा था कठोर आलोचना के साथ व्यंग्य–विनोद, हास्य आदि के द्धारा चटपटी भाषा में विदेशी कार्य और नीति का पर्दाफाश करना।

'सरस्वती' का बड़ा शोर उस समय साहित्यिक पत्रिकाओं में था। इस पत्रिका के कलेवर में और परिवर्तन आया 1903 में महावीर के संपादकत्व में। सरस्वती का युग नवजागरण का युग था। हीरा डोम की 'उनदूत' कविता को इसी पत्रिका में जगह मिली। ब्रिटिश सरकार के द्धारा अनेक हथकंडे अपनाये गये अपनी शक्ति भारत में कायम रखने के लिए। 'कलकत्ता समाचार', 'देव नगर', 'नृसिंह', 'विश्वमित्र', 'स्वतंत्र' आदि पत्रों ने अंग्रेजी शासन को खुलेआम चुनौती दी। इस वर्ष की बसंत पंचमी के दिन प्रयाग से 'अभ्युद' साप्ताहिक पत्र पं. मदन मोहन मालवीय के संपादकत्व में शुरू हुआ।

जयपुर से 1902 में समालोचक मासिक चंद्रधर शर्मा गुलेरी के संपादन में और पं. माधव राव सप्रे ने 'हिन्द केसरी' नागपुर से 1903 को प्रकाशित किया। 'हिन्द केसरी' ने सरकार की दमनकारी नीति के खिलाफ आवाज उठाई। ब्रिटिश सरकार ने 1908 में इसके संपादक को गिरफ्तार कर लिया। डॉ. विद्याधर शर्मा का कहना है कि 'समालोचक' गुलेरी जी श्रेष्ठ संपादन कला, विशिष्ट क्षमता एवं मौलिक प्रतिभा का अनूठा उदाहरण है। अम्बिका प्रसाद बाजपेयी के संपादन में 'नृसिंह' पत्र 1907 ई. में निकला। अम्बिका प्रसाद बाजपेयी लिखते हैं – 'आओ समस्त देशवासियों। हम लोग उपनिवेश और उसके पिट्ठू इंग्लैण्ड की वस्तुओं का बहिष्कार करें जिसमें उन्हें जान पड़े की हिन्दुस्तानी मरे मुर्दे नहीं है हम लोग दिखा दें कि हम आत्माभिमानी हैं और तुम्हें तुम्हारे पापकर्मों का फल चखाने का बहु परिशकार है।'शांति नारायण के संपादन में इलाहाबाद से प्रकाशित पत्र – स्वराज्य लोगों के हाथों तक पहुँचा। 'कर्मयोगी' का प्रकाशन प्रयाग से ही हुआ। पत्र की संपादकीय पं. सुंदरलाल ने लिखी। 'प्रताप गणेश शंकर विद्यार्थी के संपादन में 9 नवम्बर 1913 को कानपुर से प्रकाषित हुआ।'

गणेश शंकर विद्यार्थी का हिन्दी पत्रकारिता में महत्वपूर्ण स्थान है। साप्ताहिक 'स्वदेश' का प्रकाशन सन् 1919 को हुआ। 'प्रभा' का संपादन इन्हीं के द्धारा हुआ। 'हरिजन' अंग्रेजी और हिन्दी में गांधी जी के सहयोग से प्रकाशित होने लगा।

अंबिका प्रसाद गुप्त के संपादन में 'इन्दु' का प्रकाशन 1909 को काशी से हुआ। सन् 1910 को पत्रकार कृष्णकांत मालवीय ने 'मर्यादा' 1912 को ईश्वरी प्रसाद शर्मा के सम्पादन में 'मनोरंजन' कालूराम गंगराडे के सम्पादन में 7 अप्रैल 1913 को 'प्रभा' का प्रकाशन हुआ। माखनलाल चतुर्वेदी ने बाद में इसी पत्रिका का सम्पादन किया।

अपने जीवन में डॉ. अम्बेडकर ने बहिष्कृत भारत समता एवं जनता का प्रकाशन किया। ठोस तत्वों के आधार पर उन्होंने लिखा। 'मूलनायक' भारतीय पत्रकारिता में बहिष्कृत भारत की एक स्वतंत्र पहचान है।
5 सितम्बर, 1920 को 'आज' का प्रकाशन बाबू श्री प्रकाश के संपादन में हुआ। संपादन का नाम पत्र में 1924 ई. से पहले नहीं छपता था केवल निर्देशन का काम बाबू विष्णु पराड़कर करते थे।

जबलपुर से 'कर्मवीर' का प्रकाशन 17 जनवरी 1920 को हुआ। इस पत्र ने लेखकों, कवियों, विचारकों एवं क्रान्तिकारियों को एक मंच में इकट्ठा ही नहीं किया बल्कि वैचारिक पत्रकारिता का अलख जगाने का कार्य भी किया। अम्बिका ने 4 अगस्त, 1920 को कलकत्ता से 'स्वतंत्र' नामक पत्र का संपादन किया। बड़े जोर–शोर से आर्थिक पत्रकारिता का स्वरूप उभरा। दिल्ली से 'महारथी' पत्र 1923 को रामचंद शर्मा के संपादन में निकला। हरिभाऊ उपाध्याय ने 'त्यागभूमि' का प्रकाशन 1927 में किया। इसमें समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक की रिपोर्ट छपती थी। गांधीवादी दृष्टि से यह पत्र ओतप्रोत था। 'सैनिक' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन आगरा से कृष्णदत्ता पालीवाल ने किया। 'अर्जुन' का प्रकाशन 1923 को प्रो. इन्द्र विद्यावाचस्पति ने किया। इसका नाम 1936 को 'वीर अर्जुन' पत्र हो गया। 'विप्लव' का प्रकाशन अक्टूबर 1938 को यशपाल ने अपनी पटनी के साथ किया।

1930 को 'हंस' मासिक का आरम्भ बनारस से प्रेमचंद के संपादन में शुरु हुआ दिल्ली से दूसरा हिन्दी दैनिक 'दैनिक हिन्दुस्तान' का प्रकाशन सत्यदेव विद्यालंकार के संपादन में 1936 को हुआ। इसके अलावा 1938 में नागपुर से 'नवभारत', 1942 में पटना से 'आर्यावर्त्त', 1942 को ही लाहौर से 'विश्वबंधु', 1946 से इंदौर से 'इंदौर समाचार' एवं मई, 1947 से 'नई दुनिया' आदि पत्रों ने गुलाम भारत में अपनी दस्तक दी। इस तरह दिल्ली से 1500 तथा जयपुर से 696 समाचार पत्र हिन्दी में प्रकाशित हुए।

पत्रकारिता का स्वरूप आजादी के बाद बदला। व्यावासायिता का रुप मिशनरुपी पत्रकारिता ने ले लिया। जहां प्रकाशन समूहों तक अधिकांश पत्र–पत्रिकाएं सिमट कर रह गयी। संपादक व पत्रकारों को मंहगाई ने वेतनभोगी बना दिया। व्यक्ति हित ने सेवा आदर्श का स्थान ले लिया। हिन्दी पत्रकारिता ने अंग्रेजी पत्रकारिता को पीछे ढकेला और पत्र–पत्रिकाओं का ग्राफ ऊँचा हुआ। पत्र–पत्रिकाओं के कलेवर से लेकर प्रस्तुतीकरण तक में बदलाव आया। आयोगों का गठन भारत भारत में प्रेस की स्थिति के हेतु हुआ। श्रमजीवियों के संगठन भी बने और गोष्ठियाँ भी हुई।

इसमें विज्ञापन प्रकाशित नहीं होते थे। यही इसकी विशेषता थी। 1948 में प्रकाशित अन्य पत्र इस प्रकार हैं – 'स्वतंत्र भारत' (उज्जैन), 'एकता' (उज्जैन), 'संध्या' (उज्जैन) 'आजादहिंद' (उज्जैन), 'अपना हिन्दूस्तान' (लश्कर)। हास्य व्यंग्य से भरपूर 'हजामत' का प्रकाशन 1949 में इंदौर से हुआ। इस पत्र के स्तम्भ बड़े ही शिष्ट, हास्यपूर्ण तथा सुरुचिकर थे। इसी प्रकार इंदौर से दैनिक 'नवप्रभात' (1951), 'नवभारत' (1960) तथा 'स्वदेश' (1966) लोकप्रिय पत्र हैं। 1967 में प्रकाशित एक साप्ताहिक एवं बालोपयोगी पत्र 'बच्चों का अखबार' था। हास्य व्यंग्य पत्रकारिता के क्षेत्र में सराहनीय प्रयोग 1969 में 'व्यंग्य और व्यंग' का पाक्षिक प्रकाषन से हुआ था।

दैनिक हिन्दुस्तान, दैनिक भास्कर, दैनिक जागरण, नवभारत टाईम्स, जयहिन्द, स्वतंत्र भारत, प्रदीप, नई दुनिया, विष्वामित्र वीर प्रताप, अमर उजाला, आज, लोकमत धर्मयुग, ट्रिब्युन, राष्ट्रीय सहारा, जनसत्ता, सन्मार्ग जैसै समाचार–पत्रों के अलावा दिनमान, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कांदबिनी, हंस, धर्मयुग, ब्लिट्ज, वागार्थ, साक्षात्कार, इंडिया टुडे, उत्तर प्रदेश समाज कल्याण, वर्तमान साहित्य, दस्तावेज, कुरुक्षेत्र योजना, आजकल, इंद्रप्रस्थ भारती, भाषा, गगनांचल बहुवचन आदि पत्रिकाओं ने धर्म, चिकित्सा, साहित्य, समाज, संस्कृति, वाणिज्य, फिल्म, खेल की दुनिया एवं विज्ञान को एक छोटे–से गाँव में तब्दील कर लिया।

उन मालिकों का नाम संपादक रुप में छपता है जो पत्रकारिता का ए.बी.सी.डी. तक नहीं जानते। इसके कारण अच्छे पत्रकार लुप्त होते जा रहे हैं। चालाक पत्रकारों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ है। एक आदर्श पत्रकारिता की ऐसी स्थिति में कैसे उम्मीद की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पत्रकारिता एवं जनसम्पर्क – एन.सी. पंत, मनीषा द्धिवेदी
2. पत्रकारिता का बदलता स्वरूप – डॉ. महसिंह पूनिया
3. पत्रकारिता और समाज – संतोष कुमार

साकेत में नायकत्व - एक विमर्श

डॉ. अंजली सिंह *

शोध सारांश –महाकाव्य के तत्वों में नायक नामक तत्व को महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुत: नायक के रूप में एक महान चरित्र की सृष्टि के लिए ही कवि महाकाव्य की रचना में प्रवृत्त होता है। (प्राचीन महाकाव्यों में कोई महान पुरूष ही नायक के पद पर प्रतिष्ठित होता था किंतु अर्वाचीन महाकाव्यों में नारी को भी अपनी चारित्रिक विशेषताओं के कारण महाकाव्य में प्रधान-पात्र बनाया जा रहा है। महाकाव्य के नायक में मानवोचित दुर्बलताओं के होते हुए भी उसे किसी महान कार्य के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए)

प्रस्तावना – साकेत में नायक की समस्या राम-कथा की प्रमुखता के कारण गहन हो गयी हैं। साकेत के नायकत्व पर विचार करने के लिए वर्णित कथा, रस, फल प्रमुख चरित्र तथा काव्य में उनकी व्यापकता, सक्रियता तथा अन्य पात्रों से संबंध आदि विषयों पर विचार करना आवश्यक है। साकेत में प्रमुख कथा एवं अनन्तर कथाएँ है।

उर्मिला-लक्ष्मण की कथा का विकास रामकथा की पृष्ठभूमि में हुआ। यद्यपि काव्य की मूल प्रेरणा उर्मिला के उपेक्षित जीवन को प्रकाश में लाना है। सबसे प्रमुख बात यह है कि कवि पूरे महाकाव्य में उर्मिला की दृश्य-अदृश्य उपस्थिति बनाये रखते है।

साकेत में वर्णित कथाओं में प्रमुख-कथा है उर्मिला-लक्ष्मण की प्रणय-कथा। इस कथा से संबद्ध रस श्रंगार का वियोग पक्ष-ही साकेत का प्रमुख रस है। यह रस जहॉ काव्य की मूल-प्रेरणा से संबंधित है, वहीं इसका सीधा संबंध-उर्मिला से है। फलागम की प्राप्ति भी अंतत: उर्मिला को ही होती है इस दृष्टिकोण से भी उर्मिला का नायकत्व स्वयंसिद्ध है।

साकेत एक चरित्र प्रधान महाकाव्य है। साकेत में उर्मिला का चरित्र लक्ष्मण, राम-सीता, भरत, कैकेयी के बीच विकसित होता है। ये सभी पात्र प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उर्मिला के चरित्र-विकास में सहायक होते है।

निष्कर्षत: यह कहा जाता है कि कथान्योजना, चारित्रिक विकास एवं फल की दृष्टि से केवल उर्मिला ही साकेत में नायकत्व की अधिकारिणी है। कुछ कमियों के बावजूद तात्विक दृष्टि से उर्मिला का नायकत्व ही शास्त्र सम्मत ठहरता है इसमें संदेह नहीं।

महाकाव्य के तत्वों में नायक नामक तत्व को महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुत: नायक के रूप में एक महान चरित्र की सृष्टि के लिए ही कवि महाकाव्य की रचना में प्रवृत्त होता है। चरित्र महाकाव्य का प्रमुख तत्व है। महाकाव्य में नायक के अतिरिक्त अन्य पात्रों की सबलता- दुर्बलताओं का अंकन ही चरित्र-चित्रण है। महाकाव्य में भले-बुरे, ऊॅच नीच, धनी-निर्धन, विद्वान-मूर्ख, स्वार्थी-परोपकारी आदि अनेक प्रकार, के व्यक्ति मानव-जाति का निर्माण करते हैं और महाकाव्य में मानव-जीवन की सर्वांगीण अभिव्यक्ति विभिन्न पात्रों के चरित्र-चित्रण द्वारा की जाती है। महाकाव्य के विविध-पात्रों का चरित्राकंन स्वाभाविक, मनोवैज्ञानिक आदर्शोन्मुख होना चाहिए महाकाव्य की आधिकारिक कथा का नेतृत्व करने के लिए एक ऐसे पात्र की सृष्टि की जाती है जो फल का भोक्ता होता है। यही पात्र कथा का मेरूदण्ड होता है। 'साहित्यदपर्णकार' आ. विश्वनाथ ने महाकाव्य में नायक का होना एक अनिवार्य लक्षण माना है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में नायक का वर्गीकरण करते हुए लिखा है कि धीरोदान्त नायक ही महाकाव्य का आधार बन सकता है। (प्राचीन महाकाव्यों में कोई महान पुरूष ही नायक के पद पर प्रतिष्ठित होता था किंतु अर्वाचीन महाकाव्यों में नारी को भी अपनी चारित्रिक विशेषताओं के कारण महाकाव्य में प्रधान-पात्र बनाया जा रहा है। महाकाव्य के नायक में मानवोचित दुर्बलताओं के होते हुए भी उसे किसी महान कार्य के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए)

महाकाव्य में प्रधान चरित्र की महत्ता प्रतिपादित करते हुए गुरूवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने लिखा है -मन में जब एक वेगवान अनुभव का उदय होता है तब कवि उसे गीतिकाव्य में प्रकाशित किये बिना नहीं रह सकते। इसी प्रकार मन में जब एक महत् व्यक्ति का उदय होता है, सहसा जब एक महापुरूष कवि के कल्पना-राज्य पर अधिकार आ जाता है, मनुष्य चरित्र का उदार महत्व मनश्चक्षुओं के सामने अधिष्ठित होता है, तब उसके अनन्त भावों से उद्दीप्त होकर, उस परम-पुरूष की प्रतिमा प्रतिष्ठित करने के लिए, कवि भाषा का मंदिर निर्माण करते हैं। (मेघनाद-वध, हिन्दी अनुवाद, चिरगॉव-झॉसी, संवत् 2008, भूमिका भाग, पृष्ठ 137)

आज का साहित्यकार रूढ़िगत परंपराओं का अंधानुकरण न करके नवीनता का अन्वेषी है। नयी साहित्यिक विचारणा यह आवश्यक नहीं समझती कि नायक और नायिका पति-पत्नी अथवा प्रेमी-प्रेमिका ही हों। वे दो पात्र भी हो सकते है (मैथलीशरण गुप्त: व्यक्ति और काव्य पृ. 444)

साकेत में नायक की समस्या राम-कथा की प्रमुखता के कारण गहन हो गयी हैं। साकेत के नायकत्व पर विचार करने के लिए वर्णित कथा, रस, फल प्रमुख चरित्र तथा काव्य में उनकी व्यापकता, सक्रियता तथा अन्य पात्रों से संबंध आदि विषयों पर विचार करना आवश्यक है। साकेत में प्रमुख कथा एवं अनन्तर कथाएँ है। यदि तात्विक दृष्टि से देखा जाये तो प्रमुख कथाओं का निर्वाह लक्ष्मण-उर्मिला संबंधी प्रणय-कथा तथा राम-सीता संबंधी कथा के रूप में हुआ है, एवं ये दोनों कथाएँ आपस में इस तरह जुड़ी हुई है कि इनको एक-दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। उर्मिला-लक्ष्मण की कथा का विकास रामकथा की पृष्ठभूमि में हुआ। यद्यपि काव्य की मूल प्रेरणा उर्मिला के उपेक्षित जीवन को प्रकाश में लाना है। किन्तु गुप्त जी का राम के प्रति अनुराग ने रामकथा को गौण रूप धारण नहीं करा सका है अतएव दोनों कथाओं से संबंधित लक्ष्मण और उर्मिला तथा राम ये सभी नायकत्व के अधिकारी है। इस संबंध में डॉ. प्रतिपाल सिंह का कहना है कि गुप्तजी अपने अराध्य देव राम को

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय नवीन विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

न भुला सके और अनायास ही उन्हें प्रमुख स्थान पर ला बिठाया।
(बीसवीं सदी के महाकाव्य-पृष्ठ 132)

इस बात से बिल्कुल उलट डॉ. गोविंदराम शर्मा का मत है कि 'सतीशिरोमणि उर्मिला' साकेत की नायिका है। वह रघुकुल की असहाय वधू, मर्यादापुरूषोत्तम राम की अनुजवधू, भ्रातृभक्त लक्ष्मण की पत्नी, ज्ञानी जनक की पुत्री और सीता की छोटी बहन है। उसका हृदय त्याग और विशुद्ध प्रेम से परिपूर्ण है। (हिन्दी के आधुनिक माकाव्य पृष्ठ- 188)

प्रो0 त्रिलोचन पाण्डेय ने 'साकेत दर्शन' में राम को भी साकेत का नायक स्वीकार किया है।

मत वैभिन्नय होते हुए भी अधिकतर आलोचकों की दृष्टि में उर्मिला का विरह ही साकेत की प्रधान घटना है। यहॉ-लक्ष्मण कारण है-। साकेत का प्रारंभ लक्ष्मण-उर्मिला के साथ होता है। राम वन गमन तक की सभी घटनाएँ उर्मिला के विरह की भूमिका बनाती है। साकेत का नवम् व दशम सर्ग में कवि उर्मिला के विरह विदग्ध अवरूद्ध अंतर को खोलने का प्रयास करता है। सीता-हरण और लक्ष्मी-शक्ति प्रसंगों द्वारा उर्मिला की वेदना चरमोत्कर्ष पर पहुॅचती है।

वह वियोगिनी अपने प्रियजनों के अनिष्ट के समाचार से ही विहव्ल हो उठती है, उसका हृदय चीत्कार उठता है और वह शत्रुहन के साथ लंका प्रस्थान की तीव्र इच्छा व्यक्त करती है। साकेत का अंत उर्मिला-लक्ष्मण के मिलन पर होता है। यहीं फलागम स्वीकार करना सही है। सबसे प्रमुख बात यह है कि कवि पूरे महाकाव्य में उर्मिला की दृश्य-अदृश्य उपस्थिति बनायें रखते है। साकेत में बैठी साध्वी उर्मिला को छोड़ कर कवि राम के साथ वन गमन भी नहीं कर सके। यदि कवि चित्रकूट भी जाते हैं तो समस्त साकेत के साथ ही। अन्य सभी कथाओं के कथा वाचक हनुमान, शत्रुहन और वशिष्ठ ही है। साकेत का ध्येय रावण-वध नहीं अपितु सभी घटनाओं की रगस्थली अयोध्या है और उर्मिला का विरह-उसकी सबसे प्रधान घटना है।

उर्मिला का त्याग एवं जीवन के प्रति अनुराग ही साकेत की कथा का प्राण है। अत: राम-सीता से संबंधित कथा मुख्य न होकर प्रासंगिक ही रह गयी है। वस्तुत: राम की अपेक्षा उर्मिला का नायकत्व अधिक पुष्ट है क्योंकि लक्ष्मण का भी कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व साकेत में उभरता नहीं दिखता। राम के अनुचर के रूप में व्यापकता एवं सारभूत प्रभाव की दृष्टि से भी लक्ष्मण का नायकत्व नहीं स्वीकार किया जा सकता।

साकेत में वर्णित कथाओं में प्रमुख-कथा है उर्मिला-लक्ष्मण की प्रणय-कथा। इस कथा से संबद्ध रस श्रंगार का वियोग पक्ष-ही साकेत का प्रमुख रस है। यह रस जहॉ काव्य की मूल-प्रेरणा से संबंधित है, वहीं इसका सीधा संबंध-उर्मिला से है। फलागम की प्राप्ति भी अंतत: उर्मिला को ही होती है इस दृष्टिकोण से भी उर्मिला का नायकत्व स्वयंसिद्ध है।

डॉ0 कमलाकांत पाठक ने यउर्मिला के नायकत्व को स्वीकार करते हुए लिखा है 'प्रस्तुत काव्य में उर्मिला नायिका है। उसके हर्ष, विषाद, प्रेम और परिताप के एकमात्र आधार लक्ष्मण है -'। (मैथलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य)

इस संबंध में डा0 नंददुलारे वाजपेयी का कथन विशेष उल्लेखनीय है गुप्तजी ने उर्मिला को साकेत की मुख्य नायिका बनाया है। पूर्ववर्ती रामायणों में उर्मिला का चरित्र अत्यंत संक्षिप्त या नहीं के बराबर आया है। ऐसे नगण्य पात्र को जिसका अस्तित्व नाममात्र ही रहा हो किसी काव्य की मुख्य भूमिका से लाकर प्रतिष्ठित करना दो दृष्टियों से नया और क्रांतिकारी प्रयत्न है (आधुनिक साहित्य पृष्ठ 98) ये दो दृष्टियॉ है सामाजिक एवं साहित्यिक।

वस्तुत: वाजपेयी जी साकेत में दो पात्रों-उर्मिला और भरत दोनों का नायकत्व स्वीकार करते हैं किंतु भरत के चरित्र में त्याग-भावना नि:स्वार्थ कर्म, जीवन के प्रति आस्था, ओज एवं कर्तव्यपरायणता आदि धीरोदान गुण विद्यमान है किंतु उनका चरित्र काव्य की मूल प्रेरणा है और न ही सर्वत्र व्याप्त।

कुछ समीक्षकों के अनुसार उर्मिला का नारीत्व नायकत्व के लिए बाधक है। आ0 नंददुलारे वाजपेयी का कहना है उर्मिला की चरित्र-सृष्टि में भी भावनात्मक आदर्शवादिता का स्वरूप ही स्पष्ट हो सकता है, जो समस्त अवस्थाओं में नायिका के महत्वानुरूप नहीं कहा जा सकता।
(आधुनिक काव्य, पृष्ठ 102)

वाजपेयी जी का उक्त कथन तर्क संगत प्रतीत नहीं होता क्योंकि उर्मिला में मानव-सुलभ दुर्बलताएँ सहज स्वाभाविक हैं और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी पूर्णतया स्वाभाविक ही है। इस संबंध में डॉ0 उमाकांत गोयल का मत अधिक युक्तिसंगत है उर्मिला और द्रौपदी रूदनशीला है, किंतु उनकी करूण परिस्थितियॉ भी तो देखिएँ। अपरिमेय कष्ट-सहिष्णुता उनकी धीरता की ही परिचारिका है और यदि उनके व्यक्तित्व का ओज ही देखना है तो पाप-सभा में दु:शासन को दुत्कारती द्रौपदी, एवं शत्रुहन के साथ लंका-प्रस्थान की इच्छुक उर्मिला के दर्शन कीजिये।
(गुप्त जी की काव्य-साधना पृ0 175)

साकेत एक चरित्र प्रधान महाकाव्य है। साकेत में उर्मिला का चरित्र लक्ष्मण, राम-सीता, भरत, कैकेयी के बीच विकसित होता है। ये सभी पात्र प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उर्मिला के चरित्र-विकास में सहायक होते है।

निष्कर्षत: यह कहा जाता है कि कथान्योजना, चारित्रिक विकास एवं फल की दृष्टि से केवल उर्मिला ही साकेत में नायकत्व की अधिकारिणी है। कुछ कमियों के बावजूद तात्विक दृष्टि से उर्मिला का नायकत्व ही शास्त्र सम्मत ठहरता है इसमें संदेह नहीं।

डॉ0 वासुदेव नंदन प्रसाद के शब्दों में कहें तो वास्तव में उर्मिला वेदना और मंगल कामना की जीती-जागती तस्वीर है। उसे जीवन से बाहर प्राचीन विरहिणियों की कोटि में रख कर देखना उचित नहीं। उसका तप और त्याग अनुकरणीय है। उसके चरित्र निर्माण में नैतिकता, धर्म, समाज-आर्दश और राष्ट्रीय चेतना का समावेश है।
(वासुदेव नंदन प्रसाद, विचार और निष्कर्ष पृ0 228)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साकेत - मैथिलीशरण गुप्त
2. साकेत एक अध्ययन- डॉ0 नागेन्द्र
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास - सम्पादक - डॉ0 नागेन्द्र
4. हिन्दी कविता में युगाान्तर डॉ0 सुधीन्द्र
5. गुप्त जी की काव्य-साधना डा0 उमाकान्त गोयल
6. साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन - डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना
7. आधुनिक काव्य संकलन - सम्पादक - डॉ0 गणेशदत्त त्रिपाठी, डॉ. पवन कुमार मिश्रा

****

साहित्य में नारी की स्थिति युगीन आदर्श और जीवन मूल्य

डॉ. सुदामा प्रसाद धूमकेती *

शोध सारांश – आज वैष्वीकरण के दौर में एक आधुनिक संस्कृति का विकास हो रहा है जिसमें बाजारवाद उपभोक्तावाद और व्यक्तिवाद विशेष रूप से पनप रहा है पुरातन का क्षरण और एक नवीन विचारधारा उत्पन्न हो रही है जिसमें हमारी संस्कृति, आदर्श, जीवन मूल्य भी कहीं खोते हुए दिखाई देते हैं ।साहित्य भी इससे प्रभावित हो रहा है। आजादी के बाद बदली हुई परिस्थितियों ने समाज का जो ढ़ांचा बदला साथ में नारी की उलझनों को भी बढाया। उसकी जीवन पद्धति उसके जीवन मूल्य तथा उनकी मन:स्थिति को भी तेजी से बदल डाला। फलत: व्यक्तिवाद को जन्म दिया गया। नारी अस्तित्व के नये नये प्रतिमानों की खोज हुई नारी ने भी अपने अस्तित्व की पहचान शुरू की। नारी में अंधानुकरण के स्थान पर तार्किक बुद्धि का उदय हुआ।

प्रस्तावना – आज विश्व के अधिकाश देशों के संविधान में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को विशेष स्थान मिला है। इसका कारण यह है कि देश की प्रजा को विकास के समान अवसर मिले जिससे वे बदलते वातावरण में अपने जीवन स्तर को सुधार सके। बराबरी स्वतंत्रता व अधिकारों के संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए मूल अधिकारों की व्यवस्था भी की गयी है। इन अधिकारों के दुरूपयोग को नियंत्रित करने के लिए मानव अधिकारों की स्थापना हुई तथा संरक्षण के लिए कानून बनाये गये । हम इन सत्यों को स्वयं सिद्ध मानते हैं कि सभी मानव जन्म से समान है,सभी मानवों को ईश्वर ने कुछ ऐसे अधिकार प्रदान किये हैं, जिन्हें छीना नहीं जा सकता। स्त्री और पुरूष जीवन रूपी रथ के दो पहिये हैं दोनों एक दूसरे के पूरक हैं स्त्री में कोमलता, उदारता, सहनशीलता, करूणा, त्याग व ममत्व आदि गुण हैं नारी तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास रजत नग पग तल में। पीयूष स्रोत सी बहा करो जीवन के सुंदर समतल में।। तो वहीं पुरूष में कठोरता, श्रमशीलता, सुदृढ सम्पन्न है। पराक्रमशीलता पुरूष की प्रमुख विशेषता है। फिर भी स्त्री की सत्ता को झुठलाया नहीं जा सकता वह अनेक भूमिकाओं में माता, पत्नी, बहन, मित्र व शिष्या भी है। इस तथ्य को भारतीय मनीषियों ने भी स्वीकार किया है कि एक पुरूष की सफलता के पीछे स्त्री ही रही है। नारी के बिना पुरूष अधूरा है और पुरूष के बिना नारी अपूर्ण है।

साहित्य समाज का दर्पण होता है, इसमें समाज दिखता है।
युग-युग की गाथाओं को, साहित्य सहेजे रखता है।।

साहित्य और समाज- साहित्य और समाज का घनिष्ट सम्बन्ध है। साहित्यकार समाज में रहता है और समाज साहित्यकार को एक नवीन विचारधारा तथा भाव सामग्री प्रदान करता है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप में भाग लेने वाले देशभक्त कवियों की कविताओं में रामधारी सिंह दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी आदि कवियों की कविताओं ने एक अपूर्व जोश उमंग एवं साहस का संचार किया। तुलसी, सूर, कबीर के काव्य ने जहां मानव की भावनाओं को उद्वेलित किया वहीं उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की कहानियों ने हमारे समक्ष समाज की वास्तविक रूप को प्रकट किया साथ ही एक नवीन जीवन दर्शन को प्रस्तुत किया साहित्य समाज का केवल यथार्थ चित्र ही नहीं उकेरता अपितु उसके उज्ज्वल भविष्य की ओर भी इंगित करता है। समाज में होने वाले समस्त परिवर्तनों को साहित्य अपने में समेट कर वह समाज की यथार्थ स्थिति का आकलन करता है। प्राचीन काल को देखें तो समाज में स्त्रियों का सम्मान और आदर मर्यादापूर्ण रहा है वैदिक युग की नारी बुद्धि और ज्ञान के क्षेत्र में प्रवीण थी दर्शन के अलावा तर्कशास्त्र में भी । सुलभा, गार्गी, मैत्रेयी आदि इस संदर्भ में लिये जाते हैं उत्तर वैदिक युग में स्त्री की स्थिति में भेद विकसित हुआ। कर्मकाण्ड की जटिलता बढ़ने तथा याज्ञिक कार्यों में आडम्बर बढ़ने के फलस्वरूप स्त्रियों को याज्ञिक कार्यों से दूर रखने का उपक्रम किया जाने लगा तथा ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि उन्हें वेदों के अध्ययन या मंत्रोच्चारण के उपयुक्त नहीं समझा गया। क्रमश: स्त्री की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और वैयक्तिक सभी स्थितियों में प्रतिबंध लग गया। जन्म से मरण तक वह पुरूष के नियंत्रण में रहने के लिए विवश हो गयी । गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल में विवाह की आयु निम्न होकर कन्या की 12 तथा पुत्र की 16 वर्ष स्वीकृत की गई। विवाह के प्रचलित आठ प्रकारो में प्रथम चार को धार्मिक माना जाता था। श्रेष्ठ विवाह वही माना जाता था,जिसमें माता पिता की स्वीकृति। सुप्रसिद्ध कवि एवं नाटककार जयशंकर प्रसाद के नाटक ध्रुवस्वामिनी में नायिका के पिता ने कमतर आयु में विवाह करने की सहमति दे दी थी, बाद में वह उस शादी से मुक्ति पाना चाहती है तथा नारी समाज की खुले मन से वकालत करती है और नारी जाति में जाग्रति का संचार करती हैं।

पूर्व मध्यकाल तक आते आते नारी का पुर्न:स्थान आदर्शमान व मर्यादापूर्ण हो गया प्राचीनकाल के व्यवहारिक रूप से हटकर केवल शाब्दिक रूप तक ही सीमित रह गया फिर भी इस काल में कुछ उदाहरण अवश्य स्त्री के आदर्श रूप को प्रस्तुत करते हैं यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमन्ते तत्र देवता:। भक्तिकाल के कवियों ने नारी शक्ति को शास्त्र शक्ति एवं समाज शक्ति के रूप में स्वीकार किया है। वहीं रीतिकाल के कवियों ने नारी को प्रेयसी पत्नी स्वकीया परकीया के रूप में चित्रित किया है।

हिंदी कथा साहित्य के अलावा राष्ट्रीय कविताओं में भी कवि नारी का चित्रण करते समय प्रकृति, आत्मा आदि पर नारी चेतना का आरोप कर उन्हें नारी रूप में देखा है। कवि के अचेतन में स्थित नारी के रूप, गुण, स्वभाव आदि की नारी रूप में जो कल्पना की है वही राष्ट्रीय कविताओं में भी उभरी है। इन कवियों ने देश की भूमि को माता के समान ही जन्मदात्रि, पालन पोषण करने वाली तथा वत्सला रूप में अंकित किया है ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी माता के प्रति जो पूज्य भावना होती है उसका आरोप इन कवियों ने मातृभूमि पर किया है। अमेरिकी आलोचक इमर्सन स्त्री महत्व को इस तरह प्रकट करते हैं मनुष्य यदि भाव है तो नारी भावना है। इतिहास के किसी कालखण्ड में यदि उसने पुरूष की कोमल भावनाओं को उभारा है, तो कभी उसे जीवन संग्राम में जूझने का दृढसंकल्प और आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा भी दी है।' मैथिलीशरण गुप्त ने यशोधरा में लिखा है हमीं भेज देती हैं रण में क्षात्र धर्म के नाते यही कारण है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति युगीन आदर्शों और जीवन मूल्यों के साथ साथ परिवर्तित होती रही है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ज. मु. चौ. कन्या महाविद्यालय, मंडला (म.प्र.) भारत

भारतेंदु युग में तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार नारी के भाव में परिवर्तन आया। द्विवेदी युग में नारी समाज सेविका के सभी गुणों से सम्पन्न होकर उपस्थित होती है। नारी की महत्ता को मुंशी प्रेमचंद ने गोदान में स्पष्ट रूप से लिखा है-मैं प्राणियों के विकास में नारी को श्रेष्ठ समझता हूं प्रेम,त्याग और श्रद्धा, हिंसा, संग्राम और कलह से श्रेष्ठ है स्त्री पुरूष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अंधेरे में। नारी के साहित्यिक और बौद्धिक विकास को व्यावहारिक और क्रियात्मक बनाने के उद्देश्य से सन् 1922-23 में चांद और माधुरी पत्रिका का प्रकाशन हुआ। चांद में मुन्नीदेवी भार्गव की कहानी कमला प्रकाशित हुई जिसमें नारी के प्रति समाज भी निर्दयता एवं क्रूरता का सजीव चित्रण मिलता है। आजादी के बाद बदली हुई परिस्थितियों ने समाज का जो ढ़ांचा बदला साथ में नारी की उलझनों को भी बढाया उसकी जीवन पद्धति उसके जीवन मूल्य तथा उनकी मन:स्थिति को भी तेजी से बदल डाला। फलत: व्यक्तिवाद को जन्म दिया गया। नारी अस्तित्व के नये नये प्रतिमानों की खोज हुई नारी ने भी अपने अस्तित्व की पहचान शुरू की। नारी में अंधानुकरण के स्थान पर तार्किक बुद्धि का उदय हुआ। प्राचीन भावभूमि से नवीन भावभूमि में प्रवेश करने पर नये दबाव, टूटते व्यक्तित्व तथा समाज और सबसे ज्यादा परिवार का बोझ नारी को ही भोगना पड़ा। नारी के बुनियादी सवालों की चर्चा की जाये तो कुछ इस तरह के प्रश्न निकलकर सामने आते हैं जिसमें प्रेम, विवाह, स्त्री - पुरूष के टूटते सम्बन्ध नारी शिक्षा, स्वतंत्रता, मान सम्मान, आदर्श, आर्थिक स्वतंत्रता, पति की सम्पत्ति पर अधिकार, बालविवाह, परदाप्रथा, विधवा विवाह, अनमेल विवाह, मनोवैज्ञानिक ग्रंथि का शिकार, आधुनिक परिवेश, उपभोक्तावाद, बाजारवाद, दृष्टिकोण आदि। प्रेमचंद के कथा साहित्य में नारी के विविध रूपों एवं अनेक पहलुओं का उजागर हुआ है असल में स्त्री की करूण दशा से उसे मुक्ति दिलवाने का सार्थक प्रयास उनके उपन्यासों में दिखाई देता है।

इस संबंध में उनकी पत्नि शिवरानी देवी से चर्चा भी होती है कहीं वह स्त्री के पक्षधर दिखाई देते हैं तो कही इन सबसे दूर दिखाई देते हैं प्रेमचंद घर में तथा कलम का सिपाही में इनके व्यक्तित्व के भिन्न भिन्न पहलू नजर आते हैं अमृतराय की पुस्तक में कई बातें सामने प्रकट होती हैं उनकी सर्जनात्मक अनिवार्यता के दो पहलू सामने आते हैं पहली जाति प्रथा तो दूसरी नारी की स्थिति कहने को तो कह दिया कि जहां नारियों की पूजा होती है वहां देवता वास करते हैं। लेकिन कोई पूछे कि आपने किसी तरह का कोई अधिकार नारियों को दिया है- वह एक खेत है जिससे सन्तान की, पुरूष के संपत्ति के उत्तराधिकारी की प्राप्ति होती है इसीलिए तो कन्या, गौ और धान के पौधे के समान है निश्चित समय आने पर उसे एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान पर बांध दिया जाता है या रोप दिया जाता है। पांच साल की लड़की और पचास साल का बुड्ढा के साथ हो सकता है। इस संदर्भ में चांद पत्रिका में प्रकाशित नरक का स्वर्ग में कहा है कि स्त्री सब कुछ सह सकती है, दारूण से दारूण दुख बड़े से बड़ा संकट, अगर नहीं सह सकती है तो अपने यौवन काल की उमंगों का कुचला जाना इस कहानी में स्थिति थोड़ी सी अलग है यहां लडकी के माता पिता धन के लोभ में लड़की का बेमेल विवाह कर देते हैं बूढ़े पति को पाकर लड़की सोचती है कि पति की सेवा करेगी क्योंकि यह उसका धर्म है।ससुराल में एकदम उलटा पाकर स्त्री बौखला जाती है पति उसके स्वाभाविक श्रृंगार को देखकर सशंकित और ईर्ष्या करता है। स्त्री जल्दी ही अपनी स्थिति समझ जाती है और कहती है कि इन्हें स्त्री के बिना घर सूना लगता होगा, उसी तरह जैसे पिंजरे में चिड़िया को न देखकर पिंजरा सूना लगता है महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रेमचंद स्त्रियों का विश्लेषण बखूबी करते हैं। नरक का मार्ग में प्रेमचंद की स्त्री दो हाथ आगे निकल कर कहती है मैं इसे विवाह का पवित्र नाम नहीं देना चाहती यह कारावास है मैं इतनी उदार नहीं हूँ। कि जिसने मुझे कैद में डाल रखा हो उसकी पूजा करूं जो मुझे लात मारे उसके पैरों को चूमूं स्त्री किसी के गले में बांध दिये जाने से ही उसकी विवाहिता नहीं हो जाती। विवाह का पद वह पा सकता है जिसमें कम से कम एक बार उसके हृदय प्रेम से पुलकित हो जाये। प्रेमचंद यहां उस विवाह की बात कर रहे है जहां दो लोगों के मन पहले मिलते हो । स्वातंत्रयोत्तर कथा साहित्य में नारी मूल्यबोध के परिवर्तन के फलस्वरूप कहीं वह बदली,तो कहीं उसी बिंदु पर जकडी रही और कहीं उसने नव बिंदुओं का निर्माण किया। यही कहा जा सकता है कि आजादी के बाद कथा साहित्य में नारी का बहुआयामी स्वरूप उजागर हुआ। जैनेन्द्र की सुनीता अज्ञेय की रेखा, कृष्नासोबती की मित्रो आदि ने नारी के स्वरूप पर प्रश्न चिन्ह लगाये हैं। सूरजमुखी अंधेरे में कृष्नासोबती की रिक्तिका यानी रत्ती मनोवैज्ञानिक ग्रथियों की शिकार भी हैं। इलाचंद जोशी द्वारा लिखित सन्यासी में शांति के विविध रूप हमारे सामने आते है। किंतु दुख के साथ कहना पड रहा है कि आज की रूढियों अंधविश्वासों तथा अन्य परम्पराओं में नारी जकड़ी हुई है खासतौर पर आजादी के बाद।

उपसंहार - आजादी के बाद देश में नारी को समतुल्य बनाने का सफल प्रयास देश के सभी हिस्सों में होने लगा। सामाजिक क्षेत्र में स्त्री को भोग की वस्तु न मानकर जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरूषों के साथ समान रूप से काम करने के योग्य बनी। शिक्षित नारिया अध्यापन के क्षेत्र में आयी विवाह के बंधन में भी वह स्वेच्छा से निर्णय लेने लगीं नारी परंपरा की गुलामी से मुक्त होकर स्वतंत्र चेत्ता बन गयी 20वीं शताब्दी में कस्तूरबा गांधी, श्रीमती विजयजक्ष्मी पंडित, सरोजनी नायडू आदि अनेक नारियों ने पुरूषों का साथ देकर देश के विकास में अपना योगदान दीं।

सत्य तो यह है कि मानवी रूप में उसे स्वीकार कर उसके मानवीय अधिकारों का प्रश्न 19वीं शताब्दी के सुधारकों ने उठाया महर्षि दयानंद, राजाराम मोहनराय आदि ने उस सामान्य नारी की व्यथा का अनुभव किया जिसके पास अधिकार के नाम पर दासता थी और कर्तव्य के नाम पर प्राणदान। वैदिक धर्म का पुनरूत्थान और ब्रम्हसमाज का प्रारंभ दोनों ही जागरण के लिए वैतालिक सिद्ध हुए। सती, बालविवाह जैसी प्रथाओं के विरूद्ध तथा विधवा विवाह शिक्षा आदि सुधारों ने तत्कालीन नारी समाज को एक नई दिशा दी उस पर चलने की शक्ति उसे देश के सांस्कृतिक जागरण से प्राप्त हुई। स्वातंत्रयोतर कथा साहित्य में प्रेम विवाह, स्त्री - पुरूष के टूटते सम्बन्ध की मन्नू भण्डारी का आपका बंटी पृष्ठभूमि में जितने कहानियां और उपन्यास इस युग में लिखे गये उतना पहले कभी नहीं लिखा गया शायद तमाम दुनिया में कुल मिलाकर स्त्री पुरूषों की बातचीत है जो उनमें संबंध के अनुसार बदलती रहती है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि सब कुछ बुरा ही हुआ है इस परिवर्तन ने एक ओर जहां नारी को नई चेतना दी नयी वैचारिकता एवं अधिकार बोध प्रदान किया वहीं कुछ नयी समस्याएं भी पैदा कर दीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिंदी साहित्य का इतिहास-डा नगेन्द्र मयूर पेपरबेक्स
2. भारतीय समाज में नारी-सुनील गोयल संगीता गोयल आर बी एस ए पब्लिशर्स2003
3. नारी कर्तव्य एवं अधिकार -सुदर्शन भाटिया बैटर बुक्स पंचकूला 2007
4. महादेवी प्रतिनिधि गद्य रचनाएं डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली 1990
5. प्रेमचंद का नारी विमर्श विचार एवं व्यवहार-डा रंजना अरगडे शोध गंगा इंटरनेट
6. हिन्दी पराग शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी इन्दौर
7. नारी तुम क्या, एम.ए. अंसारी ज्योति प्रकाशन जयपुर 2006
8. नारी जीवन सुलगते प्रश्न, एम.ए. अंसारी ज्योति प्रकाशन जयपुर

कबीर और जायसी के रहस्यवाद का तुलनात्मक विवेचन

डॉ. सरोज यादव *

शोध सारांश – मानव एक जिज्ञासु प्राणी है। वह अनादि काल से ही जिज्ञासा पूर्ण दृष्टि से संसार के विपुल प्राकृतिक वैभव को देखता आया है, और इस सम्पूर्ण वैभव के कर्त्ता के विषय में जानने की उसकी अतृप्त लालसा रही है। इस सृष्टि का नियामक कौन है ? कहॉ है ? और कैसा है ? मानव की इस जिज्ञासा पूर्ण प्रवृति ने ही काव्य में रहस्यवाद को जन्म दिया है।

प्रस्तावना – रहस्यवादी सत्ता के साथ जब आत्मा तादात्मय स्थापित कर लेती है, तब उसे एक विचित्र प्रकार की भाव विव्हलता अनुभूत होती है। इस अनुभूति को जब वह शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति देता है, तो वह अभिव्यक्ति 'रहस्यवाद' की संज्ञा से अभिहित होती है।

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार – 'रहस्यवाद जीवात्मा की उस अन्तर्हित प्रवृति का प्रकाशन है, जिसमें वह दिव्य और आलौकिक शक्ति से अपना शान्त और निश्चल संबंध जोड़ना चाहती है, और यह संबंध यहॉ तक बढ़ जाता है कि इन दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं रह जाता है।'[1] ऐसे प्रेम में जीव की सारी इन्द्रियों का एकीकरण हो जाता है। सारी इन्द्रियों से एक स्वर निकलता है, और उनमें अपने प्रेम को पाने की उत्कृष्ट लालसा होती है। अन्त में वह सीमा इस स्थिति को पहुॅचती है कि भावोन्माद में वस्तुओं के विविध गुण एक ही इन्द्रिय पाने की क्षमता प्राप्त कर लेती है। उदाहरणार्थ यदि हम रंगों को सुनने लगे और ध्वनियों को देखने लगे तो हमारे जीवन में क्या अन्तर आ जायेगा ? इसी विचार के द्वारा हम सेन्ट मार्टिन की 'रहस्यवाद से सम्बंध रखने वाली परिस्थिति समझ सकते हैं। उन्होंने कहा है कि मैंने उन फूलों को सुना जो शब्द करते थे और उन ध्वनियों को देखा जो जाज्वल्यमान थी। रहस्यवाद के विषय में विविध विद्वानों ने अपने अपने विचार प्रकट किये है, जैसे – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में 'ज्ञान के क्षेत्र में जिसे अद्धैतवाद कहते हैं, भावना के क्षेत्र में वही रहस्यवाद कहलाता है।'[3] 'रहस्यवाद के उन्माद में जीव इन्द्रिय जगत से बहुत ऊपर उठ कर विचार शक्ति एवं भावनाओं का एकीकरण कर अनन्त और अन्तिम प्रेम के आधार में मिल जाना चाहता है। यही उसकी साधना है, यही उसका उद्देश्य है। उसमें जीव अपनी सत्ता को खो देता है। मैं, मेरा, मुझे, का विनाश रहस्यवाद का एक अश्यक अंग है।'[4] संसार के इन बाह्य बन्धनों का विनाश कर आत्मा ऊपर उठती है, हृदय की भावना साकार बन कर ऊपर की और जाती है। हृदय की इस गति में कोई स्वार्थ नहीं संसार की कोई वासना नहीं, कोई सिद्धि नहीं, किसी ऐश्वर्य की प्राप्ति नहीं, केवल हृदय के प्रेम की पूर्ति हैं। हिन्दी की रहस्यवादी परम्परा बौद्ध, सिद्धों से आरम्भ होती है। कबीर की रहस्य साधना कितने ही स्थलों पर बौद्ध सिद्धों से प्रभावित हुई है। कबीर की रहस्य साधना के दूसरी ओर है सूफी कवि। कबीर की रहस्य भावना की तुलना विशेष रूप से इन्हीं सूफी कवियों से की जाती है। सूफी कवियों का प्रतिनिधि ग्रंथ पद्मावत है और उसके रचयिता है मलिक मुहम्मद जायसी। कबीर तथा जायसी की रहस्य साधना के सामान्य तत्व है – रहस्य भाव को दामपत्य सूत्र के माध्यम से आत्मव्यक्ति, देना, गुरू की महत्ता सूफी सौंदर्य वाद तथा प्रणय वाद की प्रतिष्ठा और हठयोगी तत्व। रहस्य साधना के मूल तत्व भी यही है। कबीर और जायसी में रहस्यवाद के क्षेत्र में पर्याप्त साम्य है। इसका प्रमुख कारण सूफी मत की आधारशिला अद्धैत वाद का होना है, जो कबीर के रहस्यवाद का भी मूलाधार है। अद्धैत से प्रभावित दार्शनिक प्रवृत्ति दोनों कवियों के रहस्यवाद में मिलती है। **जैसे– 'जल में कुम्भ–कुम्भ में जल है बाहर भीतर पानी फूटा कुम्भ जल–जल ही समाना यह तत कहत गियानी ।'**[5] अर्थात घड़े की पतली चादर उन दोनों अंशों को आत्मा और परमात्मा को मिलने नहीं देती, जिस प्रकार माया ब्रह्म के दो स्वरूपों को अलग रखती है। माया के आवरण के हटने पर या कुम्भ के टूटने पर आत्मा और परमात्मा का संयोग हो जाता है।

ईसा की आठवीं शताब्दी से इस्लाम धर्म में धार्मिक विप्लव हुआ। जिससे धार्मिक क्षेत्र में उथल पुथल मच गई। इस सम्प्रदाय ने संसार के सारे सुखों को तिलांजलि दे कर सारे ऐश्वर्य को त्याग दिया। इन्हें श्रृंगार और बनावटी बातों से घृणा सी हो गई। सरलता और सादगी के साथ–साथ इन्होंने सफेद ऊन जिसे सूफ कहते हैं, धारण कर लिया । इसलिये सूफी कहलाये। 'सूफीमत में भी यद्यपि बन्दे और खुदा का एकीकरण हो सकता है, पर उसमें माया का कोई विशेष स्थान नहीं है। जिस प्रकार एक पथिक अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुॅचने के लिये प्रस्थान करता है, मार्ग में उसे कुछ स्थल पार करने पड़ते हैं, उसी प्रकार सूफीमत में आत्मा परमात्मा से मिलने के लिये व्यग्र होकर अग्रसर होती है। परमात्मा से मिलने के पहले आत्मा को चार दशाएॅ पार करनी पड़ती है। (1) शरियत (2) तरीकत (3) हकीकत (4) मारिफत। इस मारिफत में जाकर आत्मा और परमात्मा का मिलन होता है'।[6] सूफीमत में ईश्वर की भावना स्त्री रूप में मानी है। अत: अद्धैतवाद में आत्मा और परमात्मा के एकीकरण होने में चिंतन और माया का महत्वपूर्ण स्थान हैं। इसी प्रकार सूफीमत में हृदय की चार अवस्थाओं और प्रेम का, महत्वपूर्ण स्थान है। कबीर का रहस्यवाद हिन्दुओं के अद्धैत वाद और मुसलमानों के सूफीमत पर आश्रित हैं। परिणाम स्वरूप अद्धैत वाद से माया और चिंतन तथा सूफीमत से प्रेम को ले कर कबीर के रहवास्यवाद की सृष्टि हुई है। परमात्मा की अनुभूति के लिये आत्मा प्रेम से परिपूर्ण हो कर अग्रसर होती है। वह सांसारिकता का बहिष्कार कर दिव्य और अलौकिक वातावरण में उठती है। उस ईश्वर के समीप पहुॅच जाती है। जो विश्व का निर्माण कर्ता है। उस ईश्वर का नाम है– सतपुरूष। आत्मा उस दैवीय शक्ति को अनुभूत करती है। पर उसे प्रगट नहीं कर सकती।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जैसे :– 'अकथ काहाँनी प्रेम की कछु कहीं न जाई।
गूँगे केरा सर्करा बैठा ही मुस्काई।'[7]

उसी भाँति जायसी ने भी प्रतिबिम्ब के माध्यम से उस खुदा के नूर को देखा है।

'गगरी सहस पचास, जो कोउ पानी भरि धरै।
सुरज दिपै आकाश, मुहम्मद सबमें देखिये।'

जिस प्रकार कबीर ने सर्वात्मवाद की सत्ता को स्वीकार कर कहा था।

'लाली मेरे लाल की, जित देखूं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।'

उसी प्रकार जायसी ने पिण्ड ब्रह्माण्ड और उसके कण कण में उसी परम सत्ता को देखा है :– जैसे

'सातो दीप नव खण्ड, आठौ दिसा जो आहि।
जो ब्रह्मांड सो पिंड है, हैरत अंत न जाहिं।'

कबीर ने उस परमात्मा के विरह में बड़ी सुन्दर मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति की है। उसकी आत्मा ने प्रियतमा के समान ही प्रिय (परमात्मा) के लिये प्रतीक्षा की है।

'बहुत दीनन की जीवती, बाट तुम्हारी राम।
जिव तरसै तुझ मिलन कू, मन नहीं विश्राम।।'

और इसी प्रकार जायसी का विरह वर्णन कहता है कि –

'प्रीती बोलि संग विरह अपारा, विरह पत्तार जरे तेहि झारा'।

प्रेम का कारण होता है सौंदर्य। कबीर तथा जायसी– दोनों ने स्थान– स्थान पर सौंदर्य का वर्णन किया है। सूफियों के अनुसार वह परम सत्ता अनन्त सौंदर्य का प्रतीक है। वह सौंदर्य ही जीवात्मा को अपनी ओर आकृष्ट करता है, और उसकी ओर दृष्टि कर पाना सरल नहीं है:–

किन्तु वह सौंदर्य अनन्त तेज का पूंजी भूत रूप है।

जैसः– 'कबीर तेज अनन्त का, मानो ऊगि सूरज सेणि।
पति संग जागि सुन्दरी कौतुक दीखा तेणी।'

जायसी– 'घरी आई तब गा तू साई।
कैसे भृगुति परापति होई।'

परम प्रिय सत्ता से मिलन हेतु आतुरता, प्रेम मार्ग के प्रथिक के हृदय की पुकार को कबीर ने कुछ इस प्रकार कहा है। –

'नैनन अन्तर आव तू मैं तोहि नैन झेपाऊ।
ना मैं देखू और को ना तो ही देखन देऊ।।'

कबीर ने आत्मा और परमात्मा के बीच दाम्पत्य भाव को अभिव्यक्त किया है– 'नैनो की कर कोठरी पुतरी पलंग बिछाये।
पलकों की चिक डार के प्रिय को लिये रिझाये।'

कबीर ने उपास्य देव को मुख्य तथा निर्गुण निराकार ही माना है। कहीं कहीं उसे पति, स्वामी पिता माता आदि अन्य रूपों में भी देखा है। जायसी ने आत्मा को प्रेमी पुरूष और परमात्मा को प्रियतमा (स्त्री) स्वीकार किया है। इस संबंध में जयसी सूफी साधना से प्रभावित है। कबीर और जायसी दोनों ने दाम्पत्प भाव की कल्पना की है। आत्मा और परमात्मा को विरह में व्याकुल चित्रित किया है। कबीर ने अद्वैत के अंह ब्रह्मास्मि को अपने प्रिय साक्षात्कार का माध्यम बनाया था। जबकि जायसी का मुख्य आधार है, सर्व खलु इदं ब्रह्म कबीर ने तो रहस्यवादी साधना में सृष्टि प्रकृति माया को बाधक भी माना है। जबकि जायसी ने समस्त सृष्टि प्रकृति भी जिसका अंग है उसमें भी खुदा का नूर प्रतिबिम्ब देखा है।

दोनों के रहवास्यवाद में कौन श्रेष्ठ है इस विषय में विभिन्न विचारकों के भिन्न भिन्न विचार है। डॉ. श्याम सुन्दर व्यास के अनुसार कबीर आदि संतों का रहस्यवाद ज्ञान जन्य है। डॉ. गोविन्द त्रिगुणयक के अनुसार एक का रहस्यवाद भारतीय भक्तिमार्ग श्रुतिग्रंथ सिद्धमत और नाथ सम्प्रदाय से प्रभावित होने के कारण आध्यात्मिक एकान्तिक व्यष्टि मूलक सजीव एवं वर्णनात्मक है। दूसरे का सूफी साधना और भावना से अनुप्राणित होने से अत्यन्त सरस सांकेतात्मक और समष्टिमूलक है। वह प्रेमाख्यान के अनुसार अमिव्यक्त होने के कारण मधुर और नाटकीय भी है।

निष्कर्ष – जिस प्रकार सूर्य और चन्द्र की श्रेष्ठता प्रतिपादित करना युक्ति संगत नहीं है। ठीक इसी प्रकार कबीर और जायसी का रहस्यवाद अपने अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. साहित्यिक निबंध लेखक गणपति चन्द्रगुप्त पृ. सं. 480
2. कबीर का रहस्य वाद लेखक डॉ. राम कुमार वर्मा पृ. सं. 74
3. रहस्यवाद लेखक आचार्य रामचन्द्र शुक्ला
4. कबीर का रहस्यवाद लेखक डॉ. राम कुमार वर्मा पृ. .....
5. कबीर का रहस्यवाद लेखक डॉ. राम कुमार वर्मा 82
6. कबीर का रहस्यवाद लेखक डॉ. राम कुमार वर्मा 83
7. कबीर ग्रन्थावली लेखक गोविन्द त्रिगुणायक पृ. 240

****

राष्ट्रभाषा हिन्दी चुनौतियां और सरोकार

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – स्वतंत्र देशों में अपनी अस्मिता और पृथक पहचान बनाये रखने के लिये प्रतीकों की कल्पना व संरचना की गई है, जिसमें राष्ट्रचिन्ह, राष्ट्रमुद्रा, राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगीत और राष्ट्रभाषा है, इन प्रतीकों में अगर सबसे महत्वपूर्ण है तो वह है राष्ट्रभाषा। भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी एक ऐसी ही भाषा है, जिसे 14 सितम्बर 1949 को संविधान निर्माताओं ने राजभाषा का दर्जा अनुच्छेद 343 (1,2,3) में दिया है। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी व भूमंडलीकरण और बाजार के युग में राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप काफी बदल चुका है। सूचना प्रौद्योगिकी व तकनीकी ज्ञान के विस्फोट के बाद हिन्दी वैश्विक स्तर पर अत्यंत समृद्ध हुई है। इस समय भारत विश्व का सबसे बड़ा बाजार है इस बाजार में जिसे आना है उसे हिन्दी तो जाननी ही होगी। हिन्दी वैश्वीकरण और बाजारवाद की संवाहक भाषा बन पड़ी है। वास्तविकता यह है कि विज्ञान तथा उच्च प्रौद्योगिकी ने आज जहाँ एक ओर आर्थिक प्रगति व विश्व को आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में अपनी महती भूमिका अदा की है वहीं राष्ट्रभाषा हिन्दी को वैश्विक परिदृश्य में शक्तिशाली बनाने में भी उसका सबसे बड़ा योगदान है।

शब्द कुंजी – राष्ट्रभाषा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, संचार

प्रस्तावना – देश स्वतंत्र होने के 67 वर्षों पश्चात हिन्दी अब वह भाषा नहीं रही जो केवल जनसंपर्क तक सीमित रहे 21 वीं सदी के वर्तमान समय में उसका विकास निरंतर हो रहा है, वह अंतर्राष्ट्रीय जगत में मान्य भाषा के रूप में स्वीकार की जाती है।आज राष्ट्रभाषा हिन्दी संचार के विभिन्न माध्यमों के कारण अत्यंत समृद्ध हुई है। डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल ने अपने वर्षों के सर्वेक्षण में एक चौकाने वाले तथ्य एकत्रित किये हैं। उनके अनुसार हिन्दी जानने वालों की संख्या 1 अरब 10 करोड़ 30 लाख है। जबकि चीनी भाषा जानने वालों की संख्या सिर्फ 1 अरब 6 करोड़ है। इस तरह हिन्दी भाषा विश्व में पहले स्थान पर है।[2] वास्तविकता ये है कि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के युग में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी के सुखद परिवर्तन ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को दूसरे स्थान पर ला दिया है और इसमें कोई आश्चर्य नहीं संचार के विभिन्न माध्यमों मे नित्य नये प्रयोगों से समृद्धि की ओर अग्रसर राष्ट्रभाषा हिन्दी विश्व में प्रथम भाषा के रूप में पहचानी जाये। भाषिक आंकड़ों की दृष्टि से सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रंथों के आधार पर संयुक्त राष्ट्रसंघ की छह अधिकारिक भाषाओं की तुलना में देखा जाये तो हिन्दी की स्थिति इस प्रकार है–

1. चीनी भाषा 80 करोड़
2. हिन्दी भाषा 55 करोड़
3. स्पेनिश भाषा 40 करोड़
4. अंग्रेजी भाषा 40 करोड़
5. अरबी भाषा 20 करोड़
6. रूसी भाषा 17 करोड़
7. फ्रेंच भाषा 9 करोड़ 3

उपर्युक्त आंकड़ों के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि चीनी भाषा बोलने वालों की संख्या हिन्दी भाषा से अधिक है, किन्तु चीनी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिन्दी की अपेक्षा अत्यंत सीमित है। वर्तमान समय में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी का ऐसा विलक्षण विस्फोट हुआ कि जिसे सारे विश्व ने स्वीकारा। ये विलक्षण विस्फोट भारत की प्रगति में भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। आज बड़े–बड़े देश भारतीय तकनीकी व्यक्तियों को अपने यहाँ आमंत्रित करने में जुटे हैं, साथ ही हिन्दी का प्रयोग अब इन सभी क्षेत्रों में होने लगा है। 1983 में भारतीय इन्जीनियरों ने ऐसी तकनीक विकसित की जिसके माध्यम से कम्प्यूटर हिन्दी को देवनागरी लिपि में काम कर सकता था, भारत की अन्य भाषाओं में भी कार्य कर सकता था।[4] इसका नाम हुआ जिस्ट कार्ड, यह कार्ड कम्प्यूटर के सी.पी.यू. के केन्द्रीय संसाधन एकांश में लगाते ही अंग्रेजी जानने वाला कम्प्यूटर हिन्दी सीख जाता था और बड़ी सफलता से हिन्दी में काम करने लगता था। उसी का प्रतिफल है कि आज सभी क्षेत्रों में कम्प्यूटर के माध्यम से हिन्दी का प्रयोग हो रहा है। घर बैठे दुनिया की सारी सुविधाएँ व जानकारियाँ इसमें ली जा रही हैं। विज्ञान व प्रौद्योगिकी के निरन्तर विस्तार से अब उच्च सूचना प्रौद्योगिकी की एकदम नई तकनीक आ रही है, हिन्दी कम्प्यूटर के लिए उपयोगी बनाने में सबसे अधिक सहायता की है, लिपि और वर्णमाला के ध्वन्यात्मक स्वरूप ने, इसी कारण जिस्ट तकनीक को अपनाया जाने लगा। इसके सहयोग के लिए एक मानक कोडिंग प्रणाली का भी महत्व है जिसको इस्की कहा जाता है। इसके माध्यम से उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाएँ भी आसानी से कम्प्यूटर पर काम कर रही हैं।

यह भी उल्लेखनीय है कि इसके लिए इनस्क्रिप्ट नाम से एक कुंजीपटल बनाया गया है जो हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में भी काम कर सकता है। साथ ही लिप्यांतर की भी उसमें सामर्थ्य है, इस प्रकार राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी ने एक विलक्षण विस्फोट किया है।[5] विगत वर्षों में पारम्परिक लोक ज्ञान विज्ञान की ओर विकसित देशों का रुझान तीव्र गति से बढ़ा है जिसमें लोकवार्ता साहित्य, लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकविज्ञान, आदि सम्मिलित हैं। विदेशी शोधकर्ता गाँव–गाँव जाकर न केवल इस दिशा में अध्ययन कर रहे हैं बल्कि तत्सम्बन्धी सामग्री का संग्रह करते हुए स्थानीय बोलियों को हिन्दी के माध्यम से सीख रहे हैं। जैसे–जैसे दुनिया ग्लोबल हो रही है वैसे–वैसे हिन्दी की माँग भी बढ़ती जा रही है, विश्व के अनेक देशों में हिन्दी का अध्ययन व अध्यापन का कार्य किया जा रहा है। अमेरिका के स्कूलों में भी अब हिन्दी पढ़ने की माँग बढ़ी है पहले भारत सरकार की भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्धी परिषद् अनेक देशों में

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

तीन साल के लिए प्राध्यापक चुनकर भेजती थी, वह अब भी भेज रही है पर अब अनेक देशों में स्वयं नियुक्तियाँ करनी प्रारम्भ कर दी है। जापान, कोरिया, सिंगापुर में अब सीधे हिन्दी के प्राध्यापक भर्ती हो रहे हैं। खाड़ी देशों के अलावा यूरोप, अमेरिका, में भी हिन्दी शिक्षकों की माँग है। इस प्रकार ग्लोबल हो रही दुनियाँ में हिन्दी की माँग निरन्तर बढ़ रही है। खाड़ी देशों के अलावा यूरोप, अमेरिका, में भी हिन्दी शिक्षकों की माँग है। इस प्रकार ग्लोबल हो रही दुनियाँ में हिन्दी की माँग निरन्तर बढ़ रही है।[6] विगत वर्षों में पारम्परिक लोक ज्ञान विज्ञान की ओर विकसित देशों का रुझान तीव्र गति से बढ़ा है जिसमें लोकवार्ता साहित्य, लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकविज्ञान, आदि सम्मिलित हैं। विदेशी शोधकर्ता गाँव-गाँव जाकर न केवल इस दिशा में अध्ययन कर रहे हैं बल्कि तत्सम्बन्धी सामग्री का संग्रह करते हुए स्थानीय बोलियों को हिन्दी के माध्यम से सीख रहे हैं। हिन्दी कम्प्यूटरीकृत के सचूना प्रौद्योगिकी में उपयोग से हिन्दी की लोकप्रियता और बढ़ी है। विश्व फलक पर हिन्दी के बढ़ते चरणों के मूल में जहाँ संचार माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है वहीं उद्यम, व्यापार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, विश्व हिन्दी सम्मेलनों के अतिरिक्त हिन्दी में उपलब्ध विश्वकोश, ई-कोश आदि का भी सराहनीय योगदान है। वैश्वीकरण के बदलते संदर्भों के कारण ही आज हिन्दी के मौखिक रूप में अनेक नए शब्दों, अभिव्यक्तियों, मुहावरों, व्याकरणिक रूपों के प्रयोग में अभिवृद्धि हुई है। कुछ उभयलिंगी शब्दों का प्रयोग बढ़ा है, जैसे कि कृषिकर्मी, मीडियाकर्मी, सैन्यकर्मी आदि संकर शब्दों का निर्माण भी हुआ है। भाषा मिश्रण या कोड मिक्सिंग की प्रवृत्ति भाषा व्यवहार में इतनी प्रबल हो गई है कि हिन्दी अंग्रेजी के मिश्रण का अभिनव रूप हिंग्लिश (रीमिक्स इंगलिस्तानी) का प्रयोग वाणिज्यिक हिन्दी, संचारी हिन्दी, समाचार पत्रों में निरन्तर प्रयुक्त हो रहा है।[7] आज राष्ट्रभाषा हिन्दी के समक्ष अनेक चुनौतियां हैं, देखा जाए तो वैश्विक परिदृष्य में उसका महत्व तो बढ़ा है पर हिन्दी भाषा के अनेक रूप विकसित हो जाने से उसकी संरचना बदल रही है। संचार माध्यमों में हिन्दी के हिंलिग्ष रूप का विकास इतनी तीव्र गति से हो रहा है कि उसे रोक पाना मुश्किल है। मुख्य रूप से विज्ञापन की चकाचौंध ने भ्रमित कर दिया है। भाषायी एवं सांस्कृतिक संकट इसी की देन है।[9]

निष्कर्ष - विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी व भूमंडलीकरण और बाजार के युग में राष्ट्रभाषा हिन्दी का स्वरूप काफी बदल गया है। सूचना प्रौद्योगिकी व तकनीकी ज्ञान के विस्फोट के बाद हिन्दी वैश्विक स्तर पर अत्यंत समृद्ध हुई है। इस समय भारत विश्व का सबसे बड़ा बाजार है इस बाजार में जिसे आना है उसे हिन्दी तो जाननी ही होगी। हिन्दी वैश्वीकरण और बाजारवाद की संवाहक भाषा बन पड़ी है। हिन्दी को और भी अधिक वैश्विक विस्तार के लिए कम्प्यूटर इंटरनेट, ई-मेल, ई-बुक तथा बेवसाइट की दुनिया से जुड़ना होगा। हिन्दी का प्रश्न केवल अभिव्यक्ति भर से नहीं जुड़ा है बल्कि अब वह राष्ट्रीय व सांस्कृतिक अस्मिता का प्रश्न बन चुका है इसके लिए उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा में आधारभूत ग्रन्थ तैयार करने होंगे। हिन्दी को विश्व भाषा के रूप में और भी अधिक प्रतिष्ठित करने के लिए उसके व्याकरण, लिपि और वर्तनी के मानकीकरण का अनुपालन करने व कराने का वातावरण तैयार करना होगा। इसके लिए हिन्दी में बेवसाइट तथा कम्प्यूटर का जाल बिछाना होगा, जिससे हिन्दी अपने सम्पूर्ण विश्वकोश, शब्द संपदा, भाषिक अनुप्रयोग, लिखित वांगमय के साथ कम्प्यूटर लाइब्रेरी, इंटरनेट, ई-मेल तथा ई-कामर्स की दुनिया में अन्य भाषाओं की प्रतिस्पर्धा में अग्रणी हो सके। वर्तमान समय के रचनात्मक लेखन में हिन्दी की माँग को देखते हुए हिन्दी भाषा के व्याकरण की पर्याप्त जानकारी होना भी आवश्यक है। रचनात्मक लेखन पर बल देने के साथ ही भाषा की समृद्धि के लिए विभिन्न विषयों विज्ञान, बायोटेक्नालॉजी, अंतरिक्ष विज्ञान, अभियांत्रिकी कृषि, बैंकिग, व्यापार, आर्थिक जगत और प्रौद्योगिकी आदि अनेक क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने के लिए मौलिक लेखन, स्तरीय पाठ्य पुस्तकों एवं पत्रिकाओं के प्रकाशन को प्रोत्साहन देने की अत्यंत आवश्यकता है। कम्प्यूटर में हिन्दी प्रयोग के नवीन आयामों, कम्प्यूटर साधित भाषा शिक्षण को बढ़ावा देने के साथ भाषा प्रौद्योगिकी में प्रशिक्षित मानव संसाधन की कमी को दूर करने की दिशा में सार्थक प्रयास होना चाहिए। आज हिन्दी सम्मेलनों व साहित्यिक संस्थाओं में आयोजित संगोष्ठियों में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए हिन्दी के साहित्यिक पक्ष के साथ ही विज्ञान प्रौद्योगिकी आदि अन्य आधुनिक उपकरणों से हिन्दी के गहन सम्बन्ध को उद्घाटित करने की परम आवश्यकता है। वास्तविकता यह है कि विज्ञान तथा उच्च प्रौद्योगिकी ने आज जहाँ एक ओर आर्थिक प्रगति व विश्व को आधुनिक औद्योगिक समाज बनाने में अपनी महती भूमिका अदा की है वहीं राष्ट्रभाषा हिन्दी को वैश्विक परिदृश्य में शक्तिशाली बनाने में भी उसका सबसे बड़ा योगदान है। राष्ट्रभाषा हिन्दी के समक्ष अनेक समस्याएं व चुनौतियां तो हैं पर उसका भविष्य उज्जवल है।[10]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रचना द्धिमासिक पत्रिका अंक 84,जून, 2010, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, पृ. 69
2. वीणा साहित्य की मासिक पत्रिका, अक्टूबर, 2009, रवीन्द्रनाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर, संपादक विनायक पाण्डेय, पृ. 16, 18, 20
3. दैनिक भास्कर समाचार पत्र, भोपाल, 5 नवम्बर, 2009, पृ. 5
4. जनसत्ता समाचार पत्र, नई दिल्ली, 28 दिसम्बर, 2008, पृ. 6
5. नई दुनिया समाचार पत्र, इन्दौर, 22 जून 2009, पृ. 04
6. दैनिक भास्कर समाचार पत्र, भोपाल, 5 नवम्बर, 2009, पृ. 5
7. जनसत्ता समाचार पत्र, नई दिल्ली, 28 दिसम्बर, 2008, पृ. 6
8. आजकल, जून 2009, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, लोदी रोड, नई दिल्ली, पृ. 14,
9. योजना अप्रैल 2010, योजना भवन नई दिल्ली, पृ. 9
10. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

The Theme of Ambition in Paulo Coelho's Select Novels

Dr. Roshan Benjamin Khan *

Abstract - The attempt to identify the prominent themes of Paulo Coelho's fiction shall primarily reveal ambition as the most glaring one. Every protagonist of his novels has ambition. The nature of the goal may be different from one protagonist to the other. It all starts with a strong desire to obtain or acquire something big and difficult. Ambition in Coelho's first novel the *Pilgrimage* is to gain 'magical powers and wisdom of the Tradition of Order'. As it is an autobiographical novel Paulo Coelho himself is the protagonist. He also named the protagonist as Paulo. Paulo is member of mysterious secret sect called 'Tradition of Order'. He assisted his Masters of Order in many rituals and miracles. He is astonished by extraordinary performances done by the Tradition Master. Coelho was fascinated with the Swords every Master has. The Masters use their swords in various rituals. Paulo thought that the Sword has the magical powers and all the Masters were able to perform extraordinary things only because of the Sword. Paulo's utmost desire was to gain magical powers like Master of Order. To achieve all those powers he thought he needed the sword of Tradition which every master has. So in this novel the ambition of the protagonist is to obtain the magical Sword.

Introduction - In *The Alchemist* Santiago's ambition is to find out the treasure which he saw in his recurring dreams. To go in search of the treasure he sells his herd and travels to Egypt crossing the vast desert. In Brida the heroine possesses a different type of ambition to understand greater mystery of her life, her past and future. In these novels the ambition related to the materialistic or worldly attributes.But in '*The Valkyries*' the ambition is abstract and even exotic. Paulo's Master J tells Paulo that people always kill the things they love. Master J cites few lines of Oscar Wilde's verse *The Ballad of Goal*: "And each man kills the things he love…."[1] These lines move Paulo. He agrees with these lines and tells Master J:

"One way or another I have wound up destroying what I've loved. I've seen my dreams fall apart just when I seemed about to achieve them. I always thought that was just the way life was. My live and everyone else's".2

Master J tells Paulo that he must break the curse and he gives Paulo a new task to break the curse. He tells Paulo he must find his Guardian angel to save what he loves most. Thus Paulo's ambition is to meet his guardian angel. Paulo in fact does not know what his Master J. meant, and what is it that he was going to destroy. In spite of this he makes it his ambition.

In many of his novels, the ambition is abstract, even metaphysical ennecting to the magical spiritualism. Coelho exploits his personal experiences like love, faith or even sex and transforms them in to spiritual ambitions; he then gives them a shape with metaphysical rationale. For example in *By the River Piedra I Sat Down and Wept* the protagonist aspires to become a priest. It is his desire since childhood. One day he visits a dead widow's house. The house brings back his suppressed desire and re-discovers his love for his childhood friend Pilar. Even though he tries to be free from his desire, he cannot. Gradually it becomes more and more strong and finally he decides to submit to his desire and to marry Pilar. Such themes assert Coelho's personal convictions. Even if you wish to go on spiritual path, you have to come back to the worldly desires like love. The theme of ambition in Coelho's fiction varies from the common and the worldly to the weird, the metaphysical and symbolical. In *The Fifth Mountain* the strong desire of the protagonist is to restore One God removing Baal god. In fact he was chosen by God for this task. For that, the angel of God tells Elijah to give King Ahab God's Message:

"*Tell Ahab, that as surely as the Lord God of Israel liveth, before whom thou standest, there shall not be dew nor rain these years, but according to my word."*3

While pursuing the most difficult task given by the God, Elijah goes through very hard time. Due to his experiences Elijah begins to think:

'Man was born to betray his destiny'. God placed only impossible tasks in human hearts…Perhaps mankind betrayed its destiny because God was not closer. He had placed in people's heart a dream of an era when everything was possible and then gone on to busy Himself with other things. The world had transformed itself, life had become more difficult, but the Lord had never returned to change men's dreams'.4

Elijah faces a long trail of difficulties which he cannot avoid. Every time he doubts about God's intention and thins that God has abandoned him. Coelho suggests that no one can escape from the unavoidable happenings in the life. In such situation some rebound and others give up but all of us feel the wings of tragedy brushing against us. Coelho asserts the theme by giving the incident he experienced in his own

* **Professor (English) S.A.B.V. Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

life and then he concludes:

"…whenever I thought myself the absolute master of a situation, something would happen to cast me down. I asked myself: why? Can it be that I'm condemned to always come close but never reach the finish line? Can God be so cruel that he would let me see the palm trees on the horizon only to have me die of thirst in the desert? It took a long time to understand that it wasn't quite like that. There are things that are brought into our lives to lead us back to the true path of our Personal Legend. Other things arise so we can apply all that we have learned. And, finally, some things come along to teach us."5

In Paulo Coelho's *The Fifth Mountain,* the story of Elijah runs on similar note and presumptions and it affirms Coelho's own life's conclusions:

'All life's battles teach us something, even those we lose'.6

In *Veronika Decides to Die*, for the entire life Veronika tries to continue her life exactly as it was always. She gives up many of her desires so that her parents would continue to love her as they had when she was a child, even though she knows that real love changes and grows with time and discovers new ways of expressing itself. Veronika ended up accepting what life had naturally imposed on her. In adolescence, she thought it was too early to choose and later in youth, she was convinced it was too late to change. She accepted a job in government library. The job offered her very less salary but she accepted it because it was a secure job. She was living her life keeping her timetable same. She didn't struggle and so she didn't grow. As a result Veronika was tired of her monotonous life. To get rid of such miserable life she decides to die. And then death becomes only desire for her. She explores various ways of suicide and concludes that death by consuming an over-does of powerful sleeping pills is a better and less painful way to die. With the help of her friends she collects prohibited sleeping pills and one fine day she swallows them all. "Veronika was almost certain that everything ended with death and that is why she had chosen suicide: freedom at last. Eternal oblivion"7

In *The Devil and Miss Prym*, Prym is an ambitious woman. She is insecure and lonely but still her hopes are alive that one day she will live a happy and prosperous life. Viscos was a very peaceful village. People live there happily without interfering in each other's life. One day a stranger named Carlos comes and puts before the people of Viscose a proposal. He offers 11 gold bars to the villagers if they commit murder. Gold bars arouse greed in peoples' mind and they decide to kill one of the villagers from Viscos. Like the other protagonists in Coelho's novels she suddenly gets a task to carry one which becomes her utmost ambition.

In *Eleven Minutes* Maria is obsessed by the utmost desire of exploring what is love. In fact, she explores it since her childhood. But in her youth she finds herself in unavoidable situation and has to accept profession as prostitute. She takes advantage of her adverse situation and turns it into opportunity to explore true meaning and nature of love. Maria, in her teenage, thought that love is most terrible things. She concluded:

"Although my aim is to understand love, and although I suffer to think of the people to whom I gave my heart, I see that those who touched my heart failed to arouse my body, and that those who aroused my body failed to touché my heart".8

In *The Zahir* the protagonist, the Narrator strongly desires to become a famous writer. When the Narrator's wife Esther disappears without leaving any trace, he feels humiliated. In the police investigation he comes to know that before her departure she was in contact with a young man named Hamid. Knowing that the Hamid too was missing he becomes restless. He tries to understand the reason behind her departure. To hide his feelings of humiliation and depression he declares that her departure is freedom for him: 'I AM A FREE MAN'9. Just to forget her he begins to live with an actress named Marie. The outward pretension does not enable him to forget her. He begins to see and tries to find Esther in Marie. For the Narrator Esther becomes an obsession. Gradually he understands that his should is tortured not because of his wife's departure but because of her uninformed sudden departure. The Narrator submits to his desire of finding her and knowing the reason behind her sudden departure.

In *The Winner Stands Alone,* the protagonist I got comes across a situation similar to that of the protagonist – the Narrator of *The Zahir*. Like Esther, Igor's wife Ewa too leaves Igor when things were going absolutely fine. Igor is a man of rare intensity and cold intelligence. Igor never tried to find the reason behind Ewa's decision of leaving him. Life without Ewa becomes unbearable for him. For two years Igor controls his desire to get her back in his life. But in those two years his suppressed desire reaches to the highest intensity and because of that, he decides to destroy the world for her. He develops negative ambition and gets obsessed by it. Coelho, in fact, has tried to show the consequences of evil desire that- one wins but in real sense he is loser. The novel deals with the same theme of *The Zahir* –obsession, but Igor never tries to find reason behind Ewa's uninformed departure.

In *The Witch of Portobello* Athena desires to spread unknown energy which she evoked unknowingly. She is restless, energetic mysterious woman. She excels in art of disordered dancing and falls into trance transforming her into pure energy. In this way she develops her gift of prophesy and converses with spirits. She follows the prescribed path of witches. She wants to go beyond her limits to satisfy her own curiosity. Athena confesses:

"I feel miserable and guilty because God blessed me with tragedies that I've managed to overcome and with miracles to which I've done credit, but I'm never content. I always want more."10

Her craze for arousing mysterious energy by connecting herself to higher soul and spreading that energy in the world

becomes her only desire in her life.

Athena says:

"I felt the presence of the Great Mother by my side, guiding me, instructing me…."11

From the above accounts it is amply illustrated that all Coelho's heroes and heroines are subjects of ambition and desire. At the same time all these beings traverse the path of risks and failures on their path towards fulfillment.

References:-

1. Paulo Coelho, THE VALKYRIES 13th ed. Trans. Alan R. Clarke (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2006)9.
2. Ibid.
3. Paulo Coelho, THE FIFTH MOUNTAIN 9th ed. Trans. Califford E. Landers (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2007)13.
4. Ibid., P. 23.
5. Paulo Coelho, THE FIFTH MOUNTAIN 9th ed. Trans. Califford E. Landers (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2007)viii-ix.
6. Paulo Coelho, THE FIFTH MOUNTAIN 9th ed. Trans. Califford E. Landers (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2007)173.
7. Paulo Coelho, TVEONIKA DECIDES TO DIE 15th ed. Trans. Margaret Jull Costa (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2006)7.
8. Paulo Coelho, VERONIKA DECIDES TO DIE 15th ed. Trans. Margaret Jull Costa (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2006)16.
9. Paulo Coelho, THE ZAHIR 2nd ed. Trans. Margaret Jull Costa (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2005)1.
10. Paulo Coelho, THE WITCH OF PORTOBELLO 2nd ed. Trans. Margaret Jull Costa (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2007)210
11. Ibid.,p-211..

****

Nuances of Translation and its Relation with Multiculturalism: An Inquiry

Dr. S. S.Thakur *

Abstract - A couple of past decades witnessed an unprecedented growth of knowledge and rapid flow of information at global level. The exchanges of ideas between various nations, more apparently, the exchanges of culture between the progressive nations like Canada, India, China etc. involving researchers, linguists and other language experts from various parts of the globe.

The paper highlights discussion of the interrelations between translation and multiculturalism, the two powerful forces working within any literary creation. It also examines the linguistic and cultural challenges encountered in the practice of literary translation. Despite the availability of original, biographical and bibliographical material, the paper offers many new insights into the literary translation. And the diverse roles of the translator as social and cultural agent are probed.

A special focus, on tracking developments in literature, will reveal how the current work in translation studies can provide new insights for researchers and academicians. Under globalization, the paper recommends the need to understand new forms of subjectivity and mobility which are the peripherals of translation that stands as a site for cultural exchange.

Key Words - Nuances, Translation, Multiculturalism, Canada, French language, Francophone, Quebec, Cultural Exchange, Globalization.

Introduction - Despite the universalizing pressures of western modernity, the French and Europeans, tenaciously hang on to their language, as though it represents their culture. They tend to impose their language upon the indigenous people, for example, if your business is to export goods to Canada, you should know that all packing and forwarding must be bilingual and obey the strict guidelines. Any failure may result in your product being removed from retail shelves. Language is the means of communication and history suggests, differing languages hinders communication and results in misunderstanding.

Canada's culture is a product of its history, geography, political and social system. It has been shaped by the strong waves of migration that have combined to form a unique blend of customs, cuisine and traditions that have marked the socio-cultural developments of the nation. Hence to understand the nuances of translation it is very essential to mark the various aspects of Canadian culture and to gain a deeper knowledge about its people. Canada's ethnic, racial and religious diversity is rapidly increasing, according to 2001 censes, more than 200 ethnic origins are represented in Canada. About 13.5% of the population belongs to a visible minority group and that proposition is expected to reach 20 percent by 2016. Immigration now accounts for more than 50% of Canada's population growth, with immigrants mainly from Asia and the Middle East.

Canada being a bilingual country with two distinct languages and cultures promotes the translation to a greater extent. Historically there has been little contact between Anglophone and Francophone writers, but the recent book *Writing Between the Lines: Portraits of Canadian Anglophone Translators*, suggests that the work of dedicated translators has helped in bringing desirable changes. The essays in the "Writing between the Lines" explore the lives of twelve Canada's most eminent Anglophone literary translators, and probe into how these individuals have contributed to the valuable process of literary exchange between Francophone and Anglophone literatures in Canada in the areas of literary translation, comparative literature, Canadian literature and cultural studies and reveals why translation is so important to Canada. This study marks the sustained inquiry into the relationship between globalization and Canadian literature written in English and shows how current work in translational studies provides new insights for researchers and academicians in the rise of human rights, great economic and social transformations, wars of unprecedented severity, colonization and economic crisis.

Linguistic and Cultural Challenges in Translation -

Translation no doubt is a challenge, due to the exceptional rise in the global flow of knowledge. This entire process provides new channels for readers, writers and theorists to communicate across gaps of differences. Certain languages, for example, standard Arabic has remained remarkably stable. Its grammar and vocabulary is strikingly homogeneous, expressing the finest shades of meaning, whereas the vernaculars in present conditions cannot perform

* Asst. Prof. (English) S.A.B.V. Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

the same task effectively. Today, in the midst of these advantages, tensions exist between the standard language and the vernaculars, particularly in imaginative literature. But in drama, the demand for realism undeniably favors the vernacular, thus many writers tend towards the mother tongue. For Ex: in one of Shakespeare's richly considered translations, Mc Whotter recounts Liddell's article "Botching Shakespeare" from the October, 1898 Atlantic monthly, in which Liddell demonstrates how little we understand of Polonius's farewell to Laertes in Hamlet.

Translation & Multiculturalism in Quebec - Quebec is the largest province in the eastern part of Canada whose sole official language is French although English is also spoken. More than 23% people speak French as their primary language and 5 out of 6 Francophone's live in Quebec. A great impetus has existed in Quebec to seek and preserve the French culture and language. Thus preserving the cultural history of Quebec is a sacred task of all the modern day descendants. The cultural history of a society is preserved by recording the events of the past through paintings, drawings, songs and stories. The culture of French Quebecers differs from that of the 325 million English speaking citizens of Canada, the United States as well as from France. In the midst of these varieties, it is difficult for any province to preserve the cultural identity, uniqueness and heritage especially for a province that is continuously evolving and changing culture. But the translated versions of Quebec literature depict the proud tradition and culture of Quebec that is still alive. It is not the government that is preserving this legacy; it is the people themselves doing so by simultaneously bringing in a great deal of change. Thus the culture of Quebec has successfully made the harsh and untamed Quebec, into a home. The Quebec literature translated into English successfully portray that the culture of Quebec is preserved by the people in the same way in which the cultural history of Greece is preserved. The above discussion on culture, highlights the role of a translator, that is very vital in preserving not only the culture but in transmitting the right information to the audience.

Role of a translator as a Social and Cultural Agent (Reformer) - Translation is a labor of love, and all great translators put forth the results of their work never knowing if their reading would be correct, considering all the possible readings. No doubt, all translators, irrespective of any language, have creative writing in common but they certainly don't share the same techniques for literary translation. The translators have a variety of different viewpoints in both the guest and the host languages and few translators sometimes fail to strike a balance between the strict literalness (faithfulness to the original text) and freedom (the liberties that a translator takes). However it must be remembered that there is no one perfect method of balance.

In "Writing between the Lines", some translators are featured in this way:

- Patricia Claxton, believe that it is their responsibility, even a civic duty, to be loyal to the original author's text and the intensions.
- Poet D.G. Jones and others see translation more as a transformation of the text that sets fewer restrictions on the translator.
- Sheila Fischman believes translators and the original authors should get "equal billing", which suggests something about how she sees her position in the creation of a text.

Thus on the basis of the above opinions of different translators it doesn't matter much what topics or genres they were translating. It is not for the reason that the translators only want to introduce great Quebec novelists, playwrights and poets to those who can't read French, but they also see translation as the way to bridge the cultural and political gap between English Canada and French Canada. Also it is interesting to note that all these translators of Quebec started their careers in other fields and their backgrounds enabled them to bring immense variety, enrichment and insights to their literary work. It is also interesting to note that none of these francophone translators specialized in English studies. In course of time, they gained required expertise in English and today most publications pair the translator's name with that of the author and the outstanding translators are even rewarded with awards for their work. Thus these translators of Quebec have paved a new path by demonstrating that translation is not only a question of the correct language but a social epitome and an accurate representation of multiculturalism too.

Impact of Economic Crisis and Depression – "Making Do" - Denyse Baillargeon's study on women's experience of daily life made a remarkable contribution to women's history in Canada. The translation of this book by Yvonne Klein was also well received when it was published in 1991. The translated version depicts the history of working class women but also the popular and political cultures of 20th century Canada. After World War I, unemployment remained high in the Montreal city. When the Great War ended in 1918, social, economic and public health crises mounted in Canada. The translated version helped the English readers to probe deep into the great depression. How did the families survive when the principal bread winner was unemployed? To answer these questions Denyse Baillargeon looks at the contribution of the housewives, especially the women who were married and had principle responsibilities.

The author succeeded to a greater extent in recounting the alternative strategies these housewives adopted in encountering poverty. In doing so, she also succeeded in bringing into light, not only the existing economical crisis but also the life style from their early childhood days to World War II. The women folk disclosed the intensities of the sufferings of their forefathers who took on the tasks for the survival of their families, thus the injured feelings of the women are captured in "Making Do", which is an excellent piece of work, not only in French language but also in English. The writer also succeeded in exploring the magnitudes of the vicious circle of oppressive government i.e. lack of freedom

and silent protest, recalling the problems of Quebec relating them to the present times, where the issues related to human rights are still violated.

The work of the author was very important, because once this generation disappears; nothing would be left behind in the way of evidence. The translated version further enriched the material, by probing deep into the intricate lives of women, and simultaneously succeeded in measuring the dimensions and the gravity of the depressions of the working class during 1930s. Apart from capturing the spirit of the author, the translator also succeeded in depicting the colloquial language with its many nuances into English which is very accurate and easy to read.

Medicalization of Motherhood in Quebec, 1910-1970: "The Babies for the Nation" - Denyse Baillargeon, a Professor of History in Quebec, also works for maternal welfare and child care in Quebec. Several of her writings make contribution not only to the history and sufferings of women and health but also the political conditions that were against the francophones. This volume is yet another successful works of Denyse Baillrgeon, which is recognized by some as "Necropolis for Babies". Early 20th century recorded infant mortality rates striking up, particularly among French speaking Catholics. This alarming situation gave rise to an important movement that paved way to medicalization of babies, inorder to preserve the Quebec identity. In traditional Quebec culture the government and the church were united in upholding the culture. It was believed that family unit and its expansion was the building block of a stable Quebec society. Later in contradiction to its own mission of preserving the Quebec culture and identity, the government of Quebec gave support payments to single motherhood.

The author depicts the political conditions of Quebec government which on one hand endeavors to preserve cultural heritage, while another department of the same government provides funding to achieve opposite result. Thus the government's dual policies and the attempts made in preserving the culture of Quebec are nothing more than a farce or a political drama. Thus Quebec's political conditions are once again highlighted in "The Babies for the Nation".

The author after interviewing more than 50 mothers sets out to understand that doctors were actually able to convince women, who consulted them, for saving the lives of the babies. The book reveals the element of faith that the Quebec women had on the doctors than on their own government. Her analysis also considers the type of medical communication that prevailed in Quebec during 1910-1970. Several free medical camps were made available to mothers during the period and the services rendered by doctors were completely believed and followed.

Thus this study delineates the two contradictory situations, the alliances and the conflicts, that arose during the period that profoundly changed the child bearing attitude for preserving the culture in Quebec. The work also unfolds and examines the variety of social workers who were genuinely involved in this mission in saving the babies for the nation. Among them were the doctors, nurses, members of the clergy, women activists and the mothers themselves. The work of Denyse Baillargeon was awarded many prizes for offering a new readership to many. Thus these works of Francophone authors and the excellent idiomatic translation services of Anglophone translators will remain very useful collections for both French and English speaking world on Quebec culture and politics.

References :-

1. The Anatomy of Poverty: The condition of the working class in Montreal, 1897-1929 , Toronto: McClelland and Stewart, 1974
2. Liddell, "Botching Shakespeare" Atlantic Monthly, October, 1898
3. Terry Copp, "The Conditions of the Working Class in Montreal, 1867-1920,Historical Papers, 1972
4. Carl Berger, The Sense of Power: Studies in the Ideas of CanadianImperialism, Toronto: University of Toronto Press,1970
5. The Working Class Experience: Rethinking the History of Canadian Labour, 1800-1991, Toronto: McClelland and Stewart,1992
6. Quebec Women: A History, Toronto: Women's Press.1987

****

The Concept Of Time And Space In The Novels Of Amitav Ghosh

Dr. Rajendra Kumar Bhevandia *

Abstract - The present study deals with some of the novels of Amitav Ghosh. The focus is to observe what the act of narration does to Time and Space. The thrust of the research is the historical reality in terms of Time and Space. The past is equally dependent on the present which determinse how we look at it. The mobility with which history traverses past and present is indeed due to the fluid pattern of time.

Introduction - The novels of Amitav Ghosh have a very intricate narrative structure. It is infact a complex jig-saw puzzle of varied time and place segments as also are thematic dimensions. It is really interesting to observe what the act of narration does to Time and Space. One of the most intricate patterns that is woven into Ghosh's novels is the coalescing of time and space in a seamless continuity - memory endowing remembered places with solidity and imagination the recounted ones. By letting his stories interplay with time Ghosh achieves an unusual perspective of time. Generally, novelists stick to chronological narrative or dissolve time into a kind of duration where the past and the present are indistinguishable. But Ghosh opts for a different, more subtle adventure in most of his works.

Ghosh presents history as a collective memory embodying symbiotic relationship between past and present. The past is equally dependent on the present which determines how we look at it. The mobility with which history traverses past and present is indeed due to the fluid pattern of time; yet time with the poise and flavour of oral recapitulation coupled with chronological references never lets us forget that history is situated in the past. Ghosh's second and perhaps the most popular novel" The Shadow Lines", has the historical backdrop of the freedom movement in Bengal, the Second World War, the partition of India, and the miasma of communal hatred breaking out in the riots of Bangladesh following the heritable incident in Srinagar in 1964.The novel is not a recapitulation of these historical upheavals; it catches alive the trauma of emotional rupture and chocked human relations.

Ghosh alternates the past and the present to place the self in history that reveals the full meaning of the present and gives an insight into future. The use of past tense in the narrative with its evocation of time through memory is vital. It creates a sense of the flow of events over a period of time, a sense of history through which characters emerge and resolve the tension between their personal world and the public world of experience.

In "The Circle of Reason" a teacher of weaving builds the linguistic space of his craft for a trainee, constructing a world of terminology meaningful only in its immediate technical context. In "The Shadow Lines" the narrator draws a circle on the map and suddenly comes to the realization that all the random places around its circumference are connected. In "The Calcutta Chromosome" Ghosh narrates the world as live experience and as virtual computer reality cross imaging past and present.

Ghosh is a traveller and anthropologist who studies life, art and culture and also socio- political milieu of the places he visits. He perceives distance as a challenge to be overcome through intense desire and imagination. Ghosh's fictive spaces are not merely geographical; they are also temporal formations. For instance the space in "The Shadow Lines" is bounded by the 1964 riots in Kashmir, Calcutta and Dhaka. In "The Circle of Reason" the village life in Bengal is informed by scientific history from Pasteur to atomic Physics. In "The Calcutta Chromosome" the present is penetrated by the past in ghostly repetitions, where as in "The Shadow Lines" the past penetrates the present through memory.

Ghosh works with hidden legacies, in "The Circle of Reason" a village weaver's craft carries with it the entire history of trade in cotton and cloth and technological invention from Harappa to Gandhi to computer design. The total impression is that of a dynamic flux of history shaping, the present and future, a history in which the modern man struggles to find a meaningful space.

"The Circle of Reason" starts in the past with Balaram's excitement at exploring the shape of Alu's skull moves further back in time to Balaram with his friends all in their mid-thirties returns to Balaram's relationship with Alu, moves forward to the present with inspector Das interviewing Gopal, a friend of Balaram, and then slips back to the beginnings of Balaram's life and career in Presidency College. Each story, unfolds in linear time.....and each maintains its distinctiveness. Each story whether it moves backward or

* **Asst. Prof. (English) Shri Atal Bihari Vajpayee, Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

forward in time, continues and explicates the previous one. The final experience is an extraordinary achievement in which past and the present co-exist while constantly asserting their difference.

In "The Shadow Lines" time past merges fluidly with time present. In the beginning we have the narrator, a young boy, gazing with respect and admiration as Tridib concocts a story for his friends at his "adda" at Gole Park - with a view to impress them about his English connections. This is followed by a long digression about the narrator's own visit to English and his meeting with May Price a few years after Tridib's death. At this stage again the pendulum swings back: we are back to the narrator's childhood with his cousin Ila. In spite of frequent time switches the movement seems natural and easy, making no special demands on the reader. "The Shadow Lines" moves through an intricate weaving backward and forward in time. The narrative sequence is constant, frustrated by the intrusion of memory - memory working as remembered family histories, restructured in search for meaning. The reconstruction of the past through houses, photographs, maps, road names, newspapers, advertisements and other concretizations allows the reader to examine the text and evaluate the author's perception of time and milieu covered by the novel.

"The Shadow Lines" is a novel about time, about growing up - not so much in years as in understanding. It is not what happened, but the meaning of what happened that is important, and the meaning emerges when the past and the present are considered together. The movement back and forth in time is not simply a structural device, it projects a significant message - Ghosh seems to suggest that the line dividing the past and the present is only a shadow, that the past lives in the present and that the present is shaped by the past as the narrator in the novel points out that "the past is concurrent with the present."The Shadow Lines" may be described as the narrator's journey backwards in time in quest of a fuller meaning of life. It is an attempt to impose a pattern on experience. By putting the child in the centre of the narrative and surrounding the events of the past, with later interpretation Ghosh leads the reader through the same deepening of perception that the narrator experiences.

In "In an Antique Land" Ghosh deals with a theme whose origin can be traced in the deeper layers of history and civilization. On one hand he gives a picture of the antique civilization of the twelfth century Egypt and India and throws light on the Indian Ocean trade and the culture of accommodation. On the other hand he gives an account of the fast changing twentieth century world. Ghosh has successfully imparted a valuable insight into some abiding aspects of human life and human character which is never carried away by the flowing currents of history and civilization. Inspite of the seemingly unbridgeable gulf of time and culture, Ghosh feels that his journey to the past had its own rewards. He was able to trace the points of contact with ancient civilization and comes to the realization that the antique civilization was still alive in Egypt and India in the articulation of beliefs and practices of the people. Ghosh analyses both African and Asian ways with unjaundiced eyes. He has drawn parallels between war and riot to show how all violence, whether committed in the name of nationalism or freedom, is to be given no other colour. The barriers of nation, country and time dissolve in the consciousness of the author and he reaches a tragic realization of how unscrupulous political forces continue of suffocate human aspirations all over the world. "In an Antique Land" demonstrates most powerfully how an excursion into the past is no escape from the present, but a coming to grips with the present realities of living.

The engrossing novel, "The Calcutta Chromosome" moves with a rapid pace and often makes one forgetful of the oscillation of time and space that separates and yet associates the major characters of the novel - Ronald Ross, a British scientist in Calcutta (1885-99); Murugan, a Calcutta born researcher working in New York and then Calcutta (1990-95) and Antar ; the Egyptian computer clerk in New York (1970- early 21st century). Constant shifting between the three points of time - past, present and future, enables the reader to visualize a sequence and a simultaneity of action. The cinematic technique of cross cut and dissolve are Ghosh's favorite. He has employed them in all his novels to convey the sense of the interpenetration of the past and the present and all time and all space. In her review of "The Calcutta Chromosome" Meenakshi Mukherjee points out that time and space are so deliberately jumbled in the novel that discontinuity itself becomes meaningful.

Like V.S. Naipaul and Salman Rushdie, Ghosh is perceptive towards the tendencies of a new world which is upcoming in which historicity and contemporaneity are relevant. Like them, Ghosh also perceives experiences of the past and present to explore lives of men and women in his novels. His novels have immediate as well as historical relevance because they deal with history and politics. They reconstruct the past, not in the chronological order of events but scattered events. In "The Calcutta Chromosome" we observe that the disruption of time and space enables us to visualize and seek the complexities of plot structure and to admire a conglomeration of ideas. The reader may flit between the physical and psychological time to different characters that progress either simultaneously to different geographical places or remain in the same physical location but at different spots of time. For instance, Sonali witnesses Mangalabibi's magical attempts to transfer Laakhan's spirit into Roman Haldar's body, almost at the same time when Murugan has a peculiar experience - seeing "faces round his bed rippling like reeds behind the surface of the mosquito net," in Mrs Aratounian's flat.

In the novels of Ghosh we observe an important tendency of postmodernism - that reduction of experience to a ' series of pure and unrelated presents'. The past loses its pastness and is made to fuse in the present becoming some aspect of the present. The dissolution of the temporal boundaries may also include foreshortening of the future. "The Calcutta

Chromosome" begins in the twenty first Century New York - a time when technology dominates private and professional realms and experiential reality takes the form of images on the computer screen. The Egyptian, Antar working for IWC stumbles on his erst while colleague Murugan's ID card on his super computer Ava. He manages to establish contact with Murugan who narrates his story. In a characteristic postmodernist style we witness the disappearance of distinction between illusion and reality.

Conclusion - Memory and imagination play a significant role. Memory enlivens the present with the past, while imagination enables us to widen our world by helping us to ingest the vicarious and the distant. As the narrator in "The Shadow Lines" admits, - Tribid had given me world to travel in and .....eyes to see them with. The nameless narrator also conveys "that a place does not merely exist, that it has to be invented in one's imagination,".Ghosh seems to suggest that a place is more than its geographical and historical features. It carries a deep imaginative meaning. Ghosh questions the concept of the demarcating line between imagination and reality. He gathers that since reality is too vast and complex a concept it cannot be restricted within historical chronology or geographical contours. Hence there can only be a shadow line between imagination and reality.

Thus we can say Just as time can be illusory and concrete at the same time, similarly space can also be fluid even when held solidly with the concrete scaffolding of a house or confined within the firm outlines etched as national boundaries. Ghosh brings us to the realization that time and space are dimensions of an individual's desire in which the actual and the imagined coexist harmoniously.

References :-

1. Bhatnagar, M.K. (ed): Indian Writings in English Vol. I Atlantic PublishersNew Delhi 1996.
2. Bhatt, Indira & Indira Natyanandam (ed): The Fiction of Amitav GhoshCreative Books New Delhi 2001.
3. Dwivedi, A.N.(ed) : Studies in Contemporary Indian Fiction in English.kitab Mahal, Allahabad.
4. Dhawan,R.K. (ed) : Indian Writing in the New Millennium IAES, New Delhi 2000.
5. Desai, S.K., M.K. Naik & G.S. Amur (ed) : Critical Essays on Indian Writing in English machmillon India, Madras.
6. Kirpal, Viney (ed) : The New Indian Novel in English - A Study of the 1980s. Allied Publishers New Delhi 1990.

Journals -

1. The Indian Journal of English Studies.R.K. Dhawan (ed) IAES Delhi.
2. The Journal of Indian Writing in English S. Balarama Gupta (ed).
3. Indian Literature Vol .33 (1990).

****

Impact Of Communication Revolution On Teenagers And Moral Degeneration

Dr. Manjari Agnihotri *

Abstract - In this world any type of revolution brings a disastrous change in human life. As far as communication revolution is concerned, it has totally changed the human way of living, talking and behaving. The youth today are becoming more and more attached to this revolution. In the modern age whole of the new generation opened their eyes in the world of communication revolution and breathed in the air of net web. One way in which the world has changed in the last 20 years is the global issue of the worldwide communication revolution, which allows instantaneous communication across the globe, especially via the internet. The young generation is totally entrapped in the web of different means of communication. These means have become an inseparable part of their life. Among them the entry of mobile phones has changed the entire communication system in our society and the gadget is used by all sections of the society irrespective of age. Even man has become handicapped without mobile. He has to take support of the crutches of mobile to move in the society.

Introduction - In this era of globalization mobile phones and other communication facilities have turned from technological tools to social tools. All of them are a part and parcel of man's life. With these tools he lives comfortably and connects himself with the rest of the world. But, the most effected part of the society is young generation. While discussing on the part of teenagers the use of internet, face-book, video-games, computer games, mobile phones, whatsapp, etc. is a status symbol and a point of prestige issue. If somebody has less knowledge about all these things, he is categorised as an uneducated person. Teenagers do not enter the college without mobile phones and laptops. As an integral part of daily life the routine and the whole of the life style have been changed.

Every invention and new arrival has two aspects of attitude. To view the positive aspect of communication revolution it is beneficial in many ways. It connects people to them, who are abroad and very far. It lessens the distance within seconds. Through face-book and whatsapp many persons are able to meet departed close persons as well as succeed in finding out their old friends, to renew their relationship again and through video calling face to face calling has been made possible. While talking in social context the use of internet has fasten the mode of working of people. The email, the transactions and the use of ITC in banking sectors, e-commerce, in post offices, in markets, in schools and colleges, transfer of knowledge travel in fractions of second at the every corner of the world. Being an inseparable part of life mobiles has captured totally the thoughts of young generation. In every field of life, not only teenagers and the people of every age, every class, and every category (higher to lower) use mobile phones frequently. It is boon to collect the information within seconds from all over the world. Everywhere and at every place, people are engaged in talking on mobiles, in playing games, in enjoying videos in getting online information. This advanced gadget is companying mostly the strangers. Secondly if we peep into the world of advertisement, a child from his very early childhood enjoys the music, colour, presentation of advertisement. The sale of mostly products depends on the enhancement of the people. Besides it many information knock the doors of people.

"Technology provides a way of communication but is becoming the only way to communicate with today's youth because it has made one on one interaction less frequent and has made a negative effect on the social abilities of the youth." {1} But if we look at the other part of the communication revolution our youth is addicted to cell phones and night packages, SMS packages, and that entire facilities are making the life of youth hell. Our youth is spell bounded by these packages by talking with opposite sex. They are getting away from their targets, goals, and motives. They are allured to divert their attention towards internet. Very few of them have inclined for knowledge, information, awareness, and exposures but the majority of them appear to have misused the internet, mobile phones, or other communication gadgets. Due to this revolution the moral values have been disappeared from their behaviour and from their part of life.

But if we analyse it from psychological point of view we may find the pearls of truth. For all of these the young generation is not totally responsible. We see that when a young baby cries his parents switch on the songs and videos on mobile phones and succeed in stopping his crying. We provide computer games to a child. It is because parents

* Asst .Prof. (English) Govt. Girls College, Sehore (M.P.) INDIA

have less of time for their children.

Bull in his book Moral Education (1969) explains this point thus- "The child is not born with a built-in moral conscience. But he is born with those natural, biologically purposive capacities that make him potentially a moral being." {2}

"As these technologies become a most integral part of daily activities, automate more decision making processes and continue to transform the way people communicate and relate to each other, they further complicate the already problematic tasks of attributing moral responsibility." {3} If we peep into our past, we really find out the actual and bitter truth behind this moral responsibility. In ancient time family was considered a place of love, devotion and sympathy and mutual understanding. Every member co-operates, understands the feelings and devotes time to one another. But gradually the discoveries of science in the field of communication seize the minds and hearts of people. The emotions, love, sympathy have been taken over by T.V., mobile, computer etc. In previous time children spent their time by listening moral stories. (The stories of Ramayana, Mahabharata, other great historical mythical heroes and their events) and playing indoor games involving other family members .But now all are replaced by computer and mobile games, facebook, whatsapp chatting. So the gap has been formulated between family members knowingly or unknowingly. The progress of materialism and the appetite for earning money have captured the thinking of modern people. To avail the modern facilities, to maintain the standard in the society for pomp and show. People are indulged in getting money and multiplying it. Time for family is replaced by overtime work. Children find their shelter for emotional and mental satisfaction in the lap of communication facilities. To pass their time they used to play games on computer, to share their feelings and sentiments they use mobile phones and Face-book. It has created a long distance in the hearts of family members or even between parents and children. The problem of loneliness is resulting depression. Teenagers are unable to share their daily routine talks to their parents. Parents are also fulfilling their formal duties by providing every facility to their children and consider that they are free from domestic responsibilities. Teenagers involve themselves in the world of communication to such extent that they are totally ignoring the feelings of their parents and their relatives. They do not possess the knowledge of assessing the difference between right and wrong, good and bad. They are considering themselves as more experienced and advanced persons to move in the society.

The gap is widening. But this is not the solution. As a need and inseparable part of life we have to live with all these communication tools and have to maintain the relations as well. The parents should behave with their children in friendly manner and should share the feelings, thoughts and talks with them due to which the young generation will go away from morally right path. They will use mobile phones and other communicable gadgets for positive purposes. The future of our nation is in the hands of the young generation that needs proper discipline, guidelines, rules and regulations. It is our duty to lead them in a proper and healthy way forward.

References :-

1. Technology: Good or Bad for Today's Youth? – Teen Ink (magazine, website and books written by teens since 1989) - Amie54321, Huston, TX.
2. Moral Education 1969- Norma J Bull- pg.-15.
3. Stanford Encyclopaedia of Philosophy- Computing and Moral Responsibility- Merel Noorman- First published July 18, 2012.

****

Disputes Among Elders And Effects On Children: Select Plays Of Mahesh Dattani

Niranjan Gangwal *

Abstract - Disputes between husband and wife in a nuclear family have become a very common scene in Indian society. Woman is used, abused and misused in a male-dominated society. The children of the family are the most vulnerable to direct and indirect, fatal and drastic consequences of such quarrels. Many Indian English playwrights have highlighted pathetic condition of children among fighting parents. Whenever one tries to dominate the other, the problem starts to raise its head. Catherine Thankamma writes, "The plays of both Tendulkar and Dattani reveal that in the patriarchal set up marriage is not only a means of regulating sexual and reproductive behaviour but also a means of upholding male dominance." [Thankamma 82]

Introduction - There are many reasons behind such squabbles such as love-marriage, interference of in-laws, immoral life of the spouse, excessive freedom to children, greed for money and others. Bangalore based playwright, Mahesh Dattani [b. 1958], is the most dynamic and bold playwright who has highlighted the pathetic condition of children among fighting parents. Dattani has proved through his plays that marital life has become poisonous now-a-days. Homes have turned into battle-fields. Husband and wife have lost faith in each other. All these problems are spoiling the life of children because parents are busy in accusing and abusing each other and they have no time for giving moral teachings to their children. For present study four plays written by Mahesh Dattani have been selected – *Where There's a Will, Tara, Final Solutions* and *Do the Needful.*

The play *Where There's a Will* highlights the deteriorating condition of the spouse in upper class society. It delineates immoral life of Hasmukh Mehta who is not satisfied with his life. In Indian society, women are used only as a commodity and not as a life-partner. Hasmukh Mehta, cheats his wife, Sonal, and enjoys his life with his secretary, Kiran Jhaveri. Kiran deceives her husband and enjoy with Hasmukh Mehta. Hasmukh uses women – Sonal [wife] and Kiran [mistress] – only to satisfy his sensual appetite. His immoral life affects the life of his son, Ajit, who flirts with his father's staff girls with his friends. Ajit losses respect in the eyes of his wife, Preeti. Ajit's attitude makes her greedy who wants to grab all his property of Mehtas. Reena Mitra points out, "*Where There's a Will* is another play in which Dattani's recurrent motif of patriarchal paramountcy appears. A woman is generally looked upon as a commodity; her prime functions in marriage are to dance attendance upon her husband and to be an exciting partner in bed." [Mitra 128] For Hasmukh, his wife was as precious as gold but after some years she becomes as disgusting as mud. When he finds that his wife is not interested in sexual life, he starts enjoying with other ladies. Then he finds a permanent mistress for him. Modern people are hungry only for flesh and they don't pay any attention to the devotedness of their life-partners. Hasmukh expresses his views about Sonal.

HASMUKH [*to the audience]*: "My wife. My son's mother. Do you know what Sonal means? No? 'Gold.' When we were newly married, I used to joke with her and say she was as good as gold. But that was when we were newly married. I soon found out what a good-for-nothing she was. As good as mud. Ditto our sex life. Mud. Twenty-five years of marriage and I don't think she has ever enjoyed sex. Twenty-five years of marriage and I haven't enjoyed sex with her. So what does a man do? You tell me. I started eating out. And what about my sex life? Well, I could afford that too. Those expensive ladies of the night in five star hotels!" [Dattani 472-473]

Immoral Hasmukh Mehta is defeated at the end of the play. Santwana Haldar points out, "Finally, each of the family members discovers his or her own identity and is purged of Hasmukh's influence. The liberation of these characters from their past suggests the defeat of Hasmukh." [Haldar 27]

In the play *Tara,* the interference of wife's father and the subsequent events and disputes between husband [Mr. Patel] and wife [Bharati] spoil the life of children, Tara and Chandan. Bharati doesn't inform her husband about the secret meeting with Dr. Thakkar. She takes the major decision with her wealthy and powerful MLA father about the operation of their Siamese twins. Her mistake becomes the cause of her daughter's death. After the death of Tara, Chandan shifts in London. When his father informs him about the death of hir mother, Bharati, he decides not to return to India. Lack of mutual understanding and trust between husband and wife can destroy the peace of the family. If old custom and culture are followed blindly, they can become the cause of destruction. Tara's life is destroyed by her mother's adherence to old custom to prefer a boy-child over the girl-child. Subhash Chandra comments on the death of Tara, "It is the socio-cultural system which is responsible for her death. The beliefs, the attitudes, and the prejudices that are deep-rooted in the collective Indian cultural psyche become

* **Asst. Professor (English) Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA**

instrumental in taking Tara's life." [Chandra 62]

Relations between wife and husband become poisonous if some third person is involved in their decision making. Bharati's father is involved in the major decision of the operation of Siamese twins – Chandan and Tara. Bharati and her father make a secret plan with Dr Thakkar and offer him three acres of prime land in the middle of Bangalore. Dr Thakkar does unethical and unusual operation and gives two legs to the boy according to the secret plan. The plan was medically wrong because major supply of the blood to the third leg was from the girl's side. Mr. Patel regrets his mistake for not protesting the unethical deed of her wife. He tells his children, "Your grandfather's political influence had been used. A few days later, the surgery was done. As planned by them, Chandan had two legs—for two days. It didn't take them very long to realize what a grave mistake they had made. The leg was amputated. A piece of dead flesh which could have—might have—been Tara." [Dattani 377-378]

In *Final Solutions,* Ramnik Gandhi and his wife, Aruna, have different views about religion that becomes the cause of disputes between them. Ramnik has broad humanitarian outlook about religion but Aruna's thinking is fanatic and narrow. Their daughter, Smita is highly affected by the views of her father. She tries to save her Muslim friend, Tasneem, at the time of curfew. Ramnik helps the two Muslim boys, Javed and Bobby, by giving them shelter in his house at the time of riots and subsequent curfew. But his wife hates his ideas and doesn't want to touch even the drinking glasses of the Muslim boys.

In the play *Do the Needful* shows that love marriages often lead to unhappy life of the couple as well as to children. Modern married life reminds us of the proviso/bargaining scene of *The Way of the World* written by William Congreve in which Mirabell and Millament want complete freedom even after their marriage. In *Do the Needful,* Lata represents deteriorating condition of marital life. Her parents blame each other for her illicit relations with Salim. Her father, Devraj, complains Prema, his wife, for compelling to leave his parents and for immoral life of Lata. Their daughter, Lata has spoiled her life because she didn't get any moral lesson from the elders of the family. They have no face to show to their community people. In the same way, Chandrakant Patel marries to Kusumben against the wish of his parents and leads an unhappy life. Their son Alpesh is has got divorce and leads homo-sexual life. The life of Lata and Alpesh is also marred by careless and fighting parents. When both the families decide to unite Lata and Alpesh in marriage, Lata warns Alpesh that she will give her a hellish life after marriage. She warns Alpesh, "Oh! This is no use. If we do get married, I will give you hell! That's a promise!" [Dattani 151]

Morally strong persons are able to solve not only family disputes but they can also solve other problems of life. In *Where There's a Will,* morally strong Sonal could understand the circumstantial relations of Kiran and Hasmukh and accept Kiran as a family member. Kiran saves Preeti from humiliation. She doesn't tell Ajit and Sonal about the murderer [Preeti] of Hasmukh. In the play *Tara,* Chandan and Tara are shown to be morally strong persons. In *Final Solutions,* Ramnik Gandhi, Smita and Bobby are morally strong people. Ramnik Mehta gives all chances to Javed so that he can live a normal life. He offers him job in his saree shop. Smita gives Javed and Bobby the pot of water which is used for God's bathing. Bobby puts the image of Lord Krishna on his palm and proves that God never differentiates between Hindu and Muslim. Bobby tells Javed about God, "He rest in my hands! He knows I cannot harm Him. He knows His strength! I don't believe in Him but He believes in me. He smiles! He smiles at our trivial pride and our trivial shame." [Dattani 224] In *Do the Needful,* the coconut vendor and the lift-man are morally strong persons. They give critical comments on immoral people like Gowdas and Patels by saying that modern big people give so much freedom to their children. When they spoil their life, they accuse and abuse each other. Dattani has highlighted the hazardous condition of conjugal life in modern India. Neither wife nor husband is devoted to life partner. Sita Raina opines, "Women – be it daughter-in-law, wife or mistress – are dependent on men and this play shows what happens when they are pushed to the edge." [Raina 451] Modern life is not bad in itself but it should be controlled with the reins of morality. Conjugal life should be based on mutual understanding. Parents should avoid disputes between them so that they can be a role model for their children. The culpability once committed brings its fatal effect and it becomes almost impossible to rectify the mistake. Beena Agarwal points out, "In *Final Solutions* Ramnik Gandhi has his own guilt for the wrong doings of his parents. In *Tara,* Chandan, Bharati and Mr. Patel suffer under the burden of self-guilt for the injustice that they have committed under the influence of social expectations. Bharati and Mr. Patel desperately struggle to come out of that guilt." [Agarwal 187-188]

References :-

1. Agarwal, Beena. *Mahesh Dattani's Plays: A New Horizon in Indian Theatre.* Jaipur: Book Enclave, 2008. Print.
2. Chandra, Subhash. "The [Un]twinkling Star: Who Takes Tara's Shine Away?" *The Plays of Mahesh Dattani: A Critical Response.* Eds. R.K. Dhawan and Tanu Pant. New Delhi: Prestige Books, 2005. 60-68. Print.
3. Dattani, Mahesh. *Collected Plays.* New Delhi: Penguin Books, 2000.
4. Haldar, Santwana. "Mahesh Dattani: Life and Works." *Mahesh Dattani's Final Solutions : A Critical Study.* New Delhi: Asia Book Club, 2008. 25-40. Print.
5. Mitra, Reena. "Mahesh Dattani's *Final Solutions* and Other Plays: A Living Dramatic Experience." *The Plays of Mahesh Dattani: A Critical Response.* Eds. R.K. Dhawan and Tanu Pant. New Delhi: Prestige Books, 2005. 123-133. Print.
6. Thankamma, Catherine. "Women that Patriarchy Created: The Plays of Vijay Tendulkar, Mahesh Dattani and Mahasweta Devi." *Vijay Tendulkar's Plays: An Anthology of Recent Criticism.* Ed. V.M. Madge. New Delhi: Pencraft International, 2007. 80-87. Print.
7. Raina, Sita. "A Note on the Play" *Collected Plays: Mahesh Dattani.* New Delhi: Penguin Books, 2000. 451. Print.

Worldly Problems & Spiritual Solutions In T.S. Eliot's Poetry

Dr. J.K. Sagore *

Abstract - This paper present the bewildering and terrifying scenario in modern life. A fierce repudiation of a world without values. It describes the contemporary scene – the….. age which advanced progressively backward. The themes of impermanence, suffering, action and non-action, detachment and attachment, renunciation and worldliness time and eternity, life and death may have Universal bearings but Eliot's response to these Questions inspite of his Christian belief is consciously modified by his knowledge and understanding of The Bible, The Gita, The Upanishadas, The Quoran, The Patanjali Yog Sutra and The Buddhist literature. If the exercise is being carried out at the level of quest; try to assimilate the best from the above sources, one can overcome the limitation of temporal existence and to be one with God is the object.

Introduction - God creates each of us with natural capacity for good or evil. He gives us a few simple rules for our good Satan tempt us to misuse or abuse. The creation by bringing before us the first of the flesh, lust of the eyes and pride of life (1. John 2:16 KJV). In just a few generations mankind fell to the lowest degradation, That live still see today.

Sexual lust and perversion,
Addiction to alcohol, plants etc.;
Murder and envy,

Yet in their sin early man Sunk to low level. The record says that "every Inclination of the thoughts of man was only evil, all the time" and God's heart was filled with pain at the degradation.

We all have to face difficult situation in our journey through this life, and sometimes it is good to know that we are not alone in our problems, Difficulty and Challenges are pretty much Universal in this world out it is the shared experience and wisdom of others that can make a real difference. We speak of such difficulties and often also speak of flexible and strong "solutions" as being suggested by T.S. Eliot.

First of all modern man needs to be reintroduce to The Old Testament and The Bible as a whole. There is every reason to accept the scriptures as divinely inspired account of history and redemption, Genesis says **"God created man in his own Image, in the image of God, he created male and female"**. -From the rib of Adam. This pattern is repeated in every generation as men and women are meant for each other. But just as sin entered in Adams and ever elation, sin also break down many marriages. **It is only walking** with God that allows us to overcome the difficulties that sin creates in marriage. **It is only the self -denial.** That Jesus taught will solve the problems of two spouses both wanting thing their own 'rights' and we come to understand that Satan is speaking, though the serpent to tempt Adam and Eve. In the same way Satan works the same way today.

T.S. Eliot takes us to observe ugly scene of the river bank where lying **"white bodies naked on the low damp ground"** (The Wasteland III 193) which suggest. The free sex of the modern man; is in sharp contrast, to the teachings of Christ his disciples, **"You're God's temple and God's spirit, dwells in you**: (I Cor 3:16)

The Poet says that our life is seen as a bondage to the temporal things. Two of redemptions are shown by the poet. The first is the **"Illuminative way ''** and the second is the **"purgative way''** each of these imparts tranquility and union with the ultimate reality. Our world is described as a **"Place of disaffection."**

".....a place of disaffection
Time before and time after
In a dim light neither daylight"

There are the two ways of reaching to God, which are described in Christian religious tradition. T.S. Eliot says that Christ also gives mankind all encompassing Guidelines for a truly spiritual life in accordance with the divine law. The Ten Commandments and the Sermon on the Mount. Matthew 5:3-12 discusses the Beatitudes. These describe the character of the people of the Kingdom of God, expressed as Blessing. The one who puts these teaching into practice in his daily life will soon felt that his life is changing that is becoming peaceful and positive; will soon felt that his life is changing that is becoming peaceful and positive, ; will be prerequisite to Salvation.

The Sermon starts with "Beatitudes"

"Happy are those who are spiritually poor".

"Happy are those who Mourn".

"Happy are the meek"

"Happy are those who's greatest desire is do what God requires".

* **Asst. Professor (English) S.A.B.V. Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

"Happy are those who are merciful to others".

"Happy are the pure in the Heart"

"Happy are those who work for peace among men".

"Happy are you, when men Insult you and persecute you and tell all kinds of evils.

"Lies against you because you are follower".

(Matthew -5, 3-14)

No matter whether he/she ugly or not, crippled or, of low\ high birth, all people deserve compassion and forgiveness and all can hope for final **redemption.**

T.S. Eliot also praises "The Gita" is one of the most philosophical poems of the world. If a man is in states of indecisions and spiritual bewilderment as to what he should do, how he should act and path...? Shri Krishna finds Arjuna in state of spiritual indecision. The Kauravas, when he sees his relative standing in the opposite camp, he is not in a mood to fight with them, Krishna says **- Ashochyananvashochastwam, pragyvedenscha bhasha.**

Exp.- (why grieve for those whom no grief is due and yet profess wisdom, The wise grieve neither for the dead nor living).

The following lines of T.S. Eliot ;

On whatever sphere of being.

the mind of man may be intent.

At the death of time. .....

One can notice, its parallel in The Gita form where Elot has directly borrowed:-

Antakala cha mamav asmaranmuktwa kalavaram jah prayati as madbhavam yati nostyatra sonsheryh.

It means how can we be released from the moving wheel of karma in this Bhavsagar? If we fixed our mind on God and his grace at the lst hour of our life i.e. at the time of death we may attain fruition.

The reference to the Gita, always came very naturally to Eliot.....An interesting Parallel can be drawn between the **Four Quartets and four important yogas of Gita..... Dhyanayoga, Gyanyoga, Karmayoga and Bhaktitiyoga . We might relate. The four yogas to the four elements that air (Burnt Norton) Corresponds to Dhayana (Meditation). The earth (East Coker) to Karma Water (The Dry Salvages) to Gyana and Fire (The little Gidding) to Bhakti.** 7

The Gita Says that we passes through the endless cycle of births and death and rebirths in the process of attaining illumination, transfiguration, of human life and spiritual liberation. Arjuna asks Lord krishna, what happens to their Journey toward the realization of God.

Tatra tam Budhisanyogam lauta paurvidhikam.

Yatta toto bhuyah sansiddho karunandan.

let us notice parallels in Eliot's poetry

.....We shall not ease from exploration,

And the end of all our exploring,

will be to arrive where we started.

(Then after many lives, the students of spirituality who earnestly strives and shows sins are absolved, attains perfection and reached The Supreme)

Eliot's Conscious to Patanjali can be seen in these lines... The Practice of Yoga tends to consist in renunciation and in abstention from movement, physical and mental.

Eliot was greatly fascinated from Buddhist Text;

- The great truth of Buddhism - that life is Sorrowful and transient, that the chief cause of suffering is desire; escape is through the destruction of desire and that this destruction the is to be achieved by the eight fold paths of witch the steps are (I) right belief (ii) right resolve (iii) right speech (iv) right behavior (v) right occupation (vi) right efforts (vii) right contemplation and (viii) right concentration.

The word **"Da" "Da" "Da"** in The Wasteland (L.400) is the voice of Thunder in the Brihadaranyaka Upnishadas V). Which says "Self **- control, giving and compassion".** The word **"Shantih, Shantih, Shantih,** (I.433, The Wasteland) is the formal ending of the Philippians 4.7 "And The Peace of God, which passeth all understanding shall keep your hearts and minds through Christ Jesus."

References :-

1. **The Holy Bible** (New Testament) P. 290
2. **The Complete Poems and Plays,** 1909-1950, P.31
3. **The Holy Bible** (New Testament)
4. Tilak L.B. and Swamy, Y.P**. The Gita** (In Sanskrit and English); P.21/111
5. Eliot, T.S., **The Dry Salvages;** iii; P. 188
6. Tilak L.B. and Swa my, P. **The Gita;** 8/5
7. Ghosh, D **Indian Thoughts in T.S. Eliot;** PP.49-56
8. Tilak L.B. and Swamy P, **The Gita;** 6/43
9. Eliot, T.S. **(Little Gidding);** V; PP, 197
10. K. Smidt, **Poetry and Belief in The work of T.S. Eliot;** PP, 186-188.
11. Yahamman, Jd., **A Treasury of Asian Literature;** PP 425-426.
12. Radhakrishna, S. **The Principal Upanishads** (Harper Collins) publisher, Delhi 2006) PP, 289-290.
13. Philippians (The New Testament) **The Holy Bible;** P, 341.

****

Realization and Motifs in the Novels of Coelho

Dr. Renu Sinha *

Abstract - In Paulo Coelho's novels self realization and motifs have played an important role not only in the understanding of his novels but also what makes a human life despite all adversities worth living. The protagonist, in the midst of difficulties and dangers, suddenly get some realization which changes their lives for the better. This realization may be some sort of secret, some forgotten advice or some occult. This paper aims at studying this focal point as to hoe the protagonist in all his novels touch the chores of reality.

Key words - realization, disappointed condition, love and faith, magic, ritual and para-psychological.

Introduction - In Coelho's novels the protagonist, in the midst of difficulties and dangers, suddenly get some realization which changes their lives for the better. This realization may be some sort of secret, some forgotten advice or some occult message. In *The Pilgrimage*, Paulo tries all sorts of attempts, but fails to apply the gained knowledge to find the Sword. In such a disappointed condition, Petrus leaves him alone. Dejected Paulo on his journey in search of the Sword meets a little girls and then by a man. They both request him to visit the church nearby their village. Paulo goes there but does not find the Sword. He thought that he wasted his time and even felt that he was taken to the church by them only for money. He offers them money but they do not accept it saying that they do not offer their services for money. Then he realizes that there are many who help you without expecting any remuneration but only for the value of love and faith. This incident shows Paulo that the small and common things around him are more glorious, than so called non-existing magical powers he is yarning for. Significantly, he touches the chores of reality. He regrets over the fact that he is after the non-existing powers ignoring the real power of love and faith in the common men around him. He realizes that the real power lies in the surrounding life rather than just imagination. Life provides everyone everything-one has eyes to see; ears to hear and heart that can feel. He continues his journey with new outlook. He also realizes what Petrus was trying to tell him when he asked him many times same question-what he wanted to do with the Sword. He realises that every person must know the purpose behind his achievement.

In *The Alchemist*, like Paulo, Santiago too takes exhaustive journey to fulfill his dream. Here, Santiago travels from Spain to Egypt in search of the treasure he saw in his recurring dream. In the journey, Santiago comes across extremely dangerous experiences. When he reaches the Pyramids, he comes across the tribal soldiers. They forcibly take away Santeago's gold and also beat him badly. When Santiago tells them he was searching for the treasure he saw in his recurring dream, one of them laughs and tells Santiago."...Two years ago, right here on this spot, I had a recurrent dream, too. I dreamed that I should travel to the fields of Spain and look for a ruined church where shepherds and their sheep slept. In my dream there was a sycamore growing out of the ruins of the sacristy, and I was told that, if I dug at the roots of the sycamore, I would find a hidden treasure."1Knowing about the war refugee's dream, realization dawned upon Santiago that the real treasure is his experiences which he got while travelling to Egypt.

Brida is a simple story of the woman who is fascinated by secret sects and wanted to become a witch. To fulfill her desire, she meets mysterious people and learns that like those people she too is a witch. But to involve and practice the Tradition she has to initiate in it. Born as a Catholic, she feels that she is violating religion by accepting the Mother Goddess. She suffers due to her guilt. She visits the church before her initiation thinking that after her initiation she will not be able to enter the church. When she steps inside the church, she sees that she is not different from others; in fact, she too is child of Mary. She realizes that witches are not different from other people. Thus, Brida feels not more guilt, initiates into the tradition of the Moon, and becomes a witch. Through Brida's realization, it can be said that Paulo has tried to instil an idea that the people who follow the secret sects and occults are not different and forbidden by God.

In *The Valkyries*, Paulo and Chris travel in exotic search of Paulo's Guardian angel. Their task gives them opportunity spend time with each other. Because of this for the first time, Chris involves in his world of magic. Unknowingly she begins to take interest in his world. In fact, she loved Paulo and wanted to save their marriage. She struggles to save their marriage with all her strength. Paulo on other side, after meeting Valkyries realizes his mistakes and begins to respect his wife and understand her true love. He also realizes that, he too wanted to save their marriage. Thus, Paulo's love for Chris is restored and their marriage is saved. The couple regains respect and love for each other and

* **Asst. Professor (English) S.A.B.V. Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

understands how complementary they are to each other.

In *By the River Pedra I Sat Down and Wept* Pilar's boyfriend realizes his mistake when found Pilar is missing and fails to find her. He realizes that there is no need to leaving one path for the other. He can serve humanity along with his love. He asks Mother Goddess to give his a second chance to serve him as an instrument of healing. In this novel, Paulo comes up with other new age belief that that there are many ways to serve God.

In *The Fifth Mountain*, despondent Elijah loses all his hope and he even doubts God's intentions. He blames God and the destruction of Zarephath and death of the widow woman. While wandering aimlessly in forest in despair, Elijah meets shepherd Santiago. Santiago tells Elijah that he must forget in despair the frustration and failure of his own. It is not difficult to rebuild a life. It is also not impossible to raise Akbar from its ruins. For it he has to go on with the same strength that he had before, and use that in his favor. He tells Elijah to face the unavoidable and begin a new life, taking an opportunity given meaning to tragedy and direction to his shattered life. Meeting Santiago, Elijah thinks over the situation and he realizes that he has to rebuild the city from its ruins for next generation, to teach them importance of hard work in life. Thus, Elijah returns to ruined city Akbar and rebuilds the city with the help of survivors. As a result, God calls him back to Israel and guides him how to remove Baal and restore Him there.

In the next novel *Veronika Decides to Die* the protagonist Veronika, after meeting Eduard realizes that she never lived the life of a normal person as she lack dreams and desires. She also realizes that life of a normal person as she lack dreams and desires. She also realizes that life is worth living and enjoying. Meeting Eduard, she gains courage to live her life to the fullest. She realizes that she shouldn't fear in life when she has nothing to lose. Thus, she decides that before her life ends, she must experience all those things which she always postponed for some future date thinking that life would last forever. She also realizes the true reason behind why gradually she lost her interest in those things and began to believe that life wasn't worth living. As a result, she decides to leave the Villete to do everything which she denied her whole life. She tells Dr. Igor: "I might go into a church and look at those images that never meant anything to me and see if they say something to me now. If an interesting man invites me out to a club, I'll accept, and I'll dance all night until I drop. Then I'll go to bed with him, but not the way I used to go with other men, trying to stay in control, pretending things I didn't feel. I want to give myself to one man, to the city, to life and, finally, to death."2

The novel *The Devil and Miss Prym* is the story of human greed. To get eleven gold bars, the people of the Viscos decide to accept stranger's proposal of committing one of the cardinal sins by killing old helpless Berta. Prym wanted to save Berta's life but fails to convince the entire village, whose inhabitants believed that sin they were going to commit was for a good reason. So Prym cleverly creates fear in their mind. She tells them it is not that easy to get the gold bars just by killing Berta to fulfill stranger's wish. They may come into difficulties when they will take those gold bars in the city bank to sell or for further transition. May be, there they will come to know that those bars are smuggled or robbed from somewhere. It is dangerous to trust the stranger and commit crime because one day news of Berta's murder will spread and police will find out his trust. Miss Prym finally creates doubt and fear in Viscose peoples' mind, and saves Berta's life and also wins eleven gold bars.

In *The Zahir* the protagonist realizes his mistakes when he meets the peple who part of his wife-Esther's world. The Narrator realizes that he never knew Esther though they lived together ten years. He began to find his own faults-that how he had become so self-centred and egoistic that he never understood that like him, Esther too wanted him by her side but she never found him. In his world he became so busy that she became lonely. He never thought that she too would have her own world which she wanted to share with him, as he was sharing his world with her. He remembers her every attempt of complaints and communication which he never took seriously and kept that communication postponed with promises which he never kept. Esther waited for a long time for the day he will have time for her but it never came. Finally, she stopped asking and complaining. Thus, one day she left him without informing him. The Narrator realizes his mistakes, thus goes to meet her to Kazakhstan.

In *The Winner Stands Alone*, Igor who murders many to get back his ex-wife Ewa in his life thinks that he has realized that Ewa is a corrupt woman who left him for the world of glamour. Due to his wrong realization, he ends up concluding that Ewa is unworthy of his sacrifices and also to live in his world. Igor completes his mission by killing Ewa-the only love of his life and her new husband Hamid-for inducing Ewa to leave him. In Paulo Coelho's Novels' protagonists' sudden realizations lead them to achieve what they desire or to complete their task.Paulo Coelho's novels explore various subjects like magic, ritual and para-psychological experiences. He also stresses on superstitions and other blind beliefs. For him, all forbidden topics are only materials for making his novels fresh and interesting. He intentionally and skillfully propagates irrational or unscientific concepts or convictions blending them with common emotions to suit to his purpose and idea of his novels.

Through his novels, Coelho also brings out the true face of the exciting worlds of fashion and cinema, exposes the darkest side of glitz, glamour, celebrity movies and fashion world.

References :-

1 Paulo Coelho, THE ALCHEMIST 18th ed. Trans. Alan R. Clarke (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2003)171 & 172.

2 Paulo Coelho, VERONIKA DECIDES TO DIE 15th ed. Trans. Margaret Jull Costa (New Delhi: Harper Collins Publishers, 2006)127.

Baumgartner's Bombay by Anita Desai : Making waves from the Physical to the Mind

Dr. Jyoti Taneja *

Abstract - The treatment of the migrant condition in literature is the most absorbing topic exciting intellectual debate. Anita Desai is sensitive in portraying emigrant situations and other issues related to diaspora in her fiction. She experienced a mixed cultural upbringing with a Bengali father and a German mother. This mixed parentage gives Anita Desai the advantage of having double perspective when writing about India or Indians also about migrants in India or Indian migrants to the West, which altered into cross-culturalencounter with her migration to England and then to the United States. Anita Desai's *Baumgartner's Bombay* written in 1988 is traces the journey of an uprooted Jew migrant, Hugo Baumgartner, who is persecuted in his own country and comes to the British India, his land of refuge from the Nazis. He comes in search of a better future but whose escape from Germany during the Second World War has cost him his identity and nationality. Long before Hugo has a literal displacement after his father's death.He has experienced a displacement whereby he has not literally moved but the world around him has moved or rather changed. So when Hugo has a physical displacement and migrates as a teenager to India, he already harbors the sense of loneliness. Baumgartner cannot go back to Germany because the Germany of his childhood no longer exists and hence his perennial sense of loneliness continues. The only time that Baumgartner tries to reconcile the Germany of his childhood with the present-day Germany by taking a German youth, Kurt, to his apartment, who robs and murders him. Anita Desai deals with genteel emotional states making waves from the physical to the mind and thus brings out the ultimate expressions in the behavior of her characters.

Keywords - migration,displacement, identity,marginalization,homelessness.

Introduction - Anita Desai is sensitive in portraying emigrant situations and other issues related to diaspora in her fiction. She experienced a mixed cultural upbringing with a Bengali father and a German mother. In a world where identity, origin and truth are seen in postmodernist terminology as structureless assemblages, Anita Desai appears as a very good example. Her mother, had her origin to France, and her father, Dhiren Mazumdar's native place was Dhaka but he had settled in New Delhi. This mixed parentage of complex origin gives Anita Desai the advantage of having double perspective when writing about India and Indians and as well as about migrants in India and Indian migrants to the West. She is an outsider from her mother's side and a native, if seen from her father's side.Her initial experience of surviving in twin cultures, altered into a cross-cultural encounter with her migration to England and then to the United States. Travel and diaspora are relative.The post-colonial phase of the Indian Diaspora differs from migration. The migrants are from middle-class families, highly skilled and are attracted by umpteen favorable opportunities abroad. Diaspora is a travel from physical to the mind and so a novel with diaspora theme is a reflection of inner journey. One knows through diaspora literature about a nation and undergoing changes. Migration heads way to the identity, past and culture on the move, whereas literature on diaspora is a projection of the experiences of the emigrants and their diverse issues emotionally. Here, diaspora is just not confined to journey but with a feature that is least possibility of return, or a diasporic person never returns as the same. Thus, the psychological implications of diaspora are significant. Diaspora is a psychological journey, a dilemma , journeying from place to place one becomes a stranger in other land and this alienation impacts identity, psychological peace and existential status.

Anita Desai's *Baumgartner's Bombay* written in 1988 is traces the journey of an uprooted Jew migrant, Hugo Baumgartner, who is persecuted in his own country and comes to the British India, his land of refuge from the Nazis. He comes in search of a better future but whose escape from Germany during the Second World War has cost him his identity and nationality. He is too fair skinned to be accepted by the Indian society. He is considered as a *firangi*and a *mlecchha* .

The story opens with , Baumgartner suffering an internal exile because he has been in India for fifty years, yet remains a *firangi* to his friends. His only connections, which he claims to be his own are his homeless pet cats and Lotte, a run-away German cabaret singer. He is not accepted anywhere, neither in his own country of birth, Nazi Germany, nor in his adopted land India. In Germany he is a victim of religious persecution, it is just an accident that he is born in a Jewish family. Baumgartner is the son of a Jewish merchant and was born and raised in Berlin. His father had a prosperous business of furniture and they were well –off, but as Hitler's party came to power and began its death dance on Jews, his father's property was confiscatedby his dad's business associate who, posing as if helping the family in grief, somehow manages to lure and gulp the whole fortune to

* Asst. Professor (English) S.A.B.V., Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

himself. He tells Hugo to go to India, as Germany is no more safe for Jews, and that he would put a word about him to his business partner in India He arrives in Bombay and then goes to Calcutta to do busines in timber. Hugo's mother didn't come to India for it is "the land of snakes and beggars." Hugo had decided of returning once things were normal in Germany, as the 'Gentleman from Hamburg', his business associate assures that he would take care of Hugo's mother.

For sometime things go well and then the Second World War breaks out and Baumgartner along with many germans is imprisoned mistaken to be a Nazi, wherein his repeated attempts to prove that he was but a Jew born and brought up in Berlin, came to naught. He accepts the fate and starts to enjoy the routine life in the camp for 6 years. In all this time, he had been writing letters to his mother, and received no reply. He was afraid that perchance his mother would have been caught by the Nazis.Baumgartner recalls the years he has spent in India and the desolation that he feels now is the result of his inability to assimilate with the Indian culture. Once he suffered at the hands of Nazis then the British and in the end in India. He fails to understand why the Indian society doesn't accept him. He ponders and broods:

"He had lived in this land for fifty years – or if not fifty then so nearly as to make no difference – and it no longer seemed fantastic and exotic; it was more utterly familiar now than any other landscape on earth. Yet, the eyes of the people who passed by glanced at him who was still strange and unfamiliar to them, and all said: Firanghi, foreigner. For the Indian sun had not been good to his skin, it had not tanned and roasted him to color of a native." (BB,p.19)

Baumgartner is detained in a camp in British India because he carries a German passport and is another enemy. They can hardly appreciate that his race is persecuted by the Germans. In the camp he is among other Jews, yet is alone as he cannot 'alleviate the burden, the tedium, the emptiness of the waiting days (125). Here he meets Julius who has changed his name to Julian and has shed his Jewish identity. Julian has adapted the host county and has become a part of the host society. Baumgartner is distinct and does not belong to that society–and so remains as an outcast , he is certainly the figure who is not at home. When he tries to explain that he is a refugee and just happens to have the German Passport, he is snubbed:

"Got a german passport,says you were born there-then what am I supposed to take you for, a bloomin Indian?" The papers were flung at him, and he retreated, baffled, wondering what magic word he might find that would relese him from what was a monstrous mistake, or madness." (BB,p.106).

Baumgartner has accepted the Indian society, yet does not recognize himself as an Indian, he always remains the victim of society, for he has been the survivor of a marginalized sector in his homeland, Germany and the longing for belongingness is a part of him. He suffers internal exile, the Jews stay in their own country and feel alienated, making waves from the physical to the mind. The novel brings out diverse interpretations on the Jewish diaspora and its problems like migrations, suppression, resistance, representation, difference, race, culture, gender, nationality and place. "Diaspora signified a collective trauma, banishment, where one dreamed of home, but lived in exile" (Cohen ix).

One day Baumgartner takes a drugged foreigner to his home because the latter happened to be penniless to pay the bill for what he had eaten and refused to move out of Café de Paris, the restaurant to which Hugo was a regular customer. Farrokh pleaded Hugo to go and speak to the homeless *firangi*the young boy, Kurt, a German, who recognizes the Jew, Baumgartner.The boy appears as a cat that signifies homelessness and Baumgartner gives shelter to the young boy in his own room, despite his natural hatred for Germans.Thus in the spur of the moment, offers to take the homeless to his home.

Baumgartner's tragedy is his homelessness and rootlessness. He is thrown out of his homeland, in India he yearns for acceptance but because of his color he is not to be taken as a native. That is his dillema. His color betrays his identity.

"Daily he grew redder. Would he one day he be darker? It seemed desperately important to belong to make a placefor himself" (BB,p.93)

His color is a handicap in his relationship, eg his frindship with Chamanlal. It is pitiful to see him feel rejected when he is unable to attend the last rites of his friend Chaman Lal. Once talking with Lotte he says Germany has nothing for people like them and he has no other way out to accept India as his country. Hugo suffers both a physical and psychological displacement. The separation from his mother and his sense of homelessness deteriorates matters as he is unable to situate himself within the society. His mother's letters bring just information about her well being and give no comfort to him. The memory of his mother in Germany is the only link with his homeland. In IndiaLotte is his companion. The relationship is important to him as it is the only outlet of suppressed passions that result in purposeful involvement. Baumgartner tries to have a meaningful relation with Kurt, but it turns otherwise and Kurt robs and murders Baumgartner, who is helpless. Both Kurt and Baumgartner are lonely. While Kurt reacts violently to the situations in life, Baumgartner reconciles. It is perhaps the ultimate judgment that no reconciliation is possible and all attempts at overcoming diasporic loneliness are futile.

With time and distance, memory fades but can never be totally erased. Even after fifty years of exile Baumgartner is caught up by his past, by a culture he had run away from, when he is faced with the representative of the German Aryans he goes back to recover a long- forgotten part of his past and culture. Anita Desai deals with genteel emotional states making waves from the physical to the mind and thus brings out the ultimate expressions in the behavior of her characters.

References :-

1. Cohen. R. *Global Diasporas: An Introduction*. London: UCL, 1997. Print.
2. Desai, Anita. *Baumgartner's Bombay.* Houghton Mifflin Harcourt,1988. Google Book Search. Web.15 October 2014.

Bhabani Bhattacharya's novel Shadow from Ladakh (A vision of social regeneration)

Dr. Pankaja Acharya *

Abstract - Bhabani Bhattacharya's fifth novel Shadow from Ladakh was published in the year 1966. This novel brought the Sahitya Akadami Award for 1967 to the novelist. Shadow from Ladakh is a novel of great range and scope with a variety of characters by telling a moving story makes us feel the heart beats of a nation and presents the panorama of life on a vast canvas. Here, novelist is aiming at the vision of social regeneration in India by synthesizing Gandhism and Nehruism and a full analysis of the novel will show a synthesis of the spinning wheel and the spindle. The novel is characteristics of Bhattacharya's thematic writing and works out a preconceived idea but in an artistic manner.

Introduction - Bhabani Bhattacharya, the earliest of the social realists of post-Independence Indian English fiction, is a well-known Indo-Anglican novelist. The coveted Sahitya Akademi award to him in 1967 for his fifth novel, Shadow from Ladakh, is a fitting recognition of his standing and achievement in Indian English fiction.Bhattacharya is a novelist strongly influenced by the ideas of Tagore and Gandhi, while both his fictional theory and practice show his affinity with Mulk Raj Anand. He is a believer in the social character and significance of art and literature and believes that "Art must teach, but unobtrusively, by its vivid interpretation of life. Art must preach, but only by virtue of its being a vehicle of truth. Bhattacharya once remarked that "a novel must have a social purpose. It must place before the reader something from the society's point of view. His novel presents a true picture of India and its teeming millions. His outlook is highly constructive and purposeful. High idealism permeates his works and they record the hopes and aspirations of people heroically involved in the struggle between the old and the new and inspired by the vision of a just social order. He portrays full-blooded men and women, creatures of their society, victims of its unjust persecutions and yet possessing inevitable V strength to carry the banner of the ideals of a new India.

The title Shadow from Ladakh is based on the popular proverb "coming events cast their shadows before them." The novel is not against the menacing background of the Chinese aggression in 1962. The shadow of the military encounter with the unexpected enemy at Ladakh is cast everywhere. The theme were registers the conflict of ideologies during this critical juncture of Indian history. The love between Bhashkar Roy and Sumita initially opposed by lifestyle and ideology, is an allegory of how such conflicts of ideologies can be solved. It is evident that Bhattacharya is aiming at a vision of social regeneration in India by synthesizing Gandhism and Nehruism. A full analysis of the novel will show a synthesis of the Spinning wheel and the spindle. Another synthesis is of Gandhiji's asceticism and Tagore's aestheticism. While the whole action of the novel is based on the shadow cast by the Chinese peril, many of the characters are shadows too chasing other shadows. Satyajit and Gandhigram are shadows of Gandhi and Sevagram. Similarly, Bhashkar and steel town are shadows of Nehru and his dream edifices of industry.

The novel is an attempt to find out the meeting point of the Gandhian social ethics and the tremendous forces of science and technology. Bhattacharya made the Gandhian principle of simple living and high thinking" a mode of life, an ideal to live by. The novel deals with the conflict of values and ultimate triumph of the Gandhian principle. Two ways of life, industrial and rural, are contrasted in this novel. The novelist backs Satyajit who is a miniature Gandhi. However, he is equally aware of the need of India's industrialization in View of the growing population as well as the external threat. Here the novelist is ambivalent.Taking extreme positions Bhashkar and Satyajit lead two opposing ways of life never to be harmonized. But Sumita, moulded in Satyajit's image and planning to marry Bhashkar, will be the meeting point of the two opposing ways. The conflict of ideologies is symbolized by the clash between Gandhigram and Steeltown. Satyajit is the leader of Gandhigram. He is a true Gandhian in an austere life and ascetic thought and a true Tagorean in his educational and aesthetic ideals. He patterns the village after the Gandhian values. He was married at Santiniketan to beautiful Suruchi, a woman of great vitality, and brought up on the refinements of Tagorean culture. The couple has a lovely and worthy daughter, Sumita who is carefully trained by her father.But soon Satyajit faces a conflict in his domestic life asSuruchi is against his austerities and as Sumita loves for theTagorean aestheticism. Satyajit forces sexual abstinence onSuruchi but she and Sumita believe in his ideal and dedicatethemselves to a life of stem austerities. Thus Satyajit becomesa disciplined Gandhian applying the principles of Gandhianeconomics and ethics in the regulation of the life of Gandhigramand the conduct of his own life. While India, symbolized by Gandhigram, is on the path ofprogress, a testing time comes with the Chinese aggression. As he is a firm believerin non-violence he plans for a Peace March to Ladakh in thehope that he would touch the hearts 'of the Chinese and makethem give up their aggressive intentions.

* **Asst. Professor (English)Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts & Commerce College,Indore (M.P.) INDIA**

He believes in the idea of facing hatred with love.

At all the three levels-economic, personal and international,Satyajitism faces antagonistic forces. The idyllic life ofGandhigram is disturbed and Gandhian economics is threatenedby the new cry of industrialization specially when Steel townwith its heavy machines and blast furnaces springs up in thevicinity of Gandhigram. With the shadow from Ladakh hoveringover the whole country steel comes to acquire a greatersignificance. It stands as the symbol of India's freedom since itis the core of all armament. The American trained young ChiefEngineer Bhashkar Roy is the moving force behind Steel town.He represents a three dimensional opposition to Satyajit andSatyajitism. His American education makes him believe in steelstanding for mass production to cope with the growingpopulation of India, providing a shield to protect the infantdemocracy against all enemies.Bhashkar wants to expand his steel town factory which will result in annexing Gandhigram. The twocompletely dedicated men, Satyajit and Bhashkar, are broughtto polar opposition. The board of Directors of the Unit ofLohapur Steel Company finally approves his scheme ofexpansion. Even Nehru's Government gives him permission forthis expansion. This Chinese invasion justifies Bhashkar'sstandpoint and gives added urgency in executing his plan. Satyajit is rocked by twoburning problems-the peril of the country from China's attackand the peril of Gandhigram being swallowed up by Steeltown.Of the two burning problems-China's attack on India, thenational cause, gets priority with Satyajit and he puts forward aproposal to the Government for a Peace Mission to Ladakh. Butthe Government rejects his proposal. At last the proposal isaccepted with a slight modification. But the Chinese orderceasefire and withdraw their forces unilaterally. Thus"nation's problem for the time being but leaves the can I nation's policy unresolved.

Bhashkar is intelligent enough to understand the value ofnon-violence and he keeps reverence for Satyajit. Hehas orderedthe construction of Meadow House and has set up club therehalf way between Steel town and Gandhigram to win Gandhigramover to his side by encouraging the free mixing of the sexes ofboth the places in the club. He witnesses his first success when Jhanak, a girl of Gandhigram, revolts against its philosophy of anti-life. Then many of the people of Gandhlgram including Sumita begin to take interest in the activities of Meadow House. No longer is there an impenetrable barrier between the two worlds. Bhashkar's falling in love with Sumita brings a synthesis orcompromise of the two different ideologies. Bhashkar's attitudeto Satyajit and his ideal undergoes a change. He ultimatelydecides not to annex Gandhigrarn in the way he proposed.Bhashkar himself leads a procession of workmen from steeltownto Gandhigram to announce the victory of Satyajit. Thus thecrisis of the novel is resolved. Satyajit gains Gandhigram at thecost of Sumita who is at last free from the curse of anti-life and asceticism.

Thus, the two ideologies are to co-exist and Bhashkar'sage to Sumita is the marriage of steeltown to Gandhigram.While Bhashkar has changed his ideal and attitude to the village,Satyajit also has changed a lot. Then comes the end of the issuewhich is described by G.P. Sharma as:- "A happy combination of Gandhi, Nehru and Tagore together." Bhattacharya is concerned with the future of India, her social, religious, economic regeneration. So thestory shows that in the contemporary context, neither Gandhismnor Nehruism can be alone the national ideal; only a harmoniouscombination of the two would be an answer to the problems facing the nation today.

Bhattacharya highlights the contrast between urban and rural life. Through Bhashkar Roy and Satyajit we see that how modern sophisticated civilization encroaches upon the simpleand unassuming lives of the poor villagers.The novelist makes Gandhigram a microcosm of India. Inthe novelthe Gandhian economics and ethics aretrue everywhere and at any time. It also hopes that even Chinacan find salvation through the younger generation. To justify hisview he portrays Satyajit's character. Satyajit is a Gandhiancharacter acting as the founder of Gandhigram where life isfounded on discipline and self-restraint, similar to that ofGandhi's Sevagram. He controls the life of the village whereGandhian economics and ethics are worked out. With the supplyof needs by the cottage-based industry besides food the villageis self-sufficient. Land is owned by the Co-operative and food is distributed to each family according to its needs. Every home has a spinning wheel. The basic scheme of craftcentered teaching advocated by Gandhi is followed by the villagein the sphere of education. The village sets new set of values-equality, fraternity and non-violence in thought and action.Gandhi's doctrine of celibacy or continence is advocated in thevillage. Satyajit himself adopts Brahmacharya after the birth ofSumita.Non-violence, the major teaching of Gandhi, is propoundedin the novel by Satyajit through his plan to form a Shanti Senato Ladakh. He is a believerin the idea of dropping hatred forvictory in the mortal struggle.

"We can say that Shadow of Ladakh is a novel of great range and scope with a variety of characters. By telling a moving story the novel makes us feel the heart beats of a nation and presents the panorama of life on a vast canvas.

Thus it depicts many socialrealities of the post-Independence India. The need foroverlooking caste-system for the betterment of the society isemphasized in this novel. Satyajit, who is a devotee of Tagorein Santiniketan, rejects his surname 'Sen' to become casteless and rootless like Yogis. Gandhigram is also depictedas aiming to eradicate casteism and untouchability. All men inthis village are equal in status since they are all casteless.

References :-

1. G.P. Sarma: Nationalism in Indo-Anglian Fiction (New Delhi: Sterling Publishers, 1978), 227.
2. K.R. Chandrasekharan: Bhabani Bhattacharya (New Delhi: Arnold Heinemann, 19740, 11.
3. Shyam M. Asnani, Critical Response to Indian Anglish Fiction(Delhi: Mittal Publications, 1985), 7.
4. R.K. Badal, Indo-Anglian Literature: An Outline (Bareilly: Prakash Book Depot, 1975), 53.
5. Contemporary Novelists in the English Language (New York: St. Martin's Press. 1972). 38, quoted in K.R. Chandrasekharan's Bhabani Bhattacharya (New Delhi: Arnold-Heinemann, 1974), 2.

The Impact Of Collaborative Learning On Metacognition

Prof. Poonia Anu * Mathur Rini **

Abstract - There have always been social dimensions to the learning processes, but only in recent decades collaborative learning is regarded as an innovative alternative to the teacher centered approaches. Collaborative learning forests interaction at all levels (Webb 1980). It usually aims at sharing work, using different knowledge and experience to improve the quality of varied viewpoints, and building or consolidating a community (Hartley, 1999). With increasing frequency, now a days the students are working collaboratively, to grasp the subject matter and deeper their understanding of it. Thus, collaborative learning helps developing social skills of students as well as producing academically stronger students.

Introduction - Effective academic learning requires high and sustained intellectual efficiency which requires high cognition. Education should aim to develop metacognition which refers to individuals knowledge, control and awareness of his/her learning process.

Many researchers recommended the use of collaborative or co-operative learning structures for encouraging development of metacognitive skills (Cross and Paris, 1988 Henneray ; 1999; Kramaski&Mevarech, 2003, Kuhu& Dean, 2004, Mating 2006, Mc Lead, 1997, Paris &Winogard, 1990, Schraw&Moshman, 1995, Schraw et al, 2006)

The present study is an attempt to verify this theoretical assumption empirically so as to establish relationship between collaborative learning and metacognition and to test whether there is any difference in the metacognition of boys and girls of secondary classes when taught collaboratively.

Statement of the aim - The impact of collaborative learning on metacognition of secondary school students.

Objectives -

- To find out the level of metacognition of secondary students.
- To study the effectiveness of collaborative learning strategy on metacognition of students.
- To find out whether there is any significant difference between metacognition of maleand female students when taught collaboratively.
- To find out the relationship between collaborative learning and metacognition.

Null Hypotheses -

- There is no effect of collaborative learning on metacognition of secondary students (boys and girls)
- There is no significant difference between the metacognition of boys and girls when taught collaboratively.
- There is no relationship between collaborative learning and metacognition.

Methodology - Experimental method is the most sophisticated, exacting and powerful method for discovering and developing and organizing the body of knowledge so experimental was followed for this investigation.

To study the effectiveness of Collaboration Learning on Metacognition in teaching English at secondary school stage a comparison was made between the scores of two groups. One group, the control group, was taught by conventional method and the second group was taught by Collaborative Learning strategy for one month. Collaborative Learning strategy included exercises such a group presentations. Collaborative paper writing, group discussions, Collaborative research assignments, peer review workshops, debates.

Sample - The subjects for this investigation were taken from the students in class IX of some school in Udaipur district only. Special attention was given to such factors as gender, academic performance and locality.

A total of 240 students were taken for this investigation, out of which 120 students (60 boys + 60 girls) formed the control group while 120 students (60 boys + 60 girls) formed the experimental group.

Tools used -The investigation used the following tools for the present study.

- Self made met cognitive inventory based on the seven areas of metacognition viz. Planning, Assumptions, Decision making, Checking, Management, Logical Thinking, and Constructive Thinking.
- Collaborative learning strategy/environment.

Statistical Technique

The investigator used the following statistical techniques: mean, standard deviation and 't' test .

Table I (See the next page)
Table II to IV (See the last page)

* **Ex. Principal, Vidhya Bhawan G.S. Teachers College, M.L.S.U., Udaipur (Raj.) INDIA**
** **Research Scholar, Department of Education, M.L.S.U., Udaipur (Raj.) INDIA**

Findings &Analysis - Table 1 shows that the means scores of boys of the controlled group, on all the areas of Metacognition, as well as total Metacognition are found to be slightly higher than their Pre-Test scores. It infers that there is increase in Metacognition when taught by conventional method. But the t-value shows that this increase is not significant.

Table 2 shows that the means scores of girls of the controlled group, on all the areas of Metacognition, as well as total Metacognition are found to be slightly higher than their Pre-Test scores. It infers that there is increase in Metacognition when taught by conventional method. But the t-value shows that this increase is not significant.

Table 3 shows that the means scores of boys of the experimental group, on all the areas of Metacognition, as well as total Metacognition are found to be much higher than their Pre-Test scores. It infers that there is increase in Metacognition when taught by conventional method. But the t-value shows that this increase is significant at 0.01 level, which shows that there is a significant impact of Collaborative Learning strategy on the Metacognition of boys.

Table 4 shows that the means scores of girls of the experimental group, on all the areas of Metacognition, as well as total Metacognition are found to be much higher than their Pre-Test scores. It infers that there is increase in Metacognition when taught by conventional method. But the t-value shows that this increase is significant at 0.01 level, which shows that there is a significant impact of Collaborative Learning strategy on the Metacognition of girls.

Furthermore, the means score of Pre-testing & Post-testing as well as the mean difference infer that girls posses more Metacognition in comparison to boys when taught Collaboratively.

Recommendations -

- Collaborative Learning Strategies can be used in schools & colleges at all levels to bring out the innate qualities and hidden strength of students which develops Metacognition in them.
- Girls school & colleges can use Collaborative Learning Strategies as the t-test results reveal that female students can develop their Metacognition to a greater extend when taught Collaboratively.
- Collaborative Learning Strategies are also helpful to develop Metacognition in slow learners as in such classrooms they can associate their concepts and attain conceptual clarity.
- Seminars & Workshops should be organized where students get chance to work Collaboratively to enrich their knowledge in various subjects thus developing their Metacognition.
- Group discussions, Group Presentations, etc should be introduced at all levels to encourage active learning of students and ultimately improving their Metacognition and making them to cope with the digitalized world.

References :-

1. Schneider, W. (2008): The development of metacognitive knowledge in children and adolescents: Major trends and implications for education. Mind, Brain and Education, 2(3), 114-121.
2. Ray, K, & Smith, M.C.(2010). The kindergarten child What teachers and hjhadministrators need to know to promote academic success in all children Early Childhood Education Journal, 38(1), 5-18.
3. Onrubia, J. & Engel, A. (2009) Strategies for collaborative writing and phases of knowledge construction in CSCL environments. Computer & Education, 53(4), 1256-1265.
4. Stahl, G. &Hesse, F (2009) Practice Perspective in CSCL. International Journal of Computer supported collaborative learning, 4 (2). Pp. 109-114.
5. Best, J.W. (1996) "Research in Education" (7th Ed), New Delhi: Prentice hall.
6. Edison, Carokine (Ph.D) Cunningham, (2000), The development of Metacognitive Responses in young gifted Children, University of Virgina.ujkjhkhjhjj

Table-I Boys

Control	Mean	N	S.D.	r	Mean Diff	t	Significance
Area 1	7.13	60	2.19	0.96	0.04	0.49	N.S.
	7.09	60	2.28				
Area 2	6.99	60	1.73	0.94	0.01	0.13	N.S.
	6.98	60	1.81				
Area3	7.38	60	2.08	0.91	0.01	0.08	N.S.
	7.39	60	2.21				
Area4	6.89	60	1.69	0.58	0.17	0.79	N.S.
	6.72	60	1.92				
Area5	7.83	60	1.94	0.89	0.15	1.22	N.S.
	7.98	60	2.07				
Area6	7.81	60	2.32	0.86	0.08	0.49	N.S.
	7.89	60	2.45				
Area7	7.85	60	2.23	0.72	0.14	0.54	N.S.
	7.99	60	2.89				
Total	51.88	60	8.47	0.92	0.16	0.34	N.S.
	52.04	60	9.26				

Table-II Girls

Control	Mean	N	S.D.	r	Mean Diff	t	Significance
Area1	9.03	60	2.12	0.78	0.09	0.45	N.S.
	9.12	60	2.44				
Area2	8.02	60	1.43	0.85	0.11	0.25	N.S.
	8.13	60	4.47				
Area3	9.44	60	2.28	0.68	0.05	0.21	N.S.
	9.39	60	2.22				
Area4	7.42	60	1.26	0.82	0.07	0.70	N.S.
	7.35	60	1.34				
Area5	9.97	60	1.95	0.85	0.05	0.37	N.S.
	9.92	60	1.98				
Area6	9.91	60	1.96	0.95	0.05	0.63	N.S.
	9.96	60	2.04				
Area7	9.98	60	1.91	0.61	0.07	0.33	N.S.
	9.91	60	1.84				
Total	63.77	60	7.94	0.81	0.01	0.02	N.S.
	63.78	60	8.35				

Table-III Boys

Experimental	Mean	N	S.D.	r	Mean Diff	t	Significance
Area1	7.07	60	2.19	0.98	2.66	43.17	0.01
	9.73	60	2.28				
Area2	6.97	60	1.73	0.97	1.66	27.07	0.01
	8.63	60	1.81				
Area3	7.33	60	2.08	0.98	3.34	54.14	0.01
	10.67	60	2.21				
Area4	6.7	60	1.69	0.60	0.67	3.20	0.01
	7.37	60	1.92				
Area5	7.78	60	1.94	0.97	4.34	70.76	0.01
	12.12	60	2.07				
Area6	7.78	60	2.32	0.98	4.67	74.96	0.01
	12.45	60	2.45				
Area7	7.88	60	2.23	0.76	3.60	14.90	0.01
	11.48	60	2.89				
Total	51.51	60	8.47	0.96	20.94	58.55	0.01
	72.45	60	9.26				

Table-IV Girls

Experimental	Mean	N	S.D.	r	Mean Diff	t	Significance
Area1	9.05	60	2.33	0.78	2.92	14.25	0.01
	11.97	60	2.45				
Area2	8.07	60	1.43	0.95	2.35	37.71	0.01
	10.42	60	1.49				
Area3	9.45	60	2.29	0.66	3.92	16.31	0.01
	13.37	60	2.22				
Area4	7.45	60	1.25	0.85	3.08	30.98	0.01
	10.53	60	1.44				
Area5	9.96	60	1.94	0.83	5.19	34.63	0.01
	15.15	60	1.99				
Area6	9.93	60	1.99	0.91	5.25	46.38	0.01
	15.18	60	2.14				
Area7	9.97	60	1.93	0.60	5.23	24.69	0.01
	15.2	60	1.74				
Total	63.88	60	7.92	0.81	27.94	41.94	0.01
	91.82	60	8.57				

A Comparative Study Of Environmental Awareness Ability Of Pre-Service Teachers Of Faridabad District

Mugdha Anand *

Abstract - The present world is witnessing a number of environmental crises, which are the result of unmindful and thoughtless exploitation of resources by human beings. So, there is an urgent need to create environmental awareness among all human beings so as to conserve, protect and nurture our environmental resources.

Hence, the present study was conducted to study the environmental awareness ability among pre-service teachers of private teacher training institutes in Faridabad district of Haryana with respect to their gender and subject streams. A sample of 50 pre-service teachers was taken through random purposive sampling. Survey method of research was used for the collection of data. Environmental Awareness Ability Measure (EAAM) by Dr. P.K. Jha (1998) was used as data gathering tool. Statistical techniques– mean,SD and t-test were used to analyze the data.

Analysis of the data revealed that in the present study, the female pre-service teachers have slightly better environmental awareness ability than male pre-service teachers but this difference is not significant. Similarly, the Science stream pre-service teachers have slightly better environmental awareness ability than Non-Science stream pre-service teachers but this difference is also not significant.

Introduction - The term **environment** has come from the Latin word "environ" which is the combination of two words i.e. En (in) and Viron (circle) which means to encircle or to surround. The word environment refers to the surroundings, of an organism or group of organisms specially the combination of external or extrinsic physical conditions that affect and influence the growth and development of organisms.

Environment includes air, water and land and interrelationships which exist among these basic elements and biosphere. Besides the physical and biological aspect, the 'environment' embraces the social, economic, cultural, religious, and several other aspects as well. Human being lives in an environment throughout his life. His very existence, survival and progress on earth depend on the quality of the environment. Environment plays a significant role in the formation and development of an individual.

Environment is one of the main issues that have attracted worldwide attention and generated a lot of discussion and debate in recent years. The entire globe is facing severe environmental problems. The modern man is recklessly polluting the environment. The loss of forests, loss of soil productivity, decreasing reservoir of oil and natural gas, depletion of ozone layer, global warming are some of the problems of great concern for scientists and intellectuals all over the world. While over-exploitation of natural resources is responsible for some of these problems, some other problems are the direct outcome of human greed and lack of concern towards environment. If this situation persists, it will lead to the extinction of life from our planet.

Education plays an important role in making people aware of the need to protect, preserve and improve the environment for future generation. It is important to inculcate an awareness of environment among the children; these attitudes will be transmitted by them to later generation also. It is important to inculcate an awareness of environment among the children; these attitudes will be transmitted by them to later generation also**. Environmental Awareness** is defined as the sum total of responses that people make to various thematic aspects of the environmental education. In simple terms it means knowledge and understanding of facts and concepts related to environment and consequences of various environmental problems like pollution, population explosion, deforestation, ecological disruption, energy crises etc.

Environment has become the concern of all academicians, intellectuals, scientists, policy makers and government across the continents. Consequently environmental education is being included in school curriculum right from the very beginning. **Environmental Education** is the means to create knowledge, understanding, values, attitudes, skills, abilities and awareness among individuals and social group towards the environment and environmental protection.

Teacher is one of the important factors for promoting environmental education. Teachers can become a vital link in the delivery of environmental knowledge, its associated problems and their solutions. To create an effective change, large scale pre-service teacher training program in environmental education must be organized.

* **Research Schloar, Jamia Millia Islamia, New Delhi, INDIA**

Statement of the problem - A comparative study of environmental awareness ability of pre-service teachers of Faridabad district

Objectives of the study -

The study was aimed at the following objectives:

1. To study the environmental awareness ability of male and female pre-service teachers.
2. To compare the environmental awareness ability of male and female pre-service teachers.
3. To study the environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers.
4. To compare the environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers.

Hypotheses - The study was based on following hypotheses:

1. There is no significant difference in the environmental awareness ability of male and female pre-service teachers.
2. There is no significant difference in the environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers.

Delimitations of the study -

1. The study has been delimited to environmental awareness ability only.
2. The study has been confined to 50 pre-service teachers enrolled in one year B.Ed. program of private teacher training institutes in Faridabad district of Haryana.

Design of the study -

A) Research method - The present study attempts to show the environmental awareness ability of pre-service teachers of private teacher training institutes in Faridabad district of Haryana. The appropriate method which suits the study is **survey method** of research.

B) Tool - Environmental Awareness Ability Measure (EAAM) by Dr. P.K. Jha (1998) was administered to assess the environmental awareness ability of the respondents. The measure consisted of 51 items to be rated on two point rating scale. This is an environmental awareness ability scale based on the five dimensions of environment as a whole and purports to measure the extent and degree of awareness of people about environmental pollution and its protection.

C) Sample - The study was conducted in private teacher training institutes in Faridabad district of Haryana. The sample has been selected through **random purposive sampling** for the present study. It comprised of **50 pre-service teachers** (25 boys and 25 girls comprising of 25 Non-Science stream and 25 Science stream background pre-service teachers) studying in pre-service teacher education program.

D) Statistical techniques - To test the hypotheses and interpret the data, following statistical techniques were used in the present study:

1) Mean (M)
2) Standard Deviation (SD)
3) t-test

Data analysis and interpretation - The data was analyzed and interpreted according to the objectives and hypotheses framed in the following manner -

Table No. 1: Mean values of environmental awareness ability scores of male and female pre-service teachers

S. No.	Groups	N	M
1.	Male	25	50
2.	Female	25	51.12

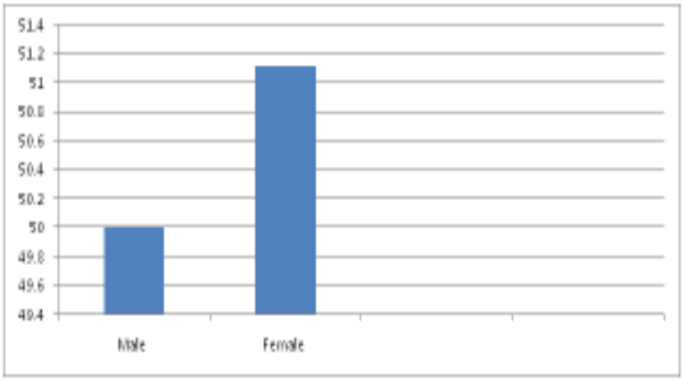

Figure No. 1: Showing comparison between mean values of environmental awareness ability scores of male and female pre-service teachers

Table No. 2: Comparison of environmental awareness ability of male and female pre-service teachers

S. No.	Groups	N	M	SD	t-Value	Level of Significance
1.	Male	25	50	3.69	0.87	**Not significant at 0.01 level**
2.	Female	25	51.12	4.55		

Table No. 2 shows the mean values of environmental awareness ability scores of male and female pre-service teachers. The calculated t-value shows the difference between means is 0.87 which indicates that there is no significant difference in the environmental awareness ability of male and female pre-service teachers.

Table No. 3: Mean values of environmental awareness ability scores of Non-Science and Science stream pre-service teachers

S. No.	Groups	N	M
1.	Non-Science stream	25	50.4
2.	Science stream	25	51.6

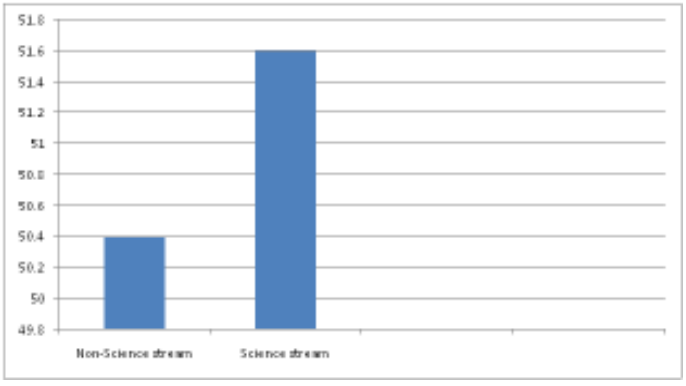

Figure No. 2: Showing comparison between mean values of environmental awareness ability scores of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers

Table No. 4: Comparison of environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers

S. No.	Groups	N	M	SD	t-Value	Level of Significance
1.	Non-Science Stream	25	50.4	3.96	0.96	**Not significant at 0.01 level**
2.	Science Stream	25	51.6	3.92		

Table No. 4 shows the mean values of environmental awareness ability scores of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers. The calculated t-value shows the difference between means is 0.96 which indicates that there is no significant difference in the environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers.

Findings of the study-

1. There is no significant difference in the environmental awareness ability of male and female pre-service teachers. Thus, the hypothesis no. 1 has been accepted. It was found that gender does not significantly contribute towards the environmental awareness ability of pre-service teachers.

2. There is no significant difference in the environmental awareness ability of Non-Science stream and Science stream pre-service teachers. Thus, the hypothesis no. 2 has been also accepted. It was found that stream does not significantly contribute towards the environmental awareness ability of pre-service teachers.

Conclusion - We must remember that by our habit of ignoring environmental issues, the issues will not end rather they will cost tremendous harm to the next generation. Thus, it becomes necessary to develop awareness and positive attitude in people since their adolescence. Environment protection starts by creating awareness among the people so that it becomes part of their lifestyle. Environmental awareness is the first step to trigger the students' involvement in environmental movements.

On the basis of the findings of the present study, the female pre-service teachers have slightly better environmental awareness ability than male pre-service teachers but this difference is not significant. Similarly, the Science stream pre-service teachers have slightly better environmental awareness ability than Non-Science stream pre-service teachers but this difference is also not significant.

References :-

1. Best, John W. & Kahn J.V.(2004). *Research in Education* (Tenth Edition). Prentice-Hall of India Private Limited, New Delhi, pp. 61-70.
2. Bhattacharya, G.C. (1997).Environmental Awareness among Higher Secondary Students of Science and Non-Science streams. *School Science. Vol. 35 (1) pp. 24-32.*
3. Byhaskaracharyulu, Y.(2003). Role of Teacher in Environmental Education. *Edutrack, Vol. 2(5), pp. 19-21.*
4. Garrett, H.E.(2007).*Statistics in Psychology and Education.* Paragon International Publishers, New Delhi, pp. 284-285, 303.
5. Jha, P.K.(1998).Environmental Awareness Ability Measure. National Psychological Corporation, Agra.

****

सहयोगात्मक अधिगम तथा विज्ञान में संज्ञानात्मक उपलब्धि

प्रो. अनुपूनिया * आरती कुमावत * *

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन सहयोगात्मक अधिगम की एक विधि 'स्टैड' के विज्ञान की संज्ञानात्मक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करता है। इस हेतु कक्षा XI के 40 विद्यार्थियों को विज्ञान विषय पढ़ाया गया। प्रायोगिक समूह को 'स्टैड' विधि तथा नियन्त्रण समूह को प्रचलित शिक्षण पद्धति द्वारा पढ़ाया गया। विद्यार्थियों की उपलब्धि, इसी उद्धेश्य हेतु निर्मित पूर्व- पश्च परीक्षण द्वारा ज्ञात की गई व पाया गया कि विज्ञान के विद्यार्थियों के शिक्षण उन्नति बढ़ाने में प्रचलित शिक्षण की अपेक्षा 'स्टैड' विधि अधिक प्रभावी थी।

प्रस्तावना – राष्ट्रीय पाठ्यचर्या (NCF-2005) की रूपरेखा में सुझाव दिया गया है कि हमें ऐसी शिक्षण विधियों का चुनाव करना चाहिए। जिनमें विद्यार्थियों को अपने विचार प्रकट करने, अपने ज्ञान को सहपाठियों के साथ बाँटने व ज्ञान की खोज करने का अवसर प्राप्त हो सके तथा वे क्रियाशील अधिगमकर्त्ता के रूप में कार्य करे। (NCF-2005) का यह मुख्य विचार निर्मितिवाद उपागम की देन है जो बालक के कक्षा कक्ष में सक्रिय अधिगमकर्ता बनकर ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में स्वयं संलग्न रहने की बात करता है।

निर्मितिवाद उपागमं के केन्द्रीय विचार को सहयोगात्मक अधिगम विधियाँ' (Co-operative Learning Method) एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत करती हैं सामाजिक मनोविज्ञान के प्रमाणित सिद्धान्त कि 'एक ही लक्ष्य के लिए प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अलग-अलग व अकेले कार्य करने की अपेक्षा मिलजुल कर कार्य करने पर अधिक उपलब्धि हासिल की जा सकती है' के आधार पर सहयोगात्मक अधिगम विधियों का विकास किया गया है। सहयोगात्मक अधिगम एक ऐसा उपागम है जिसमें विद्यार्थी छोटे-छोटे समूहों में एक दूसरे को सीखने में मदद करने के लिए कार्य करते है।

(जॉनसन एवं जॉनसन, 1987 स्लेविन, 1983)

स्लेविन (1990, पृ. 14) के अनुसार- 'सहयोगशील अधिगम संरचना एक ऐसी स्थिति का निर्माण करती है जिसमें समूह के सदस्य अपने व्यक्तिगत लक्ष्यों को तभी प्राप्त कर सकते है, जबकि पूरा समूह सकल हो।'

जॉनसन एवं अन्य (1991) के अनुसार सहयोगात्मक अधिगम के पाँच मूल तत्व है -

- धनात्मक या सकारात्मक अन्योन्याश्रिता
- व्यक्तिगत जवाबदेही
- प्रत्यक्ष अन्त: क्रिया
- सामाजिक कौशलों का समुचित उपयोग
- समूह संसाधन

सहयोगात्मक अधिगम के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु महत्त्वपूर्ण पद विषमांग समूह निर्माण, अनुदेशनात्मक उद्देश्य कथन, समूह लक्ष्य प्राप्ति हेतु नीति की व्याख्या, प्रगति पर नजर तथा आवश्यकता का मूल्यांकन करना है।

कैगन (1989) ने सहयोगात्मक अधिगम से संबधित कुछ विधियों को नामांकित किया है। जिसमें स्टैड (Student Teams Achievement Divisions) टी. जी. टी, (Teams Games Tournament) जिग्सा, राउण्ड रॉबिन, राउण्ड टेबल, ग्रुप इनवेस्टीगेशन आदि प्रमुख है।

यद्यपि ये समस्त विधियाँ कई मामलों में भिन्न है परन्तु केन्द्रीय विचार में सभी विधियाँ 'समान लक्ष्य प्राप्ति हेतु समूह में कार्य करने की पक्षधर है।'

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की विज्ञान उन्नति (निर्मितिवाद उपागम के तत्वों के संदर्भ में) पर सहयोगात्मक अधिगम की एक विधि 'स्टैड' के प्रभाव का अध्ययन करना था।

परिकल्पना – 'सहयोगात्मक अधिगम की 'स्टैड' विधि से पढ़ाए गए तथा परम्परागत रूप से पढ़ाए गए उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की निर्मितिवाद उपागम के तत्वों के संबध में उन्नति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

विधि – प्रस्तुत अध्ययन एक प्रायोगिक अध्ययन है जिसमें दो समूहों पर पूर्व परीक्षण पश्च परीक्षण अभिकल्प (Pretest-Post test Design) का प्रयोग किया गया।

न्यादर्श – न्यादर्श के रूप में उदयपुर के ज्योति उच्च माध्यमिक विद्यालय के कक्षा XI के विज्ञान वर्ग के 40 छात्रों का चयन प्रासंगिक न्यादर्शन विधि से किया गया। प्रायोगिक तथा नियंत्रित समूह में 20-20 विद्यार्थी थे।

प्रायोगिक समूह को पढ़ाने के लिए 'स्टैड' विधि का प्रयोग किया गया जबकि नियंत्रित समूह को परंपरागत शिक्षण विधि से पढ़ाया गया। समान विषय वस्तु 20 दिन तक पढ़ायी गयी। सहयोगशील कक्षा में मिश्रित योग्यता, जाति, पृष्ठभूमि तथा लिंग वाले 5-5 विद्यार्थियों के कुल चार समूह बनाए गए।

'स्टैड' विधि द्वारा शिक्षण हेतु सर्वप्रथम विषयवस्तु कक्षा में प्रस्तुत की गई। विषय वस्तु में निपुणता प्राप्त करने हेतु विद्यार्थियों ने संबंधित समूह में कार्य किया। समूह में अध्ययन के बाद उक्त प्रकरण का मूल्यांकन किया गया। मूल्यांकन व्यक्तिगत था। तत्पश्चात् व्यक्तिगत अंक को समूह के अंकों में जोड़कर सर्वोच्च अंक प्राप्त करने वाले समूह को विजेता घोषित किया गय।

आँकड़ों का संकलन – आँकड़ों के संकलन हेतु निर्मितिवाद उपागम के तत्वों से संबंधित उन्नति के मापन हेतु 'प्रश्नावली' तैयार की गई जिसे पूर्व तथा पश्च परीक्षण के रूप में प्रयोग किया गया। छात्रों को पढ़ाए गई 'इकाई- पुष्पीय पादपों की आकारिकी' को 11 प्रकरणों में विभक्त कर पढ़ाया गया।

*भूतपूर्व प्राचार्य, विद्या भवन जी.एस.टी. महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहन लाल सुखाड़िया महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

'पूर्व परीक्षण इन्हीं प्रकरणों पर आधारित था जिसे पश्च परीक्षण के रूप में भी उपयोग लिया गया। परीक्षण में कुल 41 प्रश्न 100 अंक के है। इस परीक्षण में निर्मितिवाद उपागम के प्रत्येक तत्व संबंधी प्रश्नों को सम्मिलित किया।

(तालिका देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

परिणाम एवं विवेचन – निर्मितिवाद उपागम संबंधी आधारों पर आधारित 'परीक्षण' पर प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के पूर्व और पश्च परीक्षण से प्राप्त मध्यमानों, मानक विचलन तथा 'टी' मूल्य को निम्न तालिकाओं में दर्शाया गया है –

तालिका–1 प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण से संबंधित प्राप्तांक प्रतिशत संबंधित तालिका प्रस्तुत है ।

(तालिका – 1 देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका–2 प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण से संबंधित मानक विचलन तथा `t' मान

(तालिका – 2 देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

निष्कर्ष – कक्षा XI के जीव विज्ञान विद्यार्थियों के पूर्व परीक्षण तथा पश्च परीक्षण संमकों को आधार बनाकर देखा जाए तो स्पष्ट है कि प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के निर्मितिवाद उपागम तत्व संबंधी पूर्व परीक्षण में प्राप्त प्राप्तांक प्रतिशत में ज्यादा अन्तर नहीं है अर्थात दोनों समूह के विद्यार्थियों की प्रकरण संबंधी ज्ञान की उपलब्धि लगभग समान प्राप्त हुई।

प्रायोगिक अभिक्रिया के दौरान प्रायोगिक समूह को सहयोगशील अधिगम की 'स्टैड' विधि से तथा नियंत्रित समूह को परम्परागत शिक्षण विधि से पढ़ाया गया।

दोनों समूहों के पश्च परीक्षण प्राप्तांकों के प्रतिशत में स्पष्ट अन्तर दृष्टिगत है अत: स्पष्ट है कि उच्च माध्यमिक स्तर के विज्ञान विद्यार्थियों की उन्नति निर्मितवाद आगम् तत्वों के संबंध में बढ़ाने के लिए परम्परागत शिक्षण विधि की अपेक्षा सहयोगशील अधिगम की 'स्टैड' विधि सार्थक रूप से अधिक प्रभावी है।

प्रस्तुत अध्ययन जैसे ही परिणाम अन्य शोधकर्ताओं के अध्ययनों से भी प्राप्त हुए है। निर्मितिवाद उपागम संबंधी सहयोगशील अधिगम के समर्थन में प्राप्त इन परिणामों की व्याख्या सहयोगशील कक्षा की संरचना के आधार पर की जा सकती है।

सुझाव – प्रस्तुत अध्ययन के शिक्षण प्रक्रिया व शोध हेतु महत्त्वपूर्ण निहितार्थ है। विद्यार्थियों में विज्ञान उपलब्धि बढ़ाने के लिए यह अध्ययन निर्मितवाद उपागम को एक सशक्त विकल्प के रूप में प्रस्तुत करता है। उपागम का मूल ध्येय है 'व्यक्ति स्वयं अपने ज्ञान का निर्माता है' का भारतीय कक्षा कक्षों में अभाव मिलता है अत: भारतीय परिस्थितियों में निर्मितिवाद उपागम संबंधी सहयोगशील अधिगम की 'स्टैड' विधि के समान ही अन्य विधियों द्वारा विज्ञान उन्नति पर पड़ने वाले प्रभावों की जाँच हेतु शोध किए जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Hemant Lata sharma, Savita Sharma (2008): "Co-operative Learning: Highway to Learning to live together" Indian Journal of Teacher Education ANWESHIKA, Vol.5. No. 1. June.
2. कटारा, डॉ राजेश (2012) 'निर्मितिवादी शिक्षाशास्त्र व एन, सी, एफ. के संदर्भ में शिक्षण–अधिगम की अवधारणा' राजस्थान बोर्ड शिक्षण पत्रिका: अजमेर अप्रैल–सितम्बर 2012
3. Kumkum srivastava (2008): "Traditional and constructivist Perspectives" Indian Journal of Teacher Education ANWESHIKA Vol.5. No. 1. June.
4. Liang, tsailing (2002): "Implementing Co-operative Learning in EFL Teaching: Process and effect" Dissertation.
5. National Curriculum Frame work 2005. "National council of Educational Research and Training". New Delhi. P, 17.
6. एन. एन. पाण्डेय व कौशल किशोर (2009). 'सहयोगशील कक्षा एवं गणित में संज्ञानात्मक उपलब्धि', भारतीय आधुनिक शिक्षा, अंक 3, जनवरी 144–153
7. Ponnusamy, P. and Sudarsan, S (2001): "Student Achievement and Co-operative Learning Method in Mathematics at upper Primary Level", School Science, Vol. 39 (1), March. 67-70
8. Rajesh kumar, V. K. Gupta (2009) "An Introduction to Cognitive Constructivism in Education" Journal of Indian Education Vo.. xxxv. No. 3. November.
9. Satya Prakash, C.V. and Patnaik, s.p. (2005). "Effect of Co-operative Learning on Development of process skills in Biology". Ram-Eesh Journal of Education, Vol.2 (1), July, 22-26.
10. सुनील कुमार अग्रवाल व एस. के त्यागी (2008) '10वीं कक्षा के विद्यार्थियों की विज्ञान अभिवृत्ति पर कम्प्यूटर आधारित शिक्षण का प्रभाव',इन्डियन जरनल ऑफ टीचर एज्युकेशन अन्वेषिका, अंक 5, न. 1, जुन

तालिका–1

क्र. सं.	आधार संबधी अंक	निर्मितवाद उपागम के आधार प्रश्नों के प्रकार	बहुचयनात्मक प्रश्न	मिलान करना	वर्गीकरण	एकांतर रूप	लघुरात्मक प्रश्न
1.	6	लक्ष्य स्वतंन्त्र	1	2	–	–	1
2.	13	विश्वसनीय कार्यो पर आधारित	–	–	1	–	4
3.	16	विषय वस्तु द्धारा संचालित	–	–	–	1	5
4.	11	ज्ञान निर्माण का निर्धारण	2	–	–	–	3
5.	10	अनुभव निर्माण का आधार	1	–	–	–	3
6.	11	प्रकरण पर निर्भरता	1		–	1	3
7.	12	बहु परिदृश्य	–	–	–	–	4
8.	4	बहु प्रतिरूप	–	–	–	–	1
9.	4	आवश्यक सामाजिक अर्थो के निर्माण	1	–	–	–	1
10.	13	वास्तविक लक्ष्य के मूल्यांकन पर केंद्रण	–	1	–	–	4
	100	योग	6	3	1	2	29

तालिका–2 प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण से संबंधित मानक विचलन तथा `t' मान

क्र.सं.	निर्मितिवाद उपागम संबंधी आधार	प्रश्नों की संख्या	अंक भार	प्रायोगिक समूह		नियंत्रित समूह	
				पूर्व परीक्षण प्राप्तांक प्रतिशत	पश्च परीक्षण प्राप्तांक प्रतिशत	पूर्व परीक्षण प्राप्तांक प्रतिशत	पश्च परीक्षण प्राप्तांक प्रतिशत
1.	लक्ष्य स्वतंन्त्र	4	6	48.33	90.83	59.16	72.5
2.	विश्वसनीय कार्यो पर आधारित	5	13	49.23	85.00	45.00	52.69
3.	विषय वस्तु द्धारा संचालित	6	16	44.68	86.25	40.3	51.56
4.	ज्ञान निर्माण का निर्धारण	5	11	53.63	82.27	47.27	58.18
5.	अनुभव निर्माण का आधार	4	10	45.5	85.5	46.5	51.00
6.	प्रकरण पर निर्भरता	5	11	47.27	83.18	54.54	55.45
7.	बहु परिदृश्य	4	12	49.16	85.41	49.16	58.33
8.	बहु प्रतिरूप	1	4	45.00	93.75	63.75	68.75
9.	सामाजिक अर्थो के निर्माण की आवश्यकता	2	4	42.5	90.00	57.5	66.25
10.	वास्तविक लक्ष्य के मूल्यांकन पर केंद्रण	5	13	50.00	87.30	45.75	54.61
	योग	41	100	47.7	86.95	47.65	56.6

तालिका–3 प्रायोगिक समूह तथा नियंत्रित समूह के पूर्व परीक्षण व पश्च परीक्षण से संबंधित मानक विचलन तथा `t' मान

क्र. सं.	परीक्षण का नाम	प्रायोगिक समूह				नियंत्रित समूह				'टी–मूल्य	निष्कर्ष
		छात्र संख्या	प्राप्तांक	मध्यमान	मानक विचलन	छात्र संख्या	प्राप्तांक	मध्यमान	मानक विचलन		
1.	पूर्व परीक्षण	20	954	56.25	8.1047	20	953	47.25	8.69	0.3563	अन्तर सार्थक नहीं है।
2.	पश्च परीक्षण	20	1739	89.5	4.7696	20	1132	56.25	8.104	22.693	अन्तर सार्थक है।

****

सेवारत माता एवं गैर-सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षणिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन

दीपक पंचोली *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध कार्य राजस्थान राज्य के राजसमन्द जिले के जिला मुख्यालय पर सम्पन्न किया गया है। शोध का मुख्य उद्देश्य सेवारत माता एवं गैर-सेवारत के बालक- बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना रहा है। न्यादर्श के रूप में उच्च माध्यमिक स्तर के 200 बालक-बालिकाओं का चयन किया गया। शैक्षिक उपलब्धि हेतु मा.शि. बोर्ड, राजस्थान द्वारा आयोजित उच्च माध्यमिक परीक्षा के प्राप्तांकों को शोध कार्य हेतु प्रयुक्त किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन, क्रान्तिक अनुपात नामक सांख्यिकी का प्रयोग किया गया है। शोध के निष्कर्ष के रूप में ज्ञात होता है कि सेवारत एवं गैर-सेवारत दोनों प्रकार की माताओं के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि, बालिकाओं की तुलना में अधिक श्रेष्ठ है, वहीं दूसरी ओर गैर सेवारत माताओं के बालक-बालिकाऐं तुलनात्मक रूप से श्रेष्ठ शैक्षिक प्रदर्शन करते हैं।

प्रस्तावना – बालक-बालिकाओं की शैक्षिक पृष्ठभूमि उनके भावी व्यवसायिक, सामाजिक एवं नागरिक जीवन के अतिरिक्त, उनमें बौद्धिक, संवेगात्मक एवं मूल्यात्मक गुणों को भी गहराई से प्रभावित करती है। यह एक तथ्यात्मक पहलू है कि उचित एवं प्रभावशील शैक्षिक निर्देशन एक प्रतिभाशाली बालक को उसका वास्तविक स्वरूप प्रदान करता है, जिससे वह भावी जीवन में सफलता प्राप्त कर पाता है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि शैक्षिक उपलब्धि भावी जीवन के स्वरूप को निर्धारित करती है, किन्तु साथ ही शैक्षिक उपलब्धि भी विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है, जिनमें एक प्रमुख कारक बालक-बालिकाओं की माता का योगदान है। बालक-बालिकाओं के जीवन में माता का स्थान सर्वोपरि होता है एवं प्रथम शिक्षक के रूप में माता ही शिक्षा प्रदान करती है एवं साथ ही सम्पूर्ण विद्यार्थी काल में माता का संरक्षण शैक्षिक स्तर को प्रभावित करता है। माता का संरक्षण किस सीमा तक बच्चों को प्राप्त हो पाता है, यह माता द्वारा प्रदान किये गये समय की मात्रा एवं गुणात्मकता पर भी निर्भर करता है एवं समय की पर्याप्तता माता के सेवारत या गैर-सेवारत होने पर निर्भर करती है। अत: माता का सेवारत होना या ना होना उसके बच्चों के शैक्षिक प्रदर्शन को सीधा प्रभावित करता हैं। अत: उपरोक्त तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए ही प्रस्तुत शोध सम्पन्न किया गया है।

शोध के उद्देश्य –

1. सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का पता लगाना।
2. गैर-सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का पता लगाना।
3. सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. गैर-सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

3. शोध परिकल्पना –

1. सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. गैर-सेवारत माता के बालक-बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

4. पारिभाषिक शब्दावली –

1. सेवारत माता : प्रस्तुत शोध के सन्दर्भ में सेवारत माता से तात्पर्य उन माताओं से है जो कि घरेलु कार्यों के अतिरिक्त बाहर के व्यावसायिक कार्यों (सरकारी/गैर सरकारी) को भी सम्पन्न करती है।
2. गैर-सेवारत माता : वे माताऐं जो घर पर रहकर केवल घर के कार्यों तक ही सीमित रहती है।
3. शैक्षिक उपलब्धि : प्रस्तुत शोध में शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान की 12वीं कक्षा के प्राप्तांकों से है।

5. चर –

1. माता का सेवारत या गैर सेवारत होना (स्वतन्त्र चर)
2. शैक्षिक उपलब्धि (आश्रित - चर)

6. शोध समस्या का परिसीमन – प्रस्तुत शोध के लिए आंकड़ें एकत्रित करने हेतु राजस्थान राज्य के राजसमन्द जिले के जिला मुख्यालय को चुना गया। इस हेतु चार उच्चतर मा0 विद्यालयों का यादृच्छिक चयन विधि से चयन कर प्रत्येक विद्यालय से 50 बालक - बालिकाओं का चयन किया गया।

7. शोध विधि – प्रस्तुत अनुसंधान कार्य हेतु शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

8. शोध उपकरण – शैक्षिक उपलब्धि हेतु समंकों की प्राप्ति के लिए सम्बन्धित विद्यालयों के शैक्षणिक रिकॉर्ड का प्रयोग किया गया है।

9. न्यादर्श – शोधार्थी द्वारा स्तरित यादृच्छिक चयन न्यादर्श विधि के माध्यम से राजसमन्द जिले के उच्चतर मा0 विद्यालयों के अध्ययनरत कुल 200 बालक-बालिकाओं का चयन किया गया है। जिनमें कुल 100 (50 बालक + 50 बालिकाऐं) सेवारत माता से एवं कुल 100 (50 बालक + 50 बालिकाऐं) गैर सेवारत माता से चुने गये हैं।

10. सांख्यिकी तकनीकी –

1. मध्यमान
2. मानक विचलन
3. टी - टेस्ट

* शोधार्थी , पी.जी. डिपार्टमेन्ट ऑफ स्टडीज इन एज्यूकेशन, पेसिफिक एकेडमी ऑफ हायर एज्यूकेशन एण्ड रिसर्च यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

11. विश्लेषण एवं व्याख्या –

तालिका – 1

सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना

विद्यार्थी	N	M	S.D.	t-value	सार्थकता 0.05 स्तर पर
बालक	50	65.60	11.38	1.76	सार्थक अन्तर नहीं है
बालिका	50	62.20	7.49		

df = 98

0.05 के सारणी स्तर पर = 1.76 < 1.96

0.01 के सारणी स्तर पर = 1.76 < 2.58

व्याख्या एवं विश्लेषण – उपरोक्त तालिका – 1 में सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं के मध्यमान क्रमश: 65.60 एवं 62.20 प्राप्त हुए तथा दोनों समूहों के मध्यमानों के लिए टी–मान 1.76 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर के सारणी मान 1.96 से कम पाया गया। इससे ज्ञात होता है कि यद्यपि बालकों का शैक्षिक प्रदर्शन बालिकाओं की तुलना में अच्छा है परन्तु दोनों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है। अत: परिकल्पना – 1 स्वीकृत की जाती है।

तालिका – 2

गैर–सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना

विद्यार्थी	N	M	S.D.	t-value	सार्थकता 0.05 स्तर पर
बालक	50	68.40	12.10	0.88	सार्थक अन्तर नहीं है
बालिका	50	68.20	10.48		

df = 98

0.05 के सारणी स्तर पर = 0.88 < 1.96

0.01 के सारणी स्तर पर = 0.88 < 2.58

व्याख्या एवं विश्लेषण – उपरोक्त तालिका – 2 में गैर–सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं के मध्यमान क्रमश: 68.40 एवं 68.20 प्राप्त हुए तथा दोनों समूहों के मध्यमानों के लिए टी–मान 0.88 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर के सारणी मान 1.96 से कम पाया गया। इससे ज्ञात होता है कि यद्यपि बालकों का शैक्षिक प्रदर्शन बालिकाओं की तुलना में अच्छा है परन्तु दोनों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है। अत: परिकल्पना – 2 स्वीकृत की जाती है।

तालिका – 3

सेवारत एवं गैर–सेवारत माताओं के बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि की तुलना

माता	N	M	S.D.
सेवारत	100	63.90	9.43
गैर सेवारत	100	68.30	11.29

व्याख्या एवं विश्लेषण – उपरोक्त तालिका–3 से ज्ञात होता है कि सेवारत माता के बालक–बालिकाओं की सामूहिक मध्यमान 63.90 प्राप्त हुआ जो कि गैर–सेवारत माता के बालक–बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि के सामूहिक मध्यमान 68.30 से कम है। अत: स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक रूप से गैर–सेवारत माता के बच्चों का शैक्षिक प्रदर्शन अधिक अच्छा है।

12. निष्कर्ष –

1. सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. गैर–सेवारत माता के बालक एवं बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अन्तर नहीं है।
3. सेवारत माता के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि बालिकाओं की तुलना में अधिक है।
4. गैर–सेवारत माता के बालकों की शैक्षिक उपलब्धि बालिकाओं की तुलना में अधिक है।
5. गैर–सेवारत माताओं के बच्चों का शैक्षिक प्रदर्शन तुलनात्मक रूप से सेवारत माताओं के बच्चों से अधिक श्रेष्ठ है।

संदर्भित ग्रंथ सूची :–

1. ओड़, लक्ष्मी लाल के., 'शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि', राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर (राजस्थान)।
2. पाण्डे, डॉ. रामशक्ल 'भारतीय शिक्षा दर्शन की रूपरेखा', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. राय, पारसनाथ (2011), 'अनुसंधान परिचय' लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
4. सिन्हा, डॉ. बी.के. 'शैक्षिक एवं उदीयमान भारतीय समाज', पद्मा पब्लिकेशन, जयपुर।

****

उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की अध्ययन आदतों का अध्ययन

रतना कुमारी *

प्रस्तावना – आज के प्रगतिशील समाज में बालकों को अपनी जीविका का निर्वाह करने के लिए शिक्षा ग्रहण करना अत्यन्त आवश्यक है। आज का समाज विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र की ओर देख रहा है। और विज्ञान तथा तकनीकी का विकास ही श्रेष्ठ एवं विकसित समाज एवं राष्ट्र का निर्माण कर सकता है जिसके लिये नई तथा वैज्ञानिक शिक्षा पद्धतियां अत्यन्त आवश्यक हैं। जिससे व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास किया जा सके क्योंकि शिक्षा ही व्यक्ति के व्यक्तित्व को सजाती हैं, संवारती है और व्यक्तित्व के श्रेष्ठतम अंश का अन्य व्यक्तियों से सम्पर्क कराती है। ऐसा ही जीवन में सामाजिक तथा सांस्कृतिक तथा अन्य दायित्वों के लिये मनुष्य को तैयार करती है, उनके मस्तिष्क को प्रशिक्षित करती है। और उन्हें अच्छे तथा बुरे में अन्तर करने योग्य बनाती है। श्रम से, घृणा से, अनैतिकता से दूर करती है। शिक्षा के इन्ही गुणों से प्रेरित होकर विश्व की सभी सरकारों द्वारा 100 प्रतिशत साक्षरता हो इसके लिये अथक प्रयास किये जा रहे हैं।

वर्तमान समय में अभिभावकों में यह अवधारणा घनिष्ठ हो चली है कि निजी संस्थानों द्वारा चलाये गये विद्यालय में बालको का विकास अन्य विद्यालयों की अपेक्षा अधिक अच्छा होता है।

समस्या कथन – 'राजकीय विद्यालयों व निजी विद्यालयों द्वारा संचालित विद्यालयों में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की अध्ययन आदतें व शैक्षिक निष्पत्ति का तुलनात्मक अध्ययन'।

अध्ययन के उद्देश्य – राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं की अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन करना। राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों के अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन।

राजकीय विद्यालय उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र छात्राओं के अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन। निजी विद्यालय उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र छात्राओं के अध्ययन आदतों का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना का निर्माण – प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नांकित परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई हैं।

1. राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं के अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है ।
2. राजकीय विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्र–छात्राओं के अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों के अध्ययन आदतों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है

समस्या का परिसीमन –

1. जयपुर क्षेत्र को ही सम्मिलित किया गया है।
2. जयपुर क्षेत्र के राजकीय व निजी विद्यालयों को सम्मिलित किया गया है।
3. राजकीय विद्यालयों में दो विद्यालयों को ही सम्मिलित किये गये हैं।
4. निजी विद्यालयों के अन्तर्गत दो विद्यालय ही सम्मिलित किये गये हैं।

न्यादर्श – जयपुर शहर के राजकीय व निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के केवल 25 छात्र व 25 छात्राओं को न्यादर्श के रूप में लिया गया है। प्रस्तुत शोध में न्यादर्श की कुल संख्या 100 है।

उपकरण – एममुखोपाध्याय व डी.एन. जयसवाल द्वारा निर्मित अध्ययन आदतों एवं मनोवृति परीक्षण।

संख्यिकी प्रविधि –

1. प्रमाप विचलन
2. टी– परीक्षण

परिणाम –

परिकल्पना (1)

राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं की अध्ययन आदतों के अध्ययन–

क्र.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थियों की संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी– परीक्षण
1	राजकीय विद्यालय	25	114.40	19.92	2.49
2	निजी विद्यालय	25	99.76	21.59	

व्याख्या – प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्राओं की अध्ययन आदतों में सांख्यिकी दृष्टि से अन्तर सार्थक नहीं है।

परिकल्पना (2)

राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों की अध्ययन आदतों के अध्ययन–

क्र.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थियों कीसंख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी– परीक्षण
1	राजकीय विद्यालय	25	91.80	13.96	3.63
2	निजी विद्यालय	25	106.16	21.06	

व्याख्या– प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों की अध्ययन आदतों में सांख्यिकी दृष्टि से अन्तर सार्थक है।

परिकल्पना (3)

राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में अन्तर –

* शोधार्थी, सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बेरी, झुंझुनू (राज.) भारत

क्र.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थियों कीसंख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-परीक्षण
1	राजकीय विद्यालय	50	6.08	3.90	3.84
2	निजी विद्यालय	50	9.96	3.31	

व्याख्या – प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि राजकीय व निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत छात्रों की अध्ययन आदतों में सांख्यिकी दृष्टि से अन्तर सार्थक है।

परिकल्पना (4)

निजी विद्यालय में उच्च माध्यमिक स्तर में अध्ययनरत विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों की तुलना-

क्र.	विद्यालय का नाम	विद्यार्थियों कीसंख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-परीक्षण
1	राजकीय विद्यालय	50	236.12	71.63	6.10
2	निजी विद्यालय	50	336.40	39.72	

व्याख्या – प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि राजकीय व निजी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों में सांख्यिकी दृष्टि से अन्तर सार्थक है।

निष्कर्ष – प्राप्त अंको से पता चलता है कि निजी विद्यालयों में जिन परिवारों से छात्र-छात्रायें आते हैं वे उच्च मध्यम या उच्च परिवारों से आते है परन्तु राजकीय विद्यालयों में सभी प्रकार के परिवारों के छात्र-छात्रायें आते हैं। निजी विद्यालयों में आपसी प्रतियोगिता होने के कारण अध्ययन का उच्च माहौल व अनुशासन मौजूद रहता है बल्कि राजकीय विद्यालयों में यह प्रतियोगिता निम्न गति से होती है इसलिये निजी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की अध्ययन आदतें उच्च हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भार्गव(डॉ.) महेश (1988), आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन
2. प्यारे सिंह (1972) मान्यता प्राप्त निजी व राजकीय विद्यालयों के 10वीं के छात्रों की स्वधारणा व बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन, एम.एड. राजस्थान विश्वविद्यालय ,जयपुर।
3. शर्मा ,आत्माराम, शैक्षणिक तथा मनोवैज्ञानिक मापन, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्रालि, जयपुर
4. गैरे हेनरी ई (1978) शिक्षा मनोविज्ञान में सांख्यिकी, कल्याण पब्लिशर्स
5. मंगल एस.के.(1985) शिक्षा मनोविज्ञान, राजकमल प्रकाशन,दिल्ली
6. अग्रवाल रामनारायण, मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन व मूल्यांकन विनोद पुस्तक आगरा

****

माध्यमिक स्तर के राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा IX के छात्राओं में आत्मक्षमता का पूर्व-पश्च परीक्षण में अन्तर

डॉ. अनुपूनिया * शंकरलाल मीणा * *

शोध सारांश – इस अध्ययन का उद्देश्य था कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में आत्म क्षमता का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में अन्तर ज्ञात करना था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उदयपुर जिले के माध्यमिक विद्यालयों तथा उनमें भी कक्षा खद के विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया जिसमें न्यादर्श के रूप में 30 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया उपकरण के रूप में स्वनिर्मित एवं मानकीकृत उपकरण का चयन कर प्रायोगिक अभिक्रिया से पूर्व एवं पश्च परीक्षण द्वारा तथ्यों का संकलन किया परिणामस्वरूप पाया गया कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में आत्म क्षमता का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में सार्थक अन्तर पाया गया।

प्रस्तावना – शिक्षा के उघतन सोच में अब छात्र को ही सम्पूर्ण प्रक्रिया का केन्द्र मान लिया गया है और छात्र की क्षमता योग्यता, रूची आवश्यकताओं आदि को ध्यान में रखकर ही शिक्षण की चेष्टा की जाती है जिससे शिक्षण प्रभावी हो सके और बालक में उपेक्षित परिवर्तन लाया जा सके। छात्र की इस केन्द्रीय भूमिका के कारण ही आज शिक्षण से अधिक महत्व अधिगम पर दिया जाने लगा है।

अधिगम पूर्व अनुभव से व्यवहार में परिवर्तन की प्रक्रिया है वास्तविक रूप से अधिगम वही है जो सीखे जाने पर व्यक्ति के व्यवहार का स्थायी अंग बन जाऐ। शिक्षण इस प्रकार की विकास को गति प्रदान करने की प्रक्रिया है जिसके द्वारा विधार्थी को नवीन ज्ञान द्वारा परिपूरित करके उसके ज्ञान को व्यवस्थित किया जा सके।

मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति में अधिगम करने कि शक्ति भिन्न होती है। अध्यापक को ध्यान में रखना चाहिए कि वह अपनी शैक्षिक गतिविधियों एवं क्रियाओं का नियोजन किस तरीके से कर रहा है। जिससे वह अपने शिक्षण में सुधार कर सके ताकि प्रत्येक छात्र अपनी योग्यता का ध्यान किये बिना प्राप्त कर सकते है तो इसके लिए अधिगमकर्ताओं के स्वरूप का ज्ञान अनिवार्य है।

कक्षा कक्ष में प्रत्येक छात्र समान तरीके से समान विषय वस्तु एक ही समय में सीखने के लिए विवश होते है। जबकि छात्र हर तरह से भिन्न होते है सीखने कि गति से सिखने के तरीके से अपनी समताओं से इसी तथ्य से शोधकर्ताओं ने शिक्षण एवं अधिगम कि अनेक विधियों प्रविधियों का विकास किया है। इसके अतिरिक्त यह जानना भी आवश्यक है कि बालक अनुभवो को किस तरह ग्रहण करते है उनके सीखने का प्रभावी तरीका क्या है। उनकी क्षमता कितनी है, वर्तमान समय में अधिगमकर्ताओं या छात्र किस तरीके से अधिगम करता है, क्या सीखता है, कैसे सीखता है, वह स्वयं अपनी क्षमता से स्वतंत्र होकर कैसे अधिगम करता है, यह स्वायत अधिगम ही है। स्वायत अधिगम स्वयं निर्देशित शिक्षा है जो छात्रो में अनुभवजन्य है एवं आत्मनिर्देशित है यह छात्र केन्द्रित सीखना है।

आत्मक्षमता का स्वायत अधिगम के क्षेत्र में अनुसंधान महत्वपूर्ण है।जिससे विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में, स्वयं निणर्य लेने की सम्भावनाओं तथा शिक्षण के प्रभावी तरीको पर प्रकाश डाला जा सके। स्वायत अधिगम में आत्मक्षमता के सम्बन्ध के बारे में विचार चिन्तन को सम्प्रत काल में शिक्षण की उधतन प्रक्रिया के बारे में स्वीकार जा रहा है। शोधकार्य बताते है कि स्वायत अधिगम का अध्ययन एवं उपयोग शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के तात्कालिक एवं दीर्धकालिक परिणामों को समृद्ध करने में पूर्णत सहायक होगा।

अत: शिक्षक के प्रयासो का महत्वपूर्ण भाग छात्रों की अधिगम विशिष्टता को पहचानना तथा शैक्षिक क्रियाओं को उसके अनुरूप ढालना है। उपयुक्त वस्तुस्थितियों के सन्दर्भ में जब हम गहराई से स्वायत अधिगम में आत्मक्षमता के बारे में विचार करते है तो अनेक प्रश्न हमारे मस्तिष्क में उभरते है यथा

- क्या प्रत्येक छात्र की आत्मक्षमता को पहचाना जा सके।
- क्या प्रत्येक छात्र अपने स्वयं का मूल्याकंन करता है।
- क्या प्रत्येक छात्र में अधिगम करने की क्षमता स्वत: विकसित होती है।
- क्या प्रत्येक छात्र में स्वायत अधिगम का विकास हो सकता हैं।
- क्या प्रत्येक छात्र में स्वायत अधिगम का आत्मक्षमता से सम्बन्ध है।

अत: आत्मक्षमता का स्वायत अधिगम से सम्बन्ध के बारे में विचार चिन्तन को सम्प्रत्यकाल में शिक्षण की उघतन प्रक्रिया के बारे में स्वीकार जा रहा है कि- **'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पूर्व-पश्च परीक्षण के आधार पर आत्मक्षमता का स्वायत अधिगम से सम्बन्ध ज्ञात करना'**

परिकल्पना – 'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में आत्मक्षमता का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।'

न्यादर्श – पूर्व एवं पश्च परीक्षण हेतु न्यादर्श के रूप में एक माध्यमिक विद्यालय का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया तथा प्रत्येक विद्यालय से कक्षा IX के 30 छात्रो (15 छात्र और 15 छात्राएँ) का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से किया गया।

उपकरण

(1) आत्मक्षमता मापनी

परिणाम – तथ्यों का सकंलन करने के पश्चात उनका विश्लेषण सांख्यिकीय विधि से किया गया तथा टी मूल्य परीक्षण को जाँचा गया।

(i) माध्यमिक स्तर के राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा IX **के छात्राओं में आत्मक्षमता का पूर्व-पश्च परीक्षण में अन्तर-**प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य था कि माध्यमिक स्तर के राजकीय माध्यमिक विद्यालय की कक्षा IX

*भूतपूर्व प्राचार्य, विद्या भवन जी.एस.टी. महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, मोहन लाल सुखाड़िया महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

के छात्राओं में आत्मक्षमता का पूर्व–पश्च परीक्षण में अन्तर ज्ञात करना। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए शोधकर्ता द्वारा राजकीय माध्यमिक विद्यालय के छात्राओं पर पूर्व परीक्षण किया तथा प्रायोगिक अभिक्रिया द्वारा आत्मक्षमता को विकसित किया एवं पश्च परीक्षण द्वारा अन्तर ज्ञात किया। गणना द्वारा प्राप्त मान को निम्न सारणी संख्या 4.3 में दर्शाया गया–

सारणी संख्या–1 (देखे)

निष्कर्ष– राजकीय एवं निजी माध्यमिक विद्यालय के छात्र–छात्राओं के पूर्व एवं पश्च परीक्षण के संमको को आधार बनाकर यदि देखा जाये तो हम पाते है कि आत्मक्षता का पूर्व एवं पश्च परीक्षण में अन्तर पाया गया।

सुझाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन के माध्यम से शिक्षकों, शिक्षार्थियों, पाठ्यक्रम निर्माताओं आदि को एक नवीन दिशा का ज्ञान होगा जिससे भविष्य की शिक्षण प्रक्रियाओं में विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर शिक्षण विधियों का निर्माण किया जा सकेगा साथ ही शिक्षक नवीन शिक्षण आव्यूह की रचना कर सकेंगे जिसके माध्यम से छात्र नवीन उपागमो को अपनाकर अधिगम कर सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bandura , A. (1999) Asocial congmitive theory of self – efficacy .
2. Bandura , A. (1977) self –efficacy : Toward a calcifying (18) Theory of Behavioral change. Psychological Review 84(2,191,215)
3. Pajareas (F)(2005) lf –efficacy beliefs in academic setting Review of Education Research ,.
4. Bandura , A. (1999) self –efficacy The Exercise of Control .Newyork.
5. Multon K.D. ,Beown (1991) Relation of Self Efficacy Beliefs ta academic out comes. A meta analytic investigation .Journals of counseling Psychology.

सारणी संख्या–1

माध्यमिक स्तर के राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा खद के छात्राओं में आत्मक्षमता का पूर्व–पश्च परीक्षण में अन्तर।

क्र.सं.	आत्मक्षमता के घटक	पूर्व एवं पश्च परीक्षण	छात्र संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान अन्तर	'टी' मान	सार्थकता स्तर
1.	आत्म गतिशीलता	पूर्व	30	4.63	1.497	1.533	16.551	0.01
		पश्च	30	6.17	1.704			
2.	स्व–प्रभाव	पूर्व	30	6.93	1.837	2.300	21.138	0.01
		पश्च	30	9.23	2.063			
3.	आत्म–विश्वास	पूर्व	30	6.93	1.837	2.300	21.138	0.01
		पश्च	30	9.23	2.063			
4.	सामाजिक उपलब्धि	पूर्व	30	7.07	1.837	2.333	21.073	0.01
		पश्च	30	9.40	2.078			
5.	स्व	पूर्व	30	7.17	2.335	2.400	13.573	0.01
		पश्च	30	9.57	2.622			
6.	आत्म–मूल्यांकन	पूर्व	30	6.90	3.166	2.300	9.761	0.01
		पश्च	30	9.20	3.517			
7.	आत्म–सम्मान	पूर्व	30	4.63	1.497	1.533	13.356	0.01
		पश्च	30	6.17	1.621			
8.	आत्म–संज्ञान	पूर्व	30	6.93	2.363	2.300	12.752	0.01
		पश्च	30	9.23	2.569			
	कुल आत्मक्षमता	**पूर्व**	**30**	**51.20**	**11.704**	**17.000**	**26.428**	**0.01**
		पश्च	**30**	**68.20**	**12.960**			

df	28
Critical value at 0.05	2.04
Critical value at 0.01	2.75

****

डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. भगवती लाल व्यास * संदीप सिंह चौहान * *

प्रस्तावना – पर्यावरण का अभिप्राय भूमि या मानव को चारों ओर से घेरे उन सभी भौतिक स्वरूपों से हैं जिनमें न केवल वह रहता है बल्कि जिनका प्रभाव उसकी आदतों एवं क्रियाओं पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इस प्रकार के स्वरूपों में धरातल, भौतिक एवं प्राकृतिक संसाधन, मिट्टी की प्रकृति, उसकी स्थिति, जलवायु, वनस्पति, खनिज़ सम्पदा, जल–थल का वितरण, पर्वत, मैदान, सूर्य ताप आदि जो भूमण्डल पर घटित होता है एवं जो मानव को प्रभावित करता है, वह पर्यावरण हैं।

पर्यावरण प्रदूषण एवं प्राकृतिक संसाधनों का विघटन एवं विनाश आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। इस संकट से उभरने के लिए शिक्षा की आवश्यकता का अनुभव किया गया है। पर्यावरण शिक्षा के द्वारा पर्यावरण को संतुलित, स्वच्छ व स्वस्थ बनाया जा सकता। आज समूचा विश्व पर्यावरण की शुद्धता व रक्षा के लिए एक मंच पर बार–बार इकट्ठा हो रहा है क्योंकि वैश्विक समस्या का समाधान भी विश्व स्तर पर किया जाना अपेक्षित है। इस विषय में 60 राष्ट्रों के 96 प्रतिनिधि 'International Workshop on Envioronmental Education' में मिले। इसमें लिए गए निर्णय बेलग्रेड घोषणा–पत्र के नाम से प्रसिद्ध है। इस घोषणा–प्रत्र में विश्व स्तर पर पर्यावरणीय अध्ययन के माध्यम से विश्व परिप्रेक्ष्य में प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता, नैतिकता व जनचेतना का विकास करना है। इसके माध्यम से मानव जाति को शांति, संतुलित पर्यावरण, युद्धविहीन स्थिति तथा अन्तर्राष्ट्रीय लोकतांत्रिकता की सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था का स्वस्थ विकल्प देना है। इस परिप्रेक्ष्य में समस्त राष्ट्र अपनी–अपनी योजनानुसार पर्यावरण शिक्षा प्रदान करने में संलग्न है। किन्तु परिणाम अभी भी अनुकूल नहीं आए हैं क्योंकि इस शिक्षा की प्रक्रिया की प्रभाविता का अध्ययन संभवत: नहीं किया गया है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51ए (जी) के अनुसार पर्यावरण संरक्षण को नागरिक के कर्त्तव्यों में 7 वें कर्त्तव्य के रूप में जोड़ा गया है, 'प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण व सुधार करे जिसमें वन, झीलें, नदी और वन्यजीव सम्मिलित हैं तथा प्रत्येक जीवधारी के प्रति सहानुभूति रखे।' पर्यावरण संरक्षण एवं संतुलन हेतु देश के संविधान के 42 वें संशोधन 1976 में जल, वायु, भूमि, वन्य जीव एवं ध्वनि संबंधी अधिनियम एवं धाराएँ बनाकर पर्यावरण सुरक्षा को मूल कर्त्तव्यों के एक नये अध्याय में जोड़कर नागरिकों के मूल कर्त्तव्यों को सुनिश्चित किया गया है।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा पर्यावरण शिक्षा का प्रारम्भ प्राथमिक स्तर से किया गया है और इस शिक्षा का उद्देश्य पर्यावरण के प्रति चेतना, सुरक्षा एवं सहभागिता को विकसित करना है। पर्यावरण शिक्षा को पूरे देश में प्राथमिक स्तर पर सरकार द्वारा अनिवार्य रूप से लागू किया गया है। इस स्तर पर संभवत: सभी राज्यों में विभिन्न प्रकार से क्रियान्वयन हो रहा है।

इसीलिए आधुनिक विकास की दौड़ में मानव को प्रकृति के साथ और जीवन के साथ एक अटूट संबंध स्थापित करने के लिए अपनी अभिवृत्ति को बदलना पड़ेगा, तभी वह जीवित रह सकता है। इसीलिए आवश्यक है कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त निधि का सदुपयोग मानव अपने विवेकपूर्ण तरीके से करे; जिससे आने वाली पीढ़ियों को उसे सुरक्षित रूप में सौंपा जा सके। इसी क्रम को बनाये रखने की चेतना जागृत की जाये और यह चेतना बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि छात्रों को पर्यावरण के बारे में शिक्षा दी जाए, जिससे मानव जाति के भविष्य को नई दिशा प्रदान की जा सके।

नारंग, सरोज (1995) ने अपने एम. एड. शोध 'उच्च माध्यमिक छात्राओं की अभिरूचियॉ' में विषय पर अध्ययन कर बताया कि प्रत्येक छात्रा में मनोरंजनात्मक रुचियां पायी जाती हैं। उनके प्राप्ति के साधन भिन्न भिन्न होते हैं। अधिकांश छात्राएं अध्ययन समाप्ति के बाद व्यवसाय करना चाहती है तथा प्रत्येक छात्रा में सौन्दर्य संबंधित रूचि पाई जाती है।

टेरेजा (1990) डाक्ट्रेट स्तर पर 'रिस्क एसेसमेन्ट इन अनवायरमेन्टल पॉलिसी थ्योरी एण्ड एप्लीकेशन टू द हेजर्डरैकिंक सिस्टम' शीर्षक पर शोध अध्ययन किया जिसके अन्तर्गत पर्यावरण नीति में जोखिम निर्धारण का परीक्षण किया।

हुआ, हरिएओं, पेंग (1996) 'ताईवान में कक्षा 5के विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति संज्ञान एवं अभिवृत्ति पर प्रोजेक्ट वाइल्ड की कुछ चुनी हुई गतिविधियों के प्रभाव का अध्ययन' किया।

शोध अध्ययन के उद्देश्य –

- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध अध्ययन परिकल्पना –

- डूँगरपुर क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के सरकारी व गैर सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

* शोध निर्देशक, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत ** शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

न्यादर्श का चयन –

प्रस्तुत शोध में मापनी पूर्ति हेतु न्यादर्श चयन के लिये अनुसंधानकर्त्ता ने प्रस्तुत अध्ययन हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन विधि से न्यादर्शो का चयन किया हैं।

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी
800

सरकारी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थी	गैर सरकारी विद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थी
400	400

उपकरण –

पर्यावरण के प्रति अभिवृति – स्वनिर्मित उपकरण उपकरण निर्माण करने से पहले शोधार्थी ने विभिन्न प्रकार के संबंधित साहित्य तथा शोध विधि पुस्तकों का अध्ययन किया। शोध विशारद/विशेषज्ञ के साथ विचार विमर्श भी किया। इसके उपरान्त पाँच उत्तर विकल्प वाले 50 पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति से संबंधित कथनों की एक प्रश्नावली तैयार की। जिसके अंतर्गत पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति से संबंधित कथनों को सम्मिलित किया गया। प्रारम्भिक रूप से बनाये गये प्रश्नावली की प्रश्न संख्या 50 रही। प्रत्येक प्रश्न की बोधगम्यता, सरलता एवं औचित्यता एवं भाषागत शुद्धता को जांच करने के उद्धेश्य से मार्गदर्शक की सलाह ली गयी। कथन विश्लेषण का सहारा लिया गया। अन्त में कुल 50 कथनों में से 10 कथनों को निरस्त किया गया और शेष 40 संख्यात्मक कथनों को मूल प्रश्नावली के रूप में स्वीकृत किया गया। पर्यावण के प्रति अभिवृति मापनी हेतु कुल 5 क्षेत्र का चयन किया गया जो निम्न प्रकार है–

क्षेत्र संख्या	क्षेत्र	प्रश्न
A	जल	1 से 8
B	थल	9 से 16
C	वायु	17 से 24
D	ध्वनि	25 से 32
E	अन्य	33 से 40

पर्यावरण अभिवृति मापनी का विश्वसनीयता गुणांक 0.79 तथा वैद्यता गुणांक 0.83 प्राप्त हुआ।

अध्ययन के चर –

स्वतंत्र चर – सरकारी व गैर सरकारी विद्यालय

आश्रित चर – पर्यावरण के प्रति अभिवृति

दत्तों का विश्लेषण

सारणी संख्या 1 में सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के पर्यावरण के प्रति अभिवृति की तुलना को प्रस्तुत किया गया है।

सारणी संख्या 1 (देखे अगले पृष्ठ पर) सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के जल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 30.63 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के जल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 29.47 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.155 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.182 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के जल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के जल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के थल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 30.66 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के थल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 29.29 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.370 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.914 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के थल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के थल क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के वायु क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 30.69 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के वायु क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 29.53 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.155 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.274 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के वायु क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के वायु क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के ध्वनि क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 30.64 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के ध्वनिक्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 29.50 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.138 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.165 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के ध्वनिक्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के ध्वनिक्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों में है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के अन्य क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 30.64 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के अन्य क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 29.40 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 1.233 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.311 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के अन्य क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के अन्य क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

सारणी को देखने पर यह स्पष्ट अंकों में है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के कुल क्षेत्रों के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 153.24 तथा निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के कुल क्षेत्रों के प्रति अभिवृत्ति का मध्यमान 147.19 प्राप्त हुआ तथा मध्यमान अन्तर 6.050 प्राप्त हुआ। टी का मान 3.636 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर

सार्थक है। तात्पर्य है कि सरकारी व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के कुल क्षेत्रों के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर अंकों है। मध्यमान अंको को देखने पर यह स्पष्ट अंकों है कि सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के कुल क्षेत्रों के प्रति अभिवृत्ति निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अभिवृत्ति की तुलना में अधिक सकारात्मक होती है।

निष्कर्ष – परिकल्पना (सरकारी एवं निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है) को आंकड़ों के विश्लेषण के आधार पर अस्वीकृत किया जाता है। आंकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट अंकों में है कि ग्रामीण विद्यार्थियों की जल, थल, वायु, ध्वनि अन्य तथा कुल पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति शहरी विद्यार्थियों की तुलना में सकारात्मक होती है। इस आधार पर उपरोक्त परिकल्पना को अस्वीकृत किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Hua Hariao Pang (1996) Cognition and Attitude development of Class 5 students of Taiwan towards Project Wild" Ph.D. Thesis, University of Texas.
2. नागर सरोज (1985) 'उच्च माध्यमिक छात्राओं की अभिरूचियां' एम.एड.लघु शोध मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
3. Tereza Henery (1990) `Risk Assessment in Enviornmental Policy Theory and Applications to the hazard ranking system' Ph.D. Thesis, Global University, London

सारणी संख्या 1

सरकारी विद्यालय के विद्यार्थियों व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों के पर्यावरण के प्रति अभिवृति की तुलना

		N	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान अन्तर	टी	सार्थकता
जल	सरकारी	400	30.63	4.923	1.155	3.182	.002
	निजी	400	29.47	5.335			
थल	सरकारी	400	30.66	4.732	1.370	3.914	.000
	निजी	400	29.29	5.159			
वायु	सरकारी	400	30.69	4.702	1.155	3.274	.001
	निजी	400	29.53	5.260			
ध्वनि	सरकारी	400	30.64	4.755	1.138	3.165	.002
	निजी	400	29.50	5.391			
अन्य	सरकारी	400	30.64	4.909	1.233	3.311	.001
	निजी	400	29.40	5.597			
कुल अभिवृति	सरकारी	400	153.24	22.028	6.050	3.636	.000
	निजी	400	147.19	24.947			

****

प्राथमिक शिक्षा पर संविदा शिक्षक भर्ती का प्रभाव

डॉ. आरती व्यास * गब्बू डावर ** धर्मेन्द्र पाटनी ***

शोध सारांश – शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने, शिक्षा प्राप्ति की सुनिश्चित व वैधानिक ग्यारंटी देने के लिए शिक्षकों की कमी दूर करना अनिवार्य हो गया। इस कमी को दूर करने के लिए वित्त की कमी अवरोधक बनी, जिसके निराकरण के लिए देश के विभिन्न राज्यों ने एन.सी.ई.आर.टी., मानव संसाधन विकास के लिए गठित समिति (योजना आयोग) की रिपोर्ट के विपरित अपने यहाँ संविदा शिक्षक भर्ती की अपरम्परागत् पद्धति शुरू की। इस भर्ती प्रक्रिया के कारण हमारी शिक्षा पद्धति में कई परिवर्तन उभरकर आये, जिसमें शिक्षा की गुणवत्ता में कमी, शिक्षकों में नौकरी की अनिश्चितता के कारण असंतोष, शासकीय विद्यालयों की अध्ययन पद्धति पर विश्वास जैसी नकारात्मक प्रवृत्तियाँ शामिल है। इसका परिणाम देश में प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के ज्ञान का स्तर औसत से कम होना सामने आया है। संविदा शिक्षकों की उपस्थिति अधिक होना, कम वेतन में इनकी उपलब्धता जैसे कारणों से शिक्षा की गुणवत्ता व देश के भविष्य बच्चों के साथ समझौता नहीं किया जा सकता। वित्त की कमी को दूर करने के लिए सम्पन्न परिवारों व औद्योगिक क्षेत्रों में अतिरिक्त कर लगाने व गैर सरकारी संगठन के साथ मिलकर सामाजिक आंदोलन चलाया जा सकता है। साथ ही शिक्षा की गुणवत्ता को बढाने के लिए एन.सी.ई.आर.टी. जैसे राष्ट्रीय निकाय के तय मानकों का पालन किया जाना चाहिए।

प्रस्तावना – शिक्षा के सर्वव्यापीकरण हेतु शुरू अभियान में शिक्षकों की भारी कमी को पूरा करने के लिए वित्त की कमी अवरोधक बनने लगी तब विभिन्न राज्यों ने संविदा शिक्षकों की भर्ती करके इस कमी को पूरा करने के प्रयास किए। संविदा शिक्षकों की भर्ती के बाद हमारी शिक्षा पद्धति में अनेक प्रभाव वर्तमान में उभरकर आने लगे है। संविदा शिक्षक कम वेतनमान पर अनुबंधित होने की वजह से कम वित्त में ही छात्र–शिक्षक अनुपात को पूरा करने के लक्ष्य को नि:संदेह पूरा करने का कारगार साधन हो सकता है, परन्तु अपने कम वेतनमान से असंतुष्ट होकर अब ये शिक्षक संगठित होकर अपने नियमितीकरण की माँग करने लगे है। वहीं समान कार्य के लिए समान वेतन की माँग को लेकर भी आंदोलन करने लगे है। जिसके कारण शैक्षणिक कार्य की जगह आंदोलन व आंदोलन की योजना बनाना ही उनका प्राथमिक कार्य हो गया है। नियमित शिक्षकों की भाँति संविदा शिक्षकों की जवाबदेहिता तय करने के लिए कोई तंत्र या नियम नहीं होना, प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रश्नचिह्न खड़े करते है। दूसरी ओर संविदा शिक्षक भर्ती का यह प्रभाव भी उभरकर सामने आया है कि अपनी नौकरी की अनिश्चितता के कारण ये शिक्षक अपनी क्षमता से शिक्षण कार्य नहीं करते, जिसकी क्षति विद्यार्थियों को ही उठानी पड़ती है। संविदा शिक्षक की भर्ती प्रणाली से एन.सी.ई.आर.टी., योजना आयोग की मानव संसाधन विकास के लिए गठित संसदीय समिति, विभिन्न शिक्षक संघ व नीति निर्धारक अपनी असहमति व्यक्त कर चुके है। विदेशों में संविदा आधार पर शिक्षक भर्ती जरूर किए जाते है, परन्तु वहाँ पर इस तरह के शिक्षक नियमित शिक्षकों के सहायक के तौर पर ही कार्य करते हैं, परन्तु हमारे देश में कई प्रदेशों में इस प्रकार के शिक्षक नियमित शिक्षकों के स्थान पर भर्ती किए जा रहे है (Gandhi and Rao : 2010)। मध्यप्रदेश व छत्तीसगढ़ राज्य में इन शिक्षकों की भर्ती अधिकाधिक मात्रा में की गई है। संविदा शिक्षक भर्ती में यह तथ्य भी सामने आया है कि इनमें से 55 प्रतिशत शिक्षक अप्रशिक्षित हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि ये शिक्षक केवल बेरोजगार होने के कारण इस कार्य में आ गए हैं, उनकी शिक्षक बनने की कोई योजना नहीं थी। यह हमारी शिक्षा प्रणाली की सबसे बड़ी समस्या है कि शिक्षण को कैरियर के तौर पर अपनाने के लिए कोई प्रोत्साहन मूलक वातावरण देश में नहीं हैं। शिक्षकों की समाज में गिरती साख व कम वेतन ने योग्य व निपुण व्यक्तियों को इस महत्त्वपूर्ण पेशे से दूर कर दिया है। अत्यंत कम वेतनमान, नौकरी की सुरक्षा की ग्यारंटी न होना इत्यादि कारणों से योग्य व्यक्ति शिक्षण के पेशे से दूर होता जा रहा है एवं निम्न दर्जे की प्रतिभा केवल बेरोजगार होने के कारण इस पेशे में आती जा रही है। शिक्षकों की योग्यता व व्यक्तित्व का प्रभाव कक्षा ने पढ़ने वाले बच्चों पर सीधे–सीधे पड़ता है व शिक्षक के सारे क्रियाकलाप सभी बच्चों को मनोवैज्ञानिक रूप से प्रत्यक्ष प्रभावित करते है, जिसका सीधा असर सभी बच्चों की दक्षता व सीखने की प्रवृत्ति पर होता है (Kaur, Saini and Kumar : 2010)। इस प्रकार यह ज्वलंत विचारणीय तथ्य है कि कम योग्यता एवं निम्न क्षमता वाले कामचलाऊ शिक्षक देश के भविष्य बच्चों को किस प्रकार दक्ष मानवीय संसाधन में परिवर्तित कर पायेंगे। प्राथमिक स्तर पर अनुबंधित संविदा शिक्षकों की शैक्षणिक योग्यता, नियमित शिक्षकों की योग्यता से कम होने के कारण प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट आई है, जो कि संविदा शिक्षक भर्ती प्रणाली पर सवाल उठाती है। वहीं प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता का कम स्तर होने पर विद्यार्थियों के आगे की शिक्षा का स्तर भी नि:संदेह नकारात्मक रूप से प्रभावित होगा। योजना आयोग की रिपोर्ट–2010 एवं DISE रिपोर्ट 2008–09 के अनुसार विद्यालयों में संविदा शिक्षकों की उपस्थिति नियमित शिक्षकों की उपस्थिति की तुलना में अधिक है, जो कि सकारात्मक जरूर प्रतीत होता है। किन्तु संविदा शिक्षकों की ज्यादा उपस्थिति, कम वेतनमान पर भर्ती जैसे कारणों से कैसे कम योग्यता वाले शिक्षकों को स्वीकार कर गुणवत्ता से समझौता किया जा सकता है। संविदा शिक्षकों का स्थानीय होना व स्थानीय भाषा में शिक्षण के कारण विद्यार्थी सहज जरूर महसूस करते हो, परन्तु ग्रामीण क्षेत्र

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र विभाग) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
*** शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग) सामाजिक विज्ञान अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

के शासकीय विद्यालयों से शिक्षित विद्यार्थी शहरों अथवा नगरों के अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यालयों से शिक्षित विद्यार्थियों से कितने गुना पीछे रह जायेंगे इसका कोई मापक नहीं है। इस अंतर के साथ कैसे समानता व संतुलित विकास की अवस्था की स्थापना होगी ? शैक्षणिक असमानता के कारण देश के भविष्य के समाज के विभिन्न वर्गों व समूहों में उत्पन्न होने वाला भारी अंतर युवाओं को पारस्परिक संघर्ष की ओर ले जायेगा।

हमारे देश में अलग-अलग राज्यों में शिक्षकों के प्रशिक्षण के अलग-अलग मानक या यूँ कहे राज्यों द्वारा स्वयं के मानक तय करना भी नई समस्या उत्पन्न करते है। वहीं देश में शिक्षकों को प्रशिक्षित करने वाले पाठ्यक्रमों को संचालित करने वाले संस्थान एन.सी.ई.आर.टी. के तय मानकों का पालन नहीं करते। यह संस्थान केवल डिग्री बाँटने के व्यवसाय के रूप में अधिकाधिक आर्थिक लाभ कमाने का माध्यम बन चुके है (Grover : 2008)। इन संस्थानों में कुशल प्रशिक्षकों की संख्या में भारी कमी के कारण योग्य व क्षमतावान शिक्षकों का उत्पादन जरूरतों व आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं हो पाना एक जटिल समस्या है।

योजना आयोग की मूल्यांकन रिपोर्ट में प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का ज्ञान स्तर औसत से कम होना कई सवाल खड़े करता है। दूसरी ओर नियमित शिक्षकों की कम उपस्थिति, विद्यार्थियों का कम शैक्षिक स्तर, शासन द्वारा निरीक्षण व प्रभावी नियंत्रण की कमी, हमारी सरकार की शिक्षा प्रणाली के प्रति असहज व असामान्य प्रवृत्ति को व्यक्त करती है, परन्तु इन समस्या का हल संविदा शिक्षकों की भर्ती कतई नहीं हो सकता है। छठा वेतन आयोग के सिफारिश प्रस्तुत करने के बाद भारत के नियमित शिक्षकों का वेतन पश्चिमी देशों के शिक्षकों के वेतन से (प्रति व्यक्ति आय व शिक्षक के वेतन के अनुपात के मानक के आधार पर) 400 प्रतिशत अधिक है। फिर भी देश के शासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों का कम शैक्षिक स्तर हमारे व्यवस्था, नीतियों के क्रियान्वयन व प्रबंधन पर सवाल खड़े करते है (Jain and Dholakia : 2010)।

अत: देश की शिक्षा प्रणाली को दुरूस्त करने के लिए सरकार को शिक्षकों के निर्माण व चयन की ऐसी प्रणाली विकसित करना होगी जिससे कुशल, योग्य, क्षमतावान व शिक्षण को ही पेशे के रूप में चुनने वाले व्यक्ति इस ओर आकर्षित हो सके, जिससे देश को भविष्य के लिए बेहतर व कुशल मानवीय संसाधन उपलब्ध हो सके। इसकी पूर्ति एन.सी.ई.आर.टी. जैसे राष्ट्रीय निकाय के तय मानकों का पालन करके की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Gandhi Geeta and Rao Sipahimalani Vandana (2010) : Para Teachers in India : Status and Impact, EPW, Vol. XLV, No. 12, P- 59
2. Grover, Jatinder (2008) : Quality of Teacher Education in Punjab, Rersearch Journal Social Sciences, Vol. 16, No. 2 and 3, P-37
3. Jain Pankaj S. and Dholakia Ravindra H. (2010) : Right to Education Act. and Public- Private partnership, EPW Vol. XLV No. 8, P-78
4. Kaur P Saini S.K., Kumar K. (2010) : Role of teachers in inculcating Human Values Among Students, India Psychological Review, Vol. 74, No. 2, ISSN 0019-6215, P-83
5. Planning Commission (2010) : Evalution Report of Sarva Shiksha Abhiyan, Government of India.

****

भारतीय विधिक प्रणाली में न्याय प्राप्ति की दिशा में होने वाले नूतन प्रयास

डॉ. गुलाब सिंह मेवाड़ा *

शोध सारांश – वर्तमान समय में विधि को सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। यह कार्य मुख्यतः विधायन द्वारा नियोजित होता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह सर्वविदित है कि धनी और धनहीनों के बीच की खाई अभी भी बढ़ती जा रही है यद्यपि इसे विभिन्न कानूनों द्वारा पाटने के भरसक प्रयास किये जा रहे है। संविधान के अनुच्छेद 39 (ख) के नीति–निर्देशक तत्व द्वारा राज्य से यह अपेक्षित है कि वह गरीबों तथा साधनहीनो के शोषण तथा दमन के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करे तथा भौतिक साधनो का साम्यिक वितरण सुनिश्चित करे ताकि जनसाधारण के हितो में संवर्धन हो सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु राज्य द्वारा अनेक सामाजिक एवं आर्थिक कानून पारित किये गये जो देश की बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियो को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रीय विकास की ओर लक्षित है।

प्रस्तावना – भारत का संविधान– एक सामाजिक दस्तावेज – जन सामान्य की आकांक्षाओं के कार्य रूप मे परिणित करने की दृष्टि विधि को एक सशक्त माध्यम या साधन माना जाता है। अत: उसकी पवित्रता और महत्व को बनाये रखने के लिये सभी भारतीयों को दृढ़–संकल्पित रहना चाहिये। संविधान को सामाजिक दस्तावेज इसलिये कहा गया है क्योंकि इसमें उन सभी बातों का समावेश है जो एक स्वस्थ एवं विकासशील समाज के लिये आवश्यक होती है जैसे विधि की सर्वोपरिता, सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय, धर्मनिरपेक्षता, प्रजातान्त्रिक व्यवस्था आदि। संविधान के भाग III में नागरिको को प्राप्त मौलिक अधिकार स्वतंत्र एवं प्रजातांत्रिक समाज को सुनिश्चित करते हैं। इन अधिकारों को मौलिक इसलिये कहा गया है क्योकि राज्य के तीनों अंगो, अर्थात्, कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिका द्वारा इनका उल्लंघन किये जाने पर नागरिकों को इनके विरूद्ध सांविधानिक संरक्षण प्राप्त है। अपने अनेक महत्वपूर्ण निर्णयों द्वारा उच्चतम न्यायालय ने मौलिक अधिकारों की सर्वोपरिता को मान्यता प्रदान की है।[1]

संविधान के भाग IV मे वर्णित नीति निर्देशक सिद्धान्त राज्य को निर्देशित करते है कि वह राज्य उपाय करे जिससे लोक कल्याण सुनिश्चित हो। संविधान में विधिसम्मत शासन को विशेष महत्व दिया गया है तथा लोगों के वैयक्तिक अधिकारों तथा विधिक उत्तरदायित्व में समुचित सन्तुलन बना रहे।

विधिक सेवा कार्यक्रम – भारत एक कल्याणकारी राज्य है और इस रूप में राज्य का यह कर्तव्य है कि वह देखे कि कोई व्यक्ति धन अथवा अज्ञानता के अभाव में न्याय से वंचित न रह जाये। इस हेतु यह आवश्यक है कि गरीबी, निरक्षरता, मलिनता, बीमारी एवं बेरोजगारी जैसी सामाजिक–आर्थिक बुराइयों को समाप्त कर सामाजिक–आर्थिक न्याय के स्थापना हेतु कदम बढ़ाये जायें। विधिक सहायता की आवश्यकता आधुनिक सुसंस्कृत समाज की परिकल्पना के मूल में निहित है। जहां कानून के संरक्षण एवं कानून के समक्ष समानता का सिद्धांत संवैधानिक व्यवस्था का आधार है वहीं विधिक सहायता प्रजातांत्रिक प्रणाली का मूलमंत्र है। न्याय के साधन के रूप में विधिक सहायता की अवधारणा एक ऐसी सामाजिक आवश्यकता है जो भारतीय संदर्भ में सामाजिक–न्याय की लक्ष्य पूर्ति को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करने की दिशा की ओर प्रेरित करती है। यह व्यक्तियों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से सामाजिक न्याय के आकर्षण बिंदु से आबद्ध करती है।

निर्धनो को न्याय एवं नि:शुल्क कानूनी सहायता – किसी भी समाजवादी लोकतंत्रात्मक व्यवस्था की सफल स्थापना समानता की नींव पर ही हो सकती है। समानता और विधियों के संरक्षण के अनेक महत्वपूर्ण पहलू है। सबसे महत्वपूर्ण पहलू है उन व्यक्तियों को न्याय प्राप्त कराना जो गरीबी के बोझ से इतने दबे है कि न्यायालय के द्वार तक पहुँचने में असमर्थ है। गरीबी और आर्थिक तथा सामाजिक असमानता से दबे व्यक्तियों को जब तक कुछ विशेषाधिकार प्रदान नहीं किये जायेगे, तब तक असमानता को मिटाना असंभव होगा। इस दिशा में असहाय व्यक्तियो को नि:शुल्क कानूनी सहायता देना एक महत्वपूर्ण कदम है जिसका अर्थ न्यायिक समता, सामाजिक न्याय,समानता और स्वतंत्रता को व्यवहार रूप में परिणित करने से जुड़ा है।[2]

निर्णयज विधि के आलोक में भारत मे नि:शुल्क विधिक सहायता – उल्लेखनीय है कि नि:शुल्क विधिक सहायता प्रदान करने की दिशा में उच्चतम न्यायालय की बड़ी ही महत्वपूर्ण भूमिका रही है। तत्कालीन भारत के मुख्य न्यायाधीश पी.एन.भगवती ने लोकहित वाद की संकल्पना करके अपने इस सपने को पूरा करने–कराने का भरपूर प्रयत्न किया।**'न्याय चला निर्धन से मिलने, न्याय चलो गॉवों की ओर'** केवल कागजी नारा न था। बल्कि इस पर अमल भी किया गया। हम इसके कुछ निर्णयों के अलोक में इसे भली –भांती समझ सकते है। **राजपाल** बनाम **चान्सलर, मेरठ युनिवर्सिटी** का निर्णय इसका सटीक उदाहरण है। जिसमें मामले की पैरवी स्वयं अपीलार्थी कर रहा था। श्री.डी.डी. ठाकुर ने न्यायालय का आमंत्रण स्वीकार कर लिया और न्यायमित्र के रूप में न्याय प्रदान करने में न्यायालय का आमंत्रण स्वीकार कर लिया और न्यायमित्र के रूप में न्याय प्रदान करने में सहायता प्रदान की। **हुस्नआरा खातून** बनाम **बिहार राज्य** मे उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि सिद्धदोष व्यक्तियों कों शीघ्रता से परिक्षण, नि:शुल्क विधिक सहायता का अधिकार अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त दैहिक स्वंतत्रता के मूल अधिकार का एक आवश्यक अंग है।

एम.एच. हॉस्काट बनाम **महाराष्ट्र राज्य** में उच्चतम न्यायालय ने निर्णित

* अतिथि विद्वान (विधि)शासकीय जे. एन. एस. पी. जी. महाविद्यालय, शुजालपुर मंडी, जिला शाजापुर (म.प्र.) भारत

किया कि सिद्धदोष व्यक्ति को नि:शुल्क विधिक सहायता पाने का अधिकार है। यह अनुच्छेद 21 के अधीन ऋजु न्यायोचित और युक्तियुक्त प्रक्रिया का आवश्यक भाग है। कारावास में दण्ड भोग रहे कैदियों का भी यह अधिकार है।

विधिक साक्षरता – भारत जैसे देश में न्यायिक प्रक्रिया महँगी और दीर्घकालीन होने के कारण सामान्य व्यक्ति को न्याय प्राप्त करना दुर्लभ होता है। विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में कानूनी परामर्श उपलब्ध होना कठिन होता है। अत: आज इस बात की आवश्यकता है कि कानूनी शिक्षा के प्रचार और प्रसार के द्वारा विधिक साक्षरता के अभियान को सार्थक बनाया जायें। इस अभियान में अधिवक्ताओं, विधि के प्राध्यापकों एवं विद्यार्थियों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं की मिली जुली कानूनी ज्ञान प्रसारण समितियाँ, गठित की जानी चाहिये जो सुदूरवर्ती ग्रामीण अंचलों मे जाकर वहाँ के निवासियों को उनके दैनिक संव्यवहारों से संबंधित मूलभूत कानूनों के विषय में जानकारी उपलब्ध करायें तथा उनके मामलों तथा समस्याओं को आपसी बातचीत द्वारा निपटाने का प्रयत्न करें।[3]

लोक अदालतें – यह सच है कि नि:शुल्क कानूनी सहायता और सलाह समितियाँ गरीबों तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को समान न्याय दिलाने का भरसक प्रयत्न कर रही हैं फिर भी विधि की प्रक्रियात्मक जटिलताओं के कारण मुकदमें शीघ्रता से नहीं निपट पाते है। इसका मुख्य कारण यह है कि अच्छे अधिवक्ता विधिक सहायता योजना के अंतर्गत कार्य करने में विशेष रूचि नही रखते है। क्योंकि इस कार्य में मिलने वाली फीस अपेक्षाकृत कम होती है।

विधिक सहायता की औपचारिकताओं के कारण न्यायालयों को भी मामलों को शीघ्रता से निपटाने में अनेक अड़चने आती है। इस समस्या के समाधान हेतु अनेक राज्यों ने लोक अदालतो का गठन किया है।

लोक अदालतों का मुख्य उद्देश्य आपसी सुलह द्वारा जन-सामान्य को सस्ता और शीघ्र न्याय दिलाना है ताकि न्याय सभी के लिए सुलभ तथा सरलता से उपलब्ध हो। भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी. एन. भगवती के शब्दों मे 'जहाँ अब तक पक्षकारों को न्यायालय के दरवाजे खटखटाने पड़ते थे, अब लोक अदालत की व्यवस्था के अंतर्गत न्याय स्वयं पक्षकारों के दरवाजे पर जाकर उन्हें राहत दिलाएगा' इसमें संदेह नहीं कि लोक अदालते भारतीय न्याय व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान कर रही है तथा इनसे दीवानी न्यायालयों में मुकदमों की संख्या नियंत्रित रखने में पर्याप्त मदद मिली है। भारत के वर्तमान परिवेश में लोक अदालतों के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि न्याय को जन-सामान्य तक पहुँचाने में यही एकमात्र सुगम,सुलभ, सशक्त एवं उपयोगी साधन है।[4]

लोक हितवाद – लोकतंत्र में जनहितवाद विधि-शासक का एक आवश्यक तत्व है। समाज के कमजोर वर्ग के संवैधानिक एवं विधिक अधिकारों की सुरक्षा के लिये लोकहितवाद न्याय की नवीनतम अवधारणा है जिसके माध्यम से लोक न्याय की प्राप्ति संभव है। न्याय अधिकतम व्यक्तियों तक सर्वसुलभ हो कर पहुँच सके, इस हेतु जनहितवाद की सकारात्मक अवधारणा ने न्यायपालिका के दायित्वों एवं नवीन आयामों को विस्तृत किया है।

न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अनु.32 के अधीन कोई संस्था या लोकहित से प्रेरित कोई नागरिक किसी ऐसे व्यक्ति के संवैधानिक या विधिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए रिट फाइल कर सकता है जो निर्धनता अथवा किसी अन्य कारण से न्यायालय में रिट फाइल करने मे सक्षम नही है। **अखिल भारतीय रेल्वे शोषित कर्मचारी संघ** बनाम **भारत संघ** के मामलें में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक अपंजीकृत संघ भी अनु. 32 के अधीन रिट के लिए आवेदन दे सकता है, यदि वह किसी सार्वजनिक हित के संरक्षण के लिए ऐसा करना चाहता है।

निष्कर्ष – ज्ञातव्य है कि उपर्युक्त प्रयासों के बावजूद भारतीय समाज आज भी अनेक गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है जिनमें गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ापन, साम्प्रदायिकता, राजनीतिक दुराचरण, आतंकवाद आदि विशेष उल्लेखनीय है निरन्तर बढ़ती हुई भौतिकवादी प्रवृत्ति, शिक्षा के बाजारीकरण तथा राष्ट्रीय चरित्र के ह्रास के कारण प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ एवं धन-लोलुपता में लिप्त है। अत: ऐसी परिस्थिति में विधि और विधायन का महत्व ओर भी बढ़ जाता है क्योकि केवल इनके माध्यम से ही समाज के विभिन्न घटको के हितो में टकराव की स्थिति का निवारण करते हुए इनमें सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य, ए.आई.आर. 1973 सु.को. 1461।
2. डॉ. बेला भनोत: भारत मे न्याय प्रशासन, पृ. 126।
3. डॉ. एन.वी. परांजपे : विधि शास्त्र एवं विधि के सिद्धान्त, पृ. 476।
4. डॉ. एन.वी. परांजपे : लोकहित वाद, विधिक सहायता एवं सेवाएँ तथा लोक अदालतें और पैरा लीगल सेवायें, पृ. 220।

****

A Comparative Study Of Personality And Stress Between Male And Female In Different Employment

Sunita Dhenwal * Preeti Mathur **

Abstract - The purpose of this research was to determine the personality and stress of males and females in various jobs. The sample consisted 60 persons from different employment (15 Teacher and 15 Lawyer) by using Random method. The PSLE Scale by Dalbeer Kaur, Harsharan Kaur and Dr.Gurumeet Singh and for personality assessment MPI by S.S.Jalota and S.D.Kapoor were used. Inferential statistics such as t-test was used to analyze the difference between personality traits & stress of different group according to jobs and gender. Also correlation is measure between stress and personality traits, the Pearson correlation was used.

Keywords- Personality traits, Stress.

Introduction - When psychologists define personality, they tend to refer to qualities within a person, characteristics of a person's behavior or both. In a more recent definition, Psychologist Walter Mischel(1976) mentioned both inner processes and behaviour but emphasized behavior. Personality he consists of "distinctive patterns of behaviour that characterize each individual adaptions to the situations of his/her life ". No single definations of personality is acceptable to all psychologists.

In trait approach the personality in traits . In one day to day conversation we label our friends and near ones with traits such as being honest, lazy, shy, aggressive, etc., in the real sense,traits are defined as relatively permanent and consistent general behaviour patterns that an individual exhibits in many situations. G.B.Allport was the first personality theorists who adopted trait approach in providing a theory of personality. Allport's theory of personality thus rejected the notion of a relatively limited number of personality types in favour of descriptions of highly individual personalities made up of a large number of traits.

We will define stress as an internal state which can be caused by physical demands on the body or by environmental and social situations which are evaluated as potentially harmful, uncontroable or exceeding our resources for coping. The physical, environmental and social causes of the stress are termed stressors.

Hens Selye (1976) termed the body's response to stressors the General Adaption Syndrome (GAS) , It consists of three stages-

i- The Alarm Reaction;

ii- The Stage of Resistance ;

iii-The Stage of Exhaustion.

We can measure stress by four methods:-

1. Self Report Method- In it method subject tells his emotional problem, Life changes effected by stress. In it we can use many tests- Hassels Scales by Kanner et.al.m. (1981): Social Readjustment rating scale by Holmes & Rahe (1967) and in India PSLE Scale by Dr. Dalbir Kaur Singh and Harsharan kaur is very famous. This scale consists 51 life events. These 51 items are further classified according to (i) whether they were personal or impersonal, (ii) whether they were desirable or undesirable, (iii) Ambiguous items.
2. Behavioral Methods
3. Physiological Indices method
4. Biochemical Indicators

The stress can by Stressful life events, Conflict of motives, Daily Hazels, Work-related sources, Environmental sources.

There is very little attention has paid on personality types and its' influence on conflicts. Only lately researchers have considered the role of individual difference variables in the work link (Carlson, 1999; Noor, 2003; Stova, Chiu, & Greenhaus, 2002).

The review by Cohen and Edwards (1989) concluded that locus of control is the personality characteristic that provides the most consistent and the strongest evidence of stress-moderation.

Looking at the present Scenario a study was undertaken to walvate stress a related with personality traits with following objective –

1. To study stress and personality traits of teacher and Lawyer.
2. To study teacher and Lawyer's personality and stress on gender differences.
3. To study Correlation between no. of personality and stress.

Methodology- The sample of the present study consisted of 60 persons of different employment. i.e.

* **Research Scholar (Psychology) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA**
** **Professor (Psychology) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA**

Employment	Male	Female	Total
Teach	15	15	30
Lawyer	15	15	60
Total	30	30	60(N)

Research Tools –

1. **Maudsley Personality Inventory** – It's developed by Eysenck (1956) in Maudsley Hospital, London. It's Indian adaptation by S.S.Jalota and S.D.Kapoor (1965). This scale has 48 items. There are three options are given "Yes","?"And "NO". The reliability of this test is .90 by split half method and it has construct validity.
2. **PSLE Scale-** It is developed by Dr.Gurumet Singh, Dr.Dalbir Kaur and Harsharan Kaur. It has a list of general incidents which are occur in life, subject has to chosen an incident which he/she indicates. It has two categories- which are occur in last one year and second occur sometime in life.

Result - Table showing Mean, Standard Deviation and't' value of different jobs on personality traits (E&N)

On 'E' Traits

S.No.	Group	N	M	SD	t	Level of Significance
1	ML	15	58.33	6.16	5.17	
	FL	15	46.73	6.14		
2	MT	15	50.33	9.30	0.91	
	FT	15	49.76	7.23		.01=NS
3	ML	15	58.33	6.16	2.09	
	MT	15	52.33	9.30		
4	FL	15	46.73	4.76	1.23	.05=NS
	FT	15	60.14	7.23		

ON 'N' TRAITS

S.No.	Group	N	M	SD	t	Level of Significance
1	ML	15	54.26	3.64	2.90	.05 =NS
	FL	15	50.6	3.30		
2	MT	15	52.13	5.30	0.20	
	FT	15	51.73	5.02		
3	ML	15	54.26	3.64	1.29	.01 = NS
	MT	15	52.13	3.30		
4	FL	15	50.60	3.30	0.71	
	FT	15	51.73	5.20		

Significant Differenitiate Of Stress

S.No.	Group	N	M	SD	t	Level of Significance
1	ML	15	12.46	3.13	2.71	.05 = NS
	FL	15	15.66	3.37		
2	MT	15	15.86	4.90	0.76	
	FT	15	17.33	5.70		
3	ML	15	12.46	3.13	2.26	.01 = NS
	MT	15	15.86	4.90		
4	FL	15	15.66	3.37	0.98	
	FT	15	17.33	5.70		

Correlation Table Between Stress And Personality Traits

	N/S	E/S
MT	-0.09	-0.34
ML	0.42	0.11
FT	-0.13	0.05
FL	-0.40	0.40

Disscussion - The main objective of this study is to comparative study between male and female stress level with personality traits of different employment. In the result we found that both gender has difference on emotional control, means female can control her emotions rather than males and males are extrovert and females are introvert. It is also found that Lawyers are extrovert than Teachers.

Acc. To table 2 – Female lawyer has much stressful than male lawyer and on job level teacher are stressful rather than lawyers. Acc. To table 3 – different correlation was found . Male Lawyer has negative low correlation; male teacher has found positive average correlation; female lawyer get negative low correlation and female teacher also get negative low correlation. It means if there is emotional stability than stress levels will less, if extrovertness is more than stress will less and if introversion is less than stress will high. This findings coordinates with study by Mc.Clun, L.A., & Merrel, K.W.(2008) who studied the relationship between personalities with self concept. Findings further indicated that Introverts had low stress.

References :-

1. Carlson, D. S. 1999. Personality and role variables as predictors of work-conflict
2. Cohen, S., & Edwards, J. R. 1989.Personality characteristics as moderators between stress and disorder. New York
3. Eysenck 1959-Manual of MPI, London.
4. Mangal, S.K. (2006)-General Psychology, Sterling Publishers private limited
5. Mc.Clun, L.A. & Merrel, K.W.(2008)-Theories of personality, Columbia University
6. Morgan & King (1993) - Introduction to Psychology, Tata McGraw Hill education private limited, New York.
7. R.K.N Darshni (2014) -Article on personality and stress level, Internatinonal Journal of scientific and research publication.

****

The Importance of Program Preparation and Content Development in Radio

Sana Jafri * Prof. Shambhu Nath Singh **

Abstract - Not many years ago, say about 10, India had only 1 radio network: All India Radio (AIR). After government gave the final to nod to have private fm stations, within 5 years (2002 to 2007) we saw the numbers rising to 300 radio stations in various states and cities. Through this paper, I wish to emphasize upon the importance of preparing before a person go in and host the show and at the same time, how the show presenters and the programming team comes together to churn out interesting content for the listener, every day! Following seminar paper is an attempt to have an understanding of how to show presenters prepare themselves before they go on-air and entertain us, how important is whole concept of gearing yourself up for the task and how to develop content with regards to indian private radio industry.

Keywords: Show preparation, Program preparation, Prepsheet, user generated content (UGC), content development, radio, radio programming.

Objectives -

1. To establish the importance of program preparation, development of content, how to develop content with regards to indian private radio industry.
2. To provide inputs in programming and content strategy which helps a radio station in attracting the audience and keep them hooked.
3. Importance given to various other factors likeRJs, program structure and format,Radio moments & radio moods.

Need gaps and possible improvements

Methodology - To find out the basic listenership trend than sharpening known fact. For the purpose, a qualitative study was decided. Only a qualitative method of research will allow the development of a good understanding of what is happening in the situations that have been discussed previously.

Literature Review - Ever wondered how does a radio jockey speak all that with such and ease, makes us happy, interact with the audience flawlessly, ask intelligent questions, articulately summarize serious issues and play your favorite music. The answer is just one word: ***Preparation***!! Show prep as it's called in Radio, is the 1st and the most basic requirement to be in the business, successfully and for long.

There have been multiple case studies done by the government and private organizations to study Indian Radio Market with emphasis on music, advertising, consumers etc.. After analysing a lot of market researches, it is strongly felt that importance of developing content and show preparation is the biggest area of interest and importance for any radio station..

"Radio in Mornings acts as a Reach builder while in evenings it's a frequency builder unlike TV which is fragmented." [IRF ppt by RAM]

Out of home listening continues to grow rapidly, truly making Radio the only "mobile medium"unlike TV.

To have a better understanding of how things work, here's a brief summary of a typical radio station's (private fm channel) structure and a little about it's 'editorial' department, called programming.

Main functions of a radio station :

1. Programming
2. Marketing, PR & Activations
3. Sales & Traffic
4. IT
5. Accounts & Admin

Importance of program preparation and content development -

Preparation (Prep) - There is an old adage - You reap what you sow... This is not true for radio.

Radio gives you back many times more but all depends on the kind of effort you put in for the program/ show. Often playlists are available a day in advance, if not a week. To be able to conceptualize a show in advance gives enough time to focus on the little improvements that one might want to include. However if one hasnt done much prep, it shows on air and that is absolutely avoidable. With regards to private fm industry in India where each show is a 3 to hour, program preparation becomes indispensable for any On-Air talent. It equips a person with information, statistics, data and makes one the most articulate person when you start talking. Hosting a show with proper prep is like bowling to one's own self. You exactly know what going to come and how is a person going to deal with it.

Basics of prep:

1. Constantly be updated on:

a) What is top of the mind, contemporary events/ topics?
b) What is the talk of town/ country?
c) What is the pulse, trends going on?

2. Fleshing out issues:

a) Pick Topics About Which You Really Care.
b) Focus the topic.
c) Engage the audience by forming a question.
d) State your opinion or position on a talkable topic.
e) Explain your view (objective) through example, experience or storytelling.

3. The Sunshine Factor- An On-Air talent, it's a must that one should be able to bring a smile on listener's face. While you might feel extremely passionate about a topic but unless

* **Research Scholar, School of Journalism and New Media Studies, I.G.N.O.U. (New Delhi) INDIA**
** **Professor, School of Journalism and New Media Studies, I.G.N.O.U. (New Delhi) INDIA**

there is a smile in the treatment, it will not be amusing on air. The sunshine factor – or the chirpy, bright, interesting, humorous etc attributes that one associate with a station might be missing and hence your content will fall flat on its face.

4. Bank topics - Like money, there can be days when one can run out of ideas & topics. Hence, it is highly recommended to have a back up stock which can be used when there's a serious dearth. There's no harm in using universal topics which have worked in the past. For example:

a) Man Vs Woman issues
b) Research of human psychographics

5. User generated content - Not only it is a good way to understand the listener, it is also a potent technique of using user's content and gratify them by giving them their due credit. UGC can be asked for via SMSes, mails, emails, site comments etc. but the most important thing here is to how to make them come up with something interesting? To get what one want to use On-Air, the first and foremost thing is to ask the listener something which evokes emotion. For example: Do not ask who's you favorite star, instead ask something like: Do you think that the look carried by Saif Ali Khan in 'Agent Vinod' goes with his persona?

6. Storyboard: Developing a story - The sequencing of content is really helpful as it helps in moving forward in a structured fashion, without missing on important and interesting details, facts and figures. Storyboard allows the content flow to be in linear motion, along with the advantage of timing the content aptly.

7. Discussing possibilities - It is always advisable to think and re think of the consequential reactions from the audience regarding content. The approach should be objective, not subjective. An RJ can't impose his or her personal thoughts/ views on anybody. One can not teach or preach the audience, it is an expert's job hence let it come from the horse's mouth. A good RJ / producer will anticipate/ predict possible effects or outcomes and prepare for the same.

8. Finding the human interest - To make the story board work, it is always recommended to highlight the human interest in the story. We are all emotional beings and we're equally good at hiding our emotions. Radio, apart from being the theatre of mind, has the great ability and the potency to evoke & provoke. There's no harm or any side effect.

Understanding Content - Anything which goes "ON-AIR" is content. Music/ songs, humour, promos, station ID's, RJ Talk, ads, bumpers, stingers and various other audio productions, these all can be termed as content. Thus it becomes quintessential for a radio station to filter and be as careful as it can before/while putting anything ON-AIR. A radio station, like any other responsible medium, cannot afford to AIR anything obnoxious or something which the audience would not welcome.

Various types of content:

A. Music as content - Music, especially in India with regards to private radio, is the back bone of any radio station. Since everything revolves around the music, it is of great importance that the right kind of music is selected. While selecting music, one cannot afford to be biased or subjective, the selection process cannot be based on an individual's personal likes and dislikes. Music selection is done while keeping the target group (TG) in mind. It is based on various other factors too but they revolve around the TG only. By simply dividing TG into 2 broad categories- YOUTH and ELDERLY people, it is quite predictable that the younger generation would prefer/ like music which is "IN" (contemporary) and be just familiar with old music. While on the contrary, elderly people would have a stronger connect with "IN" (classic) music of their times and just recognize the contemporary music.

B. TALK as Content - Radio is a background medium which primarily carries music as content. There are different stations with different content policies. Few have only music/ talk and few have both. On the contrary, television is a foreground medium. For example tv channels like CNBC, Aajtak or Star plus uses talk or drama as basic content which needs undivided attention. When it comes to "Talk as content", it means that various other audio elements like- ads, promos, bumpers, stingers and most importantly- the RJ TALK.

C. Music & Talk combo - It is this deadly combo which is considered the best.Empirically observed and logically deducted. It is believed that a person's voice starts to get boring beyond 45-50 seconds. The above format is considered as one of the best formats as it has music as its prime content punctuated with ample talk in aptquantity. Ideally an hour has 3-4 minutes of talk divided in 5 RJ Links/ JTBs (Jock Talk Breaks). 30-45 seconds of talk break gives the RJ apt time to deliver the best to his capacity with absolute energy levels & pace. Few may find this time limit a little squeezed up but then- "Practice makes a man perfect"! This time limit ensuresslick packaging full of zing and a solid punch. It also works the other way around as people want more music and less talk! The amount of talk should be in same proportion as like the good food has salt just to the right quantity…

GET THE BASICS RIGHT…

Be specific and clear

Interest factor

Sixth Sense

Conclusion - After interacting with the team of radio stations, the audience, my own observations, field visits, reading the experts' take, It is hereby concluded that how important it is for a host and the station to be prepared on everyday basis to churn out interesting, engaging and sticky content for it's listeners. The other factors like music, in house produced ads, promos etc. too play a pivotal role but at the end of the day, 'content' delivered by the jock becomes a differentiator in itself which is indeed one of the most important factors from a radio stations perspective when it comes to choose between radio stations by it's audience.

References :-

1. Changing face of Indian Media – Implications for Development Communication by Nirupama Sarma
2. Media the key driver of consumerism, Macro and Micro linkage and policy dimension: a case study of FM Radio" By Abhilasha Kumari published in the book, Indian Industrial Development and Globalization by SK Goyal, SR Hashim, MR Murthy, KVK Ranganathan, Academic Foundation
3. Privatizing the airwaves : the impact of globalization on broadcasting in India by Daya Kishan Thussu, Page 125
4. Radio can improve effectiveness, Radio Trends in India and Abroad: A Madison India Study VIA www.exchange4media.com/radioresearch
5. Radio stepping out of studios : let's unfold the mystery, 20th sept'11, www.adgully.com/radio/feature

Latest Trends in Private Radio Channels in India

Sana Jafri * Prof. Shambhu Nath Singh **

Abstract - Today radio programmes have become very different than what they were in the past. The paper focuses on how radio programming and show content is changed, with respect to private FM Radio. It gives a view point about the changes and recent trends that are being adopted in radio shows today. The biggest challenge is to increase the listenership which encompasses to business development.

Keywords - FM radio, Radio Shows, Radio programming, recent trends in radio, Radio in India, positioning of radio stations.

Introduction - Radio Trends - It's been 10 years ever since the private Radio paved its way into the capital of India, Delhi. Apart from the programming changes that the radio networks made to woo their audience, the major change took place on the other side of the table; the audience. Not only did the numbers grow phenomenally but they also evolved at an equal pace. They know what they want and they also know what they don't. The latter is more important for any radio network so as to stay away from what is not liked as not only does it save time, effort and money but also help them to not to put off their existing listeners.

One of the main aspects for differentiating yourself with another network is 'positioning'. It's something a station wants to be but it can never be perceived in the same way in listener's mind. I often feel sad about the fact that why are we still hanging on to our so called positioning statements when the fact lies in the audience's head. It's high time that we should look beyond and drop the statement altogether, especially each time a host comes in. A station might spend crores to establish that it's the coolest radio station with best music or the only one who plays superhits or may be the hottest one which keeps everybody happy, BUT, who're they to tell the audience? Like each Homo sapiens on this earth, we all need something different all the time or in other words variety. Why to expect our listeners to cling on to one particular station all the time? The key lies in the content and the host is expected to get that part bang on! We play same music, same ads but for that matter same news/ info available too. But the last bit allows you to process and deliver it in your own special way. So in my opinion, let's not focus on telling people who or what we are, let's reach out to them and ask them to sample our product. And if we've done enough home work in terms of understanding their preferences, you cannot go wrong no matter what's your tagline.

According to 'David T. MacFarland', the author of "Future Radio Programming Strategies", there are various challenges for a radio station and the foremost is:

"Listeners Do Not Care About the Radio Business -

The way radio industry people tend to divide up their world (management, sales, engineering, programming etc.) does not occur to the listener in the least. Listeners do not even care about programming – as a science or an art. Listeners do note when listen for formats, although they listen to them because that is what is offered. The Radio listener tunes in for a certain set of gratifications that Radio provides. However, most of the time, radio is not unique in providing those gratifications or does not provide them consistently enough to suit some listeners."

One of the interesting attributes as mentioned by 'David T. MacFarland' about 'What Radio Does Best'.

"Radio is encompassing**-** Although radio does not demand strong attention from the listener, it holds the stage in a way that no visual medium does- because human beings do not have ear lids. You can close your eyes, but not your ears. Radio sound is either foreground or back ground in level- for the listener, there's no audio equivalent of film or television's 'medium shot' and there is no corollary in sound to 'tunnel vision' in sight- the sensation that all the peripheral detail is being blocked out and that we are concentrating just on the essential elements in the scene. A radio listener does not blot out most of the room and see only the screen as he or she does when watching tv, or see only the words on paper as when reading a newspaper or magazine. A radio listener is still able to utilize the full field of vision, which is way radio's (unlike tv's) are legal in front seats of cars. And, although the radio listener can practice selective perception, and can decide just to hear rather than to listen actively, still, If anything it audible, the listener hears it all at once. To the listener, then, radio is encompassing".

*** Research Scholar, School of Journalism and New Media Studies, I.G.N.O.U. (New Delhi) INDIA**
**** Professor, School of Journalism and New Media Studies, I.G.N.O.U. (New Delhi) INDIA**

The other thing which bothers me the most is the same old fashioned monotonous ways of making our audience laugh with 'not-so-real' & rigged pranks. Do they think we can't make out if they're making it up or are they taking us for granted? Not only the authenticity of any of the pranks which gets AIRED is highly questionable but at the same time the 'beeped obnoxious' stuff needs to be just taken off air. It's high time that they go back and brush up their 'code of conduct' which is hardly being paid attention to. It's a matter of time that if not listener, a programmer is going to bring it to the concerned authority's notice and have it all cleaned up. We don't have 'A' certificates for our stations or a censor board to approve each and every bit before it goes On-Air.

Conclusion - Radio networks are highly self regulated but then these small little things need to be rectified before things blow out of proportion. With more radio stations expected, it would be highly recommended that we analyze the trends and learn from them before it's too late.

References :-

1. Global Journalism, Expanding media imperialism mass culture and intrinsic politics by supatro ghose, year of publication: 2009, latest trends in global media, page 04
2. Impact, volume 9, issue 33, 03 feb 2013, radio:focus to up ad spends begins, in defence of globalization and commercialization
3. Privatising the airwaves: the impact of globalization on broadcasting in India by Daya Krishan Thussu, Media Culture and Society, page 125
4. The changing face of India Media- Implications for development organization, Author Nirupama Sarma

****

Ragging In Colleges

Dr. Alka Singhal *

Introduction - Ragging in India is a damaging form of interaction of the seniors in college or school with the juniors, newcomers or first years. It is similar to but not same as hazing in the United States, it is not an initiation. It involves insults (simple or suggestive sexual, sarcastic and even physical), running errands for seniors, and many other complex activities. Highly reputed Indian colleges have a wistful history of ragging especially Medical colleges. It has become increasingly unpopular due to several complaints of serious injury to the victims and strict laws regarding ragging. Ragging is now defined as an act that violates or is perceived to violate an individual student's dignity.

Following Supreme Court orders a National Anti-Ragging Helpline was launched by the Indian Government. Students being ragged send emails at helpline@antiragging.in to register their complaint, which can be registered without disclosing the name(s) of the victim(s). If the students wants, he or she may even complain without disclosing his or her name, by making an anonymous email id, or by calling the helpline number 1800-180-5522. Effective action is taken by the helpline for the complaints registered to it.

Present State - Practice of familiarising beginners with their seniors has now turned into a potent tool for ill-treating and punishing poor students if they fail to obey their seniors.

Under the pretext of fun, a poor student is often assaulted, sometimes even stripped and intimidated by his seniors and this ritualised torture leaves an indelible impression on his mind. The chilling incident continues to haunt him throughout his life, and he unknowingly develops various psychological disorders.The situation sometimes turns so bad that it compels the ragging victim to commit suicide. A report from 2007 highlights 42 instances of physical injury, and reports on ten deaths purportedly the result of ragging: Ragging has reportedly caused at least 30–31 deaths in the last 7 years. In the 2007 session, approximately 7 ragging deaths have been reported. In addition, a number of freshmen were severely traumatised to the extent that they were admitted to mental institutions.

In many colleges, ragging has been strictly banned and is proving effective . However, this ban has not been the case elsewhere, as seen by the number of ragging cases still reported by the media. Ragging involves gross violations of basic human rights. The seniors are known to torture juniors and by this those seniors get some kind of sadistic pleasures.

Though ragging has ruined the lives of many, resistance against it has grown up only recently. Several Indian states have made legislatures banning ragging, and the Supreme Court of India has taken a strong stand to curb ragging. Ragging has been declared a criminal offence.

However, the Anti-Ragging NGO, Society Against Violence in Education (SAVE) has supported that ragging is also widely and dangerously prevalent in Engineering and other institutions, mainly in the hostels.

Following a Supreme Court Order, a National Anti-Ragging Helpline was created which helps the victims and take action in cases of ragging, by informing the Head of the Institution and the local police authorities of the ragging complaint from the college. The main feature of the helpline is that thecomplaints can be registered even without disclosing the name by the victim, through email at helpline@antiragging.in, or through phone at 1800-180-5522.

Anti-Ragging Helpline, and Anonymous Complaints - India's National Anti-Ragging Helpline started working in June 2009 to help students in distress due to ragging. It consists of an email id and a 24 hour toll free number, where it is not necessary for the student to tell his or her name, although it is advisable that the students register the complaints in their name. Provision for anonymous complaints was consider of utmost important at the time of establishment of the helpline, since the victim after making the complaint remains with or in the close vicinity of the culprits, away from a fully secure environment.

Within 15 minutes of receiving the complaint, it is forwarded to the Head of the institution and the local police authorities through phone and email, who take prompt action against the perpetrators of ragging.

There has been a change in the email id of the helpline, from helpline@antiragging.netto helpline@antiragging.in. The second email id is in working condition since 2012, when the portal antiragging.in was launched.

As per UGC regulations, it is mandatory for a college to register an F.I.R. with police against the culprits if any violence, physical abuse, sexual harassment, confinement etc. takes place with any fresher. After receiving any such complaint from the Helpline, it becomes the duty of the Head of the institution to register the F.I.R. with police within 24 hours. A police case could be registered, if any college did not informing the police and registering F.I.R. within 24 hours

* Asst. Professor (Chemistry) Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA

of receiving the ragging complaint.(failing to inform a public authority, IPC 176).

The database of the Anti-Ragging Helpline indicates that it has been to an extent successful in ensuring a safer environment in colleges from where it registered the complaints

Responsibilities of Educational Institutions

Before and during Admission and Registraion -

1. Every public declaration, brochure of admission/ instruction booklet or the prospectus to print these regulations in full.
2. Telephone numbers of the Anti-Ragging Helpline and all the important functionaries in the institution, members of the Anti-Ragging Committees and Anti-Ragging Squads etc. to be published in brochure of admission/ instruction booklet or the prospectus.
3. Every student and his/her parents to file an affidavit avowing not to indulge in ragging.
4. The institution to prominently display posters detailing laws and punishment against ragging.
5. Anti-ragging squad to ensure vigil at odd hours during first few months at hostels, inside institution premises as well as privately commercially managed hostels.

After Admission -

6. Printed leaflet to be given to every fresher detailing addresses and telephone numbers of the Anti-Ragging Helpline, Wardens, Head of the institution, all members of the anti-ragging squads and committees, and relevant district and police authorities.
7. Head of the institution, at the end of each academic year, to send a letter to the parents/guardians of the students who are completing their first year in the institution informing them about these Regulations.

Anti-ragging committee and anti-ragging squad - Anti-Ragging Committee to be nominated and headed by the Head of the institution, and consisting of representatives of civil and police administration, local media, Non Government Organizations involved in youth activities, representatives of faculty members, representatives of parents, representatives of students belonging to the freshers' category etc.Duty of the Anti-Ragging Committee to ensure compliance with the provisions of these Regulations.Anti-Ragging Squad to be nominated by the Head of the Institution for maintaining vigil, oversight and patrolling functions and shall remain mobile, alert and active at all times.Anti-Ragging Squad to make surprise raids on hostels.Discreet random surveys to be conducted amongst the freshers every fortnight during the first three months.

The Heads of institutions affiliated to a University or a constituent of the University to submit a weekly report on the status of compliance with Anti-Ragging measures and a monthly report on such status thereafter, to the Vice-Chancellor of the University.

The Vice-Chancellor of each University to submit fortnightly reports, including those of the Monitoring Cell on Ragging in case of an affiliating university, to the State Level Monitoring Cell.

Complaint of ragging - First Information Report (FIR) to be filed within twenty four hours of receipt of such information or complaint of ragging, with the police and local authorities.Head of the institution to forthwith report the incident of ragging to the District Level Anti-Ragging Committee and the Nodal officer.institution shall also continue with its own enquiry and remedial action to be completed with-in seven days.

****

राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण – आवश्यकता, समस्याएँ एवं सुझाव

डॉ. सुनीता बाथरे *

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण एक लगातार चलने वाली अनवरत और गतिशील प्रक्रिया है इसका मूल उद्देश्य यह है कि आधी आबादी का प्रतिनिधित्व मुख्य धारा से जोड़ा जाये ताकि उन्हें सत्ता संरचना में भागीदारी बनाया जा सके। वे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि समस्त क्षेत्रों में सशक्त हों उनका स्वास्थ्य उत्तम हो एवं स्वयं के निर्णय लेने में पूर्णत: स्वतंत्र सक्षम हो। महिला सशक्तिकरण की पहल 1985 में महिला अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन नैरोबी में की गई थी। महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य– 'महिलाओं की पुरूषों के बराबर वैधानिक, राजनैतिक, शरीरिक मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनके परिवार,समुदाय समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्टभूमि में निर्णय लेने की स्वतंत्रता है। भारत में महिला सशक्तिकरण से आशय प्राथमिक रूप से महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक दशा में सुधार लाना है। यह एक व्यापक आवधारणा है। जिसके अंतर्गत महिला के कल्याण व विकास हेतु उसके अतिरिक्त गुणों का विकास कर उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना, ऐसे समाज का निर्माण करना, जिसमें शिक्षा के माध्यम से चिंतन एवं निर्णय क्षमता विकसित हो, उसे आर्थिक स्वावलम्बन हेतु रोजगार उपलब्ध हो उसमें अपने अधिकारों एवं कर्तव्य के प्रति जागरूकता हो, उसे सामाजिक व्यवस्था से समानता का दर्जा मिले, सुरक्षा, संरक्षा एवं न्याय की वह अधिकारिणी हो, नीति निर्धारित राजनीति में उसका अपना स्थान हो। समग्र संवेदनशील एवं सकारात्मक सोच के साथ वह अन्तर्बाह्य रूप से समर्थ व सशक्त नारी हो देश के सामाजिक, शैक्षाणिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक विकास में समुचित भागीदारी का निर्वाह कर सकती है।[1]

इमैनुअल कांट जर्मन दार्शनिक ने कहा– अपनी जिंदगी इस प्रकार जियो जेसे आपके कार्यो से निकली शक्तियाँ संसार के नियम बनाने वाली हो।

महिला सशक्तिकरण में आवश्यक कठिनाईयां –

- पुरूषीय अहम व तानाशाही
- अशिक्षा व निर्धनता
- आर्थिक पराधीनता
- दहेज संबंधी प्रताड़ना
- लगातार घटता लिंगानुपात
- पुरूष प्रधान सामाजिक विधान
- मानवाधिकारों का हनन
- निष्प्रभावी कानून और व्यवस्था
- पाश्चात्य सभ्यता का दुष्प्रभाव
- अपराधियों को सजा न मिलना
- भ्रष्टाचार और गिरते मानवीय मूल्य
- स्वास्थ्य व कुपोषण
- जटिल प्रशासनिक प्रक्रिया।[2]

हमारे संविधान ने महिलाओं ओर पुरूषों को समान अधिकार प्रदान किया है। 21 वीं सदी की शुरूआत में भारत में सन् 2001 को महिला सशक्तीकरण वर्ष घोषित किया गया।

महिलाओं को सशक्त ओर सक्षम बनाने हेतु सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाऐं – भारत का संविधान भी महिला सशक्तीकरण एवं सुरक्षा हेतु निम्न प्रावधान प्रदान करता है।

- अनुच्छेद –14 : कानून के सक्षम समानता दिलाना।
- अनुच्छेद –15 (3): महिलाओं तथा बच्चों हेतु विशेष सुविधा।
- अनुच्छेद –16 : बिना भेदभाव के नौकरी में समानता।
- अनुच्छेद –19 : समान अभिव्यक्ति।
- अनुच्छेद –21 : प्राण व दैहिक स्वतंत्रता से वंचित न करना।
- अनुच्छेद –23 : व 24 : नारी क्रय–विक्रय व बेगार प्रथा पर रोक लगाई।
- अनुच्छेद –39 (घ) : समान कार्य समान वेतन।
- अनुच्छेद –243 (घ) : पंचायती राज व नगरीय संस्थाओं में 73 वं वे 74 वें संशोधन के माध्यम से महिला आरक्षण।
- अनुच्छेद –42 : महिला प्रस्तुति सहायता।
- अनुच्छेद –47 : पोषाहार जीवन–स्तर लोक स्वास्थ्य में सुधार करना सरकारी दायित्व।
- अनुच्छेद –330 : 84 वें संशोधन द्वारा लोकसभा में महिला आरक्षण।
- अनुच्छेद –332 : 84 वें संशोधन द्वारा विधानसभा में महिला आरक्षण।

महिलाओं को समानता के अधिकार दिलाने हेतु एवं उन्हें सुरक्षा प्रदान करने हेतु विशेष अधिनियम की व्यवस्था की गई है जो इस प्रकार है–

- बागान श्रम अधिनियम 1951– महिला कर्मचारियों को अपने बच्चों को दूध पिलाने हेतु विशेष अवकाश
- कर्मचारी राज्य बीमा विनियमन अधिनियम 1952 – प्रस्तूति लाभ की दवा हेतु चिकित्सकीय प्रमाण पत्र की तिथि से लागू होना।
- खान अधिनियम 1952 : भूमिगत खदानों में महिलाओं के नियोजन पर रोक।
- बीड़ी सिगार कर्मकार अधिनियम 1966 – महिला कामकारों के निर्धारित सीमा में होने पर शिशु सदनों की व्यवस्था।
- ठेका श्रम अधिनियम 1970 – महिलाओं से प्रात: 6 से शाम 7 बजे के बीच 9 घंण्टे काम कराना व उसके बाद काम कराने पर प्रतिबंध।
- चूना पत्थर लोहा मैग्नीज बीड़ी कर्मकार उद्योगों पर – सलाहकार समितियों में महिला सदस्य की अनिवार्य नियुक्ति
- बाल विवाह निषेध अधिनियम1976 : कम उम्र बालकाओं– बालकों की शादी पर पाबंदी।

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) पं. शंभूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

- स्त्री अपशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम 1986 : महिलाओं के अश्लील प्रदर्शन पर प्रतिबंध।
- वैश्यावृत्ति निवारण अधिनियम 1986 : महिलाओं को अनैतिक कार्यो में दुरूपयोग करने वालों पर प्रतिबंध।
- दहेज अधिनियम 1987 : दहेज लेने देने पर प्रतिबंध।
- सती निषेध अधिनियम 1987 : पति की मृत्यु पर जिन्दा जलाने या सती होने पर प्रतिबंध।
- प्रसवपूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994 : गर्भावस्था में बालिका भ्रूण की जांच पर रोक।

सशक्त महिलायें राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर – सानिया नेहवाल– बैटमिंटन –

चित्रा रामकृष्णा – Joint MD राष्ट्रीय स्टॉक एम्सचेंज
शिखा शर्मा – सी. इ ओ एक्सिस बैंक
चंदा कोचर – एम डी बिझेनिया इंडस्ट्री
वनीता नारायण – एम डी आइ बी एम
जयेती चौहान – डायरेक्टर ब्रिस्लरी ग्रुप (ब्रिस्लरी)
कृतिका रेड्डी – हेक फेसबुक आइ इन डी
नीलम धवन – एम डी एच पी

इन महिलाओं के संबंध में मेहमेत मुरात इलावन, तुर्की लेखक का कथन उपयुक्त जान पड़ता है – 'कुछ बैठकर जिंदगी देखते है। कुछ नाव से समुद्र में निकल जाते है और जिंदगी उन्हें देखती है'।

पूर्व प्रधानमंत्री इंद्रिरा जी साहसी, निकट, कुशल राजनीतिक, कूटनीति उन्होंने अपनी दक्षता का पश्चम राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किया बांग्लादेश संकट का सामना दृढ़ता के साथ किया व अमेरिकी धमकी के आगे झुकने से इंकार किया बात दिसम्बर 1971 में प्रथम सप्ताह की है। सेना के तीनों प्रमुख इंदिरा जी को जानकारी दे रहे थे। एक ओर सेनाध्यक्ष जनरल मानेकशॉ ओर दूसरी तरफ नोसेना प्रमुख एउमिरल नंदा बैठे थे प्रधानमंत्री के सामने प्रेजेंटेशन चल रहा था तभी एडमिरल नंदा बोले – 'मेडम अमेरिका का सातवां बेड़ा बंगाल की ओर बढ़ रहा है। उन्होंने कहा मैंने आपकी बात सुन ली है। आइए ब्रीफिंग को आगे बढ़ाएं। सारे सैन्य अफसर स्तब्ध रह गए। हालांकि सेना का मनोबल बहुत बढ़ गया, क्योंकि प्रधानमंत्री ने पूरे तिरस्कार के साथ अमेरिका की धमकी भरी कारवाई को खारिज कर झुकने से इंकार कर दिया था।

इमर्सन– उत्साह बलवान होता है। उत्साह से बढ़कर कोई दूसरा बल नहीं है। उत्साही व्यक्ति के लिए कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है।

ख्वाहिश हो यदि ऊंचाइयों को छूने की तो कुछ भी नामुमकिन नहीं है, इस दुनिया में यह बात साबित कर दिखाई है डॉ. रेणु खटोड ने। ग्वालियर की रहने वाली डा.रेणु अभी हाल हीं में अमेरिका के फेडरल रिजर्व बैंक की चेयरपर्सन बनी है। 40 साल पहले जब उन्होंने अमेरिका में कदम रखा जब वे अंग्रेजी नहीं जानती थीं, लेकिन अपने सफर के दौरान उन्होंने एक बात नहीं छोड़ी, वह है लगातार सीखते रहने की। वे पहले हयूस्टन यूनिवर्सिटी में चांसलर बनी, फिर अध्यक्ष। एक मध्यम वर्गीय परिवार में पली–बढ़ीं डॉ. रेणु हिंदी मीडियम से पढ़ाई हुई 1974 में शादी हुई। आगे पढ़ने की इच्छा में पति ने साथ दिया। हयूस्टन आ गई। सबसे बड़ी चुनौती अंग्रेजी सीखने की थी। रोज 8 घण्टे तक अंग्रेजी में निबंध लिखतीं। हजारों गलतियां करती। हर गलती पर पति गोला बनाते। और वे सुधारती रहतीं। रोज टीवी टॉक शो सुनती यहां उन्हें समझ में आया कि आप ज्यादा मेहनत करें तो भाषा आपकी तरक्की में कभी बाधक नहीं बनतीं। डॉ. रेणु कहती हैं– अमेरिका जाकर मैंने पी. एच. डी. की 1985 में फ्लोरिडा यूनिवर्सिटी के चांसलर पद के लिए अंतिम चार में सलेक्ट हुईं। यह ओहदा हासिल करने वाली वे अमेरिका की पहली भारतीय हैं। वे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की वैश्विक सलाहकार परिषद्, अमेरिका शिक्षा परिषद् तथा विदेश संबंध परिषद की सदस्य हैं।

सुझाव–

- महिला अधिकारों के संरक्षण के लिए बनाए गए विभिन्न कानूनों को पूरी ईमानदारी ओर सक्रियता से लागू करना। साथ ही घरेलू व सामाजिक स्तर पर जागरूकता लाने का प्रयास करना होगा।
- महिलाओं को अधिकाधिक शिक्षित किया जाए, शिक्षा ही ऐसा अस्त्र है जो संपूर्ण ढांचे को बदल सकता है।
- राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाई जाए। डॉ. अंम्बेडकर ने कहा था राजनीतिक, शक्ति वह मास्टर चाबी है जिससे कई समस्याओं रूपी तालों को खोला जा सकता है।
- निर्वाचन प्रणाली के वर्तमान स्वरूप पर पुनर्विचार किया जाये।
- महिलाओं को आर्थिक विकास की मुख्यधारा से जोड़ना।
- चुनाव प्रक्रिया में अधिकाधिक नामांकन हेतु महिलाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- महिलाओं के विभिन्न अधिकारों की प्राप्ति हेतु इनसे संबंधित न्यायिक प्रक्रिया को अधिक सरल, शीघ्रगामी व अल्प व्ययी बनाया जाये।
- महिलाओं के प्रति सामाजिक सोच में सकारात्मक परिवर्तन लाने हेतु ठोस व कारगर उपाय राष्ट्रीय परिवर्तन स्तर पर किये जाये।
- सामाजीकरण की प्रक्रिया के भी प्रयास करने होंगे आत्मनिर्भरता के गुर सीखने होंगे चाहे वे पढ़ी–लिखी हों या अनपढ़ उन्हें स्वयं सबल होना होगा शासन–प्रशासन के साथ स्वयं भी कदम बढ़ाने होगें। इंदिरा जी ने कहा– जब भी आप एक कदम आगे बढ़ाते हैं, तो मान कर चलिए, किसी न किसी चीज में परिवर्तन आना तय है।
- स्वरोजगार, टेलरिंग, रेडीमेड गारमेंट्स, माचिस, दियासलाई उद्योग, मोमबत्ती निर्माण कर व इसी तरह स्वयं की पूंजी से छोटा–छोटा उद्योग धंधा अपनाकर आर्थिक रूप से सशक्त हो सकती। पढ़ी–लिखी महिला ट्यूशन, पार्लर स्वसहायता समूह के माध्यम से सशक्त स्थिति प्राप्त कर सकती।
- महिलायें अपने कृषि व्यवसाय को अपनाकर काफी आगे बढ़ सकती पटियाला कि परमजीत कौर जिनके पड़ोस में कैंसर से काफी मौतें होते देखा और वे मर गईं। अपने 8 वर्ष के बच्चे को वे जीता देखना चाहती थीं, असल में पंजाब के आसपास रासायनिक खादों का बढ़ता प्रयोग न केवल भूमि का उपजाऊपन घटा रहा था। वहाँ कैंसर का प्रकोप भी बढ़ा रहा था। परमजीत कौर ने जैविक खाद का प्रयोग कर अपनी गृह–वाटिका में सब्जी की पैदावार प्रारम्भ कर उत्पादकता बढ़ाती व आसपास की महिलाओं को इसके गुर सिखाकर स्व–सहायता समूह बनाती व अपनी आमदनी में भी वृद्धि करती।
- राष्ट्रीय महिला आयोग की अध्यक्ष गिरिजा ब्यास भी सराहनीय कार्य कर रही है उनकी पंक्तियाँ जो वे अक्सर गाती है–

हम और तुम साथ चलेंगे,
डगर–डगर साथ चलेंगे।।
लम्हा–लम्हा साथ चलेंगे,
तेरा दुख अब मेरा दुख।।
सुख और दुख साथ सहेंगे,

हम और तुम साथ चलेंगे,
लम्हा-लम्हा साथ चलेंगे।।

- महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए समाज के दृष्टिकोण को बदलने की आवश्यकता है। कन्या भ्रूणहत्या, दहेज प्रथा जैसी समस्याओं के निदान की जरूरत है।
- महिलाओं को अपना बौद्धिक स्तर का विकास करना होगा।

महिलाओं को सशक्त करके ही एक स्वस्थ, सुंदर व विकसित समाज का निर्माण किया जा सकता है। विकास के हर पायदान पर उनके योगदान को सराहा जाये व उन्हें हर संभव आगे बढ़ाया जाए। मोदी जी से महिला सशक्तिकरण के बारे में पत्रकार रजत शर्मा ने जानना चाहा उन्होंने कहा - नवरात्रि का पर्व आने वाला है उस समय महिलायें, लड़कियां रात 1-2 बजे तक काफी जेवर पहनकर स्कूटी से अपने घर में सुरक्षित आ जाती हैं, कहीं कुछ घटना घटित नहीं होती यही सशक्तिकरण है। 21वीं सदी में सुशिक्षित समाज, सुरक्षित महिलायें, जिन्हें सबल और सशक्त बनाकर अपने देश का राजनीतिक, सामाजिक ओर आर्थिक रूप से सुदृढ़ बना सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. दिनेश श्रीवास्तव, भारत में महिला सशक्तीकरण के प्रयास प्रतियोगिता दर्पण, उपकार प्रकाशन, सितम्बर 2008 पृष्ठ-277
2. गौरव कुमार ग्रमीण महिला सशक्तीकरण के सामाजिक आर्थिक आयाम, कुरूक्षेत्र पृष्ठ- 14 प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली
3. रिसर्च जनरल ऑफ आर्टस, मैनेजमेंट व सोशल साइंस 2014 पृ. 46-47
4. इंटरनेट
5. दैनिक भास्कर, 31 अक्टूबर 2014
6. दैनिक भास्कर, 27 नवम्बर 2014
7. कुरूक्षेत्र
8. योजना पत्रिका

****

पर्यावरण प्रबंधन

डॉ. सारिका मिश्रा *

शोध सारांश – पर्यावरण संकट समूची दुनिया में गंभीर समस्या है, वर्तमान समय में पर्यावरण अवनयन के कारण जीव–जगत की नैसर्गिक व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, इसका प्रमुख कारण आर्थिक एवं सामाजिक विकास की गति को तीव्र करने हेतु प्राकृतिक संसाधनो का दोहन, अनुपयुक्त तकनीकी का उपयोग, एवं ऊर्जा का अविवेकपूर्ण दुरूपयोग है फलत: पर्यावरण गुणवत्ता का ह्रास हुआ है। इस अतिवादि शैली को नियंत्रित करने के लिए पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता को स्वीकार किया गया जिसके द्वारा जीवन की गुणवत्ता में सुधार और सत्त एवं संतुलित विकास हो सके। इस शोध पत्र के माध्यम से पर्यावरण प्रबंधन की संकल्पना उसके प्रमुख चरण पर्यावरण नियोजन के महत्व पर्यावरण प्रबंधन के उद्देश्य एवं पर्यावरण प्रबंधन के उपागम का उपयोग के अध्ययन करने की कोशिश कि गई है भारतीय परिप्रेक्ष्य में पर्यावरण प्रबन्धन की आवश्यकता और बढ़ती जा रही है इस शोध पत्र के माध्यम से पर्यावरण प्रबन्धन के सम्बध में कुछ सुझाव प्रस्तुत करने की कोशिश की जा रही है ।

कुँजी शब्द:– पर्यावरण प्रबंधन, पर्यावरण शिक्षा एवं शोध, संसाधन संरक्षण परीक्षण, संरक्षात्मक उपागम, सम्पोशक उपागम ।

प्रस्तावना – प्राचीन काल में व्यक्ति की आवश्यकता सीमित थी और इन सीमित आवश्कताओं के चलते व्यक्ति का पर्यावरण के प्रति सम्मान पूर्ण भाव रहता था। मानव प्रकृति का अंग तथा उनका आपसी सम्बन्ध मधुर होता था। परन्तु आधुनिक समय में उपभोक्ता वाद के चलते विकास की आड़ में संसाधनो का अत्याधिक दोहन के परिणाम स्वरूप पर्यावरण गुणवत्ता का ह्रास हुआ है। ऐसे समय में पर्यावरण प्रबन्ध की आवश्यकता महसूस की जा रही है। जिसमें प्रकृति का मनुष्य द्वारा इस तरह प्रयोग किया जाए की बिना क्षति के अधिकतम प्रयोग हो सके । इसके लिए जरूरी है कि मनुष्य द्वारा संसाधनो का वैज्ञानिक ढ़ग से ऐसा युक्ति संगत प्रयोग किया जाए कि उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो, और उसकी वास्तविकता एवं प्राकृतिक गुणधर्मिता प्रभावित न हो। पर्यावरण के भौतिक घटक किसी भी तरह कुप्रभावित होकर स्वास्थ्य एवं समृद्धता को हानि न पहुँचाये। पर्यावरण प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रकृति के संरक्षण को प्राणतत्व की तरह महत्व दिया गया है।

इस प्रकार पर्यावरण की अवधारणा में निम्नलिखित तथ्य निहित है।

1. मानव के अनुचित कार्यो व गति विधियो पर नियत्रण
2. विकल्पों की खोज
3. प्रकृति के तथ्यों का संरक्षण व परीक्षण इन लक्ष्यों कि प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है, कि मानव क्रियाकलापों से प्रकृति के घटको की गुणवता प्रभावित न हो, प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग परिष्कृत विधियों से किया जाये, अनवीनिकृत संसाधनों की गुणवत्ता प्रभावित ना हो, प्राकृतिक संसाधनो का उपयोग इस प्रकार किया जाए की आगत पीढीयों को भी इसका लाभ प्राप्त हो सके । पर्यावरण प्रबन्ध में संसाधनो के संरक्षण उनके दीर्घकालीन उपयोग और अधिकाधिक उपयोगी की योजना समाहित हो, क्षेत्रीय पर्यावरणीय समस्याओं का तत्काल समाधान किया जाये और यह सब पर्यावरण प्रबंध द्वारा संभव हो सकता है।

अ) पर्यावरण बोध एवं पर्यावरण जागरुकता – वर्तमान में पर्यावरण जागरूकता का निम्न स्तर ही पर्यावरण संकट का प्रमुख कारण है, पर्यावरण के सानिध्य से पर्यावरण बोध विकसित होता है, जो पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता तथा आचरण प्रखरता को विकसित करने में सहायक है, इसलिए सामान्य जनता में पर्यावरण संरक्षण की मानसिकता यदि बन जाए तो बहुत सी बीमारियों से बचा जा सकता है और पर्यावरण बोध का यह काम नाटक, गोष्ठी, प्रदर्शनी, रेडियो, टेलिविजन, समाचापत्र आदि के सहयोग से किया जा सकता है।

ब) पर्यावरण शिक्षा एवं शोध – पर्यावरण से सम्बधित शिक्षा प्रशिक्षण एवं शोध वह व्यावरिक पक्ष है जिसमें मानव में पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं चेतना का विकास किया जा सकता है, इस दृष्टि से प्राथमिक शालाओं में लेख, नाटक, गीत चित्र के माध्यम से बालकों को पर्यावरण षिक्षा प्रदान की जा सकती है, विश्वविद्यालय स्तर पर शोध के माध्यम से पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन एवं पर्यावरण के अवनयन से नये तथ्य प्रकाश में लाये जा सकते है। स्थानीय पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान शोध के माध्यम से हो सकते है। ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों की खोज की जा सकती है।

स) संसाधन संरक्षण – संसाधन प्रकृति के द्वारा दिये गये अमूल्य उपहार है जो मानव जीवन के लिये अतिआवश्क है। संसाधनों का अधिकतम प्रयोग आज के युग की आवश्कता है किन्तु उनका उपयोग इस सीमा तक होना चाहिए की उस संसाधन का ह्रास न हो और न ही उसकी प्राकृतिक गुणवत्ता समाप्त हो सके। वन, मृदा, खनिज, पशु जल, प्रकृति के अमूल्य संसाधनों का संरक्षण यदि समीचन ढंग से होता है तो पर्यावरण प्रबन्धन स्वत: हो जायेगा।

घ) संरक्षण तकनीकी अर्थात नवाचारों का प्रयोग – पर्यावरण संरक्षण के लिए नवीनतम तकनीकी का उपयोग कर सीमित संसाधनों को अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। पर्यावरण प्रदूषण के नियन्त्रण हेतु नवीनतम उच्च तकनीकी उपकरणों और प्रविधि का उपयोग करना होगा यह भी पर्यावरण प्रबन्ध का ही एक साधन है। नवाचारों के प्रयोग को चार चरणों में विभक्त किया जा सकता है

1. सुरक्षा तकनीकों का विकास
2. परिस्थितिक तकनीक का विकास

* अतिथि विद्वान, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र) भारत

3. संरक्षण तकनीक का विकास
4. उत्पाद तकनीक में सुधार आदि।

पर्यावरण प्रबन्धन एवं नियोजन का महत्व – प्राचीन समय में पर्यावरण एवं मानव के मध्य सन्तुलन बेहतर था, और इसलिए उस समय पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता महसूस नहीं की गई थी। परन्तु बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में औद्योगिक क्रान्ति, जनसंख्या विस्फोट, युद्ध उपनिवेशवाद तथा उच्च जीवनस्तर अथवा आर्थिक प्रगति हेतु कच्चे माल की मांग बढ़ गई, जिसके परिणामस्वरुप संसाधनों का अनियंत्रित शोषण किया जाने लगा परिणामस्वरुप पर्यावरण संकट के बादल छाने लगे। वनों के ह्रास, भू–क्षरण मरुस्थल विस्तार एवं कृषि में उत्पादकता का ह्रास आदि समस्यायें सामने आ गई। खनिज संसाधनों के अत्यधिक शोषण से खाने गहरी होने लगी। इसलिए शताब्दी के उत्तरार्द (1972) में पर्यावरण पर सर्वप्रथम स्टॉकहोम स्वीडन में हुई संगोष्ठी तथा 1992 के रेडियों संसाधन संरक्षण के लिए पर्यावरण प्रबंधन करने पर जोर दिया गया। लगातार बढ़ रहे पर्यावरण प्रदूषण को रोकने एवं प्राकृतिक संसाधनों का अनुकूलतम प्रयोग करने के लिए पर्यावरण प्रबन्धन का महत्व बढ़ जाता है। पर्यावरणीय प्रबन्ध स्थानीय स्तर से शुरुकर विश्वस्तर पर प्रयोग करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है, ताकि भविष्य में सुख, समृद्धि और स्वास्थ्य संरक्षित किये जा सके। अत: वर्तमान में पर्यावरण प्रबन्धन एवं नियोजन की अत्याधिक आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

पर्यावरण प्रबन्धन के उद्देश्य – पर्यावरण प्रबन्ध वर्तमान युग की महती आवश्यकता बन गया है पर्यावरण प्रबन्ध के द्वारा निम्न उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है ताकि भविष्य को सुरक्षित बनाया जा सके।

1. सामाजिक एवं आर्थिक विकास को उन्नत करना।
2. पर्यावरणीय गुणवत्ता को बनाए रखते हुए सामाजिक आर्थिक विकास में सहयोग प्रदान करना।
3. प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, उनका उचित रुप से उपयोग तथा पर्यावरण संरक्षण करना।
4. प्रदूषण को रोकना।
5. भावी पीढ़ी के लिए पर्यावरण संरक्षण, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण एवं संवर्द्धन करना।
6. पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण के लिए बनी नीतियों तथा योजनाओं का निर्धारण एवं मूल्यांकन करना।
7. मानव एवं प्रकृति के बीच स्वस्थ संवेदनशील समायोजन करना आदि।

पर्यावरण प्रबन्धन के उपागम –

पर्यावरण प्रबन्धन के तीन प्रमुख उपागम है।

1. परिरक्षण उपागम
2. संरक्षात्मक उपागम
3. सम्पोषक उपागम

1. **परिरक्षण उपागम–** यह उपागम प्रकृति के प्रति मानव हस्तक्षेप का पूर्णत: विरोधी है इसका तात्पर्य संसाधनों की सम्पूर्ण रक्षा करना है, इसके अनुसार मनुष्य को प्रकृति के एक अंग के रुप में रहना चाहिए तथा प्रकृति के अनुसार ही उसे स्वयं को अनुकूलित करना चाहिए अर्थात् मनुष्य को अपनी आवश्यकताऐं प्रकृति के अनुसार समायोजित करनी चाहिए।
2. **संरक्षात्मक उपागम –** इस उपागम में इस बात पर बल दिया जा रहा है कि मानव समाज के आर्थिक सामाजिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन तथा उपभोग करते समय प्राकृतिक संतुलन पारिस्थिकी स्थायित्व और पर्यावरणीय गुणवत्ता को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। अत: इस उपागम में उन मानवीय गतिविधियों पर नियंत्रण करने पर बल दिया गया है जिससे पर्यावरण प्रदूषण होता है।
3. **सम्पोषक उपागम–** इस उपागम के अन्तर्गत यह प्रयास किया जाता है कि पर्यावरण को क्षति पहुँचाये बिना मानवीय लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। तथा प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाये कि वे लम्बे समय तक मानव के लिए उपयोगी हो सके।

निष्कर्ष – पहले हम प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग अनुकूलम ढंग से करते थे परन्तु विकास की होड़ में व जनसंख्या के दवाब के कारण प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अनियमित ढंग से करने के कारण वर्तमान में पर्यावरणीय समस्या पैदा हो गई है जिसके चलते सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण प्रबन्धन की आवश्यकता महसूस की गई है। पर्यावरण एक ऐसी विधि है जिसके माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का इस प्रकार प्रयोग किया जाता है ताकि अधिकतम लाभ प्राप्त करते हुये पर्यावरण गुणवत्ता को बनाये रखा जा सके। इसके अन्तर्गत पर्यावरण के प्रति लोगो को संवेदनशील बनाना पर्यावरण शिक्षा एवं शोध, संसाधनों के संरक्षण, नवीन तकनीक के प्रयोग पर बल दिया जाता है। पर्यावरण प्रबन्धन का महत्व दिन प्रतिदिन बढता जा रहा है ताकि संसाधनों को भावी पीढ़ियों के लिए बचाया जा सके। पर्यावरण प्रबन्धन के सम्बन्ध में विशेषज्ञों का मानना है कि पर्यावरण प्रबन्धन को स्थानीय स्तर से लेकर विश्व स्तर तक संचालित किया जाये ताकि पृथ्वी पर जीव–जन्तु तथा मानव का अस्तित्व बना रह सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. पर्यावरण भूगोल डॉ. नरेन्द्र मोहन अवस्थी/हिन्दीग्रन्थ अकादमी।
2. पर्यावरण एक समाज शास्त्रीय अध्ययन–डॉ जगदीश सिंह तेज प्रकाशन।
3. शोध पत्रिका– नवीन शोध संसार
4. पर्यावरण व चेतना– धनंजय वर्मा 2004
5. पर्यावरण अध्ययन– म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
6. पर्यावरण मित्र की वेबसाइड।

****

भारतीय समाज और महिलाएँ

शिखा त्रिपाठी *

प्रस्तावना – समाज के निर्माण में महिलाओं का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है। दुनिया के किसी भी देश के लिए उसके समग्र विकास में महिलाओं की सहभागिता के बिना उसकी कल्पना सम्भव नहीं थी। क्योंकि देश की आधी जनसंख्या महिलाओं की होती है। अत: यह आवश्यक है कि राजनीति के क्षेत्र में भी महिलाओं की भागीदरी बढ़ाने के लिए सार्थक प्रयास किये जायें तथा उपलब्ध कानून व्यवस्था का व्यवहारिक तौर पर अमल किया जाए। कोई समाज कितना भी सत्य और कितना प्रगतिशील है इसे जानने का सर्वोत्तम तरीका है, उस समाज में स्त्रियों के क्रियाकलापों, उनके योगदान और उनके स्थान के बारे में जानकारी प्राप्त करना।

एक महिला ही परिवार और समाज की धुरी होती है, अत: यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की प्रगति और विकास ही वास्तविक कसौटी होती है। जिस समाज में महिलाओं को यथोचित सम्मान सुरक्षा और विकास के अवसर उपलब्ध होते है वह समाज उतना ही विकसित एवं सभ्य माना जाता है। यूँ तो भारत में महिलाओं का प्राचीन काल से ही स्थान अत्यंत उच्च था, तथा उन्हें समाज में अत्याधिक आदर प्राप्त होता था। प्राचीन भारत का इतिहास महान नारियों की गौरव गाथा से भरा पड़ा है। स्त्री को जीवन की ज्योति जननी प्रेरणा और मातृशक्ति के रूप में वंदनीय माना जाता रहा है। प्राचीन भारत की संस्कृति में माना जाता रहा है कि पुरूष स्त्री में और स्त्री पुरूष में निहित है। इसी आधार पर हमारे यहां शिव पार्वती के एक रूप की कल्पना की गई। सभी आदर्श प्रतीकों को स्त्रीमय रूपों में रखा गया है। जैसे धन की अधिष्ठात्री लक्ष्मी, विद्या की सरस्वती, शक्ति की दुर्गा आदि।

प्रकृति द्वारा पुरूष और स्त्री को एक दूसरे का पूरक बनाया गया है। दोनों के पारस्परिक सहयोग से ही मानव जाति का विकास सम्भव है। अत: समाज की प्रगति में दोनों का ही महत्व समान है। श्रृष्टि के विकास रूप में पुरूष के साथ स्त्री की समान भागीदारी रहती है, और इतिहास पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि हर युग और हर परिस्थिति में स्त्री ने पुरूष को आवश्यक संबल प्रदान किया है, हमारे गृन्थों में भी कहा गया है–

'यत्र नार्यन्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्रदेवा।'

अर्थात नारी का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। जिस समाज में नारी जाति का सम्मान होता है उसकी पूजा होती है, वहां देवताओ का निवास होता है।

नारी को केवल शिशु की प्रथम गुरू ही नहीं माना जाता है, बल्कि 3 कुलों की मर्यादा को साथ लेकर चलने वाली अन्नपूर्णा भी कहा जाता है। जिस घर का एक बेटा पढ़ता है वह घर अकेला शिक्षित होता है, किन्तु जिस घर पर एक आदर्श नारी या बेटी पढ़ती है तो उसके 3 कुल भी पढ़ते है। हर रूप में स्त्री का समाज के निर्माण में योगदान होता है। वह सेविका बनकर सभी को सुख पहुँचाने का प्रयास करती है, मां के रूप में उसकी गरिमा इतनी अधिक होती है कि हम पृथ्वी को भी मां के समान आवश्यक सभी पदार्थो को उपलब्ध कराने वाली जननी या धरती माता कहकर पुकारते हैं।

स्त्री को सृष्टि की जन्मदात्री और संचालिका भी समझा जाता रहा है। यही नहीं वैदिक काल में स्त्रियां लगभग सभी पुरूषोचित कार्य करती थी। किसी भी तंत्र में उनका अपना श्रेष्ठ स्थान था। वैदिक कालीन गृन्थों में भी स्त्री महत्व को इन पंक्तियों के माध्यम से दर्शाया गया है–

द्रोपदी गण्डकी गार्गी, मीरा दुर्गावती तथा
लक्ष्मी अहिल्या चन्नम्या, रूद्रमाम्बा सुविक्रमा
निवेदिता शारदा च, प्रणम्या मातृ देवता।

विश्वास अपाला घोषा, लोपमुद्धा, अहिल्या, चन्नम्या, रूद्रमाम्बा सुविक्रमा आदि महिलाओं ने ऋग्वेद के सूक्तों की व्याख्या कर अपनी बुद्धिमत्ता एवं श्रेष्ठता सिद्ध कर डाली थी। गार्गी, साबित्री, कैकेयी, दुर्गावती, निवेदिता, शारदा आदि को माताओं एवं विदुषी के रूप में इतिहास में जाना जाता है। जिन्होंने वेदों के ज्ञान को इस प्रकार ग्रहण किया था कि वे बड़े बड़े विद्धान ऋषियों से तर्क करने को तैयार थी और उन्हें पछाड़ा था। सीता मां को कौन नहीं जानता है, जिसने एक राजकुमारी होकर भी समाज की मर्यादा के लिए अपने सुख का त्याग किया है। इतिहास में भी ऐसी रानियां हुई है जिन्होंने अपनी शक्ति के बल पर मुगलों को ही नहीं बल्कि अंग्रेजों को भी नाको चने चबता दिये। महात्मा गांधी के अनुसार किसी न किसी प्रकार पुरूष युगों से स्त्री पर शासन करता आ रहा है और इसलिए स्त्री में निम्न होने की भावना का विकास हो गया है। किन्तु भारत पर विदेशी आक्रमणकारियों और पहले मुगलों एवं अंग्रेजों के शासन के दौरान महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गयी थी। भारतीय समाज में शक्ति स्वरूपा स्त्री अब अबला बनकर रह गयी। इस स्थिति के निवारण के लिए भारतीय समाज में जन्मे राजा राममोहन राय, महर्षि दयानंद जैसे अनेक समाज सुधारकों के अथक प्रयासों से एवं स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय संविधान एवं कानूनों के अमल में लाए जाने के बाद महिलाओं की स्थिति में उत्तरोत्तर सुधार दिख रहा है। म्यूरलवासी के शब्दों में– 'भारत में स्त्रियों के निश्चित दृढ़ता सद्विवेक एवं कार्य कुशलता पर ही उनकी शिक्षा का भविष्य निर्भर है।' शिक्षित होने पर महिलाओं में जीवन के विकास के लिए आवश्यक आत्मविश्वास सही निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।

महिलाएं राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था में 60–80 प्रतिशत तक योगदान करती है, एक अनुमान के आधार पर महिलाओं की अवैतनिक श्रम की नकद वार्षिक कीमत 4 लाख डालर होती है, जो कि विश्व के सतत् राष्ट्रीय उत्पाद का एक तिहाई भाग है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी कृषि और उससे संबंधित उद्योगों में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है।

1991 के वर्ल्ड बैंक की रिपोर्ट के अनुसार भारत में डेयरी उद्योग के क्षेत्र में महिलाओं की 93 प्रतिशत भागीदारी है। राजनीति के क्षेत्र में भी देश की जुझारू महिलाएं जिन्होंने देश की राजनीति को एक नई दिशा दी है। उनमें श्रीमती मीरा कुमार, सुषमा स्वराज, बसुन्धरा राजे, उमा भारती, शीला दीक्षित, ममता बैनर्जी, जयललिता, मायावती, सोनिया गांधी आदि नाम उल्लेखनीय है। प्रतिभा देवी पाटिल का नाम भारत के सर्वोत्कृष्ट पद पर है।

* व्याख्याता (शिक्षा विभाग) ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

आचार्य विनोवा भावे के अनुसार – स्त्रियों के सामाजिक राजनीतिक कौटम्बिक अधिकार एवं कतर्व्य वही है जो पुरूषों के है। दोनों में एक ही मानव आत्मा है। बाहरी भेद दिखाई देने पर अलग अलग महत्व देना उचित नहीं है। बाहरी भेद होने के कारण कार्य क्षेत्र में कुछ थोड़ा फर्क होना स्वाभाविक है। लेकिन इसके आधार पर समाज में भेदभाव को ठीक नहीं कहा जा सकता, जो आज समाज में मौजूद है।'

राजनीति, आर्थिक, समाजिक क्षेत्रों के अलावा महिलाओं ने घरेलू जिम्मेदारी स्वर साधना एवं गायकी, सौंदर्य प्रसाधन, सिलाई कढ़ाई बुनाई तथा कला के क्षेत्र में इनके योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता है।

इस प्रकार एक समृद्ध एक विकसित देश एवं समाज के लिए महिलाओं की महत्वूपर्ण भूमिका है। आज समाज में घर तथा घर के बाहर विधिक क्षेत्रों में स्वत: दृष्टिगत है। यह सब समाज की गतिशीलता के कारण साथ साथ जागरूकता के कारण है, और इन सबके कारण शिक्षित समाज है। अत: समाज के उत्तरोत्तर विकास के लिए स्त्री का सम्मान आवश्यक है।

समाज में व्याप्त बुराईयों एवं कुरीतियों से निपटने के लिए प्रशासन एवं सामाजिक सुधारकों ने अथक प्रयास किया। जिसमें बाल विवाह, सती प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयों से समाज में नारी को मुक्त कराने के लिए शारदा एक्ट का निर्माण किया गया। राजा राम मोहन राय द्वारा ब्रह्म समाज की स्थापना कर समाज सुधार कार्यक्रमों की नई दिशा दी। रूस की नैनसी काटरोल के अनुसार –'एक माता अपने ऊपर हुए अत्याचार तथा शोषण को अपनी बच्चियों में आरोपित करती है।' उस समय स्वाधीनता के पश्चात जब भारत दासत्व से मुक्त हुआ उस समय धीरे धीरे समाज एवं शासन के संयुक्त प्रयास किये गये और भारतीय संविधान की प्रस्तावना मूल अधिकार और राज्य में नीति निर्देशक तत्वों में लैंगिग समानता के सिद्धान्त को समाहित किया गया है। संविधान द्वारा न केवल महिलाओं को समानता की गारण्टी प्राप्त हुई बल्कि शासन ने महिलाओं की सुरक्षा एवं व्यवस्था के पक्ष में विविध प्रकार के आवश्यक कृत्य उठाने की स्वतंत्रता प्रदान की, और तब महिलाओं को भी पुरूषों के समान अधिकार मिले जिनसे उसे स्वतंत्रता मिली और वह भी पुरूषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने में सक्षम हुई।

केन्द्र तथा राज्य स्तर पर महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए विभिन्न विकास योजनायें और कार्यक्रमों का संचालन किया गया। महिला एवं बाल विकास विभाग की ओर से जागरूकता कार्यक्रम समय समय पर गांव गांव जाकर किये जाते है। जिससे समाज में निम्न से लेकर उच्च वर्ग तक की महिलाओं को समाज में सम्मान प्राप्त हो सके। राजनैतिक सहभागिता के माध्यम से महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए संविधान के 73वें 74वें संशोधन के द्वारा पंचायती राज व्यवस्था में आरक्षण की व्यवस्था की गयी है। साथ ही महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अनेक कल्याणकारी कानूनों एवं संस्थाओं का गठन किया गया है। महिलाओं के प्रति होने वाली घरेलू हिंसा तथा दहेज के लिए होने वाली हिंसा को रोकने के लिए दहेज निरोधक अधिनियम पारित हुआ और दहेज संबंधी तथा घरेलू हिंसा रोकने संबंधी कानून का निर्माण किया गया। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण के लिए मार्च 2010 में महिला आरक्षण बिल पारित हुआ। जिसके माध्यम से नारी घर परिवार से बाहर निकलकर देश के लिए अपना सहयोग देने में सक्षम हुई और संसद में 33 प्रतिशत भागीदारी सुनिश्चित हो गई।

इस संदर्भ में के. नटराजन के विचार से–'यदि सौ वर्ष पूर्व मरने वाला व्यक्ति आज फिर जीवित हो जाय तो उसे आश्चर्य चकित करने वाला सर्वप्रथम एवं सबसे महत्पूर्ण परिवर्तन स्त्रियों की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन होगा।' दुनिया के किसी भी देश के लिए उसके समग्र विकास में महिलाओं की सहभागिता के बिना उसकी कल्पना सम्भव नहीं है।

नई सदी के भारत में जिस तरह तीव्र गति से विकास हो रहा है, वह विकास केवल पुरूषो के कारण नहीं है बल्कि महिला शिक्षा के उत्तरोत्तर विकास के कारण हो रहा है। अब समाज में नारी को पैरों की जूती नहीं बल्कि एक पुरूष की पूरक के रूप में जाना जाता है। शिक्षा ने अपने कार्य को बाखूबी निभाया है। शिक्षा के कारण ही समाज का हर वर्ग विवेक पूर्ण निर्णय लेने में सक्षम हो सका है। शिक्षा के ही कारण महिलाओं को दृष्टिगत रखते हुए प्रशिक्षण कार्यक्रम, जागरूकता अभियान, राजनीतिक स्थिति कार्यक्रम, पोषण आहार कार्यक्रम आदि चलाये जाते है। जिससे महिलाओं में जागरूकता का स्तर और ऊंचा उठाया जा सके। महिलाओं के जागरूकता के लिए कुछ पद शासन द्वारा स्वीकृत किये गये है। जैसे आशाकार्यकर्ता, सुपरवाईजर, आंगनबाड़ी कार्यकर्त्ता, सहायिका आदि।

विकासशील भारत की धरती पर इतनी योजनाओं व्यवस्थाओं एवं सुविधाओं आदि के होने के बावजूद तकनीक के क्षेत्र में इतना आगे जाने के बाद भी समाज के एक तबके में अभी महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं है, उन्हे अपनी चार दीवारी से बाहर का कोई भी ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता। अत हम महसूस करते है कि जितना विकास किताबों के पन्ने पर दिखता है वह वास्तव में धरातल पर नहीं होता दिखता है। इसके अनेक कारण है– जैसे रूढ़िवादिता, समाजवाद, अशिक्षा, परम्परायें, रीति रिवाज, संस्कृति, प्रथायें आदि। ये कारण तो समाज के कारण है, किन्तु राष्ट्रीय स्तर पर भी कुछ कारण है, जैसे– भ्रष्टाचार, राजनीतिकता, अनैतिकता, भौतिकता, अपराध आदि जिनके कारण सरकार के प्रयासों की सफलता अत्यंत सीमित रह जाती है।

किन्तु इन कुरीतियों से निजात पाने के लिए आवश्यकता है महिला सशक्तिकरण की। क्योंकि यह ही एक ऐसा माध्यम है जिसके माध्यम से न केवल महिलाओं को बल्कि पूरे समाज को विकास के नए प्रतिमानों को छूने में सहायता मिलेगी, और इसके लिए आवश्यक है उनमें शिक्षा का प्रसार हो। क्योंकि शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो व्यक्ति में ज्ञान के साथ साथ विवेक की क्षमता उत्पन्न करती है, और व्यक्ति को प्रत्येक परिस्थिति में स्वयं को अडिग रहने की कला सिखाती है।

संदर्भ गृन्थ सूची :–

1. चौलकर पराग, विनोवा विचार दोहन नेशनल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली 2013
2. डॉ0 जैदी रंजन, स्त्री कायाकल्प अनन्ता, नेशनल बुक ट्रस्ट नईदिल्ली
3. डॉ0 पाण्डेय रामशकल, भारतीय शिक्षा की समसामायिक समस्यायें अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा 2012–13(पेज सं. 240)
4. डॉ0 पटेल बी.डी. भारतीय शोषण झेलती महिला और समाज में उनकी भूमिका समानुभूति इंटरनेशनल पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल।
5. अन्सारी एम.ए. 2000 महिला और मानवाधिकार शीतल डिजिटर्स जयपुर
6. शुक्ला आराधना, 'राष्ट्र के विकास में महिला सशक्तीकरण का महत्व' समानुभूति इंटरनेशनल पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल।
7. डॉ0 सिंह टी.बी. भारतीय समाज मुद्दे एवं समस्याएं' अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा 2.13–14 पेज 71
8. शर्मा आर.के.– उदीयमान भारतीय समाज में अध्यापक, राधा प्रकाशन मंदिर प्रा.लि. आगरा उ.प्र.
9. पाठक पी.डी. भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याऐं, अग्रवाल पब्लिकेशन।

स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में बैंको की भूमिका

नीतिन बिल्लौरे *

प्रस्तावना – संसार के सभी विकसित एवं विकासोन्मुख,समाजवादी एवं पूँजीवादी राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था में स्वरोजगार योजनाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। भारत में भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के सम्मुख कई प्रकार की समस्याएं खडी हुई, जिनमें बेरोजगारी भी सम्मिलित थी। मध्यप्रदेश की स्थापना के समय भी यह समस्या थी। क्योंकि शासकीय क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र में रोजगार के अवसर लगातार घट रहे थे, क्योंकि ये क्षेत्र प्रारंभिक दौर में इतने विकसित नही थे। स्वरोजगार योजनाएं शिक्षित बेरोजगारी से लडने का एक अचूक हथियार है। शासन द्वारा हितग्राही को वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाकर उसे रोजगार का अवसर प्रदान किया जाता है। युवाओं में उद्यमशीलता को विकसित करके उन्हे इस योग्य बनाना कि वे स्वंय के साथ अन्य लोगों को भी रोजगार के अवसर उपलब्ध करा सके।

स्वरोजगार योजनाओं के संचालन के लिए जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रो की स्थापना सन् 1977 की औद्योगिक नीति के तहत की गई। यह जिला स्तर की केन्द्रीय संस्था है जो जिले के उद्यमियों को वित्त एवं साख,तकनीकी परामर्श, विपणन सुविधायें एवं समस्त सरकारी सुविधाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध करवाती है। इसे एकल खिडकी विचारधारा की संज्ञा दी जाती है। विकास से आशय उन्नति से होता है और आर्थिक विकास से आशय स्वंय की आर्थिक रुप से उन्नति करना है। इसके साथ शैक्षणिक विकास, वित्तीय संस्थाओ का विकास और अन्य आधारभूत सुविधाओं का विकास आता है जिससे व्यक्ति स्वंय का रोजगार स्थापित करके आर्थिक विकास के पथ पर अग्रसर होता है।

प्रकल्पना, अध्ययन का उद्देश्य एवं क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन में जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र द्वारा संचालित विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं को सम्मिलित किया गया है। आर्थिक हित संवर्धन में योजनाओ की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रुप से महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। शासन द्वारा इन योजनाओं के माध्यम से स्वरोजगार के विकास के दावे समय-समय पर किये जाते रहें है। यद्यपि यह सामान्य धारणा रही है कि इनमे अनेक कमियां विद्यमान है। योजनाओं में व्यवसाय का चयन, व्यवसाय का संचालन एवं ऋण वापसी जैसे महत्वपूर्ण मामलों पर ध्यान नहीं दिया गया है। पर्याप्त प्रचार प्रसार के अभाव से कई हितग्राही योजनाओं का लाभ नहीं उठा पातें है। अध्ययन में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र भी इस कडी में सम्मिलित है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य स्वरोजगार योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करके उसमें परिलक्षित कमियों को दूर करना है।

1) योजनान्तर्गत प्राप्त लक्ष्य,स्वीकृत एवं वितरित प्रकरण एवं राशि ।

दीनदयाल स्वरोजगार योजना **(तालिका नं.1 देखें अगले पृष्ठ पर)**

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता हैं कि दीनदयाल स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत वर्ष 2005-06 से 2009-10 तक राज्य शासन द्वारा प्रदत्त लक्ष्य की संख्या में असमानता रही है। सर्वाधिक लक्ष्य वर्ष 2005-06 में 155 रहा है, तथा सबसे कम 84 वर्ष 2008-09 में रहा। कुल स्वीकृत प्रकरण 565 और कुल स्वीकृत राशि 733.65 एवं कुल वितरित प्रकरण 395 एवं कुल वितरित राशि 470.04 रुपये थी। जो लक्ष्य से कम है, अत: यह कहा जा सकता है कि इस जिले के आर्थिक विकास में योगदान कम है।

रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना (तालिका नं.2 देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2005-06 में लक्ष्य 53 प्रकरण का था तथा स्वीकृत 73 एवं वितरित 107 प्रकरण थे। आगामी वर्षो में स्वीकृत प्रकरण लक्ष्य से कम रहे है। वर्ष 2005-06 में ही लक्ष्यानुरुप ऋण वितरण किया गया। आगामी वर्षो में लक्ष्य से कम ऋण वितरित किया गया। अत: रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना का योगदान अपेक्षाकृत कम है। अत: आगामी वर्षो में अधिकाधिक ऋण वितरित किया जा सकेगा।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना (तालिका नं.3 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वर्ष 2005-06 में लक्ष्य 1305 प्रकरण का था तथा स्वीकृत 1441 एवं वितरित 1309 प्रकरण थे जो लक्ष्य के 100 प्रतिशत से अधिक है। किन्तु आगामी वर्षो में स्वीकृत प्रकरण लक्ष्य से कम रहे है। वर्ष 2005-06 में ही लक्ष्यानुरुप ऋण वितरण किया गया आगामी वर्षो में लक्ष्य से कम ऋण वितरण किया गया। योजना वर्ष 2008-09 से बंद कर दी गई है , प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम प्रारंभ किया गया है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना (तालिका नं.4 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अन्य स्वरोजगार योजनाओं की तरह प्रधानमंत्री रोजगार योजना में प्राप्त प्रकरणों में से अधिकतर प्रकरण प्रेषित किये जाते है। किन्तु विभिन्न औपचारिकताओं की पूर्ति नही होने के कारण अधिकतर प्रकरण लम्बित ही रह जाते है। जिससे कम लोगों को ऋण प्राप्त होता है।

रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना (तालिका नं.5 देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हर वर्ष लक्ष्य से अधिक हितग्राही ऋण के लिए आवेदन करते है जिसमें अधिकतर आवेदन पत्र

* शोधार्थी, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रेषित भी किये जाते है किन्तु कम प्रकरण स्वीकृत हो पाते है तथा अधिकतर प्रकरण लम्बित रह जाते है।

दीनदयाल स्वरोजगार योजना (तालिका नं.6 देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रतिवर्ष लक्ष्य से अधिक आवेदन पत्र प्राप्त होते है, अधिकतर ऋण के प्रकरण प्रेषित भी किए जाते है आवेदन पत्र मे त्रुटियां रह जाने या निर्धारित मापदण्डो को पालन नही होने से जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के माध्यम से पुन: हितग्राही को वापस कर दिया जाता है।

निष्कर्ष – स्वरोजगार योजनाओं के संचालन में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के अतिरिक्त बैंको की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। बैंको के सहयोग के अभाव में स्वरोजगार योजनाओं का संचालन नही किया जा सकता है। टास्क फोर्स द्वारा प्रेषित प्रकरणों को बैंक द्वारा वित्त पोषण किया जाता है। टास्क फोर्स ही समस्त बैंको के वार्षिक लक्ष्य तय करती है। प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले उद्यमी को ऋण प्रदान किया जाता है।

बैंक एक वाणिज्यिक प्रतिष्ठान है, इसका प्रमुख कार्य वित्त पोषण करना है। किसी भी उद्यमी को ऋण प्रदान करने से पहले बैंक यह सुनिश्चित करता है कि उद्यमी को ऋण सुविधा प्रदान करने पर ऋण वापसी संभव है या नहीं। बैंक यर्थाथ में स्वरोजगार योजनाओं के लिए हितग्राहियो की क्षमता व अन्य पहलू को ध्यान मे रखकर ऋण स्वीकृत करते है। जिले का लीड बैंक **बैंक ऑफ इण्डिया** है। जिला स्तरीय समिति द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को पूर्ण करने व ऋण वसूली समिति मे बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

तालिका नं.1 – दीनदयाल स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	155	145	169.3	104	116.80
2006-07	138	111	159.86	89	96.97
2007-08	95	92	116.57	74	80.68
2008-09	84	105	131.98	40	63.03
2009-10	84	112	155.94	88	112.92
योग	556	565	733.65	395	470.04

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 2 – रानी दुर्गावती अनु.जाति/जनजाति स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	53	73	47.07	107	182.15
2006-07	155	143	358.11	21	37.94
2007-08	95	104	325	20	36.4
2008-09	131	140	526.36	14	156.7
2009-10	103	94	627.59	32	317.92
योग	537	554	1884.13	194	731.11

राशि लाखों में

स्त्रोत-जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 3 – प्रधानमंत्री रोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	स्वीकृत प्रकरण	स्वीकृत राशि	वितरित प्रकरण	वितरित राशि
2005-06	1305	1441	986.87	1309	759.83
2006-07	1300	1343	851.05	1139	698.05
2007-08	650	651	467.76	543	333.85
योग	3255	3435	2305.68	2991	1791.73

राशि लाखों में

स्त्रोत –जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 4– प्रधानमंत्री रोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	1305	3405	3310	1439	1871
2006-07	1300	3144	2946	1351	1595
2007-08	650	1731	1653	357	1296
योग	3255	8280	7909	3147	4762

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं. 5 – रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति जनजाति स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	53	256	147	73	74
2006-07	154	372	329	143	186
2007-08	95	267	215	104	111
2008-09	131	432	409	140	269
2009-10	103	322	243	94	149
योग	536	1649	1343	554	789

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

तालिका नं.6 – दीनदयाल स्वरोजगार योजना

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्त प्रकरण	प्रेषित प्रकरण	स्वीकृत प्रकरण	लम्बित प्रकरण
2005-06	155	389	156	145	11
2006-07	138	414	329	111	218
2007-08	95	252	159	92	67
2008-09	84	524	483	105	378
2009-10	84	390	374	112	262
योग	556	1969	1501	565	936

राशि लाखों में

स्त्रोत – जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, उज्जैन

****

शोध पत्र तैयार की विधि
Method of Preparing of Research Paper

1.	शीर्षक	–	Title
2.	शोध सारांश	–	Abstract
3.	शब्द कुंजी	–	Key words
4.	प्रस्तावना	–	Introduction
5.	उद्देश्य	–	Object
6.	शोध परिकल्पना	–	Research Hypothesis
7.	शोध प्रविधि एवं क्षेत्र	–	Research Methods & Area
8.	शोध उपकरण	–	Research Tools
9.	सांख्यिकी तकनीक	–	Statistics Technics
10.	शोध व्याख्या	–	Description
11.	निष्कर्ष	–	Conclusion
12.	सुझाव	–	Suggestion
13.	संदर्भ ग्रंथ सूची	–	References
	a. अन्तर्राष्ट्रीय पुस्तक	–	Kotler, Philip : Marketing Management, 2007 P. 196
	b. राष्ट्रीय पुस्तक	–	कुमार, वि. : जनांकिकीय 2006, पृष्ठ 42
	c. अन्तर्राष्ट्रीय शोध जर्नल	–	नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2014, पृष्ठ क्र. 81
	d. राष्ट्रीय शोध जर्नल	–	नवीन शोध संसार, ISSN 2320-8767 जुलाई से सितम्बर 2013, पृष्ठ क्र. 222
	e. अप्रकाशित शोध ग्रंथ	–	शर्मा लक्ष्मीनारायण : मन्दसौर जिले का जनांकिकीय अध्ययन1971 से 1991 अप्रकाशित पीएच.डी. शोध प्रबन्ध विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन 1995, पृष्ठ क्र.132
	f. पत्रिकाऐं	–	रचना, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल फरवरी 2014 पृ. क्र.84
	g. समाचार पत्र	–	दैनिक भास्कर, रतलाम संस्करण, 5 सित. 2014, पृ. क्र. 6
	h. वेबसाईट	–	www.nssresearchjournal.com
	i. अन्य	–	व्यक्तिगत सर्वे एवं विभागों से प्राप्त जानकारियां
14.	शब्द सीमा	–	Word Limit - 2000
15.	व्यक्तिगत जानकारी	–	नाम, पद, महाविद्यालय का नाम, निवास का पता, मोबाइल नं. व ईमेल एड्रेस आदि ।

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No.- MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 876, E-ISSN 2394 - 3793
Impact Factor - 0.547

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used)

Name (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

Name of Co-Author(s) : .....

Designation : ..... Subject : .....

Name of College/University/Institution : .....

Home / Official Address : .....

.....

State : .....Pin : ..... Country : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....Mobile : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,250/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 750/- for 1 Year. (Annual Membership)
   * Membership for Co-Author Rs. 750/- for 1 Year. (Annual Membership)
   * Publication of paper each after membership Rs. 850/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. No.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}